डा॰ लक्ष्मीनारायण लाल

जयप्रकाश

डा॰ लक्ष्मीनारायण लाल

M

मैकमिलन

दि मैकमिलन कंपनी आफ इण्डिया लिमिटेड
दिल्ली कलकत्ता बंबई मद्रास
संपूर्ण विश्व में सहयोगी कंपनियां
© डा० लक्ष्मीनारायण लाल
द्वितीय संस्करण 1975

मुद्रक न्यू मदन हाफ़टोन कंपनी, दिल्ली-११०००६

Dr. L. N. Lal : JAYAPRAKASH

जे० पी० को
उनकी बहत्तरवीं वर्षगांठ पर
सप्रेम भेंट

निवेदन

दो वर्ष पूर्व अपने मित्र शिवसागर मिश्र के साथ मिथिला देखने गया था। उस यात्रा में बिहार का काफी भाग देखने और घूमने को मिला। घूम-घामकर पटना लौटा तो वहां स्थित टाइम्स आफ इंडिया के विशेष संवाददाता मेरे मित्र श्री जितेन्द्रसिंह के साथ लंबी बैठक हो गई। उन्हीं के साथ मैं पहली बार पटना में जयप्रकाश जी से मिला। साहित्य और राजनीति विषयक कुछ बातचीत हुई। दूसरे दिन फिर उन्होंने मुझे शाम को चाय पर बुलाया।

दूसरी बार मैं जे० पी० से मिलकर बहुत प्रसन्न हुआ। उनके हृदय की सरलता ने मुझे सहज ही बांध लिया।

दिल्ली लौटा। कुछ दिनों बाद प्रोफेसर विमलप्रसाद ने मुझसे सहज ही कहा : लाल जी, आप जे० पी० का जीवन-चरित क्यों नहीं लिखते ? मेरे मुंह से निकला : क्या मैं इसके योग्य हूं ? उन्होंने एक बड़ी बात कही : काम खुद ईमानदार व्यक्ति को योग्य बना देता है।

तभी दिनकर ने कहा : प्यारे, लिख डालो जे० पी० का जीवन-चरित, जीवन सफल हो जाएगा। इसके बाद मेरे तमाम मित्र मुझे इस दिशा में प्रेरित करते रहे। पर मेरी हिम्मत नहीं हो रही थी।

कुछ दिनों बाद सौभाग्य से मुसहरी में मुझे जे० पी० से मिलने का निमंत्रण मिला। वहां मुसहरी में जे० पी० को जिस तरह काम करते हुए मैंने देखा, उससे मैं उनके प्रति इतना आकृष्ट हुआ कि बता पाना मुश्किल है। तभी मैंने संकल्प किया कि मुझे ही यह काम करना है। मुजफ्फरपुर के उस डाक बंगले में मैंने जे० पी० से इसके लिए आशीर्वाद मांगे।

उन्होंने प्रेम दिया और आशीर्वाद भी।

जे० पी० ने कहा : मेरी चीज पढ़ने के पहले आप गांधी और विनोबा का पूरा साहित्य जरूर पढ़ लीजिएगा। मैंने पढ़ना शुरू किया। और जैसे-जैसे जे० पी० से संबंधित कागज-पत्र और उनका साहित्य पढ़ने लगा, मुझे अनुभव होने लगा कि मैं एक ऐसे विभूति-संपन्न व्यक्ति की गौरव गाथा पढ़ रहा हूं जो वास्तव में वीरकाव्य की तरह रोमांचकारी और अपार हृदयस्पर्शी है। इसमें भारतवर्ष का यथार्थ दर्शन है। इसके बारे में जानना खुद अपने आपकी तलाश है। इसकी जीवन यात्रा में हम सबकी राहें आ मिली हैं।

जे० पी० का जीवन, जितना मुझे जानने-समझने का सौभाग्य मिला वह जितना जीवंत, आकर्षक, करुण है उतना ही उद्‌बोधक और उदात्त है।

यह कहते हुए मुझे अपार हर्ष है कि इस काम ने मुझे बौद्धिक, भावनात्मक, दोनों स्तरों से जितना संपन्न किया है उतना आज तक मुझे अपनी किसी रचना ने नहीं किया। मैं इस कार्य की पूर्ति ईश्वर की महती कृपा मानता हूं। मैं इसके योग्य नहीं था। सचमुच इस कार्य ने ही मुझे इसके योग्य बनाया।

इस कार्य के पीछे प्रेरक शक्ति रहे हैं प्रोफेसर विमलप्रसाद। उनके प्रति शब्दों से कुछ नहीं कह पाऊंगा।

इस कार्य में मेरे और जे० पी० के अनेक मित्रों ने मेरी मदद की है। उनके मात्र नाम गिनाना उचित नहीं है। इस कार्य ने मुझे कई मित्र दिए, विमल-प्रसाद, महावीरप्रसाद सिन्हा, ए० सी० सेन, डा० हरिदेव शर्मा···।

जे० पी० का जीवन-धरातल जितना ऊंचा है, गहरा है उतना ही यह व्यापक है। इतना कार्य किया है, और इनसे संबंधित इतनी महत्त्वपूर्ण सामग्री चारों ओर बिखरी पड़ी है कि उसे बता पाना तक मुश्किल है। जे० पी० के विशद, विपुल और नाना प्रवृत्तियों से भरे विशाल, गहन और जीवन की अभिव्यक्ति के लिए अनेक ग्रंथों की रचना अपेक्षित है।

पर एक आश्चर्यजनक बात है, जे० पी० ने अपने बारे में बहुत कम लिखा है। जो कुछ लिखा भी था, बहुत कुछ जला दिया गया है, जो बचा भी है, उसमें जे० पी० को ढूंढ़ना ही इस देश के मनुष्य को तलाशना है और उस मनुष्य में जे० पी० को शब्दबद्ध करना बहुत कठिन है।

आत्मप्रचार, आत्मविज्ञापन यहां तक कि फोटो खिंचवाने में भी जे० पी० को हमेशा अरुचि रही है। मित्रों में निजी बातों के प्रसंग उठते ही जे० पी० हमेशा टोक देते हैं : 'देखिए, कोई काम की बात कीजिए।' ऐसे सहज व्यक्ति, पर जननायक का जीवन-चरित लिखना बहुत मुश्किल काम है। और खतरनाक भी।

दूसरे और तीसरे भाग के लिखने में मुझे बेनीपुरी की पुस्तक से मदद मिली है। समूचा समाजवादी काल समझने और तत्संबंधी सामग्री पढ़ने में मुझे 'जनता' की फाइलों से मदद मिली है। इसके लिए श्री बी० पी० सिन्हा का कृतज्ञ हूं। सर्वोदय-काल के लिए मुझे जे० पी० के वर्तमान सहायक श्री सच्चिदानंद से बड़ी सामग्री और दृष्टि मिली है। 'सर्वोदय' पत्रिका के तीनों युवा मित्र, प्रभास जोशी, अनुपम मिश्र और श्रवणकुमार गर्ग से बड़ी मदद मिली है। इस बीच दिनकर नहीं रहे। अपने इस कार्य के द्वारा मैं उस दिवंगत को अपना प्रणाम भेजता हूं।

इस पुस्तक की तैयारी में 'नेहरू मिमोरियल म्यूजियम एंड लाइब्रेरी' के निदेशक श्री बी० आर० नंदा, लाइब्रेरियन श्री धर्मवीर और डा० शर्मा ने मेरी बड़ी सहायता की है। मेरे टाइपिस्ट भीमसिंह नेगी ने मेरे साथ परिश्रम किया है।

सबसे अधिक मैं अपनी पत्नी आरती का नाम लेना चाहूंगा जिसने मेरे इस अत्यंत परिश्रम, धन और समय-साध्य काम में मित्र की तरह सहयोग दिया।

जे० पी० जैसे जीवित जननायक का जीवन-चरित लिखकर कोई भी गौरव का अनुभव करेगा। मैं कृतज्ञ भी हूं।

4 अगस्त, 1974
नई दिल्ली–8

—लक्ष्मीनारायण लाल

आकाशदीप

उन्नीस सौ तैंतीस की एक सुबह नासिक सेंट्रल जेल के फाटक से एक आकर्षक युवक बाहर निकलता है, अपनी जेल की सजा काटकर।

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास में यह दिन इसलिए एक शाश्वत क्षण है कि यहीं से एक ऐसी शक्ति, एक ऐसा प्रकाश अस्तित्व में आया जिसमें अपना एक विचार था, लक्ष्य था और उसके लिए एक दृष्टि थी। उसी का नाम जयप्रकाश था। जयप्रकाश है। जे० पी०। जय···

जीवन-गति को हमारे यहां जय-यात्रा की संज्ञा दी जाती है। और उस जय-यात्रा को हम शब्द क्या दें, जब कि जय-यात्री अपने कर्म और वचन में अंतर नहीं रखता। उसकी जीवन-यात्रा के सामने उसका नाम, उसकी हस्ती किसी भी तरह बाधक नहीं होती।

वह उसी तरह सबके सामने आता है, जैसा वह है। जयप्रकाश पारदर्शी है, क्योंकि उसके पास कुछ छिपाने को नहीं है। ऐसा कुछ जो निजी और व्यक्तिगत हो। अत्यंत गहन।

भारतीय जीवन में आधारभूत केवल तीन चीजें हैं: काम, कर्त्तव्य और भक्ति।

यहां प्रेम नहीं है, क्योंकि यहां का सारा धर्म और दर्शन हमें यह बताता है कि यहां सब कुछ पूर्वनिर्धारित है। यहां सब कुछ दैव के हाथों निश्चित है। इसके विपरीत प्रेम वहां से शुरू ही होता है, जहां अनिश्चय है, जहां दो स्वतंत्र व्यक्ति हैं। प्रेम उन्हीं दो व्यक्तियों के बीच साक्षात्कार का नाम है। एक सतत युद्ध और शांति का लोक है प्रेम। प्रेम की बात यहां हम छोड़ दें। पर जिस हद तक भारतीय जीवन में काम तत्त्व की गुंजाइश है, जयप्रकाश के लिए वह भी अस्वीकार्य था।

स्त्री-पुरुष को, पति-पत्नी के धरातल से जो चीज कहीं गहरे जोड़ती है, वह है काम। और जो चीज उन्हें इसी तरह बांधकर मुक्ति देती है, वही है प्रेम। जयप्रकाश और प्रभावती का विवाह बिलकुल कुमार अवस्था में हुआ। ऐसे विवाह के मुश्किल से दो ही वर्ष बीते थे कि पति विद्याध्ययन के लिए अमेरिका चला जाता है। और नवोढ़ा विरहिणी पत्नी गांधी के आश्रम में चली जाती है। ऐसे पति जयप्रकाश। ऐसी पत्नी प्रभावती।

प्रभावती ब्रह्मचर्य व्रत धारण कर लेती हैं। और सात वर्ष बाद जब जयप्रकाश अमेरिका से भारत लौटते हैं तो पत्नी का व्रत स्वभावतः पति का व्रत

हो जाता है। यहीं पत्नी धर्मपत्नी हो जाती है और पति-पत्नी का दाम्पत्य जीवन मर्यादा का जीवन हो जाता है।

यहीं से संकट शुरू होता है। यहीं से अंतराल, दूरी, फासला दिखता है। प्रभावती ने इस अत्यंत निजी, व्यक्तिगत दूरी को सेवा से पाटा, भरा, और समर्पण (भक्ति) से उस अंतराल को पूरा करना चाहा। जयप्रकाश ने इसे स्वतंत्रता-संग्राम और संघर्ष से पाटना और भरना चाहा। पर यह प्रभावती के लिए आसान था, क्योंकि हिंदू पत्नीत्व के संस्कारों के साथ उनके पास गांधी थे। अहिंसा जीवन था। सत्याग्रह साधन था। जयप्रकाश के लिए बहुत मुश्किल था। उनका बौद्धिक निर्माण पश्चिम का था। विज्ञान उनका जीवन था। द्वंद्वात्मक भौतिकवाद उनका साधन था।

अब क्या हो?

संग होकर कहीं निस्संग। निस्संग होकर संग। इसे चाहे जितना भावों से पाटा जाय, विचारों से मंडित किया जाय पर सच्चाई सामने से हटती नहीं। बिना उस अनुभूति के, बिना उस प्रक्रिया से गुजरे, स्वयं को बहुत गहरे दूसरे को दे देना संभव नहीं हो सकता।

प्रभावती के लिए आसान था। जे० पी० के लिए कठिन था।

मंच पर जयप्रकाश गांधी के खिलाफ भाषण देते थे। गांधी-नीतियों की आलोचना करते थे और उसी मंच पर पीछे चुपचाप मौन प्रभावती चर्खा चलाती थीं। उनकी मांग में बा का दिया हुआ सिंदूर चमकता था। उनकी आंखों में बापू होते थे और हृदय में पति, जयप्रकाश नारायण।

इसीलिए जयप्रकाश नारायण ने आजीवन व्यक्ति की स्वतंत्रता, समानता और कल्याण के लिए अथक संघर्ष किया। सर्वस्व बलिदान दिया, पर स्वयं को कभी किसी व्यक्ति के प्रति समर्पित नहीं किया।

गांधी जैसे व्यक्ति के प्रति भी नहीं, सिर्फ उसके विचारों और नीतियों के प्रति।

जीवन का समर्पण नहीं, गया में जीवन-दान। वह भी किसे? किसी व्यक्ति विशेष को नहीं, एक विचार को, एक लक्ष्य को, जिसके साधन भी उतने ही सुंदर हों।

प्रभावती अपने विचार पर अविचल क्यों रहीं? क्योंकि वह एक व्यक्ति से समर्पित थीं, जिसका नाम जयप्रकाश है, चाहे जितने कष्ट भोगने पड़ें, इस समर्पण और यथार्थ जीवन के विरोधाभासों से। पर जयप्रकाश अपने विचारों को, दलों और लोगों को कैसे छोड़ते, बदलते चले गये। पल्ला झाड़कर निकल गये।

क्या कोई उन्हें भीतर से नहीं बांध पाया या किसी को वह संपूर्ण रूप से 'खुद' दे नहीं सके? हर दान में कुछ शेष रह जाता था? यात्रा आगे बढ़ जाती थी? दूसरी मंजिल दिखाई पड़ने लगती थी? बात क्या है?

इसी संदर्भ में एक और बात! लगता है जयप्रकाश के काम प्रतीकात्मक ढंग के होते हैं। काम को वह संपूर्णता नहीं दे पाते। उसे आदि से अंत तक, आलाप से सम तक, नहीं पहुंचाते। संपूर्ण होने से पहले ही कहीं और चले जाते हैं।

प्रेम जो अपूर्ण है, क्या वही संपूर्ण नहीं होने देता ? जो कहीं गहरे एकांत में किसी से सहज ही समर्पित नहीं हो सका, वही क्या दुविधा नहीं बन जाता ?

ये बहुत निजी बातें हैं। जयप्रकाश इसकी छूट नहीं देते। खुद को ही जब नहीं देते। बहुत संभलकर रहेंगे। खुलकर नहीं हंसेंगे।

उनका कर्मक्षेत्र, जीवन का दायरा, संवेदना की हद, बुद्धि से लेकर हृदय तक है। पूना में जब इक्कीस दिन का उपवास व्रत किया, तब से उनका क्षेत्र हृदय से आगे आत्मा की ओर बढ़ा। पर यह तो बहुत बाद की बात है। बहुत अप्रत्यक्ष रहस्यमय बातें हैं। प्रत्यक्ष, प्रकट जयप्रकाश कैसे हैं ?

पूरा-भरा शरीर। कहीं से किसी भी तरह कुंठित या संकुचित नहीं। खुला रंग। सही अर्थों में सुडौल पुरुष। भरा हुआ गोल मुख। मजबूत जबड़े जो दृढ़-स्वभाव के सूचक हैं। अर्धचंद्राकार ठुड्डी जो उनकी बौद्धिक जिज्ञासा का संकेत करती है। लंबी और सुकुमार उंगलियां जो अक्सर उनके मुंह, कान, सिर और कंधे को उठ-उठकर बरबस स्पर्श करती रहती हैं। ऊपर का ओंठ पतला, नीचे का मोटा, रसिकों जैसा। पर दोनों ओंठ सदा सूखे और प्यासे लगते हैं। आंखें बोलती हुई हैं, पर नाक साधारण है। नाक और ओंठ के बीच जो सफाचट फासला है, लगता है वह जगह सबसे ज्यादा संवेदनशील है। बोलते समय उनके दाएं हाथ के बीच की अंगुली अक्सर उसे छू लेती है। बाएं हाथ से अपना गाल सहला लेते हैं। और अक्सर इसी बाईं हथेली पर अपने मुंह का सारा भार टिका देते हैं। हाथ की कुहनी चाहे मेज पर टिकी हो चाहे कुर्सी के बाजू पर। ऐसा करते ही बातों में रस लेना शुरू करते हैं और साथ ही साथ सोचना भी प्रारंभ हो जाता है। फिर उसी गति से दायां पैर हिलने लगता है।

बोलते समय अपनी उंगलियों से खेलते हैं। कभी लगता है उंगलियों के बीच किसी शून्य को मसल रहे हैं। कभी लगता है, कोई बहुत भूली बिसरी चीज को पकड़ रहे हैं। जब बैठकर बोलते हैं तो सामने जो कुछ भी चीज पड़ी होगी, उसे उठाकर और कभी-कभी उसे देखकर बोलते हैं।

बिल्कुल सीधे और सपाट बोलते हैं। प्रभाव डालने के लिए कतई कोई प्रयत्न नहीं। जैसे अपने स्वजनों से कुछ कह रहे हों। 'मित्रो' यही संबोधन है उनका। अंग्रेजी में फ्रेंड्स। पहले शायद 'कामरेड' कहते रहे हों, पता नहीं। हर वाक्य निश्चित, पूरा होता है। तथ्यों और विवेचनाओं से भरी हुई बातें कहेंगे, पर सुनने वाले पर किसी तरह का भी कोई बोझ या दबाव न होगा। बोलते समय जैसे श्रोताओं की भी ओर से वही सोचते हैं। पर बाद में श्रोताओं को सोचते रहना पड़ जाता है। यही हाल लिखावट का भी है। हिंदी हो या अंग्रेजी, निहायत खूबसूरत लिखावट है। पढ़ने और समझने दोनों में आनन्द मिलेगा।

सच्ची बौद्धिक तथा भावनात्मक, दोनों प्रकार की मैत्री इनकी अपने सारे समकालीनों से रही है। इनसे भी ज्यादा पारिवारिक स्तर पर इनके संबंधी बहुत रहे हैं। इसका श्रेय प्रभावती को है। संबंध क्या होता है, रिश्तेदारी कैसे निभाही जाती है, उसका क्षेत्र कितना व्यापक और कितना गहरा है, प्रभावती के संपर्क में आया हुआ कोई भी प्राणी उसे कहता हुआ नहीं अघायेगा।

जयप्रकाश खाने और पहनने के बेहद शौकीन हैं। इससे भी ज्यादा उनमें एक

अजब तरह का आभिजात्य भाव है। चारुता और परिष्कार है। इसका रंग भी खूब है। पहनावे में धोती कुर्त्ते से लेकर सूटबूट तक। भोजन में सत्तू, चूड़ा, दही से लेकर एपिलपाई तक। फलों में खरबूजा और पपीता पसंद है। टमाटर से चिढ़ है। मिरच मसाला ज्यादा नहीं। पश्चिमी भोजन हो तो क्या कहने।

पर सबसे ज्यादा मनोरंजक बात—जे० पी० में कोई बना बनाया नियम कानून या बंधन नहीं है। स्वयं कानून बनाएंगे और खुद तोड़ देंगे। न वक्त की पाबंदी है न दैनिक कार्यक्रमों की। हर वक्त व्यवस्था के खिलाफ लड़ाई जैसे निजी जीवन के स्तर से भी लड़ी जाती है।

ठीक इसके विपरीत थीं प्रभावती, गांधी की बेटी।

अव्यवस्थित को व्यवस्थित रखने में प्रभावती को कितना-कितना, क्या-क्या करना पड़ा होगा, कोई कल्पना नहीं कर सकता।

जे० पी० प्राय: खतों के जवाब नहीं देते। सारे खत पढ़ते भी नहीं। बस, रख लेते हैं। राजनीतिक जीवन के साथी दुखी थे, जे० पी० की इस आदत से। जैसे वह लिखकर जवाब नहीं देना चाहते, पर जब भेंट होगी, चाहे जितनी देर में हो, पूरे प्रसंग और संदर्भ के साथ तब उस साथी से पूरी बात करेंगे। और उसे पूरी तरह से संतुष्ट कर देंगे।

व्यवस्था के अभाव के कारण ही जे० पी० का उस तरह का कोई सैक्रेट्री नहीं हो सका, जैसे गांधी के प्यारेलाल और महादेव भाई जैसे सहायक और मंत्री हुए। जे० पी० का कोई अंत:करण का प्रहरी 'कांसेस कीपर' भी नहीं हो सका जैसे गांधी के थे—एक नहीं अनेक; राजाजी, किशोरीलाल मशरूवाला, सरोजनी नायडू, डा० जे० सी० कुमारप्पा, आचार्य कृपलानी।

क्योंकि जे० पी० मूलत: व्यक्तिवादी हैं। वह अपने अहम् से ऊपर नहीं उठ पाए हैं। बल्कि कभी-कभी उनके आहत अहंकार के दर्शन होते हैं। अंत:करण के प्रहरी उसी के पास होंगे, जिसका अहंकार, कहीं पूर्णत: विसर्जित हो चुका है।

जे० पी० खुद अपने अंत:करण के प्रहरी हैं। इसलिए सारी चोट प्रहरी को लगती है। सारा आक्रमण अकेले उन्हीं को सहना पड़ता है।

जे० पी० हिंदी क्षेत्र के व्यक्ति, राजनीतिक, चिंतक और कार्यकर्त्ता हैं, यह सच्चाई कभी खत्म नहीं होती। यह अनुभव होता रहता है। वह मूलत: मध्यवर्ग और गांधीयुग के प्रतिनिधि हैं।

जे० पी० से मिलने जो लोग आते हैं, उन्हें बहुत ही आसानी से निश्चित वर्गों में बांटकर देखा जा सकता है। पर जो सहज ही इनसे मिलना चाहते हैं उसका कारण है, जे० पी० के व्यक्तित्व का गौरवमय अतीत, अब भी वर्तमान आकर्षण और वह निपट सच्चाई, जिसे देखकर क्षण भर के लिए आदर्शवादी बना जा सकता है।

जे० पी० को देखकर जो पहली बात महसूस होती है, वह यह कि ये कितने सादे और सहज हैं। बिल्कुल साधारण मनुष्य। इनके पहनावे से लेकर, इनके लिखने-पढ़ने, बोलने और रहन-सहन तक इनके सारे व्यवहार और कार्यों में चारों ओर वही साधारण सहज मनुष्य दिखता है। उदास थका हुआ, फिर भी सहज।

घायल बिल्कुल अकेला फिर भी धैर्यवान। शांत, सज्जन। युद्धरत, संघर्षरत। फिर भी संघर्ष और सज्जनता का योग कभी खंडित नहीं होता।

पहली ही भेंट में प्रभावित करने के गुण उनके व्यक्तित्व में हैं। यों वह शास्त्रीय अर्थों में रूपवान नहीं कहे जा सकते, लेकिन कुल मिलाकर उनकी मुखमुद्रा में एक रहस्यमय मधुरता है, एक भोलापन है और सबसे ज्यादा सुगमता का भाव है। गेहुंआ रंग उस सुगमता को बढ़ाता है।

जरा हम उनके नजदीक जाएं, ताकि उनके भीतर झांक सकें, पर वह ऐसा कतई नहीं होने देंगे। आपको अपने से थोड़ा दूर रखेंगे। हमेशा एक अंतर बनाए रखेंगे। कभी अंतरंग नहीं होने देंगे। फिर भी न जाने कैसे कहां से यह सहज अनुभव देंगे कि जे० पी० का आपसे कोई व्यक्तिगत संबंध जरूर है, और उस संबंध की एक मर्यादा है।

अब तक अपने पूरे जीवन में जे० पी० केवल एक से ही संबंधातीत हुए हैं—'प्रभा' से। प्रभा माने प्रकाश, प्रभा माने प्रभावती।

उसी प्रभा के सहारे ही जे० पी० के भीतर झांका जा सकता है। इसके अलावा और कोई तरीका नहीं। उसे झांकने से जो पहली चीज चमकती है, वह यह है कि जे० पी० की शक्ति के मूल में करुणा की एक सहज धारा बहती है। इसीलिए इनके आवेश और रोष का भी एक आनंद है। बुद्धि और हृदय, ऋजुता और प्रांजलता का अद्‌भुत सामंजस्य है इनके मनुष्य में। जिस समय जो सत्य देखते हैं, उसे अपने संपूर्ण चित्त से ग्रहण कर लेते हैं। उसको कार्य में परिणत करने के लिए अन्य सब कुछ भूलकर प्राणप्रण से लग जाते हैं। इसी का परिणाम है कि जे० पी० को कोई मतवाद, कोई संप्रदाय, कोई संस्था या संगठन अपनी सीमाओं में नहीं बांध सका। जे० पी० का ख्याल है, यह जो 'आइडियोलॉजिकल ब्लिकर्स होते हैं, उनकी वजह से यह होता है कि लोग अपने को एक आइडियोलॉजी के कटघरे में या चौखट में बांध लेते हैं। फिर वह फ्रीली थिंकिंग कर नहीं पाते। और आज मैं किसी पार्टी में नहीं हूं। और सर्वोदय मूवमेंट में होते हुए भी उसमें बंधा हुआ नहीं हूं, तो कुछ फ्रीली सोच सकता हूं और अगर उसमें 'सेल्फ' का भाव न हो तो मेरा ख्याल है''' तो पंडित जी के लिए जो मेरे दिल में बराबर आदर रहा, बड़ा भाई मानता रहा, आज भी मानता हूं। लेकिन उनकी थिंकिंग में वह अपने को बीच में जरूर रखकर सोचते थे। अपने को बीच में से हटाकर सोचना और 'आइडियोलॉजिकल ब्लिकर्स' न हो तो मैं समझता हूं कि फैसले ज्यादा सही होते हैं।

दूसरे की भूमिका समझने की तत्परता जे० पी० की बुद्धिनिष्ठा का स्थायी भाव है। तभी उनके स्वभाव में उत्कटता होते हुए भी असहिष्णुता नहीं है। अनाग्रह के कारण उनका सौहार्द मतभेदों को चीरकर प्रतिपक्षी के भी हृदय को स्पर्श करता है।

2

सरदार पटेल, डा० लोहिया से जे० पी० के बीच कुछ ऐसे पत्र-व्यवहार हुए हैं जो

काफी कटु हैं। लेकिन जब-जब उनके बारे में बातें हुई हैं, उन दोनों के प्रति, विशेषकर 'राममनोहर' के प्रति जे० पी० के चित्त की गहराई में जो सौहार्द था, सहज प्रेम, वह सदा अक्षुण्ण रहा है।

'यह शख्स देना ही जानता है, लेने या पाने पर उसकी दृष्टि ही नहीं जाती।...'

'इसका जीवन खोए अवसरों की कहानी है।...'

'राजनीति में इस प्रकार प्रच्छन्न रूप से हस्तक्षेप करने में जे० पी० को मजा आता है।...'

'जयप्रकाश तो जब-तब, बस चूक जाता है'।

'सर्वोच्च पद की घुड़दौड़ में जयप्रकाश हमेशा गलत घोड़े का चुनाव करता आया है।'

'जे० पी० तो अब सुधारवादी हो गए, अब वह क्रांतिकारी नहीं रहे।'

जे० पी० ने लिखकर दिया है : 'अब इन सब लोगों को कैसे समझाऊं ?... यह मेरे स्वभाव में ही नहीं है। मैं कभी भी अतिवादी नहीं रहा हूं—जब मार्क्सवादी था तब भी नहीं और उन्नीस सौ बयालीस में भूमिगत कार्य करता था तब भी नहीं।...एक क्रांतिकारी के रूप में मेरा दिल, मार्क्सवादी जिसे 'मास वर्क' (जनता के बीच में रहकर काम करना) कहते हैं, उसी में जुड़ा रहा है।

किसी न किसी बहाने जयप्रकाश का नाम पूरा देश जानता है। ग्रामदान, भूमिदान के लिए जब वह गांव-गांव घूमे, तो उनके पैरों से धूल उड़कर माथे पर आ बैठी। वह जैसे एक गांव से दूसरे गांव के लिए चलते हैं, बीच में न जाने कितने लोग अपने दुखों, समस्याओं और हारे हुए सवालों को लेकर उन्हें घेर लेते हैं। वह स्वीकार करते चलते हैं। और वह एक ऐसे प्राणी होते चले जाते हैं, जिसके लिए राजनीतिज्ञ सोचता है, यह मुझे मिनिस्टर बना देंगे। किसान सोचता है, कलक्टर साहब हैं, मेरे गए हुए खेत को वापस दिला देंगे। मजबूर किसान दौड़ता है, सरकार हमरा खेत में पानी न रखे। मजदूर सोचता है, यही हैं वह कामरेड जो मेरा हक दिला देंगे। स्त्री को विश्वास है, यह मेरे भागे हुए पति को वापस घर ला देंगे। बच्चे सोचते हैं, बाबा हैं दुआ दे देंगे तो गांव में हवाई जहाज उतर पड़ेगा। ऐसा क्यों है ?

जे० पी० अपने लिए कुछ नहीं चाहते।

यह सबसे विनम्र हैं। किसी से नहीं डरते।

यह दूसरों से अपने आपको जोड़कर ही जे० पी० से जयप्रकाश होते हैं।

भूमिगत नागाओं ने इसी जयप्रकाश में अपना हितकारी मित्र पाया। शेख अब्दुल्ला ने इनमें अपना हमदम और दोस्त देखा। चंबल घाटी के डाकुओं ने अपना विश्वासपात्र पाया। और अब सारे उदास निराश युवावर्ग ने इनमें अपना खोया हुआ पिता और गुरु पाया।

जयप्रकाश बिल्कुल समझ में नहीं आते। जिसके खिलाफ लड़ते हैं, उसी के घर जाते हैं। 'बताइए साहब, क्या जरूरत थी इन्हें गुजरात से लौटकर इंदिरा गांधी के यहां जाकर मिलने की ?'

'सारे लोग इस आदमी को इस्तेमाल करते हैं।'

पर कुछ लोग चुपचाप इसे निरख रहे हैं। नहीं जनाब, यह शख्स कुछ गहरी चीज तलाश रहा है हिंदुस्तान की सियासत के अंदर। जी हां, यह नहीं कि इस पार्टी की जगह दूसरी पार्टी आ जाय उससे कोई फायदा नहीं। कोई फर्क नहीं। जनाब, यह आंदोलन नहीं, संघर्ष की बात कर रहा है। बाहर के परिवर्तन से क्या मतलब ? परिवर्तन भीतर ही भीतर। निहायत खतरनाक आदमी है।

सोचता हूं जे० पी० में जितने गुण, अवगुण हैं, इतना, इतना उन्होंने पढ़ा है, कर्म किए हैं, इतने दंड, इतनी यातनाएं सही हैं, इतना प्यार और नफरत मिली है उन्हें। इतने सुअवसर और परिस्थितियां मिली हैं, और खोई हैं, इनमें से कोई भी एक चीज मुझे मिली होती तो मैं साधारण से असाधारण हो गया होता। मेरे बोलने का ढंग असामान्य हो गया होता, मेरा रंग-ढंग, मेरा सारा स्वभाव और व्यवहार अजब हो गया होता। प्रभावती जैसी के साथ मैं पागल हो गया होता। मार्क्स और लेनिनवाद के साथ मैं क्रांतिकारी हो गया होता। राष्ट्रपिता गांधी के साथ मैं राष्ट्र का कोई बहुत बड़ा संबंधी बन गया होता। भाई नेहरू के साथ मैं कम से कम राष्ट्रपति बन गया होता।

पर जे० पी० हठात् अपने मित्रों से कहते हैं—देखिए, फिर ऐसा कभी मत कहिएगा। कोई सुन लेगा तो कितनी बदनामी होगी। उनके साथ के बहुत सारे लोगों की चिंता नाम की थी। सिर्फ जे० पी० ही भारतीय राजनीति में ऐसे 'बाबा जी' थे, जिन्हें बदनामी की चिंता थी, मनुष्य की, संघर्ष की बदनामी।

यहीं से जे० पी० के चरित्र का एक रहस्यसूत्र मिलता है। संयुक्त परिवार के बड़े बुजुर्ग के संस्कार हैं इनके। पूरे समाज को यह इस तरह देखते हैं जैसे एक परिवार हो। पर इनकी चेतना, परिवार के प्रत्येक सदस्य के लिए मानवीय अधिकारों और मूल्यों के लिए संघर्षनिष्ठ रहती है। इसका फल यह होता है कि संस्कारतः जे० पी० नैतिक धरातल पर रहते हैं, चेतनतः राजनीतिक धरातल पर। और आजादी के बाद तो ऐसा हुआ कि जे० पी० नैतिकता और राजनीति इन दोनों ध्रुवों पर एकांत यात्री की तरह आते-जाते रहते हैं। शायद इसीलिए वह समग्र प्रभाव नहीं बन पाता।

इस माने में गांधी जहां अखंड थे, संयुक्त मानव थे, वहां जे० पी० विभक्त हैं।

और यहीं से जे० पी० के निपट मनुष्य और राजनीतिज्ञ के बीच वह करुणा झलकती है जो खुली किताब की तरह होती हुई अबूझ और रहस्यमय लगती है और जे० पी० के मनुष्य के बारे में जानने की प्यास कभी बुझती नहीं।

गांधी ने कहा था : मेरा सब कुछ ले लो, मैं रहूंगा। जे० पी० ने ऐसा कभी कहा नहीं। पर वह सब कुछ छोड़ दिया, जिसके पीछे आज सारे राजनीतिज्ञ पागल हैं। गांधी का वह 'रहना' ईश्वर का रहना था। पर जे० पी० सब छोड़कर जिस चीज से आज जयप्रकाश हैं, वह है उनकी निपट मानवनिष्ठा, उसके लिए संघर्ष की आस्था।

पर वह क्या है जिसने जे० पी० को फिर भी जय बना रखा, सहज और साधारण जय, उसे बता पाना असंभव है। गांधी सहज नहीं थे, अपने पहनावे से

लेकर, पूरे चरित्र और व्यवहार में। वह साधारण से असाधारण हो गए। पर यह असाधारण से साधारण ही बने रहे, पता नहीं इसका रहस्य क्या है ?

यह अनुभव भी अजब है।

जे० पी० के साथ उनके बारे में तमाम प्रश्न उठते हैं पर कभी कोई शंका नहीं उठती। प्रश्न संकल्प बन जाते हैं। जे० पी० मतवादी नहीं हैं, कोरे विचारों के अर्थ में विचारवान भी नहीं हैं। लगता है यह चित् पुरुष हैं जो मत और विचार की ओर से अपरिग्रही हैं। एक अजब ढंग का अनुभूतिशील चैतन्य इनमें प्रवाहित है। तभी न यह भारी लगते हैं, न दुरूह न दुर्गम। सदा उद्धत, प्रस्तुत और ताजा दीखते हैं। बहत्तर वर्ष की उम्र में भी। इतने अस्वस्थ, और प्रभावती जैसी पत्नी से रहित और इतने निपट अकेले रहने पर भी सदा प्रस्तुत और प्रसन्न।

मैंने कहा : जे० पी०, मैं आपसे कुछ बातें करना चाहता हूं।

जे० पी० ने दाएं हाथ की उंगलियों के बीच किसी शून्य को मलते हुए पूछा : क्या बात करेंगे ?

—कोई व्यक्तिगत बात !

वह चुप हो गए। मसलती हुई वे उंगलियां जैसे आकाश से नीचे गिर गईं।

मुंह से निकला : आह !···

मैं एकटक उन्हें निहार रहा था।

वह बोले : ज्यादा बात नहीं करूंगा। जाइए।

यद्यपि अभी तक कोई भी बात नहीं हुई थी। बातों से जे० पी० बहुत घबराते हैं। जैसे डरते भी हों। इधर-उधर देखने लगते हैं। जैसे चाहते हों, उनके आस-पास बहुत सारे लोग आकर बैठ जायें। उन्हें घेर लें और वह अपने-आपसे छुट्टी पा जाएं।

कोई नहीं मिलता तो पुकारते हैं : गुलाब ! क्या खाना बनाया है ?

लौकी की तरकारी। परवर की भाजी। दही।

मखाने की खीर ? भूख कतई नहीं है। अच्छा जाओ। देखो सेन साहब है ? अब्राहम कहां हैं ? अच्छा जाओ। सुनो। आज कौन दिन है ? मेरे कपड़े धुलकर आ गए ? तुमने अब तक नहाया नहीं ? क्या बज गए ? मुझे कोई दवा तो नहीं पीनी ? डाक्टर की वह पर्ची कहां है ? आह! अच्छा जाओ। हां, सेन साहब को फोन करो।

और फिर वही सन्नाटा।

वह सहसा यह कहते हुए उठ पड़ते हैं : अच्छा जाइए, फिर बात होगी।

—जी।

—ऐसा कीजिए, पटना आइए। पर वहां भी तो मौका नहीं मिलता। अच्छा इस जाड़े में सोखोदेवरा आश्रम आइए। पर क्या आइएगा। आप जब आते हैं तो मैं बीमार पड़ जाता हूं।

—जी।

—आपने चाय पी ?

—जी हां।

—आप कैसे आए हैं ?

—चला जाऊंगा ।

मैं जाने लगता हूं ।…उनकी एक धीमी आवाज सुनाई पड़ती है : सुनिए ।

—जी ।

—बाहर गंगाबाबू बैठे हों तो भेज दीजिए ।

—जी, अच्छा ।

—अब कब भेंट होगी ?

—जब आज्ञा दीजिए ।

—अच्छा जाइए ।

बस उनके पास इसी तरह चुपचाप आना-जाना ही हो सकता है । पर उनके पास बैठना, उनके संग होना एक अनुभव लगता है । बातें करते हैं तो सोचते भी रहते हैं । बोलते-बोलते मुस्कराते रह जाते हैं । सामने वाला समझता है, उसकी बातों पर मुस्करा रहे हैं ।

इसलिए और नहीं पता लग पाता कि वह बिल्कुल शांत मन से ढीले-ढाले बैठे रहते हैं । जैसे चारों ओर से आश्वस्त हों, निर्विघ्न । ऐसे नहीं लगते कि यही जयप्रकाश नारायण हैं । वह अपने से अधिक कुछ भी अतिरिक्त नहीं लगते । कर्त्तव्यनिष्ठ तो दिखते ही नहीं । गृहस्थ दिखते हैं । जैसे भरे-पूरे परिवार में, घर का कोई बुजुर्ग बैठा हो । जिसे सबकी चिंता हो । और जो खुद सब की चिंता हो ।

हर क्षण जे० पी० हार्दिक होते हैं । अपने बौद्धिक को पास नहीं आने देते । कोई उनसे गंभीर बहस छेड़ता है तो उन्हें बड़ा रस आता है । पर उसमें वह उलझते नहीं । बोलने वाले को भी नहीं उलझने देते । वह प्रकट होता चला जाय, जे० पी० का यह प्रयत्न बराबर बना रहता है । पर उस बीच, और काम भी अबाध गति से चलता रहता है । उन कामों के प्रति बिना चौकस रहे भी । जैसे आते हैं और होकर आगे बढ़ जाते हैं । वह किसी को कभी रोकते नहीं, आगे बढ़ा देते हैं । और पीछे मुड़कर उसे देखते भी नहीं । आगे देखने का जैसे क्रम लगा हुआ है ।

तभी इन्हें आंदोलन में उतना विश्वास नहीं है, जितना कि संघर्ष में है । और सबसे ज्यादा आस्था है संघर्ष में, अबाधता में, निरंतरता में । संघर्ष की इसी अबाधता को जहां कहीं भी बंधा हुआ, टूटा हुआ सीमित और कुंठित होते हुए देखा वहीं उस व्यवस्था को, दल और विश्वास को छोड़कर यह आगे बढ़ गए । चाहे मार्क्सवाद हो, चाहे साम्यवाद, चाहे कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी हो, चाहे सोशलिस्ट हो, चाहे पी० एस० पी० हो और चाहे सर्वोदय हो और अंत में चाहे स्वयं जे० पी० ही क्यों न हो । पर उनमें रहने वालों ने हमेशा जे० पी० पर यह कहकर पत्थर फेंके हैं कि यह भगोड़ा है, अवसरवादी है, व्यक्तिवादी है, प्रतिक्रियावादी है, सुधारवादी है, संशोधनवादी है, दक्षिणपंथी है…। पर सदा ऐसे फेंके हुए पत्थर उन्हें छूकर ऐसे कांटे बन गए हैं जो पत्थर चलाने वालों के पैरों में अक्सर चुभते हैं । और तब उन्हें दर्द की एक टीस होती है और उनके मुंह से निकलता है : हाय ! यह शख्स हमारी पार्टी का लीडर क्यों नहीं हुआ ? यह हमेशा क्या-क्या करता रहता है ? बोलता रहता है ?

जे० पी० ने दो टूक उत्तर दिया है : आप कहते हैं कि जयप्रकाश नारायण नेता बने, लेकिन नेता बनकर क्या करे और कहे वह जो आप चाहते हैं ? यानी जयप्रकाश नारायण अपना दिमाग कहीं रख आए, उसे कहीं ताले में बंद कर आए। आप उसके दिमाग को, कार्यकलाप को, विचार को समझना चाहते हैं ? वह क्या कर रहा है, क्या बोल रहा है, उसका समाजवाद से अथवा जनता के साथ क्या संबंध है ? यह सब आप समझना चाहते हैं ? क्या आपको कोई ऐसा नेता मिलेगा जो आपकी शर्तों पर आपका नेता बनने को तैयार होगा ? मैं अपनी शर्तों पर नेता बनने को तैयार हूं। मानिए मेरी शर्त और चलिए गांव में मेरे साथ। मैं जंगल में नहीं गया हूं। हिमालय की गुफाओं में नहीं गया हूं। गांधियन इंस्टीट्यूट में बैठा-बैठा किताब नहीं पढ़ रहा हूं'''।

ऐसा अनुभव क्यों होता है जे० पी० के पास आए हुए तमाम साथियों को कि जयप्रकाश ने हमें छोड़ दिया। शायद इसीलिए कि वह साथी से ज्यादा उसके व्यक्ति से जुड़ते हैं। उसे सतत अपनी यात्रा के साथ बढ़ते चलते रहने को राजी करते रहना चाहते हैं। जब वह राजी नहीं होता और यात्रा का कोई मोड़ आ जाता है तो सहयात्री उन्हें छोड़ देते हैं। दोस्त वहीं ठहर जाते हैं। तब अकेले जाना पड़ता है। राह में अकेले उन साथियों की उन्हें बड़ी याद आती है। वह सोचते ही रह जाते हैं—अपने सब साथियों को भी इस नई यात्रा में अपने साथ चलने के लिए राजी कर सका होता तो मेरे दिल में बेहद खुशी होती। किन्तु ऐसा संभव नहीं हो सका। बल्कि आज तक बहुत सारे साथियों की ओर से यह शिकायत होती रही है कि जयप्रकाश नारायण ने हमें छोड़ दिया और उनके ऐसा करने से राजनीति को, खासकर समाजवादी आंदोलन को भारी क्षति पहुंची।

जे० पी० निहायत साफ-सुथरे कपड़े पहनते हैं। सादगी के साथ सफाई—यह बात पहनावे से लेकर उठने, बैठने, बोलने और व्यवहार तक चारों ओर उनके साथ फैली है, मैल का कहीं छींटा भी नहीं सह सकते।

गांधी जी ने असत्य को ही मैल समझा था। गांधी की ही तरह जे० पी० घोर से घोर अपराध के प्रति सदय और सहृदय थे। पर मैल के प्रति जितने निर्मम गांधी थे, जे० पी० इस मामले में उतनी दूर तक नहीं जाते।

लगता है जे० पी० के दो मूल संस्कार हैं। पहला है अरक्षा की भावना। दूसरा है वफादारी। अरक्षा की भावना ने इन्हें हर स्थापित सत्य के प्रति जांच पड़ताल और प्रयोग करके पहले देख लेने के लिए विवश किया है। रसायन शास्त्री की तरह हर रसायन को सीधे जीवन की प्रयोगशाला में ही देखते-परखते हैं। मानव कल्याण, मानव स्वतंत्रता ही इनकी वह जीवन प्रयोगशाला है जहां से यह व्यक्ति के मानव मूल्य को कीमती से कीमती चीजों को, महान से महान विश्वासों को और प्रिय से प्रियतम सिद्धांतों को अरक्षा की कसौटी पर, प्रतिमान पर, परखते हैं। अगर वह उस प्रतिमान पर खरा नहीं उतरा तो उसी अरक्षा के कारण वहां से आगे बढ़कर मानवीय मूल्यों की रक्षा के नये क्षितिज को छूने दौड़ते हैं। कोई परवाह नहीं, कोई कितना पागल कहे। बात भी सही है—दौड़कर क्षितिज को छूने वाला और क्या कहा जाएगा ?

दूसरी बात है वफादारी। हर तरह के दोस्तों से लेकर घर-परिवार, पड़ौसी शहर, मुहल्ला, प्रांत, देश और विश्व तक के हित कल्याण के लिए वफादारी। हर विस्थापित के प्रति वफादारी। हर सताए हुए, शोषित, दलित, घायल दुखी के प्रति वफादारी। जिस समय, जिस चरण और स्थिति में जो विश्वास, जो संकल्प, जो विचार ले लिया उसके प्रति पूर्ण वफादारी। यह सामान्य स्तर पर नहीं, शुद्ध व्यक्तिगत स्तर की वफादारी।

3

जे० पी० जब दिल्ली आते हैं तो जे० जे० सिंह के अलावा इंडियन ऐक्सप्रेस के गेस्ट हाउस में भी टिकते हैं। गोयनका का इस तरह अतिथि बनने का क्या मतलब है, इसे जे० पी० जरूर जानते हैं, क्योंकि इसकी चोट सहते हैं। गोयनका उनके मित्र हैं। और उस मित्र के खिलाफ बहुत सारी बातें हैं। पर उन बातों के नाते जे० पी० अपने मित्र को छोड़ दें, यह उनकी दोस्ती के प्रति वफादारी की भावना के खिलाफ है।

जे० पी० चीजों को, व्यक्तियों को, दूसरों की उन नजरों से नहीं देखते, जिनमें खुद एक मैल है, वह अपनी नजरों से देखते हैं। वह सदा अपने निजी विवेक और अपनी नैतिकता से देखते हैं और उसी के अनुरूप व्यवहार करते हैं। इसके लिए वह दूसरों की नैतिकता और विवेक का खंडन नहीं करते। और न इसके लिए अपनी नैतिकता और विवेक का प्रतिपादन करते हैं।

यह दुनिया जिसे घृणा करने से शायद ही कोई बच पाता हो, जे० पी० उससे घृणा नहीं करते। यह चरित्र शायद उन्हें गांधी से मिला है। वह ऐसे उदार प्रेमी हैं जिनके अंक में विरोधी, डाकू, अपराधी, विद्रोही, नक्सलाइट और फरारी के लिए जगह है। और उसकी रक्षा, उसकी मुक्ति के लिए जे० पी० अपनी जान की बाजी लगाते हैं।

जे० पी० भावना के आदमी नहीं हैं। वह वासना-पुरुष हैं। भावना तो सहज ही तृप्त हो जाती है। उससे आदमी विरत हो सकता है। पर वासना कभी नहीं मरती।

जे० पी० की वह वासना क्या है?

समानता, स्वतंत्रता और बंधुत्व।

इसके लिए उन्होंने जेलें काटीं। अज्ञातवास की जोखिमों से गुजरे हैं और साथ ही साथ स्वतंत्रता को राख होते हुए देखकर सब को छोड़कर उसे बचाने के लिए अकेले संघर्षरत हुए हैं अपने इसी निजी बुनियादी विश्वास के सहारे कि मनुष्य पूर्ण सत्य तक भी नहीं पहुंच सकता, किन्तु वह क्रमशः असत्य को कम करते-करते सत्य के पथ पर लग सकता है।

गांधी का ईश्वर क्या था? सत्य ही उनका ईश्वर था। जे० पी० का सत्य ईश्वर नहीं है। यह सत्य एक रसायन है, एक चीज है, केमिकल है जिसे विश्वास की भूमि में डालकर कर्म का हल चलाकर आंसू और धूप से नये मनुष्य की एक नई फसल उगाना चाहते हैं।

कहां से मिला यह विश्वास उन्हें ? कैसे यह नया रसायनशास्त्र उनके हाथों लगा ?

अपने लड़कपन में, जैसे उस समय के सभी लड़के होते थे, जयप्रकाश एक कट्टर राष्ट्रवादी थे। उनका झुकाव क्रांतिकारी साधनों की ओर था। तो भी उन दिनों दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह के इतिहास ने उनके तरुण हृदय को मुग्ध कर लिया। उनके क्रांतिकारी विचार पक्के नहीं हो पाए थे कि गांधी जी का प्रथम सत्याग्रह आंदोलन एक चढ़ते हुए तूफान की तरह देश में छा गया। उस जमाने के उन असंख्य नौजवानों में से जयप्रकाश भी एक युवक थे जो सूखी पत्तियों की तरह उस तूफान में उड़कर कुछ देर के लिए आकाश में पहुंच गए। एक ऊंचे विचार की उड़ान में बहुत ऊंचे उड़ जाने का वह अल्प अनुभव उनके अंतर में कुछ ऐसी छाप छोड़ गया जिसे आगे काल और वस्तुस्थिति की भयंकरता भी नहीं मिटा सकी।

'यही वह समय था, जब स्वतंत्रता मेरे जीवन का एक आकाशदीप बनी जो आज तक वैसी ही बनी हुई है। कालांतर में वह स्वतंत्रता अपने देश की स्वतंत्रता मात्र के भाव का अतिक्रमण करके मनुष्य की एक जगह और सब प्रकार के बंधनों से मुक्ति ही नहीं, बल्कि इससे आगे बढ़कर मानवीय व्यक्तित्व की स्वतंत्रता, विचार की स्वतंत्रता, आत्मा की स्वतंत्रता अर्थदात्री बन गई। यह स्वतंत्रता जीवन की एक निष्ठा बन गई है। मैं रोटी के लिए, सत्ता के लिए, सुरक्षा के लिए, समृद्धि के लिए, राज्य की प्रतिष्ठा के लिए या किसी अन्य वस्तु के लिए इसके साथ समझौता नहीं कर सकता।'

अमेरिका में पूरी गहराई से मार्क्सवाद पढ़ा और सोवियत कम्युनिज्म की दीक्षा ली। फिर भी स्वतंत्रता के उस लक्ष्य में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। मार्क्सवादी सिद्धांत और लेनिन की रोमांचकारी सफलताएं गांधी की सविनय अवज्ञा और असहयोग पद्धति की अपेक्षा अधिक निश्चित और शीघ्रगामी लगीं। स्वतंत्रता के अर्थ में समता और बंधुत्व की एक और ज्योति जल गई।

जे० पी० जब अमेरिका से भारत लौटे तो उस समय पूर्ण स्वराज्य का राष्ट्रीय आंदोलन गर्म था। जे० पी० अपने पूरे उत्साह के साथ उस संघर्ष में कूद पड़े। पर इन्होंने देखा कम्युनिस्ट उस संघर्ष में कहीं नहीं हैं। जे० पी० को जब पता लगा कि कम्युनिस्ट लोग राष्ट्रीय आंदोलन को बुर्जुआ आंदोलन और गांधी को भारतीय बुर्जुआ वर्ग का पिट्ठू कहकर निंदा कर रहे हैं तो वह शर्म में डूब गए और उसका विरोध किया।

जे० पी० भारतीय कम्युनिस्ट दल से अलग होकर स्वतंत्रता-संग्राम के सैनिक हो गए। पर तब तक स्वतंत्रता और स्वराज्य का अर्थ उनके लिए राष्ट्रीय आजादी से भी बहुत व्यापक हो गया। स्वतंत्र भारत का अर्थ अब उनके लिए समाजवादी भारत हो गया। और इसी चेतना भूमि से उन्होंने अपने दोस्तों के साथ कांग्रेस समाजवादी दल को जन्म दिया। आगे एक समय आया जब भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी और कांग्रेस समाजवादी दल की संधि हुई। पर इस

संयुक्त मोर्चे का मायाजाल, स्तैलिन काल के रूसी मुकदमों और हत्याओं से टूट गया।

जे० पी० ने मार्क्सवाद का पुनः परीक्षण किया। रूसी समाजवाद को परखा। पाश्चात्य समाजवाद को समझा। एशियायी समाजवाद की सीमाएं देखीं। और अंत में एक बहुत बड़े प्रश्न के आमने-सामने आ खड़े हुए : मार्क्सवाद के साधन और साध्य का प्रश्न; भौतिकवाद और अच्छाई की प्रेरणा का प्रश्न।

स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व का वही आकाशदीप जिसने जे० पी० के जीवन का रास्ता प्रशस्त किया और जो उन्हें लोकतांत्रिक समाजवाद की ओर ले आया, उसी ने आगे गांधी मार्ग पर मोड़ दिया।✓

तात्त्विक दृष्टि से भौतिकवाद में न तो नैतिक व्यवहार के लिए कोई आधार है न अच्छा बनने के लिए कोई प्रेरणा या अभिक्रम ही।···

'मनुष्य, उसकी चेतन-शक्ति, समाज और संस्कृति—जिसका उसने निर्माण किया है—यदि ये सब भूतद्रव्य की, फिर वह द्वंद्वात्मक दृष्टि से चाहे कितना सक्रिय क्यों न हो, अभिव्यक्ति मात्र है, तो मैं नहीं समझता कि क्यों किसी व्यक्ति को अच्छा बनने, अर्थात् उदार, दयावान और निःस्वार्थी बनने की कोशिश करनी चाहिए? तब किसी दुर्बल, दीन-दुखी के प्रति किसी को सहानुभूति क्यों होनी चाहिए? मृत्यु के उपरांत जो द्रव्यभूत है, वह भूतद्रव्य में विलीन हो जायेगा। अतएव नैतिक व्यवहार के लिए उससे क्या प्रेरणा मिल सकती है?'

जयप्रकाश ने इन प्रश्नों से साक्षात्कार करके पाया कि 'मनुष्य जब सृष्टि के समष्टि रूप को समझने या उसके साथ आत्मसाक्षात्कार करने का प्रयास करता है तो नैतिक मूल्य पैदा होते हैं। इस समष्टि का जिसे अनुभव हो गया है उसके लिए नैतिक मूल्यों के अनुसार आचरण करना उतना ही सहज और स्वाभाविक हो जाता है, जितना सांस लेना।'

यही है जयप्रकाश का सर्वोदयी व्यक्तित्व। यहीं से उनकी राजनीति लोकनीति में बदल जाती है और दलीय राजनीति अदलीय राजनीति हो जाती है।

आजादी के बाद गांधी जी की लोक-सेवक-संघ की कल्पना और दर्शन को पहली बार जे० पी० ने व्यवहार का रूप देना शुरू किया। यही आधार है उनके 'जीवनदान' का। और उस दान से उपजे हुए अनेक प्रकार के दानों का, संकल्पों और उनके व्यवहारों का। यही है वह नई आस्था, नया मानव विश्वास, नई नैतिकता और वह नया रसायन जो उस लंबी जय-यात्रा में जयप्रकाश के हाथों लगा। निश्चय ही यह आस्था और कर्म एक ऐसी नई प्रक्रिया है, जिसका दुनिया को अभी कोई अनुभव नहीं है।

पश्चिम की सांस्कृतिक परंपराओं और उपलब्धियों की देन है, 'व्यक्ति'। और इसके विपरीत भारत की संस्कृति और इसकी मनीषा की उपलब्धि है, 'मनुष्य'। व्यक्ति 'एटान्मस' है, स्वायत्त है, कुछ भी कर डालने के लिए आजाद, कुछ भी सोचने और कर गुजरने के लिए स्वतंत्र मनुष्य इस तरह स्वायत्त नहीं है—'एटान्मस' नहीं है। मनुष्य यहां अपने कर्मों को पूरा करके, उसी के द्वारा

स्वतंत्र होता है। स्वतंत्र होकर फिर मुक्ति के लिए साधना करता है। यहीं से एक भयानक विरोधाभास और संकट भारतीय समाज में पैदा होता है, एक ऐसा अंधकार, जहां मनुष्य समाज से अलग छूट जाता है, जहां उसकी निजी मुक्ति ही उसके जीवन का लक्ष्य बन जाती है और समाज उसके लिए अप्रासंगिक हो जाता है। वह समाज से आंख मूंदकर, उससे आगे निकलकर, बल्कि भागकर उस ब्रह्म से, उस अध्यात्म से अपने को जोड़ने लगता है; जो निश्चय ही अदृश्य है, अव्यक्त है, और समाज से बाहर है।

जयप्रकाश ने अपने समाजशास्त्रीय अध्ययन, समाजवादी सत्य की तलाश और अपनी अर्जित अनुभूतियों से पाया कि मनुष्य एक भाव है, सूक्ष्म तत्त्व है। व्यक्ति ही इसका प्रकट रूप है। मनुष्य, व्यक्ति के ही रूप में तो सामने आता है। और समाज से बाहर इस व्यक्ति की कोई कल्पना नहीं है। कोई अर्थ नहीं और प्रासंगिकता नहीं है।

जे० पी० ने पश्चिम के व्यक्ति को भारत के मनुष्य के साथ जोड़कर जिस आदमी की कल्पना की है, खोज की है, वह जे० पी० की उतनी ही बड़ी देन है जितनी बड़ी देन गांधी की, 'सत्य मेरा ईश्वर' है।

वह सत्य मनुष्य है, जो व्यक्ति के रूप में समाज में संघर्षरत है। जे० पी० की यही खोज वह नया रसायन है, वह नई चेतना है, जिसे मार्क्सवाद, फिर गांधी-दर्शन और अपनी निजी नैतिकता की खरल में से उन्होंने पाया है, अपनी प्रयोगशाला में ढूंढ़ा है।

इस अभूतपूर्व खोज को जे० पी० ने कहीं, कहा नहीं है, शब्दबद्ध नहीं किया है, उसे वह अपने कर्मों और व्यवहारों में जी रहे हैं।

यही वह नया प्रकाश है, वह नई शक्ति है, जो उन्नीस सौ तैंतीस की उस सुबह नासिक सेंट्रल जेल के फाटक से बाहर निकली थी, जो मार्क्स, गांधी की जलधारा के बीच से गुजर कर उस दिन आठ अप्रैल उन्नीस सौ चौहत्तर को पटना की सड़कों पर उस अभूतपूर्व मौन जलूस के बीच रूपायित हुआ है। यही है वह, जिसने गया में जीवनदान दिया था, जिसे देखकर नेहरू, राजेंद्रप्रसाद, कृपलानी और विनोबा हतप्रभ रह गए थे। यही है वह, जो अपनी खतरनाक अस्वस्थता के बावजूद मुसहरी में नक्सलवादियों के आतंक भरे गांवों में प्रभावती के साथ दिन रात पैदल घूमा था।

यही है वह जिसने कहा : 'हमारी दलीय पद्धति लोगों को भेड़ों की स्थिति में ला देना चाहती है, जिनका एकाधिकार केवल नियत समय पर गड़रियों को चुन लेना है जो उनके कल्याण की चिंता करेंगे। मुझे इसमें स्वतंत्रता का दर्शन नहीं हुआ, उस स्वतंत्रता या स्वराज्य का जिसके लिए मैं लड़ा था और इस देश के लोग जिसके लिए लड़े थे।'

जे० पी० की इस चेतना का सबसे बड़ा मानवीय उदाहरण, उनका स्वयं का व्यक्तिगत जीवन है। वह दाम्पत्य जीवन जिसे उन्होंने अपनी पत्नी प्रभावती के साथ जिया। लोग यह सुनते ही परेशान हो जाते हैं कि जे० पी० ने प्रभावती को ब्रह्मचर्यव्रत क्यों लेने दिया ? क्योंकि प्रभावती जे० पी० की पत्नी के अलावा

एक स्वतंत्र व्यक्ति भी थीं—असीम और प्रबुद्ध व्यक्ति। यही चुनौती जे० पी० का स्वप्न है, साधना है। तभी पत्नी का धर्म, पति का धर्म दोनों यहां समान हो गए। दोनों ब्रह्मचारी रहकर भी पति-पत्नी ही नहीं, दम्पती रहे। एक साथ, एक पलंग पर सोए। जे० पी० की परछाईं की तरह प्रभावती ने जीवन जिया। ऐसा प्रगाढ़ गहन प्रेमिल दाम्पत्य जीवन, जिसका संसार में कोई दूसरा उदाहरण नहीं।

अमेरिका का एक लेखक आया था—हर्बर्ट पासिन। वह जे० पी० की 'बायोग्राफी' लिखना चाह रहा था। इसके लिए उसने बहुत सारी सामग्री इकट्ठी की। और वह उलझ गया जे० पी० के 'सेक्स लाइफ' को लेकर। जे० पी० और प्रभा के दाम्पत्य जीवन को लेकर हतप्रभ रह गया।

पश्चिम का वह व्यक्ति भारत के इस मनुष्य को कैसे समझ सकता है? सेक्स के बिना भी ऐसा दाम्पत्य जीवन जिया जा सकता है—यह उसकी कल्पना के बाहर की बात थी। जे० पी० का ब्रह्मचर्य सेक्स के प्रति नहीं था। वह ब्रह्मचर्य था प्रभावती के व्यक्ति के प्रति। उसकी स्वतंत्रता के प्रति। दूसरी बात। प्रभावती गांधीवादी थीं। उनके लिए वह ब्रह्मचर्य एक प्रयोग था। सत्य के लिए प्रयोग—जो गांधी किया करते थे। वह गांधी जो सत्य के प्रति निर्मम थे। पर जे० पी० के लिए वह ब्रह्मचर्य प्रयोग नहीं था। साक्षात् जीवन था जो सहज संकल्प से पैदा होता है, प्रयोग की निर्ममता से नहीं। तभी जे० पी० और प्रभा का दाम्पत्य जीवन, गांधी और बा के दाम्पत्य जीवन की तुलना में बिल्कुल अलग था। वह शुद्ध हिंदू घर-गृहस्थी का जीवन था।

कल्पना कीजिए गांधी और 'बा' दोनों रेलगाड़ी में सफर कर रहे हैं। स्टेशन पर उनके डिब्बे की सफाई के लिए जमादार आता है। मन से चाहते हुए भी 'बा' गांधी के सामने उस जमादार से अपनी पानी भरी सुराही उससे दूर नहीं हटा सकतीं। दूसरी ओर जे० पी० और प्रभावती गाड़ी में सफर कर रहे हैं। सफाई करने वाला जमादार आता है। प्रभावती की सुराही हाथों में उठाए हुए जे० पी० खड़े हो जाते हैं। इसका पता न वह जमादार को होने देंगे न प्रभावती को। जे० पी० को पता है, प्रभा के मन के किसी अदृश्य कोने में यह इच्छा है कि उसकी सुराही को इस तरह कोई नहीं छुए।

अपनी पूरी जवानी तक जे० पी० सामिष रहे हैं। प्रभा शुद्ध शाकाहारी रही हैं। प्रभा के सामने जे० पी० ने अपने हाथों से बहुत ही स्वादिष्ठ सामिष भोजन बनाए हैं। और पति पत्नी ने एक ही मेज पर एक ही साथ अपना-अपना भोजन किया है। प्रभावती भी खुद जे० पी० के लिए कभी-कभार सामिष भोजन तैयार करती रही हैं। जे० पी० को कब, कैसे, क्या चाहिए प्रभा इसके लिए हर क्षण प्रस्तुत रहती थीं। हर तरह से दोनों में साथ और अलग की रेखा खींच पाना मुश्किल है। कौन किसकी प्रिया है, कौन किसका प्रेमी है, कौन मां है, कौन संतान, यह बता पाना संभव नहीं है। फिर भी एक प्रभा हैं, एक जे० पी० हैं।

जे० पी० नाम में प्रभावती ने ही वात्सल्य का अमृत रस भरा है। पर उन्हें संबोधित करने के लिए कोई नाम नहीं था। वह संबंध सही अर्थों में अनाम था। जे० पी० उन्हें प्रभा नाम से बुलाते थे, पर उस संबोधन के अर्थ क्या हैं, इसे वही, अंतर्यामी ही जान सकता है।

'बा' ने गांधी की ही खातिर चार रुपये क्या रख लिए, उसके लिए बापू ने अखबार में छापा और प्रायश्चित्त किया। साठ-एकसठ में पटने में जे०पी० के पास एक भी पैसा नहीं। सेक्रेटरी ब्रह्मानंद ने कहा : तार भेजने के लिए पैसे चाहिए।

—कहां मिल सकता है अभी ?

—दीदी के पास ?

जे० पी० ने आवाज तक नहीं दी। प्रभा के पास गए। इतना ही बोले : चंदा ही तो है, कहां लेकर जाना है ?

जे० पी० में मनुष्य का वही व्यक्त रूप, 'व्यक्ति', प्रेय और श्रेय दोनों हैं। मनुष्य से न वह ऊपर उठना चाहते हैं, न नीचे आना चाहते हैं। वरना अब उनके लिए साधु महात्मा बनना कितना आसान है। लंगोटी लगा लेते और कुटिया में रहते। लाखों का दान चढ़ाया जाता। दिल्ली से पटना जाते समय, तब किराये की चिंता नहीं करनी पड़ती। स्टेशन जाते समय रास्ते में मुझ जैसे को दस रुपये का नोट देकर यह नहीं कहते कि 'रास्ते के लिए इतने में फल खरीद लीजिए।'

जे० पी० के लिए मनुष्य भीड़ नहीं है। उसे न किसी अंधविश्वास में बांधना चाहते हैं न किसी आध्यात्म के नाटक से आकृष्ट करना चाहते हैं। मनुष्य उनके लिए एक प्रबुद्ध, सचेतन, स्वतंत्र और समान जीवंत प्राणी है। जो किसी और की शक्ति से नहीं, अपनी ही शक्ति से चले, सोचे, व्यवहार करे। अच्छाई की प्रेरणा उसी के ही भीतर से पैदा हो। वह अपनी चेतना से स्वचालित हो।

जे० पी० का जितना अपना निजी विश्वास है, उतना ही, वही जयप्रकाश हैं। वह पूरे भारतवर्ष भर में, जन-जन में, हर जगह क्या ढूंढते हैं ? ऊपर से नीचे, बहुत नीचे, दूर बहुत दूर का वह आखिरी व्यक्ति जहां से आमूल परिवर्तन का संघर्ष शुरू हो। वह खुद उसका अंग बने। वही मनुष्य ढूंढते हैं और उसके लिएसंघर्ष का हथियार क्या हो, उसे तलाशते हैं।

पर जे० पी० का संकट क्या है ? यही कि वह हिंसा, अहिंसा से भी ऊपर मानव मूल्यों को अपने हाथों से ढीला नहीं होने देना चाहते। यही कि साध्य के आदर्शों के अनुरूप साधन की पवित्रता चाहते हैं। और सबसे बड़ा संकट जे० पी० का यह है कि वह बहुत सीधे, गऊ आदमी हैं। विश्वास और फलप्राप्ति के लिए दूसरों के प्रति जो निर्ममता चाहिए, वह उनमें कतई नहीं है। उसके लिए स्वयं अपने प्रति निर्मम तो हो सकते हैं, पर दूसरों के लिए निर्मम होने की कल्पना तक नहीं कर सकते।

प्रभावती के न रहने के बाद जे० पी० अक्सर अत्यंत 'टेंस' दिखते हैं। लगता है अपने सीने पर कोई बहुत बड़ा तनाव लिये हुए हैं, जिसे वह अपने पर से उतार नहीं पा रहे हैं। ऐसा भी लगता उनके भीतर कोई चट्टान है, जो अब तक टूट नहीं सकी है। पत्थर पिघल नहीं सका है। उन्हें बहुत नजदीक से जानने वाले कई व्यक्तियों ने कहा है—जे० पी० के भीतर एक रहस्य समुद्र है, जिसे अपने संग लिये हुए ही वह चले जायेंगे।

सारे सार्वजनिक कार्यों से एक वर्ष का अवकाश लेकर संभवतः वह एक बार उसी रहस्य समुद्र को खोलना चाहते थे। जो तब भी संभव नहीं हो सका, और जो

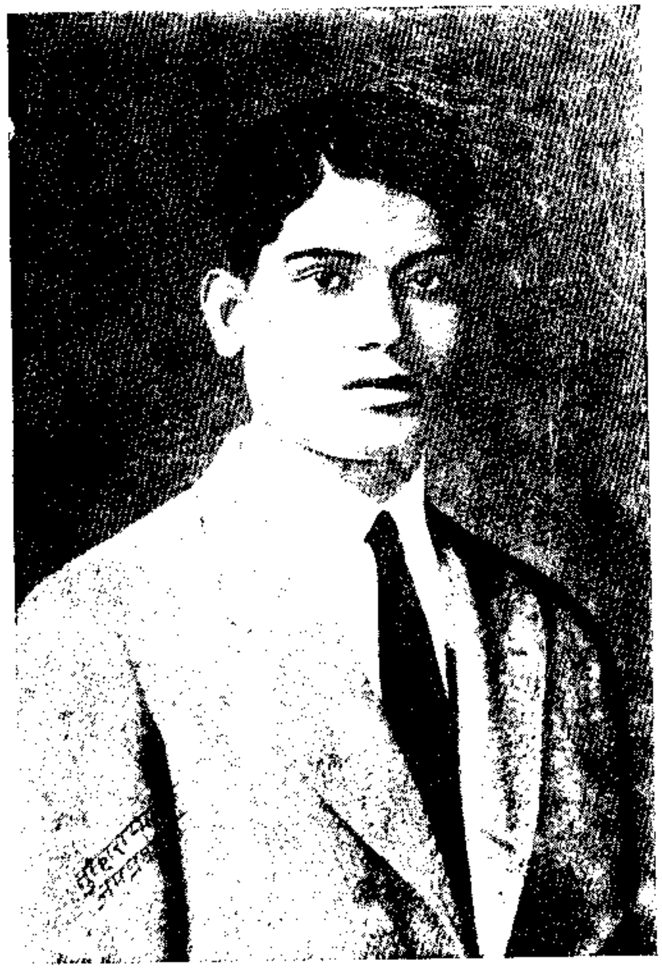

अमरीकी छात्र-जीवन

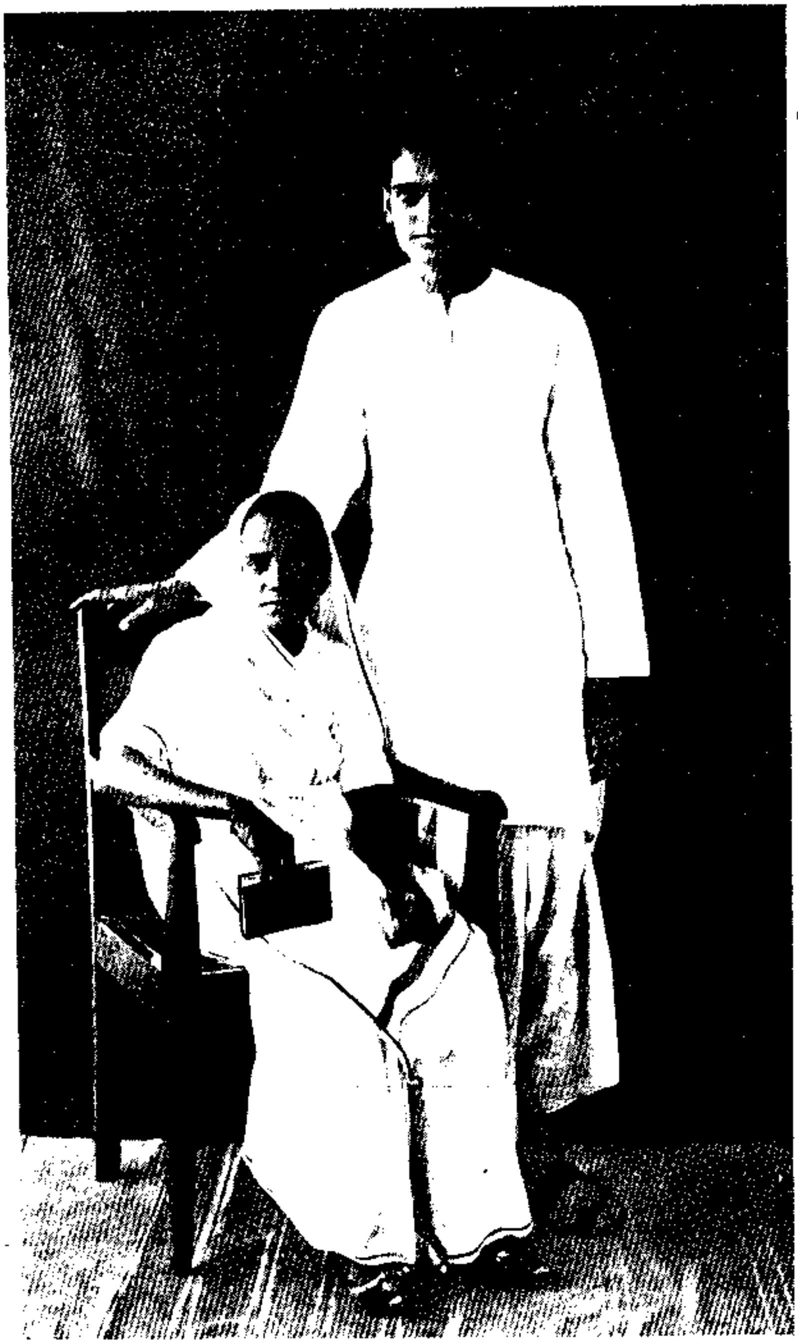

प्रभा और जयप्रकाश

क्रांतिकारी समाजवादी

सिताब दियारा : घर-आंगन

↑ सर्वोदयी

1942 की क्रांति के नायक ↓

↑ विनोबा के साथ

पूना उपवास ↓

आचार्य नरेन्द्रदेव के साथ

जीवन-दान पत्र पढ़ते हुए

समाजवादी

सहज और सौम्य

उन्नीस सौ चौहत्तर के जे० पी०

विली ब्रांट के साथ

जे० पी०

कभी संभव नहीं है। मूल कारण वही संपूर्णतः किसी को न दिए जा सकने का चट्टान है भीतर, जिसमें बूंद-बूंद जल रिसता रहता है, पर कोई झरना नहीं फूट पाता। मैंने जे० पी० को ठहाका मारकर, उन्मुक्त रूप से कभी हंसते नहीं देखा। ऐसा कोई चित्र भी नहीं मिला जहां वह खुलकर हंस रहे हों, किसी को अंक में बांधे हों, किसी के आलिंगन में बंधे हों या किसी को चूम रहे हों या किसी बच्चे को ही गोद में उठाए हों, पहाड़ या समुद्र तट पर खड़े निहार रहे हों, प्रकृति का आनंद ले रहे हों, किसी संगीत या नृत्य में आनंद विभोर हो गये हों। कितनी बार ऐसा हुआ है, रास्ते में खुजराहो और कोणार्क आए हैं, पर जे० पी० रास्ता काटकर दूसरी ओर निकल गए हैं।

जे० पी० अब भी आकर्षक हैं। सुंदर हैं देखने में अपनी सारी अस्वस्थता के बावजूद। पर जवानी में कितने मोहक और जादू डालते रहे होंगे, इसकी कल्पना की जा सकती है। युवतियां इनसे सहज ही आकृष्ट हुई हैं। अमेरिका में इनके साथ काम करने वाली युवतियों और पढ़ने वाली सुंदरियों ने उनके प्रति जे० पी० की उदासीनता को कोसा है। उनके युवक सुलभ व्यवहार की कमी का उपालंभ दिया है।

इस संदर्भ में जे० पी० ने मुझसे इतना ही कहा है : 'आई हैड नो टाइम फार प्लेजर सीकिंग'। बायालोजिकल नीड्स तो अलग चीज है, उसे तो पूरा ही होना है। सोचता हूं भीतर की चट्टान टूटती है, पिघल कर पानी-पानी हो जाती है केवल स्त्री के साथ भोगे और जिए हुए उन्मुक्त, संपूर्ण प्रेम से। यही है व्यक्ति का ब्रह्मचर्य। इसी का संगीत है समर्पण। इसी द्वारा आलाप से सम तक पहुंचा जाता है। पर जे० पी० और प्रभा के बीच का वह ब्रह्मचर्य कैसा था ? किस चीज से वह स्निग्ध और सम्मोहनीय था, जो किसी भी तरह फिर भी दुर्द्धर्ष, प्रखर, प्रचंड और वर्जनशील नहीं था ? कह पाने के लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं। केवल आंसू हैं, आह हैं। वही अनाहत भाषा जो आज जे० पी० के पास है।

चंबल घाटी शांति मिशन के काम के सिलसिले में प्रभावती रहित जयप्रकाश अकेले जब मुंगावली में खुली जेल का उद्घाटन करने के लिए जैसे ही उठे, उनके हाथ पैर कांप उठे। जैसे ही बोलने को हुए फफक कर रो पड़े और रोते ही रह गए।

नैतिकता और राजनीति, हृदय और बुद्धि के दो ध्रुवों पर घूमता हुआ यह यात्री, कहीं अपने व्यवहार में, चरित्र में समग्र और संपूर्ण आत्मिक हुआ है तो अपनी इसी प्रभा के साथ। यदि जे० पी० और प्रभा का मिलन दो व्यक्तियों का था, तो प्रेम एक मात्र उस सत्य के प्रति था, जिसे वैयक्तिक स्वतंत्रता और निजत्व की गरिमा कहते हैं। लेकिन यह मिलन, यह योग इतना अजब था कि अनेक की ओर से उन्हें अप्रेम ही नहीं, द्वेष तक मिला। आज, अब लगता है यह जय-प्रभा योग हुआ है, किया नहीं गया है। किया मनुष्य की ओर से जाता है। होता है केवल ईश्वर की ओर से। पर जब यह हुआ, तब जे० पी० पूरे नास्तिक थे। गांधी के कट्टर विरोधी थे। क्योंकि दोनों तब दूर-दूर थे। पर जैसे ही दोनों मिले मानो समस्त जीवन दर्शन ही खिल उठा। नास्तिकता, कब आस्तिकता बन गई, विरोध कब संयोग हो गया, आज तक समय और स्थान का पता नहीं है।

दूसरी ओर जे० पी० को जो आहत किए हुए है, उनके हृदय पर जो इतना भार और दबाव है, वह है उनके सपनों का भारत, जो टूटकर उनके भीतर शिलाखंड हो गया है। धीरे-धीरे वही खंड मिलकर अब चट्टान हो गए हैं। उसी से जे० पी० का माथा टकराता है और अब इस अवस्था में वहीं से आह निकलती है। जे० पी० बैठे-बैठे सहसा निःश्वास भरते हैं। लंबी सांस छोड़ते हुए मुंह से अनायास आह निकलती है।

एक दिन मैंने पूछा : आपको पुरानी बातें याद आती हैं ?

वह चुप मुझे देखने लगे।

मैंने कहा : स्मृतियां घेरे रहती हैं न ?

—नहीं। अब ऐसा नहीं है।

—आप पुरानी बातों को याद रखते हैं, यह आपका स्वभाव है। सरदार पटेल ने आपको इस बारे में कई बार लिखा है।

जे० पी० मुस्कराए : हमने उस आदमी को बहुत तंग किया। पर सरदार बहुत भले थे।

और गांधी ?

नेहरू ?

लोहिया, नहीं नहीं, राममनोहर ? जे० पी० बोले : मैं जीवन में तीन ही बार रोया हूं, बापू के स्वर्गवास पर। भाई (नेहरू) के निधन पर और राममनोहर के न रहने पर।

मुझे लगता है, पुरानी घटनाएं, स्मृतियां, सारे दुख-सुख, मान-अपमान, यातनाएं और आनंद जे० पी० के व्यक्तित्व में समा गए हैं। घुलमिल गये हैं, उस शक्ति और प्रकाश में मिलकर उनसे जो एक अद्वितीय रसायन भीतर पककर तैयार हुआ है, वही है जे० पी० का आध्यात्म सरोवर। यह आध्यात्म गांधी के आध्यात्म से अलग है। यह धर्म विनोबा के धर्म से भिन्न है। गांधी सत्यनिष्ठ थे। उनका सत्य समष्टि था। विनोबा तत्त्वनिष्ठ हैं। उन्हें अपना चरम लक्ष्य मिल गया। जे० पी० तत्निष्ठ हैं। और यह तत् समाजनिष्ठ है। यह चिन्मय है। यह हर क्षण गतिमान है। यह संघर्षमय और विकासमय है। इसमें जीवन के समस्त मूल्यों का सहकार है। इसमें संभावना के तरंग हैं। इसमें विरोधाभास हैं। क्योंकि इसमें निपट मानवीय चेतना के विविध तरंग हैं। एक अमूर्त कार्य के वक्ररेखीय परिणमन (वैरियेशन) हैं, जिन्हें जे० पी० की चेतना, विचारशक्ति, कार्य और व्यवहार दूर-दूर प्रक्षिप्त करना चाहते हैं, भेजना चाहते हैं। इसे जो खड़े होकर देख रहे हैं उन्हें लगता है, यह आदमी अंधेरे में खामखा कुछ टटोल रहा है। यह हारे हुए खेल को खेल रहा है। यह खोए हुए अवसरों का आदमी है। पर ऐसा नहीं है। अंधेरे में वही टटोलता है जिसके भीतर प्रकाश है। तभी वह उस अंधेरे में देखता है कि वहां कोई गरीब, प्रताड़ित, शोषित पर कोई व्यक्ति खड़ा है। खेल में हारकर और अवसर खोकर ही मनुष्य अपने एक ही जन्म में खुद पुनर्जन्म लेता है और तब उसी से एक नया युग प्रारंभ होता है। अंधेरे में हारे हुए जे० पी० को कुछ टटोलते हुए देखकर पता नहीं क्यों, कुछ ऐसा ही लगता है।

मुझे नहीं लगता जयप्रकाश अपने जीवन का बहुत सारा व्यक्तिगत रहस्य लिये हुए, छिपाए हुए चले जाएंगे। व्यक्तिगत अनुभूतियां हैं। पर व्यक्तिगत रहस्य नहीं हैं। जे० पी० का व्यक्तिगत वही है, उतना ही है, जितना कि उनका अपने भीतर और बाहर के अंधकार के खिलाफ लड़ी हुई लड़ाई है। अपने से बाहर जितना वह दूसरों की जिंदगी से जुड़े हैं वही है उनका व्यक्तिगत। गुलामी, अन्याय, झूठ, भ्रष्टाचार और पतन के खिलाफ जितना वह उठे हैं, वही है उनका व्यक्तिगत। वह अपने व्यक्ति से जितना सामाजिक हुए हैं, वही है जे० पी० का व्यक्तिगत। उदाहरण के लिए उनका जीवन सामने है।

जे० पी० के उत्कृष्ट क्षण तब होते हैं जब वह संघर्षरत होते हैं। हरिकीर्तन का शांत रूप जे० पी० का झूठा रूप है। उनका श्रेष्ठ और सत्य रूप है संघर्ष अभियान। और यही वास्तविक संदर्भ है उनका दूसरों से जुड़ने का। वह हर वक्त चारों ओर, व्यक्ति-व्यक्ति में यही सूत्र ढूंढ़ते रहते हैं—कि संघर्ष बिंदु कहां है। वही जगाते हैं और उतना ही खुद जगते हैं। वही टूटा, उलझा हुआ सूत्र सहेजकर बांधते हैं और उससे खुद बंधते हैं। बंधकर वह मुक्त होते हैं। संघर्षरत होकर वह शांत रहते हैं।

प्रभावती के स्वर्गवास के बाद जे० पी० का एकाएक जो नया रूप सामने आया है, लगता है यह उन्नीस सौ बयालीस के जयप्रकाश हैं। शरीर से इतने अस्वस्थ, पर चेतना से इतने स्वस्थ और जवान। शरीर से जर्जर पर चरित्र से इतने विकट सत्याग्रही।

उनके साथ संध्या समय दिल्ली की घास पर चुपचाप टहलते हुए, मुसहरी या सहरसा के ग्राम अंचलों में घूमते हुए लगता है, जीवन और समाज का आधार, उसका धर्म, सत्य नहीं हो सकता, केवल अहिंसा हो सकती है। सत्य तो भयानक है। सब कुछ तोड़ देने वाला, मिटा देने वाला सत्य अग्नि है। सहरसा का दारिद्रय, मुसहरी के नक्सल युवक, चंबल घाटी के डाकू, तिब्बत की करुणा, नागादेश की अपनी निजता, कश्मीर घाटी, पाकिस्तान और बंगला देश का मनुष्य, यह सब सत्य है। यह सत्य कहता है कि व्यवस्था में, सत्ता में, विश्वासों में आग लगा दो। तब बचेगा क्या? यही जे० पी० का प्रश्न है।

यही वह सलीब है जिसे अपने वृद्ध कंधों पर ढोते हुए वह सड़कों पर, पगडंडियों पर, गली और मुहल्लों में, घाटियों और तंग राहों पर घूम रहे हैं। और थककर उसी सलीब से बातें करने लगते हैं। 'इतिहास में क्या ऐसी एक भी सामाजिक क्रांति हुई है जो अपने अभीष्ट आदर्शों को प्राप्त करने में सफल हुई है, जरा फ्रेंच क्रांति पर तथा उसके समानता, स्वतंत्रता एवं भ्रातृत्व के आदर्शों पर विचार कीजिए। फिर रूसी क्रांति और लेनिन के इस उद्घोष पर भी विचार कीजिए कि 'क्रांति के बाद संपूर्ण सत्ता सोवियतों (पंचायतों)—श्रमिक सोवियतों, सैनिक सोवियतों और किसान सोवियतों के हाथ में होगी।'

'हिंसक क्रांति हमेशा किसी न किसी प्रकार की तानाशाही को जन्म देती है। और फिर यही कारण है कि क्रांति के बाद शासकों एवं शोषकों का एक नया विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग कालांतर में पैदा हो जाता है जिसके अधीन बहुसंख्यक जनता फिर एक बार गुलाम हो जाती है। इसीलिए मैं कहूंगा कि हिंसा कभी

तारक नहीं सिद्ध हुई है जैसा कि पीड़ित और शोषित लोगों को समझा दिया गया है।'

सहसा उन्हें कोई डांटता है : ऐ। मत बड़बड़ाओ यहां। देखते नहीं मीटिंग हो रही है। जनता को 'कन्फ्यूज' करता है···राइटिस्ट, रिवीजनिस्ट···पूंजीपतियों का···सी० आई० ए० का···।

क्या ?

चलो जवाब दो : ह्वाट आर योर सोर्सेज आफ इनकम ?

क्या ?

कैसे जिंदा हो ? क्यों ?

उन्हीं का न्यायालय है। वही न्यायाधीश हैं, वह शांत मन से उनके कठघरे में खड़ा होकर जवाब देता है : 'सुनो डिट्रैक्टर्स ! जिस दिन जयप्रकाश विदेशी टहलुआ (फारेन स्टूज) हो जाएगा, इस देश में कोई देशभक्त नहीं बचेगा। इसमें चाहे जितना अहंकार लगे, मैं विवश हूं।···मैं उसी तरह अपना पालन-पोषण करता हूं जैसे राष्ट्रीय स्वतंत्रता-संग्राम के दिनों दोस्तों और संस्थाओं की मदद से, कांग्रेसजन करते थे।···गांधी की हत्या के बाद ही मेरी पत्नी मेरे साथ स्थायी रूप से रहने आईं। तब तक मेरे माता-पिता भी नहीं रह गए थे और मेरा छोटा भाई अपनी नौकरी में था। हम केवल दो ही थे और हमारे कोई बाल-बच्चा नहीं !···हम पटना में एक साधारण मध्यवर्ग स्तर के रहन-सहन में रहे हैं, मेरे मित्र, प्रोफेसर ज्ञानचंद जब पटना विश्वविद्यालय से अवकाश प्राप्त करके जाने लगे थे, तब उन्होंने ही अपने जो फर्नीचर मुझे दिए थे, प्रायः वही आज तक मेरे घर में हैं। अभी मैंने कुछ नई मेज कुर्सियां ली हैं जब मुझे 'मेगसे से एवार्ड' मिला है। 'एवार्ड' को मैंने कलकत्ते की एक फर्म में जमा कर दिया है और उसी पूंजी से इनकम टैक्स काटकर मुझे चार सौ रुपये महीने मिलते हैं।···गेहूं, दाल मेरे गांव की पैतृक खेती से आता है, चावल भागलपुर के एक दोस्त देते हैं···।'

वह दर्द जो कभी गांधी को लंदन के राजभवन और कभी हिंदुस्तान के घोर देहात में ले जाता था, वही जे० पी० में निधि बनकर इनके समूचे व्यक्तित्व से प्रकट हो रहा है। एक समय का उद्दाम क्रांति का यह मशालधारी भारत के धूल और गर्द से भरे गांवों में अहिंसक क्रांति की 'प्रभा' जला रहा है। लोग इसे समझ नहीं पा रहे हैं। कुछ इसे 'पथभ्रष्ट क्रांतिवीर' कहकर इतिहास की इस करुणा के प्रति अफसोस प्रकट करते हैं। कुछ लोगों को यह 'पानी का मथना' लगता है। कुछ लोग पूछते हैं कि जे० पी०, तुम देश के 'मेनस्ट्रीम' से अलग होकर इस तरह एक कोने में क्यों पड़े हो ?

जे० पी० का ऋजु हृदय हमेशा सामने वाले की बात समझने तथा अपनी बात समझाने के लिए आतुर रहता है। इधर उन्होंने कई बार कहा है : 'यह चीज ही इतनी नई है कि सारी बात स्पष्टता पूर्वक नहीं समझाई जा सकती। काम ही समझाएगा···।'

जैसे इधर दुनिया बदली है, जे० पी० ने क्रांति के साधनों में परिवर्तन सोचा है। मानव स्वतंत्रता की कल्पना, जो जे० पी० के जीवन का स्थायी आकाशदीप

रही है, समय के प्रवाह के साथ-साथ व्यापक और सूक्ष्म बनती जा रही है। और इसकी सिद्धि के लिए साधन भी शुद्धातिशुद्ध होते जा रहे हैं।

गांधी ने अपने जीवन का एक सार दिया है। प्रत्येक मनुष्य जहां भी वह है, बिना दूसरे की प्रतीक्षा किए अपने जीवन में स्वयं को उतार सकता है और अपने छोटे आरंभ द्वारा उस भावी सामाजिक क्रांति के बीज बो सकता है। सबसे पहले इस सार को समझा था डा० लोहिया ने। और इसे अपने जीवन तथा कर्म में उतारा जयप्रकाश ने।

इसी प्रकार गांधी नीति की दो आधारशिलाएं प्राप्त हुईं : ध्येय—सत्य, धर्म—अहिंसा। और इसके लिए, कर्म—सत्याग्रह।

यहां प्रश्न उठ सकता है कि जब पहली स्थापना में सत्य को अखंड और अविभाज्य कहा गया, तब वहां गुंजाइश कहां रह गई कि आग्रह हो? क्योंकि जहां आग्रह है, वहां तो असत्य है। शंका बिल्कुल संगत है। और इसी का निराकरण करने के लिए शर्त लगाई गई— सविनय। जहां विनय भाव नहीं है, वहां सत्याग्रह हो ही नहीं सकता। जे० पी० ने गांधी की इसी बुनियादी नीति की अपने जीवन कर्मों से सम-सामयिक व्याख्या की है : सत्य व्यक्तिगत है। अहिंसा सामाजिक और सत्याग्रह राजनीतिक।

जे० पी० ने आग्रह का कष्ट और दंड अपने ऊपर लिया है। उसकी चोट दूसरे तक नहीं पहुंचने दी है। पर गांधी ने अपने सत्य के लिए दूसरे की चोट की कभी चिंता नहीं की है। इसीलिए गांधी महात्मा हो गए। जे० पी० मनुष्य रह गए।

ऐसे मनुष्य जिनमें एक ऐसी स्त्री मिली हुई है जिसे अलग करके देखना, कुछ पाना नहीं है। कालिदास के 'रघुवंशम्' में पढ़ा था। गोसेवा में संलग्न अयोध्या नरेश महाराज दिलीप के पीछे-पीछे निविड़ वन में घूमती हुई उनकी पत्नी महारानी सुदक्षिणा, श्रुति के अर्थ का अनुगमन करती हुई स्मृति सी लग रही हैं। कालिदास की इस अनुपम उपमा से दाम्पत्य सहधर्मिता के प्राचीन भारतीय आदर्श का सुखद बोध हुआ। पर आधुनिक युग में, जहां पति-पत्नी संबंधों में भी 'सहत्व' की जगह 'समत्व' आ गया है, वहां जय प्रभा का नाम लेते ही श्रुति और स्मृति की याद क्यों आ जाती है? बड़ा ही अजब जीवन-चरित्र है! जितना सपाट खुला हुआ, उतना ही गहन और रहस्यमय।

जयप्रकाश के जीवन में उन्नीस सौ सैंतीस में एक अल्पकालीन ठहराव आया जब उन्होंने बिहार में कांग्रेस समाजवादी दल का सघन काम करने का और पटना को अपना हेडक्वार्टर बनाने का निश्चय किया। पार्टी के जनरल सेक्रेटरी के नाते जे० पी० बंबई और बनारस में रहकर जिम्मेदारी उठाते दौड़ा करते। और उधर प्रभावती बापू के साथ घूमतीं। कभी-कभी दोनों साथ हो जाते और पटना में जे० पी० की बहन के घर टिकते। उन्नीस सौ सैंतीस में पहली बार जे० पी० ने एक किराए का मकान लिया और प्रभावती जी को वर्धा से बुला लिया। लेकिन वह भी घर गृहस्थी अजब थी। प्रभावती का खिचाव था बापू की ओर।

जे० पी० घुमक्कड़। इसलिए वह अधिक से अधिक समय बापू के पास रहने के लिए निकाल लेतीं।

सेवा उनका सहज स्वभाव था। बापू की सेवा तो उनका नित्यधर्म ही था। लेकिन बिहार में रहने पर, श्रीनगर—मायके में रहीं तो मां की सेवा, सिताबदियारा रहीं तो ससुर की सेवा और पटना में रहीं तो पति की सेवा।

पटना के उस डेरे में कभी-कभी जयप्रकाश, प्रभावती और गंगाबाबू साथ रहते थे। उन दिनों बड़ी आर्थिक कठिनाई थी। घर गृहस्थी का सारा कामकाज प्रभावती करतीं। पर वह समय आंतरिक संघर्ष का था। जे० पी० कट्टर समाजवादी। प्रभा गांधीवादी। जिस चरखे का जे० पी० मजाक उड़ाते, वही चर्खा उपासना बिंदु था प्रभा का। वह गीता का परिहास करते—रोज-रोज वही एक किताब। प्रभा के लिए गीता पाठ-धर्म था। जे० पी० के लिए वह अफीम की गोली थी।

जीवन के दो सिरों पर खड़े हुए ये दो व्यक्ति विचार से बहुत दूर थे, पर इतने पास थे हृदय के कि जे० पी० जहां चलते थे, वहां प्रभा की परछाईं होती थी।

जे० पी० ने उस दिन भरे कंठ से कहा : चिड़िया और चिड़ा ने मिलकर पटना में एक घोंसला बनाया था। चिड़िया उड़ गई'''। और जे० पी० निःशब्द रो पड़े।

कभी बापू ने जयप्रकाश से कहा था : प्रभा अपने संकल्प पर अडिग रहेगी। तुम चाहो तो दूसरी शादी कर लो। व्यथित हृदय से जे० पी० ने कहा था : बापू, यह कैसे हो सकता है। आपने ऐसी कठोर बात कैसे कही? जीवन की जटिल पहेली वैसी ही तब बनी रही। बापू के प्यार भरे पत्र आते रहे :

चि० प्रभा!

क्यों इतना निराशा भरा पत्र लिखा तुमने? हर एक का अपना-अपना धर्म होता है। तुम क्यों घबरा रही हो? यह जीवन ही तो चार दिन का मेला है। इसमें सब कुछ अस्थिर अनिश्चित है। स्थिर केवल धर्म है, जो सत्य अहिंसा में समाया हुआ है। उसी का पालन करना है, रोज नये-नये कामों के जरिए।'

भविष्य की योजना के बारे में प्रभावती ने एक बार पति को लिखा : जब मैं किशोरीलाल भाई ओर गोमती बहन को देखती हूं, तब हमेशा मन में यह विचार आता है कि ईश्वर हम दोनों के लिए ऐसा शुभ अवसर कब देंगे। हम दोनों एक साथ रहते हुए सहयोग से काम करें, इससे बढ़कर आदर्श हमारे लिए और क्या हो सकता है?'

दूसरे पत्र में प्रभा ने जे० पी० को लिखा है : 'हमें अपने मतभेद छोड़ देने चाहिए। हम गरीबों की सेवा करना चाहते हैं तो हमें अपना जीवन त्यागमय व्यतीत करना चाहिए।'

जयप्रकाश कहते हैं : 'मेरी बापू के प्रति श्रद्धा न होती तो उसके लिए जीवन असह्य बन जाता।'

एक बार बापू ने अपनी बेटी से कहा था : 'प्रभा, तुझे मेरी गद्दी लेनी है न?'

प्रभा ने विनय से कहा : 'बापू मैं कैसे आपकी गद्दी ले सकती हूं? न मेरे पास विद्वत्ता है, न कोई बड़ी शक्ति, न कोई विशेष गुण।'

बापू खिलखिलाकर हंस पड़े। बेटी की पीठ थपथपाते हुए बोले : 'पगली है तू! मेरी गद्दी लेने के लिए विद्वता की क्या जरूरत? उसके लिए तो बस चार चीजें चाहिए : प्रेम, सेवा, त्याग'''।'

बेटी ने कहा : लिखकर दे दो बापू।

और कागज के एक टुकड़े पर वे चार शब्द लिखकर, वह कागज प्रभा के हाथ में थमाते हुए बापू धीरे से बोले : किसी को बताना मत। अपने पास रखे रहना।

आगा खां पैलेस छोड़ते समय सरकार ने प्रभा को कई चीजें साथ नहीं ले जाने दीं। उन्हीं में वह कागज भी था।

—बरसों बाद प्रभावती ने एक दिन कहा : मेरी सबसे बड़ी संपत्ति सरकार ने छीन ली। वह चौथा शब्द क्या था, वह भी मुझे याद न रहा।

दरअसल वह चौथा शब्द एक नाम था : जयप्रकाश।

हिंदू पत्नी पति का नाम नहीं लेती। उसे याद भी नहीं रख पाती। याद के लिए दूरी चाहिए।

तीनों शब्दों से ही बना था वह नाम जयप्रकाश नारायण जिसे बापू ने कागज पर लिखकर दिया था। 'किसी को बताना मत अपने पास रखना।'

वह रहस्य प्रभा के पास था। और जब प्रभा नहीं रहीं, तो शतगुना बढ़कर वह जयप्रकाश के मनुष्य में समा गया। इसी मनुष्य का जीवन-चरित लिखना चाहता हूं। आकाशदीप को गंगाजल में'''

गंगाजल

विप्लव ने उगला तुम्हें महामणि
उगले जो नागिन कोई
माता ने पाया तुम्हें यथा
मणि पाए बड़भागिन कोई।
लौटे तुम रूपक बन स्वदेश की
आग भरी कुर्बानी का
अब जयप्रकाश है नाम देश की
आतुर, हठी जवानी का'''।

—दिनकर

यहीं से शुरू किया जाय। पर इससे पहले वंदना जरूरी है। पर वंदना की कैसे जाय ? किसकी ?

कोई गा रहा है :

प्रथम बंदो देव गणपति
बंदो दूजे माता वसुमती
कलियुग में भजिहौं फिरंगी कंपनी
तारे पाजी पापी गुनहगार
दीवान गयो फौजदार गयो
गयो सिगरे सूबेदार
राजा होइके आयी फिरंगी सरकार'''

इसके आगे बहुत सारा है। अभी तो वंदना शुरू हुई है। गांव का कोई निरक्षर कवि रहा होगा। पूरा ब्यौरा नहीं मिलता। पर वंदना सुनते ही चेतना दो सौ, तीन सौ साल पीछे चली जाती है।

सिताब दियारा गांव में कुछ खास चीज ढूंढ़ने आया था। सिताब दियारा, जयप्रकाश नारायण का गांव। उनकी जन्मभूमि। यह पता लगाने कि जे०पी० का मूल क्या है। धरती और परिवेश क्या है, जहां आज के बहत्तर वर्ष के सत्याग्रही

जे० पी० ने संवत् उन्नीस सौ उनसठ की विजयादशमी—अर्थात् सन् उन्नीस सौ दो के ग्यारह अक्टूबर को जन्म लिया था। अचानक किसी की हंसी सुनाई पड़ती है।

हम लोग क्या आज के हैं ?

सात सौ साल पहले, किसी को अपने घर परिवार के ही बारे में पता नहीं था। सबसे पहले पता लगा इब्नबतूता के बयान से। खुरासान के लोग बंगाल के लिए कहते थे : 'दुजाखस्त-पुर-इन-आमेत्।' माने खुशियों का दोजख।

मार्कोपोलो, वास्कोडिगामा वगैरह के हिंदुस्तान के बारे में लिखा पढ़कर यहां एक बार जो आया फिर लौटकर नहीं गया। ऐसी सोने की चिड़िया कहां मिलेगी ?

पर सिताब दियारा के बारे में कौन सी ऐसी पोथी है जिसे पढ़कर इतिहास जाना जाए ? दरअस्ल सिताब दियारा को आंखों से देखना, कानों से सुनना और उसे दिल से महसूस करना ही पोथी पढ़ना है।

जहां से गंगा जी ने उत्तर प्रदेश से बिहार में प्रवेश किया है, वहां से बिहार के पश्चिमी छोर, शाहाबाद जिले से, जहां गंगा जी बंगाल भूमि से जा मिली हैं, वहां पूर्णिया के पूर्वी छोर तक जहां-तहां एक खास किस्म की भूमि उग आई है, वही गांव की भाषा में 'दियारा' कहलाती है।

यह भूमि गंगा के आंचल में, बल्कि गर्भ में होती है जैसे सागर के गर्भ में टापू ! चारों ओर अपार जल, बीच-बीच में हरी-भरी आबादियां। यह धरती बड़ी अजीब होती है और उससे भी ज्यादा अजीब होते हैं यहां के निवासी। गेहुआं रंग के हट्टे-कट्टे लोग। बड़े भावुक। लड़ाकू। बलिष्ठ भुजाओं वाले। असीम साहसी। बात के धनी। आत्मसम्मान पर मर मिटने वाले। अपने दुस्साहस और दबंगपन के लिए मशहूर और बदनाम लोग। गेहूं की रोटी, भुजिया का भात और भैंस का दूध-दही खा-पीकर लड़का सत्तरह साल में ही गबरू जवान बन जाता है। बिहार की सुंदर मानवता के नमूने देखने हों तो इन दियारों की सैर करनी चाहिए।

इन्हीं दियारों में एक खास दियारा है 'सिताब दियारा'। गांव के पुराने लोग बताते हैं इसे राजा सिताबराय ने बसाया था जो आखिरी मुसलमानी जमाने में बिहार के सूबेदार थे।

राजा सिताबराय बड़े दबंग और चतुर व्यक्ति थे। उन्होंने अंत समय में मुसलमानों से अलग होकर फिरंगी अंग्रेजों मतलब ईस्ट इंडिया कंपनी का पक्ष लिया था और बिहार में अंग्रेजी हुकूमत की नींव मजबूत करने में हाथ बटाया था।

अजब ऐतिहासिक संयोग है कि उसी सिताबराय के बसाए दियारे में जयप्रकाश नामक एक ऐसा लड़का पैदा हुआ, जिसने आगे अंग्रेजी हुकूमत की आखिरी ईंट तक उखाड़ फेंकने में अपनी पूरी जवानी लगा दी।

इतिहास ही नहीं, भूगोल भी अजीब है इस सिताब दियारे का। यहीं सरयू (घाघरा) नदी का संगम होता है गंगा से। और सारे दियारे में खरबूज, तरबूज, ककड़ी, परवल की खूब फसल होती है। यहीं उत्तर प्रदेश और बिहार प्रांतों की

सरहदें मिलती हैं, नदियों की ये दुहरी धाराएं प्रायः जिनकी हदों को मिटाने की कोशिश करती रहती हैं। और लोग इस सिताब दियारे की भूमि को कभी उत्तर प्रदेश में, कभी बिहार में शुमार होते देखते हैं।

उस समय सिताब दियारा गांव में प्लेग की बीमारी फैली थी। सारा गांव अपना घर छोड़-छोड़कर इधर-उधर मैदान में जाकर बस गया था। आज सत्तर बहत्तर के जयप्रकाश नारायण चाहे जो कहें : 'देखिए जी, सबसे पहले तो यह बात आपसे कह दूं कि मेरी स्मरण-शक्ति बहुत खराब हो गई है। बातें बहुत पुरानी याद नहीं हैं।' पर इतना तो उन्हें याद ही है : 'उस वक्त मेरे गांव पर सख्त प्लेग हो रहा था। इसलिए हम लोगों की जो यहां जमीन थी वह दलिया ज़िले में थी — गांव से कोई दो-ढाई मील पश्चिम की तरफ बबरबानी कहते थे वहां डेरा था तो प्लेग की वजह से वहीं हम लोग परिवार के साथ थे। जन्म मेरा वहीं हुआ।'

शरद् ऋतु में विजयादशमी के शुभ अवसर पर, जयप्रकाश का इसी सरयू और गंगा के संगम पर अवतरित होने वाला जीवन गंगा की तरह पवित्र है। सरयू की तरह निर्मल है। राम की तरह मर्यादापूर्ण और बुद्ध की बिहार भूमि-सा करुण है।

गंगा सरयू के संगम पर बसा, दो प्रांतों के झूले पर झूलता यह सिताब दियारा गांव, साधारण गांव नहीं है। कस्बा है। बाइस तेइस टोले हैं इसमें। जनसंख्या आज चालीस हजार से कम नहीं है। बिहार की प्रायः सभी प्रमुख जातियां यहां आकर बसी हैं। और इनके अलग-अलग टोले हैं।

इन्हीं टोलों में कायस्थों का सबसे बड़ा टोला है जो 'लाला टोला' के नाम से मशहूर है। सारे कायस्थ, श्रीवास्तव कायस्थ हैं। शायद लोग श्रावस्ती से इधर आए थे। पर ये कायस्थ अवध वाले नहीं हैं। बरेली और दिल्ली वाले भी नहीं। जी हुजूरी करने वाले। मसिजीवी। नहीं, सिताब दियारे के लाला लोगों को अपने दिमागी ताकत के साथ अपने बाहुबल, लोह पुट्ठों पर भी कम नाज नहीं।

दरवाजा पार कर के दालान में आना पड़ा। बाप रे कैसा मकान है ! खपरैल का है तो क्या !

इधर दालान। उधर दालान। जालियों में से शिव का मंदिर दिखाई दे रहा था। लड़का होगा, इस आशा से बहू मां ने शिव मंदिर का शृंगार कर दिया है। नौकरानी ने कहा : शाहाबाद के हरसू ब्रह्म का मन्नत है।

लेकिन वह चीज क्या है ?

अरे जंतर-मंतर है।

पर यह तो बाद की बात है।

अभी तो बात चल रही थी लाला टोले की। हां तो, उन्हीं लाला लोगों में, दो पुश्त पहले, एक सज्जन हुए, जिनका नाम था बाबू देवकीनंदन लाल। पुलिस दारोगा थे। अक्खड़ और दबंग। लोग बताते हैं, एक बार अंग्रेज पुलिस सुपरिटेंडेंट ने इनकी जरा सी तौहीन कर दी थी, फिर बाप रे बाप, देवकी बाबू ने अंग्रेज साहब बहादुर को हंटरों से पीटा था। जुलुम हो जाता। पर वह अंग्रेज चुपचाप सारा अपमान पी गया। किससे कहता कि काले 'नेटिव' ने पीटा।

इसी देवकीनंदन की कोई संतान नहीं थी। आप तो अपनी शान शौकत में मस्त, किंतु उनकी धर्मपत्नी अपनी सूनी गोद पर हमेशा दुखी रहतीं। आखिर शाहाबाद के मशहूर हरसू ब्रह्मबाबा की मन्नत पर बहू को सचमुच पुत्र हुआ। नाम पड़ा, हरसूदपाल।

जै हो शंकर भगवान की।

इन्होंने भी अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त की। लेकिन स्वभाव और प्रकृति से देवकी बाबू से बिल्कुल भिन्न थे। पुलिस नौकरी में न जाकर नहर विभाग में मुलाजमत शुरू की। और जिलेदार के पद से रेवन्यू असिस्टेंट के पद पर पहुंचे। बहुत ही नेक, सीधे, संत स्वभाव के आदमी थे यह। सरकारी अफसर के दुर्गुण उनमें छू तक नहीं गए थे। उनकी धर्मपत्नी का नाम था फूलरानी। दया ममता की मूर्ति। पूरी गृहिणी। बहुत ही कम बोलतीं। सहज साध्वी।

लाला के घर की यह कथा यहीं पूरी हो जाती है। मतलब यहीं से शुरू होती है। चाहे घर हो, चाहे खानदान, चाहे पूरा गांव हो या पूरा शहर, सबका एक इतिहास होता है—ऐसा इब्नबतूता ने कहा है और उससे भी आगे एक गहरी बात है। आदि और अंत की खींचतान के सहारे जिस तरह एक ब्रह्मांड की सृष्टि हुई है उसी तरह आदि और अंत के समन्वय से एक कभी भी पूरा न होने वाले इतिहास की सृष्टि हुई है।

उस अनंत इतिहास के एक अंश को लेकर कह रहा हूं। इन्हीं श्रीमती फूलरानी की गोद में एक फूल खिला। वह जयप्रकाश के नाम से सुबास बिखेर रहा है।

हरसूदपाल और फूलरानी के कुल छ: बच्चे हुए थे। क्रम में यह चौथे थे। तीन भाई, तीन बहनें। सबसे पहले थे, हरिप्रकाश, तेरह साल की उमर में ही 'कालरा' से मृत्यु हो गई। और इसके तीन वर्ष बाद ही सबसे बड़ी लड़की चंद्रभानु की मृत्यु ग्यारह वर्ष की ही उमर में हो गई।

बीसवीं सदी के जन्म के साथ ही जयप्रकाश का जन्म हुआ। उन परिस्थितियों में उस काल की सांस्कृतिक चेतना, आध्यात्मिक चिंतन और राजनीतिक चित्रपट पर विश्व प्रवृत्तियां अत्यधिक महत्त्वपूर्ण हैं। सांस्कृतिक चेतना में समाज परिवर्तन और प्रगति की आकांक्षा, आध्यात्मिक चिंतन में समाज की मूलभूत एकता और समता का भाव। राजनीतिक चित्रपट पर मनुष्य की मानवीय स्वतंत्र राजनीतिक सत्ता और उसके संपूर्ण अभ्युदय की चेतना तथा विश्व प्रवृत्तियों में उदारवादी समाजवादी भावना।

इस देश के इतिहास की उन्नीसवीं सदी में भारतीय समाज में एक अभूतपूर्व नव जागरण हुआ। इस जागरण की अभिव्यक्ति आगे चलकर राजनीतिक स्तर पर हुई।

बीसवीं सदी के प्रारंभ में विचारकों की जिस श्रृंखला ने राजनीतिक नेतृत्व किया, उसने सांस्कृतिक परंपराओं का राजनीतिक स्वातंत्र्य से सामंजस्य स्थापित किया। तिलक, अरविंद, गोखले, गांधी आदि लोकनायकों को केवल राजनीतिक नेतृत्व प्रदान करने वाला महापुरुष नहीं कहा जा सकता। संस्कृति का राजनीति

से समन्वय इनमें चरमोत्कर्ष रूप में अभिव्यक्त हुआ। यह सामंजस्य, यह नव-जागरण उस समय पूरे एशिया में फैलता चला जा रहा था। चीन, जापान, मिश्र, तुर्की, अरब, ईरान सब जगह नवजागरण की किरन फैली थी। खासकर भारतवर्ष में यह नव चेतना साम्राज्यशाही के पुतले में कालिख पोतती और गुलामी की छाती पर गोली चलाती हुई आई थी।

इसके उस समय अनेक उदाहरण मौजूद थे। पूना शहर में विक्टोरिया की मूर्ति में, अयोध्या नगर में विक्टोरिया के चेहरे पर जिन्होंने स्याही लगाई, या कलकत्ते के कमिश्नर या इलाहाबाद के कलक्टर की छाती को जिन्होंने पिस्तौल से छेदा, वे मात्र घटनाएं नहीं थीं विश्वास और भावनाएं थीं।

इसी नई भावना और विश्वास के खुले नीले आकाश के शरद् ऋतु में, बिहार और उत्तर प्रदेश (उस समय संयुक्त प्रांत) के संगम पर, एक घोर देहाती गांव में, एक मध्यवित्त गृहस्थ के घर, कायस्थ खानदान में, विजयादशमी-दुर्गापूजा, रामलीला के परिवेश में इनका जन्म हुआ।

पर यह तो बाद की बात है। तब उस शिशु का नाम पड़ा, 'बउल जी'। यह कैसा नाम है?

एक दिन मां ने देखा, दूसरे बच्चों की तरह न इसके अंग में चंचलता है, न वाणी में चपलता है। चलता नहीं, डग भरता है। जैसे पैरों को तोल तोलकर पग धरता है। कुछ बोलने के लिए जीभ चलती है, पर दांतों का सहारा न पाकर कोई शब्द नहीं फूटता।

मां ने घबराकर कहा : अरे इसके दूध के दांत अब तक नहीं निकले, क्या यह बउला है?

बउल!

उस दिन मां के मुंह से यह जो नाम सहज ही निकला, वह अब भी, आज भी अपने परिजन, पुरजन और मित्रजन का 'बउल जी' ही बना हुआ है।

पिता हरसूदपाल जी नहर विभाग में काम करते हैं। ज्यादातर शाहाबाद जिले में रहते हैं। तब का शाहाबाद आज दो जिलों में बंट गया है—रोहतास और आरा। वही शाहाबाद, सन् सत्तावन के विद्रोह के नेता बाबू कुंवरसिंह की कर्म-भूमि। मां-बाप के साथ उसी शाहाबाद में बउल जी रहते हैं। विद्रोह का संस्कार बाउल जी के अंतस् में कहां, कैसे घर कर रहा है, बाहर से कहीं कुछ भी नहीं दीखता। इतना शांत स्वभाव का लड़का कहां देखने को मिलता है? उछल कूद तक नहीं। शरारत, ऊधम फसाद नहीं। कोई खेल खिलौना नहीं।

सरकार, बबुआ जैसे हरदम सोचते रहते हैं।

न जाने क्या देखते हैं बबुआ!

बाबू हरसूदपाल जी लोगों की बातें सुनते हैं और अपने बउल जी को गौर से देखते हैं। और एक दिन फूलरानी से कह बैठते हैं : ईत जैसन बूढ़ लरिका हउअन!

यह तो जैसे बूढ़ा लड़का है। पिता जी के मुंह से निकला हुआ यह वाक्य जैसे हमेशा के लिए तब से सत्य हो गया। भारत के पूरे राजनीतिक और राष्ट्रीय

इतिहास में अक्सर जे० पी० की अचानक कोई बात सुनकर बहुत से लोग चिढ़ जाते हैं···यह हमें बताने चला है, जैसे हमारे बूढ़े बाबा हों।

अब 'बउल जी' को स्कूल भेजना चाहिए। कायस्थ का छोकरा जितनी जल्दी कलम पकड़े उतना ही अच्छा। अपने बचपन की इस अवस्था के बारे में जयप्रकाश को याद है—बचपन में माता जी का बहुत प्रेम रहता था, और उनकी सादगी का, उनके प्रेम का और उनके कोमल हृदय का बहुत असर पड़ता था। पिता जी का भी व्यवहार बहुत अच्छा ही रहता था लेकिन वह जरा दूर होते थे। इस माने में कि बहुत उनके साथ बचपन के संस्मरण नहीं हैं मेरे। और कुछ वह स्वभाव से भी जरा 'रिजर्व' से थे।

मां पिता के साथ, जहां वह नौकरी करते थे, वहीं रहती थी। और कुछ दिन बउल जी घर पर दादी जी के लालन-पालन में रहे।

सिताब दियारे में एक अपर प्राइमरी स्कूल था। उसी स्कूल में एक मास्टर जी थे। बहुत अच्छे पहलवान भी थे। घर पर पढ़ाया भी करते थे और वहीं घर में रहने भी लगे थे। उस प्रारंभिक पढ़ाई लिखाई का बउल पर अच्छा असर पड़ा। उनमें कुछ राष्ट्रीयता की भावना भी थी, उसका भी असर बालक के मन पर पड़ा। थोड़े दिन वहां, और आगे उन जगहों के स्कूलों में, जहां पिता जी मुलाजमत करते थे, इस तरह से घूम फिरकर प्राइमरी शिक्षा खत्म होती है।

एक दिन पिता जी बउल जी के खेलने के लिए कबूतर का एक जोड़ा ले आए। बड़ी गर्मी पड़ी थी उस साल। लू खाकर एक कबूतर बीमार पड़ा और नहीं रहा। बउल को असह्य वेदना हुई। दो रात खाना नहीं खाए।

कबूतरों के अलावा हिरन, कुत्ते, खरगोश बउलजी को अब प्रिय लगने लगे थे। घर में उन दिनों एक टट्टू था। उसका एक नन्हा सा बच्चा था। बउल का अन्यतम दोस्त। उसे एक दिन कुछ खिलाने लगे, टट्टू ने पैर से मारा। बउल जी घायल हो गए। पिता जी उस अपराधी टट्टू को घर से हटाने लगे। बउल जी रो पड़े और बच्चे सहित टट्टू को घर से जाने न दिया।

उन्हीं दिनों की एक घटना और है।

बउल जी को आदित्य मिश्र नामक एक अध्यापक घर पर पढ़ाने आते थे। पिता जी ने एक दिन देखा—मास्टर जी अच्छे अध्यापक नहीं हैं। इन्हें निकाल दिया जाए। पर बउल जी ने इस बार रोकर नहीं, वाणी से कहकर विरोध किया।

और एक दिन प्राइमरी शिक्षा के बाद की तालीम लेने के लिए अब तक गांव और कस्बों में रहने वाला लड़का बिहार प्रांत की राजधानी पटना भेज दिया गया।

कहां ?

शंभूशरण जी के पास। रिश्ते में शंभू बाबू बउल जी के भतीजे होते थे, पर उम्र में काफी बड़े। उस समय वह पटना में कालेज की पढ़ाई समाप्त करने में लगे थे। इधर बउल जी स्कूल जाने लगे। उधर शंभू बाबू वकील बनकर वकालत करने लगे।

2

तब के पटना और आज के पटना में जमीन-आसमान का अंतर है। तब आज की तरह लंबी चौड़ी सपाट सड़कें नहीं थीं। मोटरकार, बस की रेलपेल तब नहीं थी। पटनियां टमटम का वह जमाना था।

पटना शहर के केंद्र में पटना कालिजियट स्कूल था, जिसकी इमारत भी पुरानी थी। पर पुरानी इमारत का वह स्कूल और उसी से संलग्न पटना कालेज प्रांत में राष्ट्रीयता की नई चेतना जगाने में प्रयत्नशील था। उन दिनों पटना कालिजियट के हेडमास्टर थे श्री अमजद अली खां। बड़े ही योग्य टीचर थे। बच्चों के मानसिक विकास के साथ ही वह उनके चरित्र-निर्माण पर बहुत बल देते थे। 'बउल जी' अब पटना में अमजद अली खां के ही शिष्य होकर जयप्रकाश नारायण हो गए।

कालिजियट स्कूल में इनका नाम सातवें दर्जे में लिखा गया जो आज का चौथा या पांचवां दर्जा है।

तब जयप्रकाश का पहनावा बदल गया है। सिर पर फेल्ट कैप, शरीर में कमीज और कोट, कमर में धोती, पैर में अंग्रेजी जूते। तब इनकी उमर यही बारह तेरह साल की थी। पर स्वभाव से बेहद संकोची और भीरु। सिर्फ पढ़ाई और कुछ नहीं।

आज जैसे होस्टल तब नहीं थे। एक जगह थी, जिसका नाम आज तक लोग लेते हैं, 'सरस्वती भवन'। इसी में जयप्रकाश जी आए। उस समय यह स्थान पटना के विद्यार्थियों का सबसे अधिक प्रभावशाली केंद्र था। बिहार की सर्वोत्तम प्रतिमाओं का अखाड़ा यही था। वहीं से पढ़े थे अनुग्रह बाबू, रामचरित्रसिंह, रघुनंदन पांडे। वहीं से जुड़े थे राजेंद्रप्रसाद, स्वतंत्र भारत के प्रथम राष्ट्रपति, रामनवमी बाबू, जिन्होंने आगे चंपारन में महात्मा गांधी के सत्याग्रह में साथ दिया। और प्रसिद्ध श्रीबाबू···।

बिहार के ये नौजवान पढ़ने लिखने में ही प्रतिभावान नहीं थे, ये राष्ट्रीय चेतना से ओतप्रोत थे। वहीं सरस्वती भवन में बैठक जमती। आजादी की लड़ाई के किस्से होते। देश की समस्याओं पर उन जवानों में वादविवाद होते। बाहर से किताबें आतीं, वहीं गुप्त रूप से पढ़ी जातीं। इस पूरे वातावरण का प्रभाव जयप्रकाश के चरित्र पर पड़ा। उनमें देशभक्ति-भावना घर करने लगी। अब वह स्कूली किताबों के बाहर का ज्ञान बटोरने लगे। पत्र-पत्रिकाएं, वे गुप्त पुस्तकें, ऐसे दृष्टिमय संसार के द्वार खोलने लगीं जिन्हें शायद वह स्वप्नों में देखा करते थे। अपनी चुप्पी और खामोशी में उसी संसार की आहट सुनते थे।

इस बीच एक छोटी सी घटना हुई। जयप्रकाश की कई पुस्तकें एक सहपाठी ने उठा लीं। उन्हें मालूम था, किसने पुस्तकें चुराई हैं। किंतु चुराते नहीं देखा, फिर करें क्या, वह बड़े संकोच और उलझन में पड़ गए। आखिर मास्टर अमजद अली खां को पता चल गया। उन्होंने पुस्तकें दिला दीं। जयप्रकाश ने उल्टे उस लड़के से माफी मांगी। इस सहज सहृदयता से वह लड़का इतना द्रवित हुआ कि उसने अब तक की अपनी सारी चोरियों को बता डाला।

एक घटना और है।

जयप्रकाश एक बार गणित के एक प्रश्न में उलझ गए। मतलब खाना-पीना भूल गए। प्रश्न का उत्तर पुस्तक में गलत था। आखिर प्रश्न का उत्तर आ गया। रात को सोने के समय किशोर जयप्रकाश मुंह तक चादर तानकर रोने लगे। तब पता चला कि भूखे पड़े हैं। काफी रात हो गई है। लोग सो चुके हैं। भूख की वह पीड़ा अब तक याद है।

उन्हीं दिनों बड़ी बहन चंद्रावती का विवाह हुआ। जयप्रकाश के बहनोई ब्रजविहारीसहाय पटना हाईकोर्ट के दफ्तर में आ गए। तभी से वह सरस्वती भवन से विदा होकर ब्रजबिहारी के डेरे में आ गए। और उन दिनों जब तक पटना रहे, यहीं उनका डेरा बना रहा।

यह संयोग ही था कि ब्रजबिहारीसहाय, जयप्रकाश के पिता हरसूदयाल के ही समान बड़े शांत प्रकृति के निष्ठावान, चरित्रवान व्यक्ति थे। उनकी सहज संगति ने जयप्रकाश के चरित्र-निर्माण में गहरे संस्कार दिए। बेनीपुरी ने उस किशोरावस्था के बड़े ही मनोरंजक वर्णन किए हैं।

उस हाईकोर्ट क्वार्टर से जयप्रकाश का स्कूल काफी दूर है। उन्हें रोज सिर्फ तीन आने पैसे मिलते हैं। टमटम वाले को एक आना देकर वह सीधे स्कूल पहुंचते हैं। एक आने में लंच की छुट्टी में जलपान करते हैं और शेष एक आने में टमटम से वापस घर आते हैं। ब्रजबिहारी या तो ब्राह्मण के हाथ का बना खाना खाएंगे या अपने घर के लोगों के हाथ का। ब्राह्मण बीमार पड़ गया। चंद्रा दीदी मायके गई हैं। ब्रजबिहारी स्वयं रसोई बना रहे हैं। जयप्रकाश को अच्छा नहीं लगता। उन्हें पूजा करने को भेज आप रसोई बना रहे हैं।

कालिजियट के हेडमास्टर की जगह पर अब जनाब रासमसूद साहब आए हैं, जो आगे चलकर निजाम हैदराबाद के शिक्षा मंत्री हुए और 'सर' की उपाधि से अलंकृत हुए। तब उन दिनों जयप्रकाश हाई स्कूल इंट्रेंस इम्तहान की तैयारी में लगे थे। अंग्रेजी, हिंदी, संस्कृत अच्छी है। पर गणित बहुत अच्छी है। लगता है हृदय साहित्य की ओर है, मस्तिष्क विज्ञान की ओर।

जनाब रासमसूद साहब की जगह विटमोर साहब अब हेडमास्टर होकर आए। उसने एक पर्चे का इम्तहान त्योहार के ही दिन रख दिया। कौन करे विरोध उस कट्टर अंग्रेज से ?

जयप्रकाश अपने पांच साथियों को लेकर इसका विरोध करते हैं। यही छः विद्यार्थी सबसे ज्यादा प्रतिभावान और उत्तम लड़के थे। परीक्षा भवन में शेष विद्यार्थी आए। यही छः अनुपस्थित हुए। हेडमास्टर गुस्से से लाल हो गया।

दूसरे दिन उन छहों को अपने कमरे में बुलाकर उसने पूछा : इम्तहान में क्यों नहीं बैठे ?

कल त्योहार था।

कैसा त्योहार ?

पूजा। त्योहार।

चुप रहो। हाथ बढ़ाओ। बेंत लगेंगे।

छः अभय जोड़ी हथेलियां हवा में सामने बढ़ जाती हैं। साहब देखता ही रह जाता है। पर आर्डर तो आर्डर ही है। बेंत की सजा पूरी हुई।

विरोध के दर्शन का यह पहला पाठ था। अचानक जयप्रकाश के भीतर ब्रजबिहारी बाबू की आवाज सुनाई पड़ी थी : 'फारगेट इट'। इसे भूल जाओ।

चंद्रावती दीदी का चेहरा सामने आ गया था। स्कूल के अहाते में अंधकार घिर आया था। सब दोस्त चले गए थे। उसी अंधेरे में उन्होंने अपने कदम उठाए। स्कूल से बाहर ऊंची नीची जमीन दोनों ओर नाली का कीच जमा है। वह सावधानी से आज तेज चलने लगे। यहां से अभी बहुत दूर तक इसी तरह पैदल जाना होगा। अप्रैल महीने में इतनी बारिश पिछले दिनों हुई थी। इस कीचड़ भरे रास्ते को पारकर उस तिराहे तक पहुंचना होगा, तब शायद कोई सवारी मिले।

रात बहुत हो गई है। पता नहीं क्या वक्त है। आसपास कोई घड़ी भी तो नहीं।

अचानक जेब में कुछ ढूढ़ने के लिए दायां हाथ बढ़ाया। हथेली बुरी तरह से सूज गई थी। उंगलियां बेजान लग रही थीं।

रास्ते पर चलते-चलते जयप्रकाश के सामने अंग्रेज हेडमास्टर बिटमोर का वही गुस्से से लाल चेहरा और उसकी कटुवाणी खिंची हुई थी। उस क्षण पहली बार अनुभव हुआ जीवन एक जटिल और गंभीर वस्तु का नाम है। सोचा था शायद जीवन एक सरल चीज है। वह स्वयं सीधा, सरल-सहज सादा जीवन बिताएगा। एक सीधी रेखा की तरह झंझट और विरोध से रहित। शायद सभी मनुष्य यही चाहते हैं। जीवन को सहज बनाने के ही लिए लोग इतने सारे आयोजन करते हैं। लेकिन अंत तक क्या ये आयोजन ही भारी नहीं हो जाते ?

अपने डेरे के सामने रात के अंधेरे में खड़े होकर किशोर जयप्रकाश ने यही कहा था, जो हुआ बहुत अच्छा हुआ।

जो भी हो। उन्नीस सौ उन्नीस में जयप्रकाश ने हाई स्कूल में प्रथम श्रेणी में पास होकर अपनी प्रतिभा का परिचय दिया। और उन्हें 'मेरिट स्कालरशिप' मिली।

बिहार की राजनीति में उस समय दो धाराएं बह रही थीं। हिंदुस्तान के इतिहास में पहला बम बिहार में ही फूटा था। पहली राजनीतिक डकैती बिहार में ही हुई थी। बम खुदीराम बोस ने मुजफ्फरपुर में चलाया था। डकैती अर्जुनलाल सेठी ने शाहाबाद में की थी।

दूसरी धारा थी गांधी की। गांधी ने चंपारन में आकर अपने सत्याग्रह से निलहे अंग्रेज साहबों को परास्त किया था।

एक ओर आतंक, हिंसा। दूसरी ओर सविनय सत्याग्रह। इन दोनों के बीच जयप्रकाश चुपचाप खड़े थे और इन दोनों धाराओं की भूमियों को पहचानना चाहते थे। गंगा सरयू दो नदियों के संगम पर बसी अपनी जन्मभूमि का रहस्य इनमें खोज रहे थे।

गांधी जी के लेखों को पढ़ने लगे। गीता पढ़ने लगे। गांधी के जीवन को अनुभव किया। अपने शरीर के बारीक फैशनेबुल कपड़ों को उतारकर खादी

वस्त्र पहने। कमीज कोट की जगह मोटे खादी के कुर्ते। अंग्रेजी जूतों की जगह चमरौधा जूते का जोड़ा।

बड़ी तकलीफ होती है इस नये पहनावे में। बड़ा भद्दा लगता है। आदमी निपट देहाती दिखता है। पर यही आदमी तो है असली भारत का। यही तो सिताब दियारे की असली माटी है। वही गंध। वही रंग।

दूसरी धारा का भी आकर्षण कम नहीं है। उसी बीच एक घटना घटती है। सुबह बिल्कुल भोर का समय है, सरस्वती भवन में हलचल मच जाती है। पास ही प्रसिद्ध इतिहासज्ञ प्रोफेसर यदुनाथ सरकार का डेरा है। उनका घर पुलिस ने घेर लिया है। तलाशी ली जा रही है। भीतर क्रांतिकारी दल का एक नौजवान आ छिपा है।

क्रांतिकारी दल?

जयप्रकाश का आकर्षण बढ़ता है। पटना शहर में क्रांतिकारियों का एक गुप्त अड्डा है, जिसमें ज्यादातर बंगाली लड़के हैं। आतंकवाद के साथ एक अजीब रोमांचकता का जादू है। वही जादू किशोर मन जयप्रकाश पर लगता है।

एक दिन उसे सुनाई पड़ता है : गोरन को मार-मार बोरन में भरिहों।

कभी गंगा की तलहटी में, उसके नीरव घाट पर, कभी किसी खंडहर में वे खूनी लड़के मिलते हैं। हथियार, बम हैं उनके पास। एक कहता है : बंगाल तैयार है। पंजाब तैयार है। महाराष्ट्र तैयारी कर रहा है। बिहार क्यों पीछे रहे? दूसरा कहता है : जितने सरकारी दफ्तर हैं, सब पर कब्जा कर लिया जाएगा। तीसरा कहता है : पटना में जितने गोरे अफसर हैं उन्हें बम से उड़ा दिया जाएगा।

—आओ दीक्षा लो। क्रांति सेना में नाम लिखाओ जयप्रकाश!

उसने अब तक नर्म दल और गर्म दल तो सुन रखा था। पर यह क्रांतिकारी दल क्या है? उसमें कुछ मथने लगता है। वह स्वभाव से ही नर्म दिल है। गोखले का व्यक्तित्व उसे बहुत प्रिय है। बेनीपुरी ने लिखा है : गोखले के मरने पर जयप्रकाश ने आंसुओं से भीगी एक कविता लिखी थी। फिर गांधी की भारतीयता के अनुकूल उस पर सादे शुद्ध जीवन का अपूर्व असर पड़ा था और गांधी के जीवन आदर्शों को अपने जीवन में उतारने का प्रयत्न किया था। पर यह नई पुकार, यह नई सेना?

कितना जादू है उस बंगाली युवक की वाणी में।

उससे मुझे एक प्रश्न पूछना है।

जयप्रकाश उस गिरोह से मिलने के लिए जाते हैं। वे लड़के कहां चले गए? खुफिया पुलिस का सबसे बड़ा अफसर जैक्सन कलकत्ते से यहां कल रात अपने दल बल के साथ आया था। लड़के, लगता है, यहां से कहीं दूर निकल गए। गंगा उस पार। पटना कालेज के सामने गंगा में कूदकर उस पार उत्तरी बिहार में, कोसी अंचल में कहीं भूमिगत हो गए।

3

पटना कालेज के सामने, गंगा की सीढ़ियों पर अकेला बैठा वह सोच रहा है : हमारा देश गुलाम क्यों हुआ ? इसका विकास क्यों रुका हुआ है ? साधकों, ऋषि-मुनियों और साहित्यिकों की तो इस देश में कमी नहीं है, फिर भी भारत देश औरों से पिछड़ा हुआ क्यों है ? यह युग विज्ञान का है। विज्ञान ने ही यूरोप को इतनी गति और शक्ति दी है। भारत में सबसे अधिक आवश्यकता है वैज्ञानिकों की। और हममें वैज्ञानिक प्रतिभा की कमी नहीं है। जगदीशचंद्र बोस और प्रफुल्लचंद राय ने क्या कम कमाल दिखाया है। विज्ञान के साथ साधना मिली है। प्रफुल्ल राय इसके उदाहरण हैं। सोचते-सोचते वह तै कर लेता है :

मैं वैज्ञानिक बनूंगा।

और पटना कालेज में विज्ञान कक्षा में प्रवेश लेता है।

अब उसकी मेज पर हैं हिंदी पत्र-पत्रिकाएं—सरस्वती, मर्यादा, प्रभा। ग्रंथ हैं—भारत-भारती, प्रियप्रवास, रामचरितमानस। दूसरी ओर हैं फिजिक्स, केमिस्ट्री और गणित की पुस्तकें। लगता है, उसका हृदय भावना और मानव आदर्शों के रस में डूबा हुआ है पर उसका मस्तिष्क अब भौतिक विज्ञान के तत्त्वों की जिज्ञासा एवं रसायन शास्त्र के रहस्यों में लगा हुआ है।

शंभू बाबू को कभी जोर से बातें करते नहीं सुना। पर एक दिन उनकी ऊंची आवाज कान में पड़ी। शंभू बाबू न जाने किससे जोर-जोर से बातें कर रहे थे : कहीं ऐसा हो सकता है भला। वह घरवालों की बात न माने ? अगर ऐसा नहीं होता तो चांद-सूरज क्यों निकलते ? धर्म-कर्म लुप्त नहीं हो जाएंगे ?

जयप्रकाश से नहीं रहा गया : क्या है शंभू बाबू ?

ओहो बउल जी ! बउल जी ! आप ही की तो बात कर रहा था…।

इतनी जोर-जोर से…?

ओहो, थोड़ा भावुक हो गया था।

जयप्रकाश के ओठों पर मुस्कान खिंच गई। शंभू बाबू ने बड़ रहस्यमय ढंग से कहा : बउल जी, जरा चलिए राजेंद्र बाबू के डेरे पर ब्रजकिशोर बाबू के दर्शन कर आवें।

क्या ?

ब्रजकिशोर बाबू।

जिन्होंने सन् इक्कीस से तैंतीस तक बिहार की कांग्रेस पर एकछत्र राज्य किया। जिन्होंने महात्मा गांधी को चंपारन बुलाया। जो इंपीरियल कौंसिल में बिहार के सर्वप्रथम गैर सरकारी प्रतिनिधि थे। दरभंगा नरेश जैसे विख्यात धनी-मानी से लोहा लिया था। जिनकी छत्रछाया में पलकर ही राजेंद्र बाबू का व्यक्तित्व इतना बड़ा हो सका।

वही ब्रजकिशोर बाबू।

इन्हीं से मिलने जाना है, राजेंद्र बाबू के डेरे पर। तब तक सदाकत आश्रम नहीं बन सका था और राजेंद्र बाबू कलकत्ता से पटना आकर यहीं के हाईकोर्ट में वकालत कर रहे थे।

आज जहां 'सर्चलाइट' की इमारत है, उसी के पास, नजदीक के मोड़ पर आकर वे दोनों राजेंद्र प्रसाद के मकान में आते हैं।

बउल जी को देखते ही ब्रजकिशोर बाबू गद्‌गद हो उठते हैं। उन्हें लगता है उनकी प्रभा बेटी की शादी के लिए यही वर है।

हरसूदपाल और फूलरानी के पास शादी का पैगाम पहुंचता है। विवाह तय हो जाता है। तब जयप्रकाश अठारह वर्ष के पूरे हो रहे थे। पांच फुट नौ इंच के जवान भी हो चले थे। बड़ी धूमधाम से शादी संपन्न होती है। सन् उन्नीस के जून महीने में।

इस विवाह से जयप्रकाश के जीवन को सहज ही एक धारा मिलती है। राजनीतिक जीवन का एक सहज क्षेत्र मिलता है।

एक तो इस विवाह द्वारा बिहार प्रांत की राजनीति से जयप्रकाश का रक्त संबंध जुड़ता है। दूसरे राजेंद्र बाबू के बड़े लड़के मृत्युंजय से प्रभावती की छोटी बहन विद्यावती से शादी होकर इस संबंध को दूसरी गहराई मिलती है।

पर यहीं प्रभावती के बारे में कुछ बताना है, विशेषकर उनके स्वभाव के बारे में, वरना आगे समझने में कठिनाई होगी। वह बाप की बहुत ही प्यारी मुंहलगी बेटी थीं। बेटे की तरह पिता ने उनका लालन-पालन किया था। बेटे की तरह प्रभा को पोशाक पसंद थी। वह ब्याह के पहले तक धोती, कुर्त्ता, पैजामा पहनती थीं। स्कूल नहीं भेजकर उन्हें घर ही पर बाकायदे शिक्षा मिली थी।

घर में यही बड़ी लड़की थीं। मां इन्हें जेवर और स्त्री के अच्छे कपड़े पहनने के लिए कहती थी। लेकिन इन्हें पसंद नहीं था। पिता का बहुत प्रभाव था इन पर। दादी और मां ने, पिता जी ने कितने-कितने मनुहार करके पहली बार इन्हें साड़ी पहनने पर राजी किया था। उन्होंने कहा है: बचपन से ही मैं बहुत चंचल थी। हर काम में, जो काम माली बगीचे में कर रहा है तो मुझे भी करना चाहिए, बाबा जी (रसोइया) चौके में खाना बनाते रहते थे, तो मैं घुस जाती थी। दरवाजा बंद कर देती थी कि मैं बनाऊंगी, नहीं तो मैं पानी डाल दूंगी आग में। मैं सब काम करना चाहती थी। हर काम मुझे करना है। अपने हाथ से। जब शादी हुई तब मैं थोड़ा समझने लगी कि मुझे जेवर पहनना है। अच्छे कपड़े पहनने हैं।

इस विवाह के बाद ज्यों-ज्यों जयप्रकाश किशोरावस्था की सीमा को पार कर युवावस्था की ओर पैर बढ़ा रहे थे, त्यों-त्यों देश का राजनीतिक वायुमंडल गरम-से गरम होता जा रहा था। जयप्रकाश का देशभक्त हृदय इस गरम लहर से अछूता नहीं रह सका।

उसके बाद ही घटनाएं बिजली की तरह बढ़ने लगती हैं। जयप्रकाश की इंटर की परीक्षा के केवल बीस दिन शेष थे।

तब विवाह का केवल दूसरा ही वर्ष था। गांधी जी के असहयोग आंदोलन का तभी शुभारंभ हुआ था। उन्हीं दिनों मौलाना अबुल कलाम आजाद पटना आए थे। उनकी वाणी में जादू था। उनके भाषणों ने पटना के जनमानस में जैसे आग लगा दी थी। जयप्रकाश को याद है, आज भी वह बताते हैं: उन्नीस सौ

इक्कीस की जनवरी का वह स्मरणीय दिन याद आता है, जब पटना की एक विशाल जनसभा में असहयोग आंदोलन के एक तूफानी नेता की शानदार तकरीर सुनने का अवसर मुझे मिला था। उस नेता की उम्र तो कम थी—लेकिन उसकी जबान में जादू था। मैं तो मुग्ध रह गया था। इत्तफाक से उसी स्थान पर दूसरी तरफ एक दूसरी सभा हो रही थी जिसको एक दूसरा नौजवान संबोधित कर रहा था। उसके बारे में तब केवल इतना ही मालूम हुआ था कि वह महान पंडित मोतीलाल नेहरू का उदीयमान सपूत है। उस समय लाउडस्पीकर नहीं थे। (इसीलिए जनता को छोटी-छोटी सभाओं में बांटकर संबोधित करना पड़ता था, ताकि सब सुन सकें) लेकिन उनके जोशीले भाषण ने पास ही में बहने वाली गंगा के शांत जल में आग लगा दी। तभी तो उसे 'शब्दों के पिता' का खिताब दिया गया था। दूसरे दिन सुबह एक अजीब दृश्य देखा गया। पटना के कालेजों के बीसों विद्यार्थी एक साथ मार्च करते हुए, बिहार के विद्यार्थियों के आदर्श राजेंद्र बाबू के निवास पर उनके चरणों पर अपना सर्वस्व न्यौछावर करने के लिए पहुंचे। उन विद्यार्थियों को सामने देखकर राजेंद्र बाबू की वाणी अवरुद्ध थी, लेकिन उनके गालों पर अश्रुधारा फूट पड़ी थी।

जयप्रकाश बेचैन हो गए। विश्वविद्यालय की छात्रवृत्ति पाने वाले जयप्रकाश ने कालेज छोड़ने का निश्चय कर लिया।

यद्यपि गांधी जी का असहयोग आंदोलन कार्यक्रम कलकत्ता के विशेष अधिवेशन में ही कांग्रेस ने स्वीकार कर लिया था किन्तु विद्यार्थियों के स्कूल कालेज छोड़ने पर नेताओं में कुछ मतभेद था। पर नागपुर कांग्रेस ने असहयोग के पूरे कार्यक्रम पर स्वीकृति देकर रास्ता साफ कर दिया। तब सिर्फ विद्यार्थियों से ही नहीं, देश के हर वर्ग के लोगों से पुकार की गई थी गुलामी की व्यवस्था और अंग्रेज तंत्र से पूर्ण असहयोग के लिए। अब तक जे० पी० को याद है : उन्नीस सौ बीस का आखिरी महीना रहा होगा, जब गांधी जी पटना आए थे। और मैंने पहली बार उनको देखा था। मैदान में बहुत भीड़ थी और मैं भी दर्शकों और श्रोताओं में था। वहां हमारे कालेज से और दूसरे कालेजों से जो लोग असहयोग किए हुए थे, वे थे। राजेंद्र बाबू भी थे और मनोरंजन बाबू। मनोरंजन बाबू ने भोजपुरी में फिरंगिया का गीत गाया था।

फिर क्या था—उपाधियां छोड़ी जाने लगीं। वकालत और सरकारी नौकरियों से त्यागपत्र दिए जाने लगे। देशबंधु चितरंजनदास और मोतीलाल नेहरू जैसे लोगों ने वकालत छोड़ दी। पटना में मौलाना मजहरुल हक और राजेंद्र बाबू ने वकालत त्याग दी।

जयप्रकाश का कालेज छोड़ने का निश्चय उनके परिवार के लिए स्वभावतः एक आघात था, उनके मध्यवित्तीय पिता की कल्पना में सुपुत्र का यह मार्ग कांटों का था। पर पिता ने पुत्र के मार्ग में कभी रुकावट नहीं डाली।

इस तरह सहस्रों युवकों की भांति गांधी जी के असहयोग आवाहन पर जयप्रकाश ने कालेज छोड़ दिया। यह जनवरी सन् इक्कीस की बात है। छोड़ने वालों में जयप्रकाश के साथ पटना कालेज के सर्वोत्तम विद्यार्थियों का एक बहुत बड़ा गिरोह था। उनमें थे सिद्धेश्वर, कृष्णवल्लभ सहाय, पुष्कर ठाकुर, फूलन-

प्रसाद वर्मा और विश्वेश्वरदयाल जो आगे चलकर बिहार की प्रख्यात हस्तियों में उल्लेखनीय हुए।

असहयोग के आवाहन की आंधी में सहस्रों युवक मुक्त पक्षी की तरह अपने-अपने पिंजड़े तोड़कर उड़े और आकाश में छा गए। युवा जयप्रकाश इनमें सबसे ऊंचे उड़े। वह स्वीकार करते हैं : उस समय उनके मन में गांधी के नैतिक और आध्यात्मिक सिद्धांतों का उतना प्रभाव नहीं था। उनके मन में स्वतंत्रता की प्रबल निष्ठा थी, और देशप्रेम की गहरी भावना थी।

आगे चलकर वह लिखते हैं : 'कालांतर में उस स्वतंत्रता ने मात्र स्वदेश की स्वतंत्रता से आगे बढ़कर, प्रत्येक देश में, प्रत्येक बंधन से मानव मुक्ति की भावना को अंगीभूत किया और सर्वोपरि मानव व्यक्तित्व की स्वतंत्रता, मन तथा आत्मा की स्वतंत्रता का अर्थ उसने ग्रहण कर लिया। यह स्वतंत्रता मेरे जीवन की वासना बन गई है और मैं कदापि उसका सौदा रोटी के लिए, सत्ता के लिए, सुरक्षा के लिए, समृद्धि के लिए, राज्य के गौरव के लिए अथवा अन्य किसी वस्तु के लिए नहीं होने दूंगा।'

तभी एक आश्चर्यजनक घटना घटी। बाईस के फरवरी में चौरीचौरा का कांड हुआ और सहसा गांधी जी ने अपना असहयोग आंदोलन रोक दिया। अब क्या होगा ? जयप्रकाश के सामने एक अजीब प्रश्न चिह्न खड़ा हो गया।

जयप्रकाश फिर उसी गंगातट पर जा बैठे। और मानो देखने लगे, पृथ्वी एक कोण से दूसरे कोण की ओर दौड़ी चली जा रही है। मानव के कुरुक्षेत्र में एक दिन फ्रांस का विप्लव हुआ था। प्रथम विश्वयुद्ध हुआ था। पर लोगों को क्या मनोवांछित चीजें मिल गईं ? और क्या मनुष्य हार गया ? नहीं। कभी नहीं। मानव-संसार की लक्ष्मी मानो सती की तरह घर से निकाल दी जाती है पर मनुष्य उसके पीछे-पीछे जाता है—सती को वापस घर लाने के लिए।

जयप्रकाश वहां से मुड़े। किसी की आवाज आई : जयप्रकाश। उन्होंने पलट कर नहीं देखा।

अगले दिन सीधे बिहार विद्यापीठ गए। इस स्वतंत्र संस्था की स्थापना राष्ट्रीय नेताओं ने असहयोगी छात्रों के लाभ के लिए की थी। वहीं विज्ञान से इंटरमीडियट परीक्षा सम्मानपूर्वक उत्तीर्ण की। पर विज्ञान की आगे पढ़ाई का कोई प्रबंध बिहार विद्यापीठ में नहीं था। जयप्रकाश प्रोफेसर फूलदेव-सहाय वर्मा की सहायता और संरक्षता में विज्ञान का अध्ययन करने लगे। जयप्रकाश से यह अपेक्षा की जा रही थी कि वह हिंदू विश्वविद्यालय में नाम लिखवाकर विद्याध्ययन करेंगे। किन्तु वह सरकार की सहायता प्राप्त संस्थाओं से कोई संबंध नहीं जोड़ना चाहते थे। जयप्रकाश ने स्वामी सत्यदेव परिव्राजक की अमेरिका संबंधी पुस्तकें पढ़ी थीं और उनके व्याख्यान भी सुने थे। उनके मन में अमेरिका जाकर पढ़ने की इच्छा उत्पन्न हुई।

पर पिता हरसूदयाल अपने प्यारे बेटे को इतनी दूर अमेरिका भेजने की चर्चा से ही सिहर उठे। मां फूलरानी ने रोना शुरू कर दिया। ब्रजकिशोर बाबू विद्यार्थियों को विदेश भेजे जाने में प्रोत्साहन देते आए थे। बहुत से छात्रों की

मदद भी की थी। किन्तु वह भी उनके अमेरिका जाने के पक्ष में नहीं थे। शंभू बाबू की भी यही हालत थी।

उस समय भोलादत्त पंत नामक एक गढ़वाली विद्यार्थी जो हिंदू विश्वविद्यालय में पढ़ते थे, अमेरिका जाने के लिए मदद की उम्मीद में ब्रजकिशोर के पास आए थे। यहीं जयप्रकाश से उनकी भेंट होती है। और दोनों दोस्त बन जाते हैं। जयप्रकाश ने भोलादत्त पंत के साथ ही अमेरिका जाना तय कर लिया। और कलकत्ता जाकर पासपोर्ट आदि का प्रबंध भी कर लिया।

इसी कलकत्ता यात्रा में जयप्रकाश ने पहली बार ट्राम गाड़ी देखी जिसकी चर्चा यूसुफ मेहरअली ने बड़े मनोरंजक ढंग से की है।

उसी समय अखबारों में निकला कि अमेरिका में जो विद्यार्थी हैं उन्हें बहुत कष्ट उठाने पड़ रहे हैं। वहां बड़ी मंहगाई है। संघर्ष है। अखबार के उन तथ्यों को दिखाकर उस क्षण जयप्रकाश को रोक लिया गया। पर भोलादत्त पंत अकेले अमेरिका पहुंचे और वहां से उन्होंने पत्र लिखा---ऐसी यहां कोई बात नहीं। तुम अकेले ही क्या अपनी पत्नी को भी यहां ला सकते हो। यह पत्र जयप्रकाश ने अपनी पत्नी प्रभावती को दिखलाया। प्रभा ने पति को उत्साह दिया।

जयप्रकाश अब सीधे कलकत्ता पहुंचे और सारा प्रबंध करके लौटे। तब घर वालों को सूचना दी कि अमुक तिथि को मैं अमेरिका जा रहा हूं। सब चकित रह गए। तब प्रभावती मायके में थी। ब्रजकिशोर बाबू ने जब पूछा : बेटी तुझे मालूम था ?

—हां।

—ओहो, तभी तू विदा देकर यहां चली आई।

जयप्रकाश इस समय कुल बीस वर्ष के हैं। स्वास्थ्य बहुत अच्छा है। उनका चरित्र इतना बेदाग निर्मल है कि उनके घर परिवार या उनसे परिचित किसी के भी मन में उनके प्रति कोई आशंका या कुभावना नहीं है।

पर जाने से पहले प्रभा से जरूर मिलना है। श्रीनगर ससुराल पहुंचे। मैं जा रहा हूं, शीघ्र आऊंगा।

नवोढ़ा पत्नी ने उन्हें चुपचाप भरपूर आंखों से देखा। ओंठों पर मुस्कान। आंखों में आंसू। प्रियतम ने कहा : तुम भी तब तक यहां विद्याध्ययन करो। उनके मुंह से निकला : तब तक मैं साबरमती आश्रम चली जाऊं तो ?

—जैसी तुम्हारी इच्छा।

और ठीक यही हुआ। जयप्रकाश अमेरिका गए। प्रभावती साबरमती गई। एक की यात्रा यथार्थ समाजवाद की ओर। दूसरे की यात्रा आदर्शमय गांधी मार्ग पर।

इस तरह विदा देकर प्रभा ने अपने आंसुओं को पी लिया था। पर मां फूलरानी 'बउल जी' 'बउल' कहकर जो रोईं, उससे सारा घर आंगन कांप गया। जे० पी० को याद है—मां यह कहती हुई रोई थीं—अभी तो शादी हुई और फिर कितने दिन में लौटेगा। मां को विश्वास नहीं होता था कि फिर आएगा या नहीं। वहीं शादी कर लेगा। शाहाबाद में नासरीगंज एक जगह है। उस वक्त

पिता जी वहीं जिलेदार थे। वहां क्वार्टर से माता जी के पैर छूकर जब मैं इक्के से रवाना हुआ तो पिता जी तो बाहर खड़े रहे और माता जी के अंदर से रोने की बहुत जोर से आवाज मेरे कान तक पहुंची तो मैं सुनता रहा। इक्का भी चलता रहा। बीमार भी हुई होंगी। उनको बहुत सदमा था…।

सोलह अगस्त उन्नीस सौ बाईस। कलकत्ता शहर। शाम का वक्त। वही गंगाजल। वही गंगा जो यहां आकर हुगली हो गई है। उसी गंगाजल में एक कारगो जहाज खड़ा है। नाम है 'जेनस'। यही जहाज आज रात को जापान के लिए छूटेगा। इसी में जयप्रकाश, ऊपर के सेकेंड क्लास के डेक पर खड़े हैं। जहाज चल पड़ता है। वह रेलिंग पकड़े हुए दूर होती हुई भारत मां की धरती को, कलकत्ता से लेकर सिताब दियारे, श्रीनगर और नासरीगंज तक देख रहे हैं। वह केबिन में चले जाते हैं। गहरी रात है। नीचे अपार जल फट रहा है। नींद की जगह न जाने कहां-कहां की भूली बिसरी बातें, कथाएं, घटनाएं भीतर उमड़ रही हैं। आंखें स्निग्ध-तरल हैं। और उसमें तैर रही हैं, प्रभा की बड़ी-बड़ी प्रेमल आंखें जैसे शांत झील में दो नील कमल खिले हों। मां का वह रुदन अब तक कानों में सिहर रहा है। अब आया गंगासागर। गंगा समुद्र में मिल रही है। जैसे सिताब दियारे में सरयू गंगा में मिलती है। ये इस तरह संगम क्यों होते हैं? भारत की यही मनीषा है। विचारधारा तभी सभ्यता बनती है, जब वह निस्सीम में, असीम में विलीन हो जाए। गंगाजल तभी इतना पवित्र है, भारत की सनातनता की, अबाधता की तभी यह गंगा प्रतीक है, क्योंकि यही हिमालय और समुद्र को जोड़ती है। अविरल प्रवाह को अनंत विशालता के अंक में दे देती है।

यही है भगीरथ की तपस्या, यही है राम का वन गमन। यही है बुद्ध का गंगा से उस पार जाना जिसकी स्मृति में अशोक ने उस चंवरधारिणी यक्षिणी की प्रतिमा उस बिंदु पर स्थापित की थी, जहां से बुद्ध ने गंगा पार किया था, मिथिला भूमि में जाने के लिए।

अब भारत-भूमि बहुत पीछे छूट चुकी है। अब भारत भूमि नहीं—स्वदेश। 'सर्वत्र हमारे संग स्वदेश हमारा' 'साकेत' महाकाव्य में मैथिलीशरण गुप्त ने अपने राम से यही बात कहलाई थी। ज्यों-ज्यों देश दूर होता जा रहा है, स्वदेश मन में उभरता चल रहा है। पर कितना अकेलापन छा रहा है जहाज के उस केबिन में! 'जेनस' पर क्या कोई भी ऐसा आदमी नहीं जो उसका साथ दे सके। क्यों नहीं? 'केबिनो' में ही उसे दो युवक मिल जाते हैं। दोनों विद्यार्थी हैं। समवयस्क हैं। दोनों हैदराबाद राज्य से हैं। एक का नाम है सीताराम गोपाल रेड्डी। दूसरा है, हरिश्चंद्र रामराव प्रधान। अब दोस्त बनने में कितनी देर लगती है। पर बंगाल की खाड़ी की समुद्री यात्रा बड़ी दुखदायी थी। इतनी कि दोनों दोस्तों ने घबराकर तय किया कि चलो, वापस लौट चलें। पर जयप्रकाश ने ऐसा होने नहीं दिया।

रंगून से जहाज आगे बढ़ता है—मलाया की ओर। भारतीयों के लिए मलयद्वीप स्वर्णद्वीप की तरह है। इसी रास्ते से दो ढाई सौ वर्ष पूर्व बिहार और

पूर्वी उत्तर प्रदेश के कितने युवकों ने यात्रा की थी। मजदूर और कुली बनाकर ले गए होंगे फ्रांसीसी, अंग्रेज। रंगून से पिनांग। फिर वहां से सिंगापुर। उन दिनों अंग्रेज साम्राज्यशाही सिंगापुर को संसार का अद्वितीय जहाजी अड्डा बना रही थी। पर जयप्रकाश को तब क्या पता था कि यहीं एक दिन पहली आजाद हिंद सरकार का संगठन जनरल मोहन सिंह के नेतृत्व में होगा। सिंगापुर के बाद हांगकांग। हांगकांग से जापान। और इसी सफर में वही समुद्री तूफान जिसे अंग्रेज नाविक 'चाइनीज टाइफून' कहते हैं, आया था, जिसकी अनेक कथाएं पुस्तकों में मिलती हैं। पूरे तीस दिनों बाद हांगकांग से वह जहाज कोबे पहुंचा। कोबे। जापान। जयप्रकाश को जापान बहुत अच्छा लगा। विशेषकर वहां के छोटे-छोटे साफ-सुथरे मकान, आंगनों में फूलों के झाड़। सादगी भरी सहज युवतियां, चुस्त फुर्तीले नौजवान।

कोबे से जयप्रकाश ओसाका जाते हैं। वहां उनकी भेंट महादेवलाल सर्राफ से होती है।

भाई, आप यहां कैसे ?

आप कैसे ?

मैं अमेरिका पढ़ने जा रहा हूं। जयप्रकाश बोले।

मैं भी वहीं जा रहा हूं। यहां कुछ पैसे कमाने के लिए रुक गया हूं।

क्या करते हैं ?

मीनीची नामक जापानी अखबार के अंग्रेजी विभाग में प्रूफ रीडरी करता हूं।

ओसाका से ट्रेन द्वारा याकोहामा। स्टेशन पर चावल (भात) बिक रहा है। सूखी मछली भी। एक डब्बा चावल खरीदिए, कुछ सूखी मछली तो बांस का चम्मच मुफ्त में मिलता है। जयप्रकाश उस समय वेजीटेरियन थे। याकोहामा से ही अमेरिका के लिए जहाज मिलता है। जहाज का नाम है : 'तैयोमारू' मतलब सूरज जहाज। जापानी जहाज है। उसी में जगह मिलेगी। और दस दिनों तक जापान में रहकर, उसी जहाज से अमेरिका के लिए प्रस्थान करते हैं।

4

प्रशांत सागर से तैयोमारू ने अमेरिका के कैलिफोर्निया प्रदेश में जयप्रकाश को आठ अक्टूबर उन्नीस सौ बाइस को पहुंचा दिया। इनके पास धन नहीं था। साधन नहीं थे। फिर शिक्षा सत्र के आरंभ में अभी विलंब था। उस समय अमेरिकी जीवन बेहद महंगा था। जयप्रकाश स्वावलंबन की दिशा में थे। यह वही क्षण था मानो, मानो तब से भविष्य के भारतवर्ष के स्वावलंबी समाज-रचना का चित्र उनके मानस में उभरने लगा हो।

पता लगाया। तीन महीने की देर थी। क्यों न तब तक कुछ कमाकर रख लिया जाय।

कैलिफोर्निया में प्रवासी भारतीयों की एक छोटी बस्ती थी, ज्यादातर सिक्ख पठान। वहीं पता चला कि उन्हें कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय में पढ़ना होगा, जो बर्कली नामक स्थान में है। यहां और भी भारतीय विद्यार्थी हैं जिन्होंने अपना एक केंद्र बना रखा है। नाम है, 'नालंदा क्लब'।

अरे बिहार का नालंदा ?

जी हां।

जयप्रकाश नालंदा क्लब में आ गए। और स्थानाभाव के कारण डाक्टर के० बी० मेनन के कमरे में रहे जो उस समय विश्वविद्यालय के चौथे वर्ष में अध्ययन कर रहे थे।

यह अक्टूबर है। युनिवर्सिटी का नया सत्र जनवरी से शुरू होगा। तब तक कोई मजदूरी की जाय। कैलिफोर्निया युनिवर्सिटी से संबद्ध यंगमैन क्रिश्चियन एसोसियेशन की तरफ से काम दिलाने वाला एक ब्यूरो था जो विद्यार्थियों की सहायता में लगा रहता था। पर इससे तुरंत कोई मदद न मिल सकी। तब पता चला कि 'मेरिसाविले' मतलब मेरी का गांव नामक एक स्थान कैलिफोर्निया में है जहां हिंदुस्तानी फोरमैन मजदूरों की भर्ती करने आया-जाया करते हैं और प्रायः हर गैंग में एक दो विद्यार्थी भी ले जाते हैं।

जयप्रकाश अपने साथ रेड्डी को लेकर मेरी का गांव आए। वहां जयप्रकाश ने पाया—अपने देश से इतनी दूर रहने पर भी ये 'हिंदोस्तानी' अपनी मातृभूमि को भूले नहीं हैं। वे लोग गांधी को याद करते हैं। आजादी की लड़ाई के बारे में जानना चाहते हैं। ऐसे ही वतनपरस्तों में थे एक फोरमैन शेरखां पठान।

शेरखां इन दोनों नवजवानों से मिलकर बहुत खुश हुआ और उन्हें अपने गैंग में ले लिया। शेरखां का गैंग सी० वी० हार्टर की अंगूर की खेती पर काम कर रहा था। हजारों एकड़ में अंगूर की खेती। और उसके साथ-साथ बादाम, खूबानी, नाशपाती आदि फल की भी वहां खेती होती थी।

प्रतिदिन नौ घंटे के हिसाब से काम करना पड़ता था। बीच में एक घंटे की छुट्टी। फी घंटा चालीस सेंट के हिसाब से मजदूरी मिलती थी जो चार डालर रोजाना जा पड़ती थी। उस जमाने में चार डालर हिंदुस्तान के चौदह रुपये के लगभग होते थे।

जयप्रकाश ने प्रतिदिन दस घंटे काम किए। और हफ्ते के सातों दिन। न छुट्टी इतवार को न विश्राम किसी त्योहार को। उन्होंने कठिन श्रम, मितव्ययिता और संकल्प से प्रत्येक माह अस्सी डालर संचित किए। शेरखां मुसलमान था। उसकी सहृदयता ने उस समय जयप्रकाश को भावी जीवन में भारत देश के या दुनिया के किसी भी देश के अल्पसंख्यकों के प्रति सहृदय होने का जैसे बीजारोपण किया। शेरखां के साथ जब तक जयप्रकाश रहे, उसने अपने यहां गो-मांस नहीं बनने दिया।

नवंबर खत्म हुआ। काम भी खत्म हुआ। जयप्रकाश के पास अब उतने पैसे हैं कि वह एक सत्र निश्चित होकर पढ़ सकें। वह बर्कले आते हैं और कैलिफोर्निया युनिवर्सिटी के द्वितीय वर्ष में नाम लिख लिया जाता है।

अमेरिकन कैलिफोर्निया को 'संसार का बगीचा' कहते हैं। समुद्र के किनारे होने से न तो यहां ज्यादा बर्फ गिरती है न यहां गर्मी पड़ती है। खूब हराभरा प्रदेश है—फलों और फूलों से भरा हुआ। वैसी ही युनिवर्सिटी है। देखकर जयप्रकाश विस्मित हो जाते हैं। बीस हजार छात्र वहां पढ़ते थे। मीलों तक फैला

हुआ 'कैम्पस' है। मकान भी बहुत ही भव्य और सुंदर। छात्रों में लड़कियों की संख्या ज्यादा है। जो लड़कों के साथ ही पढ़तीं, खेलतीं और साथ होस्टलों में रहतीं। प्रोफेसर भी बहुत अच्छे। प्रयोगशालाएं भी उतनी ही संपन्न। छात्रों और प्रोफेसरों में वैसा भाईचारापन देखकर जयप्रकाश आश्चर्यचकित रह गए।

सत्र के अंत में परीक्षा होती है तो प्रयोगशाला के प्रैक्टिकल को छोड़कर 'ए' ग्रेड उन्हें प्राप्त होता है—जिसके अर्थ हैं सौ में नब्बे अंक से ज्यादा प्राप्त करना।

'कैलिफोर्निया' में पहला सत्र ही पढ़ पाए थे कि वहां की फीस के दुर्वह बोझ का अनुभव उन्हें होने लगा। पहले भी कड़ी फीस थी। और अब उसमें भी इजाफा होने जा रहा था। एक सत्र की फीस डेढ़ सौ डालर हो गई। मतलब सौ रुपये माहवार। इतनी कड़ी फीस देकर स्वावलंबन के आधार पर अध्ययन करना असंभव नहीं तो कठिनतम अवश्य हो गया।

जयप्रकाश के पुराने परिचित भोलादत्त पंत उन दिनों इयोवा युनिवर्सिटी में पढ़ रहे थे, जहां प्रसिद्ध भारतीय विद्वान् डा० सुधींद्र बोस प्रोफेसर थे। यहां फीस भी कम थी। जयप्रकाश कैलिफोर्निया छोड़ इयोवा जाने की तैयारी में लग गए। पर वहां जाने से पहले फिर क्यों न कुछ पैसे कमा लिये जायं। जयप्रकाश ने फिर वही 'मेरी का गांव' का रास्ता पकड़ा। इस बार सिक्खों के गैंग में पहले गए। पर वहां का वातावरण उन्हें अनुकूल नहीं लगा। इसके बाद वह फलों की पैकिंग करने के काम में लगे। कुछ दिनों तक इसी मजदूरी से काफी पैसे कमाकर वह इयोवा के लिए रवाना हुए। वहां पर भोलादत्त पंत के ही साथ टिके। वहां पूरे दो सत्र, माने पूरे एक साल तक रहे। पांच छः विद्यार्थियों का एक ही साथ भोजन होता। खाना खुद ही पकाया जाता। इतवार के दिन जयप्रकाश धनी इलाके में चले जाते और लोगों के घरों में उनके फरनीचरों को साफ करते, उनमें पालिश के काम करते और अपनी मजदूरी लेते। जब कभी बर्फ पड़ती तो कुदाल लेकर घर से निकल जाते और धनिकों के घर, आंगन की बर्फ काटकर-हटाकर उसे साफ कर देते। इन छोटे-छोटे कामों में उन्हें काफी पैसे मिल जाते।

जयप्रकाश को यहीं प्रोफेसरों ने जे० पी० नाम से पुकारना शुरू किया। तब से आज तक जे० पी० 'एक नाम' हो गया। जे०पी० ने विज्ञान का प्रशिक्षण और अध्ययन वहां के विशेषज्ञ प्रोफेसर एलवर्ट वेस से पाया। अन्य विषयों के साथ जे० पी० ने केमिकल इंजीनियरिंग भी ले रखा था। इस संबंध में ड्राइंग भी एक विषय था। जे० पी० आज भी अपनी हल्की मुस्कान के बीच बताते हैं कि जिंदगी भर में यही ड्राइंग एक ऐसा विषय है जिसमें वह फेल हुए। पर जे० पी० नामक विद्यार्थी का यश चारों ओर फैला। इयोवा के बाद जे० पी० शिकागो आए। सबसे अधिक समय तक इसी शहर में रहे—करीब ढाई साल तक। यहीं से विस्कौंसिन गए और फिर यहीं लौटे। शिकागो में जे० पी० को तरह-तरह की मजदूरियां करनी पड़ीं। पंद्रह दिनों तक एक होटल में मेहतर का काम करना पड़ा। कुछ दिनों तक मांस के एक कारखाने में काम किया। पर भीतर मांस का वह दरिया नहीं देखा जा सकता था। उन्होंने उसके 'पावरहाउस' में नौकरी की। यहां के जीवन के बारे में जे० पी० बताते हैं : हालांकि उस वक्त मैं (शाकाहारी से) मांसाहारी बन गया था लेकिन फिर भी जो देखा उसके बाद

तो दो चार सप्ताह तक मैं खा नहीं सका।'''यहां हमने टेनिस खेलना सीखा।

और ?

मैंने सिर्फ 'टायलेट' साफ करने का ही काम नहीं किया, 'शूशाइन' का भी काम किया हमने। तो उसका प्रभाव था। गांधी जी के विचारों का भी असर हमारे ऊपर था। और कुछ अपने घर के जीवन से ही मिला होगा। एक पिता जी को और माता जी को भी मैंने बहुत दिलेर पाया था गरीबों के प्रति, निम्न मध्य परिवार के लोगों के प्रति। हालांकि जमीन थी हमारे पास, लेकिन खास उसमें से लाभ होता था नहीं। जो नौकरी थी, उसी की कमाई थी।

इधर उन्होंने यूरोपीय साहित्य भी पढ़ना शुरू किया। अनातोले फ्रांस, इब्सन, और गोर्की आदि। किन्तु हालात दिनबदिन खराब होते जा रहे थे। उन्हें अपनी रुचि के खिलाफ के काम करने पड़ते। भारतीय विद्यार्थी तरह-तरह के सेंट, क्रीम, हेयर लोशन वगैरह तैयार करते हैं, जिनमें वे हिमालय की बूटियां भी रखते हैं। वे सड़कों पर फेरी देते हैं :

'ये बूटियां काले चेहरे को गोरा कर देती हैं, हब्शी बालों को लंबे घुंघराले बना डालती है।' केमिस्ट्री का यह मेधावी छात्र भी हिमालय की उन कल्पित बूटियों की शरण लेने को विवश होता है।

और एक दिन एक अजब घटना घटती है।

एक युवती ने काफी चीजें लीं। जब बिल देने लगे तो युवती ने कहा : घर का मालिक बाहर है, थोड़ी देर बाद आना।

यही सही।

थोड़ी देर बाद पहुंचने पर घर में ले गई कहा : बैठो, काफी पियो।

अच्छा यह भी सही।

बिल का भुगतान कीजिये। मुझे देर हो रही है।

पैसे चाहिए ? सिर्फ पैसे ?

जी हां।

युवती मुस्कराने लगी और ऐसे व्यवहार करने लगी कि जे० पी० को वहां से भागना पड़ा।

विस्कौंसिन का राज्य उन दिनों अमेरिका के सबसे प्रगतिशील राज्यों में गिना जाता था। वहां का विश्वविद्यालय सबसे ज्यादा सुंदर था। विश्वविद्यालय के जो सभापति थे वे समाजवादी विचारों के थे। जे० पी० अब वहां पहुंचते हैं और विज्ञान का अध्ययन आगे बढ़ाते हैं।

छुट्टियों में यहां भी तरह-तरह की मजदूरियां की जाती हैं जैसे जलपान घरों में तश्तरियां साफ करना, मेज पर खाना परोसना, घरों में फर्श बुहारना, कोयला जला देना, पानी गर्म कर देना, हजामत घरों में काम करना आदि।

विस्कौंसिन आने पर जे० पी० का जान पहचान तरह-तरह के विद्यार्थियों से होती है। इनमें अमरीकी हैं, रूसी हैं, पोलिश हैं, जर्मन, डच और फ्रांसीसी हैं। जे० पी० की कुछ विशेष छात्रों से दोस्ती बढ़ती है। उन्हीं में से एक हैं, पौलैंड

निवासी यहूदी ऐव्रम लैंडी। वह पढ़ता भी है और पढ़ाता भी है विश्वविद्यालय में। पक्का मार्क्सवादी है। खूब अध्ययन किया है मार्क्सवादी साहित्य का। कुछ ही दिनों में उसके समीप पहुंचकर पता चलता है लैंडी साम्यवादी पार्टी का सक्रिय सदस्य है। और वहां कम्युनिस्ट पार्टी का एक गुप्त 'सेल' भी है। जे० पी० उस 'सेल' में आना जाना शुरू करते हैं और अंततः उसकी विचारधारा को स्वीकार कर लेते हैं।

उन्हीं दिनों जे० पी० ने एम० एन० राय की दो किताबें पढ़ीं : 'आफरमैथ आफ नानकोआपरेशन' और 'इंडिया इन ट्रांजीशन।' उन दिनों राय कम्युनिस्ट थे। रूस में ही रहते थे। कोमिंटर्न के प्रसिद्ध नेताओं में थे। उन्हीं दिनों राय द्वारा संपादित एक पत्र निकला था 'न्यू मासेज'। जे० पी० इनसे प्रभावित हुए। अमेरिका की कम्युनिस्ट पार्टी के साहित्य पढ़ते हैं और उसकी गतिविधियों से परिचित होते हैं। उन दिनों अमेरिका के कम्युनिस्ट पार्टी के पूर्वीय विभाग के इंचार्ज थे मैनुअल गोमेज। वह मैक्सिको के निवासी थे। जे० पी० की गोमेज से भेंट होती है और अब अमेरिकन मजदूरों की हड़ताल गोमेज के नेतृत्व में होती है।

जे० पी० बताते हैं : यह उन्नीस सौ चौबीस की बात कह रहा हूं, जब लेनिन शायद जिंदा थे। चौबीस में ही उनकी मृत्यु हुई और स्टालिन का उदय नहीं हुआ था। लेनिन और ट्राट्स्की को खूब पढ़ा। मैं काफी 'कनविंस' हुआ कि ये लोग जो कह रहे हैं, मार्क्स और लेनिन का जो विचार है, यह कुछ ठीक लगता है। अच्छी बात है तो साइंस को लेकर क्या करना है। देश को आजाद कराना है। इसलिए क्यों न सोशल साइंस' ही पढ़ी जाय। तो हमने विस्कौंसिन में साइंस छोड़कर फिर सोशियालोजी लिया। मेजर सब्जेक्ट और इकनामिक्स लिया। माइनर सब्जेक्ट ग्रेज्युएट के लिए।

अब तक जे० पी० विज्ञान पढ़ते रहे। विज्ञान पढ़ने का एक ही उद्देश्य था कि स्वदेश लौटकर अपने वैज्ञानिक अनुसंधानों से देश को लाभ पहुंचावें। किन्तु अब वह सोचना शुरू करते हैं : जब तक समाज का यह आधार कायम रहेगा, वैज्ञानिक अनुसंधान या उसकी नींव पर खड़े किए गए कल कारखाने किसी भी देश या समाज के लिए कतई फायदेमंद नहीं हो सकते। इनके फायदे उठाएंगे चंद मुट्ठी भर लोग। नहीं, जब तक समाज का नया निर्माण नहीं होता तब तक विज्ञान और अनुसंधान व्यर्थ हैं। पर समाज का नव-निर्माण कैसे होता है?

विस्कौंसिन युनिवर्सिटी में उन दिनों समाजशास्त्र के दो प्रकांड विद्वान् थे—प्रोफेसर एडवर्ड रौस और प्रोफेसर यंग। प्रोफेसर रौस अमेरिका में समाजशास्त्र के पिताओं में गिने जाते हैं। और प्रोफेसर यंग सामाजिक मनोविज्ञान के आचार्य हैं।

थोड़े दिनों तक समाजशास्त्र पढ़ने के बाद लैंडी की प्रेरणा और गोमेज के प्रोत्साहन से जे० पी० रूस जाने को तैयार हो जाते हैं।

तब वह विस्कौंसिन से फिर शिकागो लौट आते हैं, कुछ पैसे कमाने के लिए वह बेहद मंदी का जमाना था। यह उन्नीस सौ छब्बीस के 'विंटर' की बात है। जे० पी० को याद है : उस साल अमेरिका में 'एकनोमिक' डिप्रेशन का समय था।

कहीं काम नहीं। रोज सुबह सिर्फ एक कप काफी पीकर निकलते थे और काम की तलाश में जहां जाएं, वहीं मिले, 'नो हेल्प वांटेड', 'नो एशियाटिक वांटेड' 'नो कलर्ड पीपुल वांटेड'…।

भोजन, वस्त्र की कमी और दिन रात की दौड़-धूप, बीमारी उन्हें घर-दबोचती है। पहले कुछ खांसी, फिर 'टौंसिल' की शिकायत। बीमारी भयानक रूप धारण कर लेती है।

जे० पी० को आज भी इस दर्दनाक बीमारी की याद ताजा है। करीब साल भर वह बीमारी की चपेट में पड़े रहे। बोला नहीं जाता था। कुछ खा नहीं सकते थे। सारा शरीर गलता जा रहा था। उसका असर अब तक गले पर है। वहां 'पिता तुल्य मेरे मित्र चंद्रसिंह और माता तुल्य उनकी पत्नी ने बड़ी सेवा और मदद की। मेरे वहीं दोनों मित्र रेड्डी और प्रधान ने, और कई नये लोगों ने मेरी बड़ी मदद और सेवा की।'

काफी दिनों बाद घर पर खत भेजते हैं : मैं बीमार पड़ गया था। अब अच्छा हूं। बीमारी में कुछ रुपये कर्ज हो गए हैं। रुपये भेज दीजिए। पिता हरसूदयाल जमीन रेहन रखकर, कुछ कर्ज लेकर रुपये अमेरिका भेजते हैं। 'घर वालों को यह भी खबर हो जाती है कि बउल जी रूस जाना चाहते हैं। पिता जी मनाही की चिट्ठी भेजते हैं और ब्रजकिशोर, राजेंद्रबाबू से भी चिट्ठियां लिखवाते हैं।

राजेंद्रप्रसाद ने लिखा : 'आप उधर से रूस नहीं जाएं। भारत लौटें। यदि आपका आग्रह ही रहा तो लौट आने के बाद यहीं से रूस जाने का प्रबंध करने की कोशिश की जाएगी।'

वह बीमारी, यह मनाही। जे० पी० का रूस जाना रुक गया।

जे० पी० फिर विस्कौंसिन लौटते हैं और समाजशास्त्र का अध्ययन पूर्ण करने पर लग जाते हैं। पर विस्कौंसिन में एक ही 'टर्म' पढ़ पाते हैं कि लैंडी ओहायो विश्वविद्यालय में स्थान पा जाता है। जे० पी० भी विस्कौंसिन से ओहायो के लिए प्रस्थान करते हैं और अमेरिका का शेष जीवन वहीं व्यतीत करते हैं।

ओहायो युनिवर्सिटी में प्रख्यात प्रोफेसर मिलर मिलते हैं—विकासवाद पर जिनके अनुसंधानों ने वैज्ञानिक जगत् में धूम मचा दी है। जे० पी० कहते हैं : 'मिलर से पढ़ना मात्र ही जैसे ज्ञान के अनुसंधान का प्रमाण पत्र हो।' ओहायो में आकर ही जे० पी० ने बी० ए० किया, बड़े ही सम्मानपूर्वक। तीस डालर की छात्रवृत्ति मिली। अब मजदूरी करके पढ़ाई से छुट्टी मिली। फिर एम० ए० में एक ही 'टर्म' पढ़ सके कि वहीं सहायक प्रोफेसर बना दिए गए। अब जे० पी० एम० ए० समाजशास्त्र में पढ़ते भी थे और नीचे कुछ कक्षाओं को पढ़ाते भी थे। इस अध्यापन कार्य से अब अस्सी डालर प्रतिमास प्राप्त हो जाते हैं—जिसके बदले में उन्हें हफ्ते में सिर्फ चार क्लासें लेनी पड़ती हैं।

वह उन्नीस सौ उनतीस का अप्रैल माह था, जब साबरमती आश्रम से पत्नी प्रभावती का वह पत्र आया था, पति जे० पी० से ब्रह्मचर्यव्रत की अनुमति के लिए।

बात यह हुई कि प्रभावती जब दूसरी बार साबरमती आश्रम पहुंची तो इस

बार आश्रम का त्यागपूर्ण जीवन देखकर विमोहित हो गई। वहां लोग ब्रह्मचर्य का जीवन व्यतीत करते थे। प्रभावती को वह बात जैसे स्वभावतः श्रेष्ठ लगी—देश की सेवा करनी है तो इस तरह की चीज रहनी चाहिए। तो बापू से कहा कि मैं आपसे चर्चा करना चाहती हूं। पहले तो उन्होंने टाल दिया कि नहीं, अभी तुम समझो, क्या जरूरत है? फिर उन्होंने कहा कि मैं चाहती हूं, तो बापू ने कहा : ठीक है तुम्हारी शादी हो गई है और तुमको तो जयप्रकाश से बात करनी चाहिए।···"मैंने जे० पी० को लिखा था कि आश्रम में ऐसे लोग रहते हैं और ऐसा है। और जे० पी० को भी यह था कि हमको देश-सेवा करनी है तो फैमिली-लाइफ, बच्चों की वजह से जवाबदारी आ जाती है।···इस पत्र के उत्तर में जे० पी० ने लिखा : ठीक है। जब हम लोग मिलेंगे तो चर्चा करेंगे। चिट्ठी में क्या लिखें। पर प्रभावती की ब्रह्मचर्यव्रत की इच्छा का अनुमान जे०पी० को गांधी की इस बात से लग गया : 'आप चाहें तो दूसरी शादी कर सकते हैं।' यद्यपि प्रभावती ने गांधी से कहा : बापू आपको ऐसा नहीं कहना चाहिए था। यह गलत हुआ। उनको दुख होगा। यह बात उनके मन में नहीं है। जे० पी० ने लिखा : तुम निर्णय लेने के लिए स्वतंत्र हो। मुझे स्वीकार है···। इस दिन प्रभावती की डायरी का पहला पृष्ठ था :

'अप्रैल, 1926 (बापू के साथ एक दिन)

4 बजे उठी। दातुन, प्रार्थना, नित्यकर्म, स्नानादि, नाश्ता। बापू के साथ टहली। बापू के कपड़े धोए। बापू के लिए स्नान का पानी रखा। खाना तैयार किया। भोजन किया। बापू के पैर में घी लगाया। सोई। बापू को पंखा किया। सामान ठीक किए। थोड़ी देर बापू के पास बैठी। बापू ने गुजराती पत्र का हिंदी अनुवाद करने को दिया, उसको किया। 'नवजीवन' पढ़ा। गीता और अंग्रेजी पढ़ी। गीता-श्लोक लिखे। बापू के पास गीता सीखी। दफ्तर ठीक किया। चरखा ठीक किया। सूत भिगोया। डाक पढ़ी। अमेरिका पत्र लिखा। बापू के साथ घूमने गई। खाना बनाया। भोजन किया। बर्तन धोए। बापू के सोने के लिए बिस्तर इत्यादि ठीक किए। प्रार्थना की। बापू के पैर में घी लगाया, पैर दबाया। रोजनिशी (डायरी) लिखी। 10 बजे सोई।'

ओहायो से ही जे० पी० ने एम० ए० किया। एम० ए० की उनकी प्रसिद्ध थीसिस का विषय था—'सोशल वेरियेशन'। यह शोध कार्य प्रोफेसर लुमले के मार्गदर्शन में किया।

समाज किस तरह से बनता है। इसकी विकास प्रक्रिया क्या है, वे शक्तियां क्या हैं, क्यों हैं, जिनसे समाज में परिवर्तन आता है। इन परिवर्तनों के नियम क्या हैं···इस सत्य का अनुसंधान जे० पी० ने किया। डार्विन ने अपने विकास-वाद में बताया था कि किस तरह जीवों में नई-नई किस्म की नस्लें बनती हैं। उनमें से कुछ बची रहती हैं, शेष नष्ट हो जाती हैं। डार्विन के इसी सिद्धांत को समाज पर लागू करने का श्रेय था, येल युनिवर्सिटी के प्रोफेसर केलर को। जे० पी० ने अपने शोध में केलर के सिद्धांत को विकसित किया और बताया कि क्यों और किस तरह समाज में नये-नये रीति-रिवाज आदि पैदा होते हैं। समाज में

ऐसे परिवर्तन क्यों और कैसे आते हैं। जे० पी० का यह शोध प्रबंध उस साल का सर्वश्रेष्ठ कार्य था। प्रोफेसर लुमले ने प्रमाण स्वरूप जे० पी० के बारे में लिखा है :

'मैं जे० पी० नारायण को गत दो वर्षों से जानता हूं, वे मेरी कई कक्षाओं में मिले हैं। अलग से भी इनके सत्संग का आनंद लिया है। मैंने अनुभव किया है, बौद्धिक रूप से मिस्टर नारायण अब तक के मेरे सारे विद्यार्थियों में ऊंचे ही नहीं सर्वश्रेष्ठ हैं। यह गंभीर विचारक हैं। सत्य के अन्वेषक हैं। वस्तुतः यह बहुत बड़े पाठक हैं।···

'देखने में यह बहुत आकर्षक हैं। चेहरा-मोहरा विशेष है। इनका पहनावा हमेशा सहज और साफ-सुथरा है।

'बातें करने में निहायत चुनी हुई अंग्रेजी भाषा का इस्तेमाल करते हैं। इनकी बातचीत प्रायः मधुर मुस्कानों में सजी होती है।···

'मैं इनके निजी जीवन के बारे में बहुत तो नहीं जानता, पर मेरा विश्वास है, इनका जीवन काफी ऊंचे नैतिक स्तर का है। यह एक साफ-सुथरे और संपूर्ण मनुष्य का प्रभाव छोड़ते हैं।···

'विचार विनिमय के लिए इनके पास दृष्टि है और विश्वास भी। गांधी के जीवन से इन्हें पता है, किसी नेता को क्या जीवन-मूल्य चुकाने पड़ते हैं। इनका आदर्श मानव-कल्याण है। भौतिकवाद को, उसके अनेक रूपों में देखा परखा है···। विचारों में जितने यह आक्रामक हैं, व्यवहार में उतने नहीं।'

(तीन मई, उन्नीस सौ उनतीस)

अमेरिका के पूरे विद्यार्थी जीवन में जे० पी० ने मजदूरी और सख्त मेहनत करके जीवन को समझा और साथ ही विभिन्न विश्वविद्यालयों में पढ़कर ज्ञान प्राप्त किया ऐसा ज्ञान जो जीवन रहस्यों पर से पर्दा हटा सके। शायद यही कारण है कि विज्ञान और समाजशास्त्र के अध्ययन के सिलसिले में जयप्रकाश ने अन्य कितने ही विषयों का गंभीर अध्ययन किया।

पर जे० पी० के अमेरिकी जीवन का दूसरा पक्ष इतना नीरस और बेजान नहीं था। यह सच है कि पढ़ाई और मजदूरी से समय ही नहीं बचता था, जीवन की रंगरेलियों और मौज आनंद के लिए। पर जीवन अगर है तो वह फिर भी समय निकाल ही लेता है।

जे० पी० 'सनीमा' जाते थे। वह बताते हैं : उस समय मेरीपिक फोर्ड का जमाना था। बहुत मशहूर थी। 'टाप' पर थी।···ग्रेटा गार्बो की फिल्म आने लगी थी हमारे रहते उनतीस में। तो फिल्म देखता था। रिक्रेएशन रूम में डांसिंग सीखने लगा। लेकिन वक्त नहीं मिलता था।···डांसिंग वहां सीखा, पर उसमें प्रवीण नहीं हुआ। क्योंकि म्युजिक के लिए हमारे कान नहीं हैं। डांसिंग के लिए म्युजिक चाहिए। हमारे मित्र वहां थे। लड़कियां भी थीं, कालेज की युनिवर्सिटी की, लेकिन कोई ज्यादा रुच नहीं हुआ।···

···गरीबी की जिंदगी थी। काम कर-कर पढ़ना पड़ता था। कपड़े नहीं होते थे। डांस के लिए तो कपड़े उधार मांगने पड़ते थे। प्रेस करने के लिए भी मेट्रेस के नीचे रोज पैंट रखते थे जिससे उसकी क्रीज ठीक रहे। तो उस जिंदगी में बहुत तो सोशल लाइफ नहीं हो सकता था। और बहुत रिक्रेएशन के लिए भी टाइम नहीं

होता था। कुछ सीरियस माइंड होने से कुछ जो ज्यादा कम्युनिजम को पढ़ा : कुछ लेबर मूवमेंट···मिलर जो हमारे प्रोफेसर थे, उनसे हमारी काफी अच्छी दोस्ती हुई। विस्कौंसिन में मिस अंथोनी वेकर थीं, क्लास में नहीं पढ़ती थीं, लेकिन जहां काम करते थे, वहां काम करती थीं। वह भी बहुत अच्छी मित्र हुई।

गणित जे० पी० का प्यारा विषय रहा है। गणित की ऊंची से ऊंची पढ़ाई में वह शामिल होते रहे। 'हायर कलकुलस' के अलावा वह 'गणित की संभावनाएं और व्यापारिक भविष्यवाणी' के शास्त्रों का भी अध्ययन करते हैं। और जब गणित छोड़ा तब भी उन्होंने गणित का परित्याग नहीं किया। कीटाणु शास्त्र उस समय का बिल्कुल नया शास्त्र था, जयप्रकाश ने इसके अध्ययन में भी काफी समय लगाया। अर्थशास्त्र, मनोविज्ञान, इतिहास, साहित्य, शरीर विज्ञान और मानव-वंश शास्त्र। अंक तालिका शास्त्र में भी जयप्रकाश ने काफी समय लगाया और योग्यता प्राप्त की।

निश्चय ही भारतीय नेताओं में ऐसा कोई नहीं है जिसने जे० पी० की तरह विविध शास्त्रों का बाकायदा अध्ययन किया हो और फलतः उनकी तरह इतना बहुज्ञ हो। जयप्रकाश की यह अजब विनम्रता है कि वह अपनी विद्या और ज्ञान को अपने निकटतम व्यक्तियों से भी छुपाए रहते हैं। यही नहीं, अमेरिका के अपने विद्यार्थी जीवन में सब तरह की मजदूरी और मेहनत से लेकर प्रोफेसरी तक की विभिन्न जीविकाओं का जो अनुभव उन्होंने प्राप्त किया इसको भी अपने अध्ययन का एक बहुत बड़ा हिस्सा मानते हैं। किन्तु, इन सब बातों, अनुभवों को इस तरह छिपाए रखते हैं, मानो अमेरिका में उनका विद्यार्थी जीवन एक साधारण-सा ही जीवन रहा है। जे० पी० के सारे प्राध्यापक उनके विचार स्वातंत्र्य और सामर्थ्य से भली-भांति परिचित थे तथा उनकी प्रतिभा, विवेक-शक्ति के प्रशंसक थे। ओहायो विश्वविद्यालय में अर्थशास्त्र विभाग के प्रोफेसर ए० बी० उल्फ लिखते हैं : 'मिस्टर नारायन को समाजशास्त्र विषय में इस विश्वविद्यालय का स्कालरशिप प्राप्त था। आर्थिक चिंतन के इतिहास और जनसंख्या के अर्थशास्त्र के अध्ययन प्रसंगों में वह मेरे संपर्क में आए। मैंने अनुभव किया यह युवक विचार स्वातंत्र्य में असाधारण है और विचारों में पूर्ण परिपक्व···।'

(एक मई, उन्नीस सौ उनतीस)

बैंकिंग और मनीमार्केट के प्रोफेसर चार्ल्स लिखते हैं :

'अपने सारे विद्यार्थियों में मैंने जे० पी० नारायन को, जो भारतवर्ष से यहां आए हैं, पाया है कि वह एक विशेष छात्र हैं। उनका कार्य हमेशा प्रथम कोटि का रहा है। यह बुद्धि से कुशाग्र हैं, समझ से मौलिक हैं और विचारों से उदार हैं। अर्थशास्त्र और समाजशास्त्र दोनों विभागों में यह समानरूप से श्रद्धेय और प्रिय हैं।' (दो मई, उन्नीस सौ उनतीस)

प्रोफेसर हर्बर्ट मिलर लिखते हैं :

'जे० पी० नारायण जैसा योग्य और प्रतिभावान छात्र मैंने आज तक नहीं देखा। यह गहरे जिज्ञासु हैं। इनका जीवन के प्रति सारा दृष्टिकोण इसी आकांक्षा पर आधारित है कि समाज को विकास-पथ पर कैसे लाया जाए।···

(सात मई, उन्नीस सौ उनतीस)

एम० ए० पास करने के बाद जयप्रकाश पीएच० डी० की तैयारी करते हैं। किंतु तभी स्वदेश से मां की गंभीर बीमारी का खत मिलता है।

वह खत पिताजी का ही लिखा हुआ था। जयप्रकाश ने अपना शोधकार्य छोड़कर स्वदेश लौटने का निश्चय कर लिया। पर साथ में पैसे कतई नहीं थे। वह ओहायो के गेट पर खड़े सोचने लगे। मां बीमार है। घर जरूर लौटना है। किंतु लौटा कैसे जाए। काफी किराया है। क्या पैसे घर से मंगाए जाएं? नहीं। ···ओहायो को प्रणाम। प्रोफेसरों और दोस्तों को नमस्कार। धनोपार्जन के लिए जयप्रकाश न्यूयार्क चले जाते हैं। न्यूयार्क में जयप्रकाश के पुराने दोस्त रेड्डी साहब, वही हैदराबाद वाले, पहले से ही जमे हुए थे और सुगंधियों का व्यापार कर रहे थे। भोलादत्त पंत भी थे। यहां आकर जे० पी० ने होटलों और कारखानों में काम करना शुरू किया। अमेरिका की राजधानी में, उस महानगर न्यूयार्क में जयप्रकाश ने सामाजिक विषमता के रंगीन दृश्य देखे। न्यूयार्क के होटलों की विलासिता, निर्लज्जता और नग्नता के दृश्य जयप्रकाश के हृदय पर पूंजीवादी सभ्यता के खिलाफ एक गहरी लकीर खींच देती हैं।

काम से जब कभी छुट्टी मिलती है, राकफेलर के बनाए इंटरनेशनल हाउस में मित्रमंडली जुटती है और घड़ी दोघड़ी का मन बहलाव हो जाता है।

उस दिन शाम का वक्त था। जे० पी० एक जगह अकेले बैठे हुए सामने देख रहे थे। अगाध समुद्र लहरा रहा था। उसके अपार जल पर जहाजों की रोशनी पड़ रही थी। उसके पीछे न्यूयार्क का परीस्तान है। सारे शोर कानों में टकरा रहे हैं। पर मन उन सबसे परे कहीं दूर, बहुत दूर, सात समुद्र पार उस सिताबदियारा के गांव में खपरैल के घर के भीतर वहां टिका है जहां ममतामयी मां खाट पर पड़ी हैं।

अचानक पीछे से एक आवाज आई—हैलो जे० पी०।

ओह औरंगाबादकर! तुम···जयप्रकाश के मुंह से निकलता है। और वह पुराना मराठा साथी चिढ़ जाता है।

तुम? और तुम कहां थे हजरत?

क्या?

यार, मैं तुम्हें तलाश करते-करते थक गया।

कहां?

कहां नहीं?

फिर एक सन्नाटा छा गया। औरंगाबादकर ठहाका मारकर हंस पड़ा : सोचा था यार, तुम्हारे साथ ही वतन लौट चलेंगे। अपनी मोटर भी ले चलेंगे और पूरा योरोप घूमते हुए उसी गाड़ी से अपने मुल्क पहुंचेंगे।

तो?

तो क्या। सारा गुड़ गोबर कर दिया जे० पी० तुमने।

अरे बात तो बताओ।

जे० पी० के कंधे पर हाथ रखते हुए औरंगाबादकर ने कहा : बोलो, कल देश चलते हो?

ख्वाहिश तो है, लेकिन थोड़े दिनों बाद : जे० पी० बोले।

मतलब पैसे इकट्ठे कर रहे हो।

जे० पी० चुप थे।

उसने पीठ पर हाथ मारते हुए कहा : कल ही के जहाज से चलना है और इंग्लैंड तक का खर्चा मेरे जिम्मे।

फिर वह भावभीनी विदाई। जिसमें मराठे, पंजाबी, बंगाली, और दक्खिनी सब थे। जिसमें प्रोफेसर भी थे और छात्र भी। सबने जे० पी० को प्यार दिया है। सहज आदर दिया है। जिसने अमेरिका के इस जीवनमय, यौवनमय वातावरण में पूरे सात सालों तक रहकर अमेरिकी विद्यार्थियों और प्रोफेसरों के हृदयों पर शुद्ध भारतीयता का सिक्का जमाया— उसकी ऐसी विदाई क्यों न हो?

उन्नीस सौ बाइस के अक्टूबर में, सिर्फ बीस वर्ष की उम्र में जिस जयप्रकाश नारायण ने अमेरिका की जमीन पर पांव रखा था, वही अब जे० पी० होकर सितंबर उन्नीस सौ उन्तीस में पूरे सत्ताइस वर्ष के परिपक्व होकर स्वदेश लौटते हैं।

अमेरिका से वह जहाज इंग्लैंड आया। इंग्लैंड आकर औरंगाबादकर तो भारत के लिए सीधे रवाना हो गया पर जयप्रकाश ने पिता को खत लिखा— रुपये भेजने के लिए।

रुपये आने में अठाइस दिन लगे। इतने दिनों में जे० पी० ने लंदन को भी देखने-समझने की कोशिश की। वहीं आक्सफोर्ड में उनकी भेंट राधाकृष्णनून से हुई। वहीं वह भारतीय दर्शन के प्रोफेसर थे। उस समय प्रोफेसर राधाकृष्णनून प्रथम महायुद्ध के बाद संसार में सद्भाव और शांति की स्थापना के लिए एक संस्था कायम करना चाह रहे थे। यहीं उनसे साम्यवाद पार्टी को लेकर जे० पी० की बहुत लंबी बहस हुई।

घर से जो पैसे आए, उससे थर्डक्लास का टिकट कटाकर एक आस्ट्रेलियन जहाज से भारत के लिए रवाना हुए। वह जहाज कोलंबो होकर जाता था। इंगलैंड से फ्रांस रुका, फिर नेपल्स, पोर्ट सईद, स्वेज कनाल और वहां से सीधे कोलंबो। जे० पी० कोलंबो में उतर गए। दूसरे जहाज से कलकत्ता आए। मतलब कोलंबो से धनुषकोटि। वहां से ट्रेन पर बैठकर मद्रास, फिर कलकत्ता। और कलकत्ता से पटना। इन सात वर्षों में दोनों ओर अपार परिवर्तन हुए हैं। पटने की जिंदगी में और जे० पी० में भी। पटना से सीधे सिताबदियारा। जननी और पुत्र उसी तरह मिले जैसे दियारा में गंगा और सरयू मिलती हैं।··· सारा जल गंगाजल हो जाता है।

ज्वाला

सेनानी ! करो प्रयाण अभय
भावी इतिहास तुम्हारा है
ये नखत अमा के बुझते हैं
सारा आकाश तुम्हारा है।
कहते हैं उसको जयप्रकाश
जो नहीं मरन से डरता है
ज्वाला को बुझते देख कुंड में
स्वयं कूद जो पड़ता है ।।

—दिनकर

जयप्रकाश ने लिखा है : 'सन् उन्नीस सौ उनतीस में जब मैं अमेरिका से अपने देश वापस आया तब यहां राष्ट्रीय भावना अपनी चरम सीमा पर थी। दूसरे वर्ष के प्रारंभ में ही महात्मा गांधी ने अपना सुविख्यात नमक सत्याग्रह शुरू कर दिया था। स्वाभाविक ही था, मैं अपने पूरे उत्साह के साथ इस संघर्ष में कूद पड़ा।' यह तो निरा इतिहास है। तो।···जीवन।···

देखिए, मैं कुछ इतना झिझक रहा हूं अपने जीवन की घटना से। न लिखा। न कागज पत्र संभाला। और जो कागज रहे हैं वह पार्टी में जब सेक्रेट्री (कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी) हुआ, तो रहे हैं। फिर फाइलिंग की आदत पड़ गई। अच्छा, तो ?

मैं पटना आया। यह (प्रभावती) तो बापू के साथ थीं इस बीच। और हम रहते थे अपने बहनोई साहब के साथ। वहीं गए उनके क्वार्टर में। हमारी दीदी भी नहीं थीं। वैसे कपड़ों में ही था तो तुरंत धोती कुरता पहना। भाई साहब (बहनोई) ने दिया और उन्हीं कपड़ों में अपने गांव गए। वहां पिताजी को लगा कि कैसे रहेगा घर में। इतने दिन में वहां से आया है। तो हमारी मां खाना पका रही थीं। लकड़ी वाला चूल्हा होता था, उसमें लकड़ी जल रही थी। लगा कि बेटा देखेगा। लोगों को आश्चर्य हुआ कि यह तो इतनी जल्दी भारतीय ढंग में आ गया। यह बात है उन्नीस सौ उनतीस के नवंबर की तेइस तारीख की। फिर ?

तो यह तो हमको याद नहीं है।···बस इनके (प्रभावती) गांव गए श्रीनगर। ईश्वर बाबू से भेंट हुई। राजेंद्रबाबू से भेंट हुई। मृत्युंजय बाबू से भेंट हुई।

विद्यावती से भेंट हुई, इनकी बहिन से।'''नहीं नहीं। इसके पहले की एक महत्त्वपूर्ण घटना तो भूली ही जा रही है। पक्के मार्क्सवादी, नास्तिक जे० पी० जब गांव में अपने घर आए तब इनकी शुद्धिपूजा की गई। और इन्होंने तब विरोध क्यों नहीं किया ?

जे० पी० ने उत्तर दिया : 'इसमें मेरे स्वभाव की बात है। ऐसा ही कुछ स्वभाव उस समय भी था। बहुत जो एक कट्टर आदमी होता है, उस तरह का मैं कभी नहीं रहा। अपनी बातों पर कायम रहना और साथ-साथ दूसरे की बात भी समझना और उसके साथ अगर समाधान हो सकता है तो करना, इस प्रकार से मेरा स्वभाव रहा। अब मेरे घर में, मैं मार्क्सवादी था। या उस माने में नास्तिकवादी था, तो शुद्धि उसको नहीं कहना चाहिए। लेकिन फिर भी हमारे पिता जी, माता जी, हमारे घर के लोग, हमारी पत्नी और परिवार के लोग तो नास्तिक नहीं थे। वे तो विश्वास करते थे और घर का एक लड़का सही सलामत लौटकर आया, उनको खुशी थी। और वे उसमें विश्वास रखते थे। तो मुझे वहां उचित नहीं लगा कि मैं उनसे कहूं कि यह मैं मानता नहीं'''।'

अमेरिका से जयप्रकाश के आने के थोड़े दिनों के बाद ही मुंगेर में बिहार प्रादेशिक कांग्रेस का अधिवेशन हुआ। सभापति थे राजेंद्रप्रसाद। सरदार पटेल भी उसमें पधारे थे। बारदोली की विजय ने तब उनके व्यक्तित्व को काफी ऊंचा उठा दिया था। उस सम्मेलन में पूर्ण स्वतंत्रता बनाम औपनिवेशिक स्वराज्य—यह उस समय का अहम सवाल था। युवाशक्ति ने पूर्ण स्वतंत्रता का प्रस्ताव किया। नेताओं ने इनका विरोध किया। स्वामी सहजानन्द सरस्वती और प्रजापति मिश्र जैसे लोगों ने भी नेताओं का साथ दिया। फिर भी मतदान में नेता हार गए, युवकों की जीत हुई। जे० पी० ने उसे देखा।

पर इतना ही काफी नहीं है। सिताबदियारा से प्रभावती को साथ लेकर जे० पी० बापू से मिलने वर्धा जाते हैं।

जे० पी० बोले : यह (प्रभा) बापूजी की सेवा के लिए जाना चाहती थी, मैं गांधी जी से मिलना चाहता था।

यह बात उन्नीस सौ उनतीस के दिसंबर के दूसरे सप्ताह की है। सिताबदियारा से प्रभावती को साथ लेकर जे० पी० गांधी से मिलने वर्धा गए। बा, और बापू ने बरसों बाद स्वदेश लौटे हुए दामाद का प्रेम से स्वागत किया। बा ने दामाद की खातिर में कोई कमी नहीं रखी।

वर्धा पहुंचते ही प्रभावती महिलाश्रम में अपने नित्यकार्य में जुट गई।

अगले दिन बापू ने प्रभावती से पूछा : 'जयप्रकाश की देखरेख कौन करता है ?' प्रभावती ने कहा : 'मुझे नहीं मालूम।'

बापू ने बेटी को समझाया : 'देखो, तुम्हारी शादी उससे हुई है। तुम्हारा धर्म है उसकी देखरेख करना।'

बापू का आदेश समझकर वह पति की सेवा में जुट गई। उनके कपड़े धोना, खाना खिलाना, सभी काम करने लगीं।

जे० पी० ने बताया : 'लाहौर कांग्रेस से पहले वर्धा में वर्किंग कमेटी की

मीटिंग चल रही थी। जहां बापू जी जिस घर में थे, मैं वहीं ठहराया गया। क्योंकि प्रभा की वजह से मेरी बड़ी इज्जत होती थी वहां।'

वर्किंग कमेटी की मीटिंग समाप्त होने पर जवाहरलाल नेहरू नीचे उतरे और जयप्रकाश के पास पहुंचकर हाथ बढ़ाते हुए बोले : मैं जवाहरलाल हूं।

मैं जयप्रकाश हूं।

जे० पी० नेहरू की इस पहली भेंट के बारे में यह आज भी कहते हैं : मुझे जवाहरलाल जी पसंद आए और जवाहरलाल को मैं पसंद आया। और थोड़ी-सी बातचीत हुई। ज्यादा बात नहीं हुई। फिर बापू जी से ऊपर मिलने गए। क्या कहा बापू ने यह याद नहीं।

उन दिनों वहां आश्रम में एक अंग्रेज रहता था। नाम था रिनोल्ड (Reginald Reynolds)। वही जो तब गांधी का पत्र लेकर लंदन गया था।

एक दिन आश्रम के बाहर घास पर बैठे जे० पी० कोई किताब पढ़ रहे थे।

रिनोल्ड ने पूछा : क्या पढ़ रहे हो ? स्कैप्टिकल एसेंस। उसने हंसते हुए कहा : गांधीजी के यहां बैठकर यह पढ़ रहे हो ?

वर्धा से बापू के साथ ही जय और प्रभा लाहौर गए। वहां जवाहरलाल नेहरू के सभापतित्व में कांग्रेस होने जा रही थी। लाहौर के रावीतट का वह दृश्य, जयप्रकाश को सपना सा लगता है। लाखों लोग। सबके चेहरों से फूटती हुई बलिदान की किरनें। इन्कलाब जिंदाबाद के वे गगनभेदी नारे।

ये लोग ब्रजकिशन जी चांदीवाला के पास ठहरे। प्रभा सवेरे प्रार्थना में जाती थीं। जे० पी० प्रार्थना में नहीं बैठ पाते थे।

और इकत्तीस दिसंबर की वह आधी रात, जब नेहरू ने भारत की पूर्ण स्वतंत्रता की घोषणा की और उस घोषणा के साथ ही आजाद हिंदुस्तान की राष्ट्रीय पताका की तरह तिरंगा नीले आसमान में लहरा उठा।

यहीं लाहौर कांग्रेस की ही वह बात है, मर्मस्पर्शी···

अधिवेशन समाप्त हो रहा था। प्रश्न था प्रभावती गांधी के साथ आश्रम जाएंगी या अब पति के साथ रहेंगी ? एक अजीब मौन खिंचा हुआ था दोनों के बीच। जैसे उस व्रत का पहला साक्षात्कार हो। जे० पी० के जितने दोस्त मित्र आए थे बिहार से, विशेषकर उनके कम्युनिस्ट और सोशलिस्ट मित्र; उन सबका कहना था—तुमने गांधी जी के पास भेजा, तभी प्रभावती ऐसी हुई। यार, गांधी जी ऐसे ही बना देते हैं लड़कियों को।

तो ?···अब गांधी के आश्रम में न रहने दो। इन्हें अपने साथ ले चलो। जे० पी० ने पूछा : 'प्रभा, तुम मेरे साथ चलोगी ?' प्रभा ने कहा : 'चलूंगी। लेकिन मैं कहकर आई हूं आश्रम में कि मिलने आऊंगी एक दफा।'···'नहीं, चलना है'।

पति के इस आग्रह के बाद प्रभा, बापू के पास बात करने गईं। उस वक्त वर्किंग कमेटी की मीटिंग में बैठे थे बापू। बेटी की बात सुनते ही बोले : 'तुम्हारा तो धर्म है। कर्त्तव्य है। जयप्रकाश के साथ जाना है।'

प्रणाम के लिए बापू के पैर छूने को प्रभा झुकीं, और फफक कर रो पड़ीं।

बापू ने संभाला : 'नहीं, जाओ साथ रहो। एक दूसरे को समझो। तुम्हें जाना है। आश्रम बाद में, पति पहले।'

प्रभावती ने इस संदर्भ में साफ कहा है : 'जो लोग कहते हैं कि गांधी जी ने ऐसा करा दिया, मैंने व्रत लिया। तो गांधी जी ने कुछ नहीं कहा था। उन्होंने मना ही किया और वह बराबर कहते थे मुझको उनके साथ रहना चाहिए। देख-भाल करनी चाहिए। सब चिट्ठियां गांधी जी की मेरे नाम जो छपी हैं उसमें भी लिखा है। गांधी जी जे० पी० को इतना मानते थे। तो जो उस किताब में लिखा है वह गलत है या जैसा लोग समझते हैं, बात है। लेकिन बचपन से कुछ ऐसी प्रवृत्ति थी। वहां आश्रम में जाकर यह सब हुआ। तो स्वाभाविक रूप से इस तरफ अग्रसर हुई।'

उसी दिन जवाहरलाल ने जे० पी० से पूछा : 'क्या सोचते हो? क्या करोगे?'

जयप्रकाश ने कहा : 'तो देश का काम करना है। कांग्रेस का ही काम करना है'।

तो आ जाओ इलाहाबाद।

जवाहरलाल कांग्रेस के प्रेसिडेंट बने थे। वह चाहते थे जयप्रकाश कांग्रेस के लेबर विभाग के सेक्रेट्री के तौर पर काम करें। पहले उस काम पर मिर्जाबाकर अली आने वाले थे पर वह किसी कारण से नहीं आए।

जे० पी० ने कहा : 'मैं आ जाऊंगा और 'ज्वायन' करूंगा।'

उन्नीस सौ तीस के आरंभ में जयप्रकाश इलाहाबाद आ गए। प्रभावती भी साथ थीं। जार्ज टाउन में साठ रुपये महीने किराये का मकान लिया। साथ ही चौदह रुपये में किराये पर फर्नीचर। कुल डेढ़ सौ रुपये महीना वेतन था।

एक दिन जवाहरलाल उस घर में पहुंचे : 'यह फर्नीचर कहां से लाए?'

फिर वही हंसते हुए बोले : 'इस तरह रहोगे तो डेढ़ सौ में कैसे चलेगा? तुम बेकार में मकान क्यों किराये पर रखे हो। यहां स्वराज्य भवन में रहो।'

तो फिर वे स्वराज्य भवन चले गए।

स्वराज्य भवन से आनंद भवन में प्रवेश होता है। अब जवाहरलाल जे० पी० के 'भाई' हैं। कमला जी उनकी भाभी। प्रभावती के कारण आनंद भवन के उस पारिवारिक आनंद को एक मानवीय आधार मिला।

स्वराज्य भवन में जयप्रकाश की योग्यता की धाक जम जाती है। जवाहर को जैसे दाहिना हाथ मिल गया। वह जे० पी० के काम से इतने संतुष्ट और प्रसन्न होते हैं कि कांग्रेस के स्थायी मंत्री राजाराव की जगह खाली होते ही इनकी नियुक्ति उसी स्थायी पद पर कर दी जाती है।

अभी-अभी घर बसाया ही था कि तीस का आंदोलन शुरू हो जाता है। उन्हीं दिनों जे० पी० की माता बीमार पड़ीं। यह इलाहाबाद से घर पहुंचे। उसी बीमारी में माता जी का देहांत हुआ। इसी कारण वह आंदोलन में भाग नहीं ले सके। मां के विछोह के उस गहरे दुःख से वह वहीं गांव में ही रह गए। उस

समय घर की आर्थिक स्थिति भी बहुत खराब थी। इसलिए भी कुछ दिन घर रह जाना पड़ा। तभी कमला नेहरू ने प्रभावती को यह पत्र लिखा :

प्यारी प्रभा, प्यार। जयप्रकाश जी को यहां आकर अपना काम संभालना चाहिए। माता की मृत्यु से देश का काम छोड़ देना ठीक नहीं है। माता की आत्मा को बहुत दुःख होगा कि उन्होंने दुःख के कारण अपनी असल माता की सेवा नहीं की। —कमला

जे० पी० ने बाकायदा मां का श्राद्ध किया।

उस समय बिहार में आंदोलन ने खूब जोर पकड़ा था। पटने के सदाकत आश्रम में बैठकर ब्रजकिशोर बाबू सारे प्रदेश के आंदोलन का संयोजन-संपादन कर रहे थे। उनकी अद्‌भुत संगठन कुशलता का परिचय देश को उस समय हुआ जब ब्रिटिश सरकार का दमन चक्र चलने के बावजूद बिहार के आंदोलन का जोर कम नहीं हुआ। ब्रजकिशोर बाबू गिरफ्तार होकर हजारीबाग जेल भेजे गए। फिर भी आंदोलन चलता ही रहा। ब्रजकिशोर बाबू, मौलाना मजहरुल हक और राजेंद्र बाबू की त्रिमूर्ति का अधिष्ठान 'सदाकत आश्रम' उस समय तक बिहार की राजनीति का केंद्र बन चुका था।

यही आंदोलन जे० पी० और प्रभावती को फिर इलाहाबाद खींच लाया। मार्च में कांग्रेस वर्किंग कमेटी की मीटिंग अहमदाबाद में हुई। और साबरमती आश्रम में नमक सत्याग्रह शुरू हो गया। गांधी का डांडी मार्च हुआ। जो चीज नमक सत्याग्रह जैसे साधारण सवाल को लेकर शुरू हुई वह थोड़े दिनों के अंदर ही गांव-गांव, नगर-नगर, गली-गली में अंग्रेजी राज को चुनौती देने लगी। अंग्रेज शासन ने निर्मम दमन चक्र शुरू किया। किंतु इन दमनों के प्रभाव से क्रांतिकारी चेतना और भड़कती ही चली गई। कांग्रेस गैरकानूनी संस्था करार दी गई। फिर भी उसके जलसे होते हैं। दफ्तर चलते हैं। पर्चे और डाक पत्र निकलते हैं। अंग्रेजी राज्य के इतिहास में पहली बार सरकार को झुकना पड़ा। लार्ड इरविन ने गांधी को आमंत्रित कर उनसे समझौता किया। राजबंदी छूटे। कांग्रेस पर से प्रतिबंध हटा। करांची कांग्रेस हुई। गांधी गोलमेज सम्मेलन में विलायत गए।

इन्हीं दिनों इलाहाबाद में जे० पी० को खत मिला कि पिताजी को लकवा मार गया। फिर तो उन्हें नौकरी से अवकाश प्राप्त करना पड़ा। घनघोर आर्थिक संकट आया परिवार के ऊपर। अमेरिका जाते समय, बीच में बीमारी के वक्त, और इंग्लैंड से भारत लौटने के लिए जो धन उन्हें भेजे गए थे, सब जमीन रेहन रखकर कर्ज के रुपये थे। जयप्रकाश को अब पता चला। पिता जी की बीमारी के खर्च, परिवार के पालन पोषण और उस कर्ज के बोझ से मुक्त होने के लिए चिंतित हो गए।

इस अवसर पर जे० पी० ने गांधी जी के पास खत भेजकर अपनी सारी परिस्थिति उनके सामने रखी। गांधी जी ने उन्हें पिता की सेवा शुश्रूषा और घर के प्रबंध की ओर ही सर्वप्रथम ध्यान देने का आदेश दिया। यही नहीं, बापू ने बिड़ला जी को लिखा कि जयप्रकाश को कोई काम दें। उनके पिलानी कालेज में कोई जगह मिल जाय तो और भी अच्छा। किंतु सरकार कैसे गवारा कर सकती थी कि जयप्रकाश ऐसे आग के गोले को वह किसी शिक्षण-संस्था में घुसने का

अवसर दे। फलतः बिड़ला जी के आग्रह पर जे० पी० उनके सेक्रेट्री का काम करने लगे। गांधी का वह पत्र था :

यरवदा मंदिर, 1 नवंबर, 1930

भाई घनश्यामदास जी,

यह खत भाई जयप्रकाश नारायण के लिए है। वह बिहार के प्रतिष्ठित कुल के हैं और बिहार के बड़े सेवक ब्रजकिशोर बाबू के दामाद हैं। अब तक तो पं० जवाहरलाल के साथ कांग्रेस के दफ्तर में थे। अमेरिका में सात वर्ष तक अभ्यास किया है। अब माता का देहांत होने के कारण कुछ धनोपार्जन करने की आवश्यकता उनको प्रतीत हुई है। उनकी हाजत रुपये 300 माहवार है। मेरा अभिप्राय है कि भाई जयप्रकाश गुणवान नवयुवक है। यदि संभव है तो उनको कहीं भी रख लो और जो हाजत है इतना माहवार दे दो। भाई जयप्रकाश ही के पास से उनका और इतिहास (इस पत्र के साथ जयप्रकाश नारायण का पत्र संलग्न था।) सुनोगे।···

आपका,
मोहनदास

यहीं जयप्रकाश ने बहुत थोड़े ही दिनों में भारतीय पूंजीवाद का सही रूप देखा। पूंजीवादी का एक पैर साबरमती आश्रम या सेवाग्राम में रहता है तो दूसरा पैर 'वाइसरीगल लाज' या 'ह्वाइट हाउस' में। सिर्फ छः ही महीने जयप्रकाश ने ये अजीब दृश्य देखे थे तभी गांधी इरविन समझौता हुआ। कांग्रेस फिर से कानूनी संस्था बनी और जवाहरलाल ने फौरन जे० पी० को वापस बुला लिया।

जे० पी० को उन छः महीनों के अनुभव याद हैं : 'बिहार के ही थे पारसनाथ सिन्हा। उन्हें कोई और काम दे दिया था। उन्हीं की जगह खाली थी—प्राइवेट सेक्रेट्री। बिड़ला पार्क अब तो इंडियन म्यूजियम बन गया है, वहीं हम रहते भी थे। बिड़ला पार्क में आफिस जाया करते थे।···लिखने-पढ़ने का काम वह देते थे। उनके साथ जब कभी घूमने गया, उनका व्यवहार अच्छा रहा।

स्वराज्य भवन में वापस आकर जयप्रकाश ट्रेड यूनियन आंदोलन के आधार तैयार करने लगे। उनकी योजना थी, कांग्रेस को 'लेबर मूवमेंट' के साथ करीब ले आया जाय। राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन संगठनों से कांग्रेस का सूत्र जोड़ा जाय।

इसी बीच जे० पी० के अमेरिका के प्रोफेसर 'हरवर्ट मिलर' आए। उन्हें लेकर जे० पी० पटना, नालंदा विश्वविद्यालय का खंडहर और काशी दिखाने गए। काशी में ही प्रोफेसर के साथ पहली बार आचार्य नरेन्द्रदेव से जे० पी० की भेंट हुई। विद्यापीठ इसीलिए गए थे कि वह तब स्वराज्य की लड़ाई का एक केंद्र बन रहा था। काशी से इलाहाबाद, जवाहरलाल से मिलाया।

मिलर ने आनंद भवन के विशाल कमरे में बैठकर नेहरू से कहा : 'ऐसे स्थान में रहते हुए समाजवाद का काम करने में आपको कोई कठिनाई तो नहीं महसूस होती ?'

नेहरू ने उत्तर दिया : 'काम करने की 'क्षमता' बढ़ जाती है।' प्रोफेसर मिलर और जवाहर ठहाका मारकर हंस पड़े।

वायसराय और भारत सरकार को प्रोफेसर मिलर के भाषण और विचार कतई पसंद नहीं आए थे। मिलर को अमेरिका लौटने पर अपनी स्टेट युनिवर्सिटी से त्याग पत्र देना पड़ा था।

और दूसरी ओर प्रभावती थीं। प्रभावती और कमला नेहरू—दोनों गांधी के आवाहन पर राष्ट्रीय आंदोलन में कूद पड़ी थीं। इलाहाबाद में, जलूस में शामिल होना, सभाओं में जाना, हड़ताल कराना, 'पिकेटिंग' करना आदि काम चल रहे थे। 'सरफरोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है, देखना है जोर कितना बाजुए क़ातिल में है' की मस्ती में कमला और प्रभा के साथ महिलाओं के जत्थे निकल रहे थे।

गांधी के उस अहिंसक संग्राम की यह विशेषता थी कि राजनीतिक आजादी को हासिल करने के साथ-साथ, सदियों की जकड़न, अनेक सामाजिक बंधन टूटने लगे। पर्दे में बंद, चूल्हे-चौके, परिवार, बच्चों की दीन-दुनिया से बाहर निकलकर शराब की दुकानों पर, विदेशी कपड़ों के स्थानों पर पिकेटिंग करना, पुलिस की लाठियां झेलना मामूली बात हो गई। 'भय छोड़ो, आत्मा न मरती है न मारती है। तुम देह नहीं आत्मा हो।' गांधी की यह वाणी प्रभावती में विश्वास बनकर कमला नेहरू के साथ इलाहाबाद के आकाश में गूंज गई।

उन दिनों प्रभावती की डायरी के पन्ने, शब्द-स्मृतियां, भीतर बाहर का सारा जीवन इतिहास बताती हैं :

3-8-30 : इलाहाबाद

अखबार पढ़ा। कल शाम को बंबई में मालवीय जी, वल्लभभाई इत्यादि की गिरफ्तारी हुई। 5 बजे चौक गई जुलूस के लिए।

5-8-30 : इलाहाबाद

7-30 में कांग्रेस दफ्तर गई। वहां से स्कूल में हड़ताल कराने के लिए पिकेटिंग में गई। वहां से 12-15 में घर लौटी। 1-30 में माडर्न स्कूल गई। वहां लाठी और छड़ी चली। 3 बजे घर आई। सूत काता। 6-30 में मीटिंग के लिए गई।

जेल में : 1932

ता० 3-2-32 को 7-30 बजे रात को इलाहाबाद में टंडन जी के मकान पर मीटिंग करते समय गिरफ्तार हुई। (ता० 8) हम लोगों का ट्रायल हुआ। दो वर्ष की कड़ी सजा मिली। कुछ दिन बाद हम लोग बी क्लास में कर दिए गए। (ता० 18) लखनऊ सेंट्रल जेल में मेरी बदली हुई। जमादारिन, दो सिपाही मेरे साथ आए। (ता० 28) आज भाभी मिलने आई थीं। मुझे बहुत आशा थी कि अंदर भी आएंगी। इसलिए थोड़ी देर उनके इंतजार में बैठी रही। लेकिन भाभी बाहर के फाटक पर आईं, अंदर न आ सकीं। यह देखकर तबीयत बहुत उदास हो गई। (ता० 13-3) मालूम हुआ, जयप्रकाश मिलने आएंगे। थोड़ी देर इस इंतजार में बैठी रही। फिर ज्ञानवती से मालूम हुआ कल मुलाकात होगी। बाद को सो गई। नींद नहीं आई। (ता० 24-4) मुलाकात के लिए गई। माता जी, विद्यावती, जयप्रकाश जी आए थे। दोनों भाई भी आए थे। लेकिन वे अंदर नहीं आ पाए। जयप्रकाश जी साबुन, तेल वगैरह दे गए। (30-4) वजन लिया, 76 पाउंड हुआ।

19-9-32 : लखनऊ जेल

मालूम हुआ, जयप्रकाश को एक साल की सख्त सजा मिली। बापू की खबर मालूम हुई कि वे 20 तारीख से उपवास शुरू करेंगे। उनके लिए तबीयत बहुत चिंतित है। पता नहीं क्या होगा।···कल समूचे हिंदुस्तान में 24 घंटे का उपवास लोग करेंगे और प्रार्थना की जाएगी। हम लोगों ने भी कल उपवास करने का और 12 बजे दिन को प्रार्थना करने का निश्चय किया। तबीयत बहुत घबड़ाहट में है। रात को प्रार्थना के बाद जल्दी सो गई। लेकिन नींद देर से आई। बापू के बारे में सोचती रही। उनके साथ रहने के समय की हर एक बात आंखों के सामने नाच रही थी। वे मुझे किस प्रकार और कितना मानते हैं इसका ख्याल बराबर आ रहा था। और पिछले साल मेरी बीमारी के समय उन्होंने मेरी रक्षा की थी जेल के अंदर रहते हुए। तब हाय, आज मैं उनके लिए कुछ नहीं कर सकती। बारंबार यही ख्याल आए कि मुझमें कोई ऐसी शक्ति होती जिससे मैं उनका कष्ट दूर करती। कुछ समझ नहीं पड़े क्या करूं। थोड़ी देर रोती रही। फिर सो गई।

20-9-32 : लखनऊ जेल

यह प्रतिज्ञा आज ली गई। इस बंदीगृह की हम सब बहनें महात्मा गांधी के पवित्र व्रत की पुण्य स्मृति में आज के दिन मन, वचन और कर्म से यह प्रतिज्ञा करती हैं कि इस क्षण से जीवनपर्यंत दलित वर्ग के उत्थान की प्राणपण से चेष्टा करेंगी और जेल से बाहर निकलने पर अस्पृश्य कहलाने वाले भाई और बहनों की शारीरिक, मानसिक और धार्मिक उन्नति के हरएक मार्ग को खोलने की जी-जान से कोशिश करेंगी। हम ईश्वर से प्रार्थना करती हैं कि महात्मा जी की इस तपश्चर्या का मनोवांछित फल निकले और उनकी संरक्षकता में भारतवर्ष अपने ध्येय को प्राप्त करे।

गोलमेज परिषद् सफल नहीं हो सकी थी। आगे क्या हो, इसी पर विचार करने के लिए बंबई में कांग्रेस वर्किंग कमेटी की बैठक होने वाली थी। जवाहरलाल उस बैठक में शामिल होने के लिए तसद्दुक शेरवानी के साथ बंबई जा रहे थे। जे० पी० सारे कागज पत्रों के साथ दूसरे डिब्बे में चल रहे थे। आशंका थी नेहरू की गिरफ्तारी की।··नैनी पहुंचते ही जवाहर और शेरवानी गिरफ्तार हो गए। जयप्रकाश उन कागज पत्रों के साथ अकेले बंबई पहुंचे।···विलिंगडन ने कांग्रेस को कुचलने की सारी तैयारियां कर रखी थीं। एक दर्जन आर्डिनेंस तैयार थे। फिर कांग्रेस गैरकानूनी संस्था करार दे दी गई। और एक सप्ताह के अंदर ही देश भर के सभी नेताओं को पकड़कर जेलों में रख दिया गया। कांग्रेस दफ्तरों को पुलिस के हवाले कर दिया गया। भारत मंत्री सर सैम्युएल होर ने लंदन के पार्लियामेंट में कहा : कांग्रेस मर चुकी।···सचमुच कांग्रेस मर चुकी होती यदि उसका मतलब सिर्फ कुछ नेताओं से होता।

2

बंबई शहर का शानदार ताजमहल होटल। इसी होटल में श्रीमती सरोजनी नायडू

ठहरी हुई हैं। नेताओं की गिरफ्तारी के बाद अब वही कांग्रेस की स्थानापन्न अध्यक्षा हैं। उचित अवसर देखकर पारसी पोशाक में जयप्रकाश उनसे मिलते हैं और कांग्रेस का सारा कागज-पत्र उन्हें थमा देते हैं।

जे० पी० बंबई से इलाहाबाद लौटते हैं और यहां पाते हैं कि कमला नेहरू और प्रभावती दोनों बंदी बना ली गई हैं। जे० पी० फिर बंबई लौटते हैं और वहां पहुंचकर गुप्त रूप से अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी का पुनर्गठन करते हैं। जे० पी० और लालजी मेहरोत्रा इसके प्रधान मंत्री बनकर सारा कार्य करते हैं। फिर देश के कोने-कोने में नये सिरे से कांग्रेस के दफ्तर खुल जाते हैं। जे० पी० तरह-तरह के भेष में पूरे देश का दौरा करते हैं। अनगिनत नौजवानों और कार्यकर्ताओं को घर से बाहर लाते हैं। जे० पी० ने उस महासमर में अनुभव किया : 'जरूरत है नौजवानों के हृदय की राष्ट्रप्रेम की आग को हमेशा जलाए रखने की।'

दूसरी ओर जे० पी० ने भारतीय पूंजीवादियों की कायरता और देशद्रोहिता देखी। राष्ट्रीय आंदोलन तेजी से चलता रहा। अंग्रेजों को आश्चर्य तब हुआ जब कांग्रेस का खुला अधिवेशन दिल्ली के चांदनी चौक में होने लगा, विलिंग्डन की नाक के सामने। लोग भारी संख्या में गिरफ्तार हुए। प्रतिनिधियों पर तरह-तरह के दमन और अत्याचार हुए।

पर इसके कुछ ही दिनों बाद जयप्रकाश और उनके साथियों ने बनारस में कांग्रेस वर्किंग कमेटी की गुप्त बैठक शिवप्रसाद गुप्त के घर कराई। उस बैठक में थे डा० किचलू, कांग्रेस के अध्यक्ष के रूप में, अन्य सदस्य थे, राजेंद्रप्रसाद, राजगोपालाचारी, किरणशंकर राय, अणे साहब और मदनमोहन मालवीय।...आगे उस बैठक की सूचना पाते ही पुलिस ने शिवप्रसाद गुप्त को गिरफ्तार कर लिया था।

उस समय भारत की परिस्थितियों का पर्यवेक्षण करने, खासतौर पर अंग्रेजी हुकूमत द्वारा किए गए दमन की जांच करने के लिए इंडिया लीग की तरफ से एक डेलिगेशन आया था। कांग्रेस वर्किंग कमेटी से यह तय हुआ कि जयप्रकाश उस शिष्टमंडल के साथ देश भर में घूमें और उपयुक्त व्यक्तियों से उसकी भेंट कराएं तथा दमन के स्थानों पर ले जाकर उन्हें अत्याचारों के दृश्य दिखलाएं। इधर पुलिस ने जे० पी० को गिरफ्तार करने के लिए वारंट जारी किए। और जे० पी० मद्रास में गिरफ्तार हो गए। राजगोपालाचारी इस गिरफ्तारी के खिलाफ हाई कोर्ट में 'हैबियस कार्पस' करने को हुए कि जे० पी० को चुपचाप मद्रास जेल से बंबई के नासिक जेल में भेज दिया गया।

इस गिरफ्तारी पर बंबई के 'फ्रीप्रेस जनरल' ने समाचार छापा : 'कांग्रेस ब्रेन एरेस्टेड' कांग्रेस का दिमाग गिरफ्तार।...उन्नीस सौ तीस का सत्याग्रह सफल था। पर बत्तीस का सत्याग्रह धीरे-धीरे ठंडा पड़ता गया। इसके कई कारण थे। एक तो उन्नीस सौ तीस के गांधी इरविन पैक्ट के बाद समूचा देश यह समझ रहा था कि अब तो समझौता हो चुका। इसका लाभ उठाया विलिंग्डन ने। उसने कांग्रेस को पूर्णतः कुचलने का पूरा प्रयत्न किया। सरकार ने दमन के नये से नये उपाय निकाले। जिस समय सत्याग्रह चल रहा था उसी समय अछूतों को अलग प्रतिनिधित्व देने की घोषणा सरकार की तरफ से की गई।

जिसके विरोध में महात्मा जी ने आमरण अनशन की घोषणा की। गांधी जेल से रिहा कर दिए गए। पर अब सारे देश में अछूत समस्या की धूम मची हुई थी।···सत्याग्रह पीछे छूट गया। जो लोग इस बीच सत्याग्रह से ऊबे थे, उन्होंने अपने को अछूतों की सेवा में उत्सर्ग करना शुरू कर दिया। इसी समय कुछ नेताओं ने यह आवाज बुलंद की—हमें अब असेंबलियों और कौंसिलों में जाना चाहिए। हम अब अंग्रेज सिंह को वैधानिक रास्ते पर ही हराएंगे।···मतलब सत्याग्रह छोड़ो। कुर्सियों पर बैठो।

उस समय बाहर का दृश्य यह था। पर जेल के भीतर एक अजीब तरह का हृदय-मंथन चल रहा था। जेल में बंद सारा युवावर्ग सोच रहा था। उन्नीस सौ बीस इक्कीस का असहयोग आंदोलन, तीस और बत्तीस की सिविल नाफरमानी (सविनय अवज्ञा)···क्या हमारे राष्ट्रीय आंदोलन का यही हश्र होगा? चाहे पटना कैंप जेल में हो, चाहे लखनऊ कैंप जेल में, लाहौर सेंट्रल जेल या नासिक जेल में, सारा युवा मन इसी एक नतीजे पर आया था। गांधी ने हमारे राष्ट्रीय आंदोलन को जहां तक बढ़ाया, उससे आगे बढ़ने के लिए हमें खुद पैर उठाने पड़ेंगे। सिर्फ राजनीतिक प्रश्नों को लेकर जहां तक हम बढ़ सकते थे, बढ़ चुके। अब उसमें आर्थिक प्रश्नों को जोड़ना पड़ेगा। जब तक पूंजीपतियों और बाबुओं का बोलबाला रहेगा, जातियों का डर हमारे आंदोलन को डगमगाता ही रहेगा, लंबी कड़ी सजाएं बीमारियां पैदा करती ही रहेंगी, कुर्सियों का मोह असेंबली और कौंसिल की ओर खींचता ही रहेगा। हम उस बृहत्तर समाज और नये वर्गों की ओर बढ़ें जिनके पास खोने को सिवा जंजीर के और कुछ नहीं है और पाने को सारा संसार है। मार्क्स का घोषित सत्य लागू हो गया।

सारी जेलों मे विद्रोही युवा मन यही सोच रहा था। पर विशेषकर इस आग पर जो रसायन तैयार हो रहा था, वह जगह थी नासिक जेल। और वे लोग थे: मीनू मसानी, अच्युत पटवर्धन, अशोक मेहता, एन०जी० गोरे, एस० एम० जोशी, प्रोफेसर एम० एल० दांतवाला, और रसायन-शास्त्री थे जयप्रकाश नारायण।···इसी तरह अन्य जेलों में थे: आचार्य नरेन्द्रदेव, डा० राममनोहर लोहिया, डा० संपूर्णानन्द, मेहरअली, पुरुषोत्तम विक्रमदास, नाना साहब गोरे, गंगाशरण सिंह, नभकृष्ण चौधरी, फरीदुल हक अंसारी, दामोदर स्वरूप सेठ, कमलादेवी चट्टोपाध्याय, के० के० मेनन, सुरेन्द्रनाथ द्विवेदी, मुंशी अहमद दीन तथा शिवनाथ बनर्जी। विश्लेषण होने लगे। इतिहास, राजनीति, धर्म, पुराण, ज्योतिष और दर्शन में लोग किसी व्यापक मानवीय सत्य को तलाशने लगे। भारतीय मध्यवर्ग की पहली क्रांतिकारी चेतना का इस रूप में उदय होने लगा। कांग्रेस के भीतर एक क्रांतिकारी चेतना सविनय अवज्ञा से आगे बढ़कर व्यापकता और गहराई में काम करने लगी।

किसानों और मजदूरों की रोजमर्रा की जरुरतों को लेकर उनका संगठन तैयार किया जाय। किसान सभाएं बनाई जाएं। मजदूर संघ बनाए जाएं। फिर सब को मिलाकर एक जनसेवा के रूप में संबद्ध किया जाए। फिर उन्हें कांग्रेस में लाकर अंग्रेजी साम्राज्यवाद पर ऐसा जबरदस्त धावा बोला जाए कि वह समूल नष्ट हो जाए।···फिर स्थापित हो पूर्ण स्वराज्य—किसानों और मजदूरों का

राज।...ऐसा लगता था कि और सब लोग रसोई घर में काम कर रहे थे। असली रसोइया थे जे० पी०। इन्होंने समाजवाद परस कर टेबुल पर सजा दिया।

कैसे ? कैसे क्या। अजीबोगरीब तो कुनबा था। जे० पी० मार्किस्ट, मसानी थे बुर्जुआ डिमोक्रेट। आचार्य नरेन्द्रदेव मार्क्स और बुद्ध में समन्वय ढूंढ़ रहे थे। यही थे सबसे बड़े ज्ञानी (इन्टेलेक्चुअल)। डॉ० लोहिया का नंबर दूसरा था इस माने में। गांधी और मार्क्स के बीच का रास्ता तलाश रहे थे राममनोहर लोहिया। अच्युत पटवर्धन आध्यात्मिक थे, चले आए थे आंदोलन में। युसूफ मेहर अली सबसे ज्यादा 'चार्मिंग' थे। कमलादेवी लेनिन के खिलाफ बातें करने में सबसे आगे थीं। अशोक मेहता की उमर सबसे कम थी। काम करने का अंदाज स्टैलिन से उधार लिया हुआ था और विश्वास था उनका सर्वसत्तावाद में। संपूर्णानन्द गणेश के अवतार थे, शुद्ध हिंदू; तिलक के उत्तराधिकारी, ज्योतिष और शक्ति में विश्वास रखने वाले। बनारस को वाराणसी कहने वाले। सन् सैंतीस में ही पार्टी छोड़ सरकार में जाने वाले।...किसी ने पूछा : 'लोहिया क्या मार्क्सवादी नहीं थे ?'...उन सब में लोहिया अजीब थे। उन दिनों लोहिया ने ही कहा था : 'हेनरी फोर्ड और कार्लमार्क्स में कोई बुनियादी अंतर नहीं है।'

यही है भारतीय समाजवादी आंदोलन का आरंभ, जेल की कोठरियों से लेकर काफी के प्यालों तक। वेद, उपनिषद्, बुद्ध और राम से लेकर गंगा की सफाई तक। बड़े से बड़े बलिदान, त्याग-तपस्या से लेकर धुली हुई खद्दर की एक धोती और एक कुर्ता तक। आज खाने को नहीं है, पर किताब जरूर खरीदी जाएगी। वक्त नहीं है। पुलिस वारंट लिए पीछा कर रही है पर एक प्याला काफी के बिना कैसे चलेगा ?...ऐसे थे ये लोग। सब कांग्रेस के भीतर थे। सब स्टैलिन के विरोधी थे। सब लेनिन की तस्वीर अपने कमरों में सजाकर रखते थे।...पर कांग्रेस के भीतर समाजवाद ?...यह कैसा था भारतीय समाजवाद ? इसे जानने के लिए थोड़ा पीछे जाना होगा।

अठारहवीं सदी की फ्रांसीसी क्रांति के बाद सन् सत्रह की रूसी क्रांति बड़ी ऐतिहासिक घटना थी। अमेरिका में रहकर जयप्रकाश ने इसी संदर्भ में बड़ी गहराई और तत्परता से सारा मार्क्सवादी साहित्य पढ़ा था। वह मार्क्स और एंजिल्स के साथ-साथ लेनिन से भी बहुत प्रभावित थे। रूस की क्रांति और उसके प्रवर्तक लेनिन को जे० पी० भूलते नहीं थे। संसार के पांचवें हिस्से पर इतिहास में पहली बार मजदूरों और किसानों का राज्य कायम हुआ। समाजवाद एक अंतर्राष्ट्रीय विचारधारा है। इसके आधार पर एक देश में न राज्य कायम किया जा सकता है, न समाज बनाया जा सकता है। इसलिए रूस में इस राज्य के कायम होते ही उसके प्रवर्तकों ने एक अंतर्राष्ट्रीय समाजवादी संस्था का संगठन किया जो 'थर्ड इंटरनेशनल', या 'कोमिंटर्न' के नाम से मशहूर हुई।

उन्नीस सौ इक्कीस के असहयोग आंदोलन के समय कुछ नौजवान रूस गए—जैसे एम० एन० राय, शिवनाथ बनर्जी और शौकत उस्मानी। कोमिंटर्न की ओर से इन नौजवानों को समाजवादी विचारधारा में दीक्षित और शिक्षित करने की चेष्टाएं हुईं। ये लोग भारत लौटे। भिन्न क्षेत्रों में समाजवादी विचारों का प्रचार एवं मजदूर संगठन में ये लोग लगे। तभी हुआ वह सन् सत्ताइस में

मेरठ षड्यंत्र केस। लोग उसी में गिरफ्तार कर लिए गए और शेष लोग भूमिगत हुए।

ठीक इसी समय रूस में, 'कोमिंटर्न' में मतभेद खड़े हुए। लेनिन के बाद रूस का समाजवाद दो टुकड़ों में बंट गया। एक का नेता था स्टैलिन, दूसरे का था ट्राट्स्की। ट्राट्स्की लेनिन का साथी ही नहीं उसका दायां हाथ था, वह लेनिन के कार्यों को आगे बढ़ाना चाहता था। उसी ने लेनिन की वह बात भारत के राष्ट्रीय आंदोलन के संदर्भ में दुहराई थी कि हर कोमिंटर्न को अपनी 'आइडेंटिटी' भुलाकर पहले राष्ट्रीय आंदोलन को सफल बनाना होगा। पर स्टैलिन की प्रभुता ने कोमिंटर्न की राजनीति में आमूल परिवर्तन कर दिया। उसने राष्ट्रीय आंदोलन से बड़ा दर्जा दिया कोमिंटर्न की नीति को। अर्थात् कोमिंटर्न अब अंतर्राष्ट्रीय समाजवाद की संस्था न रहकर रूस की परराष्ट्र नीति की दुम मात्र बनकर रह गई। और अपनी गलत कार्रवाइयों से संसार भर के समाजवाद आंदोलन को आहत किया। उसी की देन है हिटलर और मुसोलिनी। समाजवाद की भ्रूणहत्या से उपजे हुए तानाशाह।

भारतवर्ष में उसी के अनुरूप कोमिंटर्न ने माना कि कांग्रेस एक प्रतिक्रियावादी संस्था है और गांधी बुर्जुआ लीडर है।···इस स्थिति पर तब रामवृक्ष बेनीपुरी ने 'जनता' पत्र का संपादकीय 'स्टैलिन के ये बच्चे' शीर्षक से लिखा था : 'बेवकूफी और बदमाशी की हद तो तब हो गई जब तीस और बत्तीस में भारत की राष्ट्रीयता अंग्रेजी सामंतवाद से जिंदगी और मौत की लड़ाई लड़ रही थी, स्टैलिन के ये भारतीय एजेंट, जो अपने को कम्युनिस्ट कहते हैं, भोले-भाले मजदूरों को बहकाकर, देशभक्त स्वयंसेवकों पर हमले करने, उनके तिरंगे छीनने और जलाने लगे। प्राय: पुलिस और इनका हमला साथ-साथ होता। यों भारत का कम्यूनिज्म अंग्रेजी साम्राज्यवाद का सगा संबंधी बन गया।'

मार्च सन् उन्तीस में आचार्य नरेन्द्रदेव ने 'सोवियत रूस की एशिया संबंधी नीति' पर विद्यापीठ पत्रिका में एक लेख प्रकाशित किया। उसमें स्पष्ट कहा : साम्यवादी के लिए साम्यवाद का सिद्धांत प्रधान है और सब बातें गौण हैं। सोवियत रूस राष्ट्रवाद का विरोधी है और यदि वह किसी राष्ट्र को स्वाधीन होने में सहायता देता है तो केवल इसी विचार से कि इससे साम्राज्यवाद पर आघातपात होगा और यदि परिस्थिति अनुकूल हुई तो साम्यवाद का प्रयोग करने के लिए नया क्षेत्र भी हाथ आएगा।

जब नरेंद्रदेव ने यह लिखा था उस समय उन्हें संभवत: नवंबर सन् अट्ठाइस की कम्युनिस्ट इंटरनेशनल के निर्णयों का ठीक पता नहीं था, क्योंकि इस लेख में उसका कोई जिक्र नहीं है। पर जब जनवरी सन् तीस में जयप्रकाश नारायण से उनकी पहली भेंट हुई उस समय उन्हें उन निर्णयों का पूरा पता था और वह उसकी वैदेशिक तथा उपनिवेश संबंधी नीति के और स्टैलिन के नेतृत्व के कट्टर विरोधी थे।

जयप्रकाश ने लिखा है : 'आचार्य जी से मिलने के कुछ ही दिन बाद मैं ऑल इंडिया कांग्रेस कमेटी के दफ्तर में काम करने लगा। कुछ ही महीने बाद नमक सत्याग्रह शुरू हुआ। तब से आचार्य जी और मैं अपने-अपने क्षेत्रों में

आंदोलन में ही लगे रहे। सन् तैंतीस में नासिक रोड सेंट्रल जेल में हम कुछ मित्रों ने कांग्रेस के अंदर एक सोशलिस्ट पार्टी संगठित करने का निर्णय लिया। उसके बाद जब हम लोग जेल से छूटे तो काशी में कुछ मित्रों से मशविरा करने के बाद बिहार सोशलिस्ट पार्टी की तरफ से, जो पहले ही स्थापित हो चुकी थी, मैंने एक अखिल भारतीय सम्मेलन, ऐसे कांग्रेसजनों का जो समाजवादी विचार के थे, पटना में बुलाया।'···उसकी अध्यक्षता नरेंद्रदेव ने की।···पर बात जरा आगे बढ़ गई। फिर थोड़ा पीछे जाना होगा।

सन् तीस के सविनय अवज्ञा आंदोलन में बहुत से किसानों ने हिस्सा लिया था। और उनमें से कुछ किसान नवयुवक कांग्रेस के प्रभावशाली अंग बन चुके थे। सन् इकत्तीस में कांग्रेस ने अपने मौलिक अधिकारों के प्रस्ताव में साफ कर दिया था कि वह जिस संविधान को मंजूर करेगी, उसमें भूमि-सुधारों की, विशेषकर लगान की कमी की व्यवस्था होगी। कांग्रेस से संबंधित नवयुवकों ने मार्क्सवाद का अध्ययन प्रारंभ कर दिया था। प्रथम सविनय अवज्ञा आंदोलन के बाद कतिपय सत्याग्रहियों ने, जिनमें गंगाशरणसिंह, रामवृक्ष बेनीपुरी और फूलनप्रसाद वर्मा प्रमुख थे, पटना में एक समाजवादी संगठन भी कायम कर लिया था।

पर गांधी का तब एक अपना समाजवाद था। दूसरी ओर भारतीय साम्यवाद था, तीसरी ओर पटेल आदि का अनुदार पक्ष भी था कांग्रेस में। उन्नीस सौ इकतीस के बाद विश्व में केवल तीन शक्तियां या दल उभरे थे—इंग्लैंड में अनुदारदल, जर्मनी में नाजीफासिस्ट और रूस में साम्यवादी। करीब-करीब विश्व जैसी यही हालत अकेले हिंदुस्तान की थी। यहां गांधी के समाजवाद की कभी कोई परीक्षा नहीं हुई थी। गांधी और मार्क्स के बीच कोई बीच का रास्ता निकालने की बात नेहरू ने सन् तीस के लाहौर कांग्रेस में की थी। पर उस समय राष्ट्रीयता के आगे समाजवाद का स्वर दब गया था।

पर जब यूरोप में पूंजीवादी व्यवस्था टूटने लगी तो यहां नेहरू, जे० पी० जैसे युवा लोग गांधी के समाजवाद के प्रति तीखे प्रश्न करने लगे।

जब इंग्लैंड की सड़कों पर 'हंगर मार्च' हुए, सोने के भाव गिरने लगे, इंग्लैंड और अमेरिका में भी बेकारी बढ़ने लगी, तब यहां प्रश्न उठने लगे कि जर्मनी, इंग्लैंड, अमेरिका तो स्वतंत्र हैं, पर लोग भूखे क्यों हैं? बेकार क्यों हैं?··· तो स्वराज्य कुछ और है।···वही नहीं है जो गांधी कह रहे हैं।···साम्यवाद के खिलाफ सारा ब्रिटिश शासन था। भारतीय धर्मभीरु और स्वतंत्रचेता होने के कारण साम्यवाद को अपना नहीं रहा था। जयप्रकाश ने एक मार्ग ढूंढ़ा।

उस समय के प्रसिद्ध लोकतांत्रिक समाजवादी चिंतक थे रैमजे मेकनाल्ड। जे० पी० इनसे भी आगे गए। इन्हें ज्ञान का जीवन अनुभव था। समाज की नियामक शक्तियों का गहरा अध्ययन मनन था। इन्होंने याद किया, स्पेनिश सोशलिस्ट लीडर केबेलरो को, फ्रेंच कम्युनिस्ट पार्टी के जनरल सेक्रेटरी मॉरिस थोरेज को और ब्रिटिश कम्युनिस्ट पार्टी के चीफ हेरी पोलिन को। ये सारे लोग सन् इकतीस के बाद शक्ति में आए हैं और मजदूर वर्ग के हैं।···यह सारी बातें जे० पी० के व्यक्तित्व की स्थितियों से बहुत मिलती-जुलती हैं।

इसी से जे० पी० ने लाहौर कांग्रेस के प्रस्ताव के पूरे सत्तरहों मुद्दों पर उसकी

आलोचना की। उन्होंने सन् उन्नीस के बंबई कांग्रेस के प्रस्ताव से उसकी तुलना की। उन्होंने स्मरण दिलाया : 'बंबई में कहा जा चुका है, व्यवस्था को बदलो। सुधार से आजादी हासिल नहीं होगी।' फिर जे० पी० ने कराची कांग्रेस में आर्थिक स्वतंत्रता का प्रश्न उठाया। कहा : 'भारतवर्ष इतने दिनों से गुलाम रहा है कि लोगों को पता ही नहीं रह गया कि आजादी क्या चीज होती है। इसका लक्ष्य क्या है।'

पर उस समय यह स्वर उतना उभरकर नहीं आया। अकेला स्वर था। इसे बल मिला जवाहरलाल नेहरू से। दोनों साथी बन गए। नेहरू ने खुले दिल से जे० पी० को समर्थन दिया।···एम० एन० राय ने दोनों को साम्यवादी घोषित किया, कराची कांग्रेस से बहुत असंतुष्ट लौटे जे० पी०। तभी गांधी का सविनय अवज्ञा आंदोलन भड़का। जे० पी० तैंतीस तक जेल में रहे। इसी जेल जीवन में उन्होंने सोचा, कराची कांग्रेस की सच्चाइयों के बारे में। भारतीय समाजवाद की बुनियादी बातों का विश्लेषण किया। नाजी हिटलर, कोमिटर्न डिमीट्रोव जेल से भाग सकते हैं देश के भाग्य बदलने के लिए। उन दो वर्षों में नाजियों की जीत हुई जर्मनी में। सारा संविधान मुंह देखता रह गया हिटलर का। जवाहरलाल ने इसके खिलाफ बयान दिए। भारत के लोगों को इसके प्रति सावधान किया।

यहीं से जे० पी० को कोई नया रास्ता ढूंढ़ने की अनिवार्यता महसूस होती है। दूसरी बात, सन् तैंतीस का आंदोलन प्रभावहीन सिद्ध होता है। तीसरी बात, कांग्रेस में विधानवादी प्रवृत्ति बढ़ती है, और गांधी अपने आपको आंदोलन से अलग कर लेते हैं। एक अजब शून्य पैदा होता है। उसे भरना है। जे० पी० सोशल डिमोक्रैट से सोशलिस्ट होते हैं। उन्होंने प्रत्यक्ष उदाहरण पाया जर्मनी से। हिटलर ने किस तरह सोशल डिमोक्रैटिक पार्टी को तोड़कर नष्ट किया। पार्लियामेंट कुछ भी न कर सकी। कोई परिवर्तन न ला सकी। जर्मनी और स्पेन में सोशलिस्ट मारे गए। जे० पी० इस निर्णय पर उतरे : 'विदेशी सरकार द्वारा किसी भी मुल्क को उपहार के रूप में पार्लियामेंट नहीं दी जा सकती। यह पैदा होती है, राष्ट्रीयता और संगठित श्रमिक वर्ग के क्रांतिकारी कार्यों से। क्रांतिकारी मजदूर किसान और क्रांतिकारी राष्ट्रवादी, इन दोनों शक्तियों के संयोग से ही क्रांति हो सकती है। अलग-अलग दोनों शक्तियों से नहीं।'···जे०पी० दोनों थे—मजदूर किसान और राष्ट्रवादी। इसी अनुपम योग से जे० पी० ने मार्क्स की नयी व्याख्या दी।

मजदूर किसान को पार्टी चाहिए। उसी पार्टी का नाम है कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी। इसे एक राष्ट्रवादी नेता चाहिए। नेता जयप्रकाश नारायण। नेता को नया विचार, नया विश्वास देना होगा—वही है समाजवाद। यही थी वह शक्ति जो उस दिन नासिक जेल के फाटक से बाहर निकली थी। यही था वह प्रकाश, जो भविष्य के गर्भ में छिपा था। आजाद देश की राष्ट्रीयता पूंजीवादी प्रसार का औजार भले ही बन जाय, किंतु गुलाम देश की राष्ट्रीयता निश्चय ही एक क्रांतिकारी शक्ति होती है। इस क्रांतिकारी शक्ति से दूर रहकर समाजवाद एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सकता। जे० पी० ने कहा और सिद्ध किया : 'हमारी

कांग्रेस इसी क्रांतिकारी शक्ति का संगठित रूप है, इसलिए यह क्रांतिकारी संस्था है और इस संस्था से संपृक्त होकर ही भारतीय समाजवाद जनता के निकट अविलंब पहुंच सकता है।

सबसे बड़ी बात, जे० पी० ने यह अनुभव की, भारतीय साम्यवादी, 'कामिंटर्न' के निदेशानुसार न केवल राष्ट्रीय संघर्ष से अलग रहे, बल्कि पूंजीपतियों के हित में चलाया हुआ संघर्ष कहकर अपमान भी करते रहे, तब उन्हें बहुत गहरी चोट लगी। जे० पी० जैसे उग्र राष्ट्रवादी को साम्यवादियों के इस आचरण से भारी धक्का लगा। उन्हें वह भारतीय परिस्थिति में मार्क्सवाद का भ्रष्ट प्रयोग जैसा लगा। उन्हें यह स्पष्ट हो गया कि भारत में समाजवादी आंदोलन भारतीय साम्यवादी दल के नेतृत्व में अथवा कोमिंटर्न के मार्ग-दर्शन में नहीं चलाया जा सकता। क्योंकि जब तक विदेशी शासन कायम है तब तक देश की स्वतंत्रता को ही सर्वोच्च प्राथमिकता देनी पड़ेगी।

इसी परिस्थिति से एक ऐसे समाजवादी दल के निर्माण की आवश्यकता प्रकट हुई जो राष्ट्रीय आंदोलन की अधिक विस्तृत भूमिका में काम करे, तथा राष्ट्रीय आंदोलन को संघर्ष के मार्ग पर दृढ़ रखने में सहायक हो और सत्याग्रह आंदोलन के स्थगन के बाद राष्ट्रीय आंदोलन को वैधानिकता की ओर बढ़ने की प्रवृत्ति से विमुख कर सके। इसके अलावा यह भी अपेक्षा थी कि वह समाजवादी दल किसानों और मजदूरों को राष्ट्रीय आंदोलन के अंदर आकृष्ट करते हुए उस समूचे आंदोलन के कार्यक्रमों को समाजवादी मोड़ दे सके और इस प्रकार राष्ट्रवाद और समाजवाद दोनों के हितों को सुदृढ़ बना सके। जयप्रकाश के इस राजनीतिक विश्वास में कांग्रेसजनों की काफी बड़ी संख्या शामिल थी। उनमें जवाहरलाल नेहरू और आचार्य नरेन्द्रदेव जैसे नेता भी थे।

इस प्रसंग में बेनीपुरी ने एक मनोरंजक कैफियत दी है: 'समाजवाद के साथ राष्ट्रीयता के इस गठबंधन को कम्युनिस्टों ने इस तरह तिरस्कृत किया था कि जहां बिहार के साथियों ने पार्टी में शामिल होने के लिए कांग्रेस की मेंबरी को ही काफी समझा था, वहां जयप्रकाश ने पार्टी के नाम के साथ ही कांग्रेस को जोड़ देना अति आवश्यक समझा। हमारी यह नई पार्टी सिर्फ सोशलिस्ट पार्टी नहीं हो, बल्कि कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी हो, जिसमें कांग्रेस का महत्त्व हमेशा हमारे सामने रह सके, यह उनका निर्णय था और इसका औचित्य पार्टी का बारह वर्ष का इतिहास दे रहा है। यद्यपि इस नाम को लेकर स्टैलिन के भारतीय एजेंटों ने बहुत बावेला मचाया, हिटलर के नेशनल सोशलिज्म से इसकी तुलना करने की धृष्टता की, किंतु पीछे तो वे खुद पार्टी में शामिल हुए और अंततः बहुत शैतानियां करने के कारण निकाले गए।'

3

जे० पी० ने अपने मित्रों के साथ यह तय किया कि पूरे भारत में जितने लोग भी समाजवादी विचार रखते हों उन्हें दावत दी जाय कि वे इस नये दल में शामिल हों और एक अखिल भारतीय समाजवादी पार्टी कायम की जाए। कांग्रेस की

विधानवादी प्रवृत्ति को रोकने और उसे मूलतः युद्धोन्मुखी करने की चेष्टा की जाए। मजदूर संस्थाओं की आपसी फूट को दूर कर केवल एक ही शक्तिशाली ट्रेड यूनियन कांग्रेस बनाई जाए। किसान सभाएं बनें और उनका एक व्यापक संगठन तैयार हो। विद्यार्थियों और युवावर्ग को संगठित, अनुशासित और समाजवादी विचारों से शिक्षित किया जाए।'' इस भूमिका के साथ एक व्यापक सम्मेलन होने को था। तभी अचानक पंद्रह जनवरी सन् चौंतीस के अपराह्न में बिहार का वह भयानक भूकंप आया। सारा बिहार त्राहि-त्राहि कर उठा। मुंगेर और मुजफ्फरपुर ये दोनों अंचल बिल्कुल तबाह हो गए।

बिहार की इस विपत्ति पर सारा देश सहायतार्थ उमड़ पड़ा। विदेशों से भी मदद आने लगी। अब जरूरत यह थी कि इस सहायता को संगठित रूप से वितरित किया जाए और विस्थापितों को स्थापित किया जाए। इसी उद्देश्य से पटना में एक सहायता केंद्र खोला गया। उसके दफ्तर में नासिक जेल से रिहा होने के बाद जयप्रकाश मंत्री की हैसियत से काम करते हैं। अब तक जे० पी० बिहार के बाहर ही बाहर काम करते रहे। यहां के युवकों से उनका संपर्क नहीं हो पाया था। इस दफ्तर में काम करते हुए जे० पी० को पहली बार अवसर प्राप्त हुआ कि जिस नये दल के निर्माण के लिए वह कृतसंकल्प हैं उसके लिए मानवीय उपादान उनके प्रांत में कहां तक उपलब्ध है। यहीं भूकंप सहायता कार्य करते हुए जे० पी० ने बिहार के नौजवानों को देखा—बात के धनी, कर्मठ, विनयी और बलिपंथी। शायद तभी जे० पी० ने तय किया कि वह अपने राष्ट्रीय कार्य का आधार क्षेत्र बिहार को ही बनाएंगे।

एक ओर बाहर भीतर से भूकंप पीड़ितों को सहायता पहुंचाई जा रही थी, दूसरी ओर दुखी प्रजा पर जमींदारों की ओर से सख्तियां हो रही थीं। किसानों को जो सहायता के रूप में धन मिलते, उन्हें जमींदारों के अमले या तो हड़प जाते या मालगुजारी भुगतान में जमा कर लेते। बहुत जगह बागीचों से लकड़ी काटकर घर बनाने, जंगल से बांस काटकर फूस की झोंपड़ी डालने से भी प्रजा को रोका जाता। जे० पी० ने किसान और जमींदार के संबंधों को बहुत नजदीक से देखा।

जयप्रकाश बिहार सोशलिस्ट पार्टी में भी शामिल हो गए और अखिल भारतीय कांग्रेस समाजवादी पार्टी के संगठन के लिए बिहार के साथियों से मिलकर प्रयत्न करने लगे। उसी समय खबर मिली कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की बैठक पटना में बुलाई जा रही है जिसमें गांधी सत्याग्रह वापस लेने का प्रस्ताव पेश करेंगे और विधानवादियों की ओर से एसेंबली और कौंसिलों में जाने का प्रस्ताव पेश किया जाएगा। इसी अवसर को उपयुक्त समझकर बिहार समाजवादी पार्टी ने पटना में देश भर के समाजवादियों की एक कांफ्रेंस बुलाने को तय किया।

समाजवादियों की यह अखिल भारतीय कांफ्रेंस ही कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी की जननी सिद्ध हुई। भूकंप पीड़ित बिहार की राजधानी पटना में सत्रह मई, सन् चौंतीस को वह सम्मेलन हुआ अंजुमन इस्लामिया हाल में। अध्यक्षता थी आचार्य नरेन्द्रदेव की। करीब सौ प्रतिनिधि आए थे पूरे भारतवर्ष से। अधिकतर लोग स्वराज पार्टी के पुनर्जीवन के खिलाफ थे, कौंसिल प्रवेश के भी सवाल पर सभी लोग विरोधी नहीं लग रहे थे। उदाहरण के लिए बंबई से आया हुआ समाजवादी

दल चुनाव कार्य को समाजवादी कार्यक्रम के अनुरूप समझता था। इस बैठक का असली मुद्दा यह निश्चित करना था कि अगले ही दिन, जो अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की बैठक होने जा रही है, उसमें समाजवादियों की भूमिका क्या हो ? उस बैठक में कौंसिल प्रवेश की बात मानी जाए या उसका बहिष्कार किया जाए ? स्वराज पार्टी को फिर से जन्म लेने न दिया जाए। स्वराज पार्टी के प्रति गांधी की सहानुभूति जग गई थी। वह आंदोलन से पूर्णतः अलग हटकर शुद्ध सामाजिक और नैतिक स्तर पर राष्ट्रीय सेवा में चले गए थे। इकतीस मार्च को दिल्ली में, उस स्वराज पार्टी की फिर से बैठक बुलाई गई, जो सन् तीस में ही समाप्त हो चुकी थी। इसमें गांधी के साथ थे भूलाभाई देसाई, के० एम० मुंशी, डा० एम० ए० अंसारी और सर पी० सी० रे।

उस समय जवाहरलाल नेहरू नैनी जेल में थे। गांधी आंदोलन के रास्ते से पूर्णतः मुड़ चुके थे। जयप्रकाश नारायण पटना के उस समाजवादी सम्मेलन में नरेन्द्रदेव के बिल्कुल पास थे। दिन भर बहस होने के बाद अध्यक्ष पद से नरेन्द्रदेव ने कहा : 'साम्राज्य शासित राष्ट्र के लिए राजनीतिक स्वतंत्रता समाजवाद की पहली मंजिल है। मध्यमवर्गीय जनतांत्रिक क्रांति के काल में समाजवादी शक्तियों का राष्ट्रीय आंदोलन से अलग रहना घातक होगा। राष्ट्रीय आंदोलन की अपनी कामयाबी के लिए निम्न मध्यम श्रेणी और जनता की शक्तियों के सम्मिलित प्रयास की जरूरत है। उसके कार्यक्रम में जनता के निमित्त आर्थिक कार्यक्रम को समावेश करने की आवश्यकता है। समाजवादी कांग्रेस में काम करते हुए राष्ट्रीय संघर्ष को मजदूरों, किसानों और मध्यमवर्ग के संघर्ष से संबंधित करें।'

वहां विचार विनिमय से यह चेतना उभरी कि क्रांतिकारी परिस्थिति की मौजूदगी में समाजवादी क्रांति पहले उस देश में हो सकती है जहां जनता आर्थिक शोषण से बर्बाद हो गई है, पर औद्योगिक विकास काफी नहीं हो पाया है। समाजवादी राज्य में मनुष्य फरिश्ते नहीं बन जाएंगे।

सम्मेलन ने अंतर्राष्ट्रीय स्थिति का निरीक्षण करते हुए फासिज्म की बढ़ती हुई ताकत और उसके खतरे की ओर इंगित किया। निकट भविष्य में ही एक युद्ध की अनिवार्यता की भविष्यवाणी करते हुए उस युद्ध में अंग्रेजी साम्राज्य की मदद नहीं करने की सूचना दी। रूस के समाजवादी नवनिर्माण का अभिनंदन किया। कांग्रेस में विधानवादी प्रवृत्ति की वृद्धि पर चिंता प्रकट की गई। सीधे मोर्चे की लड़ाई को ही स्वतंत्रता-प्राप्ति का एकमात्र रास्ता बताया गया।

इस सम्मेलन ने अखिल भारतीय समाजवादी पार्टी बनाने का निश्चय किया और नरेन्द्रदेव की ही अध्यक्षता में उस पार्टी के संविधान और कार्यक्रम का प्रारूप तैयार करने के लिए समिति बनाई। जयप्रकाश नारायण को संगठन मंत्री नियुक्त किया गया। कांग्रेस से मांग की गई कि वह श्रमिक जनता के राज्य की स्थापना, योजनाबद्ध आर्थिक विकास, बुनियादी और प्रमुख उद्योगों का राष्ट्रीयकरण, अर्थव्यवस्था के निजी भाग में उत्पादन, वितरण और ऋणसंबंधी सहकारी समितियों का गठन और विदेशी व्यापार पर राजकीय अधिकार, देशी नरेशों और जमींदार वर्ग की समाप्ति, भूमि का पुनर्वितरण, राज्य द्वारा सहकारी और सामूहिक खेती को प्रोत्साहन, किसानों और मजदूरों के कर्ज का खात्मा और

वयस्क मताधिकार के आधार पर संसद् के चुनाव को अपने कार्यक्रम में शामिल करें।

संगठन मंत्री के रूप में जयप्रकाश ने समूचे देश का एक बार दौरा किया और सभी प्रमुख प्रांतों में पार्टी की शाखाएं कायम कीं। पार्टी का पहला बाजाप्ता सम्मेलन बंबई में दिसंबर सन् चौंतीस को हुआ, जिसकी अध्यक्षता संपूर्णानंद ने की। दूसरा सम्मेलन मेरठ में, जनवरी सन् छत्तीस को कमलादेवी चट्टोपाध्याय के सभापतित्व में हुआ। तीसरा फैजपुर में सन् सैंतीस को, जयप्रकाश के सभापतित्व में और चौथा लाहौर में दिसंबर सन् अड़तीस को, मीनू मसानी के सभापतित्व में हुआ। पार्टी के प्रधानमंत्रित्व का भार हमेशा जयप्रकाश के ही कंधों पर रहा और वही उसकी नीति-रीति के प्रधान संचालक रहे।

इस पार्टी के पूरे चरित्र को समझने के लिए मेरठ सम्मेलन में जो 'थीसिस' कबूल की गई उसके मूल बिंदु ये थे :

(1) उत्पादक जनता के हाथों में समस्त राजसत्ता देना; (2) देश के आर्थिक जीवन के विकास की योजना और नियंत्रण राज्य के द्वारा होना; (3) मूल और प्रधान उद्योगों (जैसे लोहा, रुई, जूट, रेल, जहाज, खान, बगान आदि) के अतिरिक्त बैंकों, बीमा और जनोपयोगी धंधों का समाजीकरण, इस दृष्टि से ताकि उत्पादन, वितरण और विनिमय के सभी साधनों का क्रमशः समाजीकरण हो जाए, यानी इनका अधिकार समाज के हाथों में आ जाए; (4) विदेशी व्यापार पर राज्य का एकाधिकार; (5) आर्थिक जीवन के जिन भागों का समाजीकरण नहीं हुआ है उनके उत्पादन, वितरण और महाजनी के लिए सहयोग-समितियों का संगठन; (6) राजाओं, जमींदारों और सभी शोषक वर्गों को बिना किसी मुआवजा के हटा देना; (7) जमीन का किसानों के दरम्यान फिर से बंटवारा; (8) राज्य द्वारा सहयोगमूलक और सामूहिक खेती के लिए प्रोत्साहन और अभ्युन्नति के प्रयत्न; (9) किसानों और मजदूरों पर जितना भी कर्ज हो उसको हटाना; (10) राज्य द्वारा हर व्यक्ति को काम देने या उनके निर्वाह किए जाने के अधिकार की स्वीकृति; (11) 'हर एक को उसकी जरूरत के मुताबिक मिलेगा और हर एक से उसकी योग्यता के मुताबिक काम लिया जाएगा, अंततः इसी आधार पर जीवनोपयोगी पदार्थों का वितरण और उत्पादन होना; (12) पेशे के आधार पर हर एक बालिग को मताधिकार; (13) राज्य द्वारा न किसी मजहब या धर्म का समर्थन और न मजहबों के दरम्यान भेद-भाव करना और न जाति या संप्रदाय के आधार पर किसी प्रकार का भेद करना; (14) राज्य द्वारा स्त्री-पुरुष के दरम्यान किसी तरह का भेद नहीं करना; (15) जिसको हिंदुस्तान का सार्वजनिक ऋण कहा जाता है उसे रद्द करना।

कांग्रेस समाजवादी दल के कार्यक्रम की वे पंद्रह धाराएं हैं। देखने में भारी-भरकम लगती हैं। बहुत ही सख्त और बढ़ी-चढ़ी मालूम होती हैं और इनमें विदेशीपन की बू भी है। लेकिन यथार्थतः ऐसी बात नहीं है। ये काफी सीधी-सादी हैं, तर्कसंगत हैं और काम में लाई जाने योग्य हैं। और विदेशीपन की बू तो विधान-परिषद्, एसेंबली और कौंसिल, मिलों के धुएं और रेलों की चीख, क्या इन चीजों में कम विदेशी बू है?

जे० पी० ने तभी लिखा था : 'हमारे कार्यक्रम की इन धाराओं का सीधा-सादा अर्थ यह है कि हम व्यक्तिगत धन के उस भूत को दफ्न कर देना चाहते हैं जिसके चलते ही हमारा धन अशांति और गंदगी का अखाड़ा बन गया है। और उस भूत के दफ्न करने के बाद हम चाहते हैं कि इस धन को अच्छी तरह चलाने के लिए एक सुंदर आर्थिक योजना बना लें और उसे काम में लाने के लिए सब मिलजुल कर पिल पड़ें।'—(समाजवाद क्यों ?)

इस लक्ष्य और कार्यक्रम को इससे अच्छे शब्दों में दिया नहीं जा सकता। उस लक्ष्य और कार्यक्रम तक पहुंचने के लिए पार्टी ने इस तरह काम करना तय किया :

(1) कांग्रेस के अंदर इस दृष्टि से काम करना कि उसे एक सच्चा साम्राज्य-विरोधी मोर्चा बनाया जा सके; (2) किसान सभाओं और मजदूर संघों का संगठन करना और जहां कहीं ऐसे संघ कायम हों उनमें इस उद्देश्य से शरीक होना कि किसानों और मजदूरों की रोजमर्रे की आर्थिक और राजनीतिक लड़ाइयों को तीव्र करने और उनमें हिस्सा लेने और जनता के वर्गसंघर्ष को मजबूत करके स्वाधीनता एवं समाजवाद की प्राप्ति के लिए एक मजबूत जन-आंदोलन तैयार करने की सूरत पैदा हो; (3) युवकसंघ, महिलासंघ, स्वयंसेवकसंघ वगैरह में हिस्सा लेना और उनका संगठन करना जिससे वे पार्टी के कार्यक्रम के समर्थक बनाए जा सकें; (4) सभी साम्राज्यवादी युद्धों का सक्रिय विरोध और इस प्रकार के या दूसरे संकटों का राष्ट्रीय संग्राम को मजबूत बनाने के लिए उपयोग करना; (5) अंग्रेजी सरकार के साथ किसी भी मंजिल पर विधान-संबंधी समस्या पर समझौता करने में शरीक होने से इनकार कर देना; (6) राज्यशक्ति पर अधिकार हो जाने पर भारतीय राज्य के विधान को नियमित रूप से तैयार करने की गरज से मजदूरों, किसानों और दूसरे शोषित वर्गों के प्रतिनिधियों की स्थानीय समितियों द्वारा चुने गए प्रतिनिधियों की एक विधान-परिषद् बुलाना।
—(कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी के विधान से)

कांग्रेस समाजवादी पार्टी का केंद्रीय कार्यालय काशी में रखा गया। प्रधान मंत्री के रूप में जे० पी० ने आचार्य नरेन्द्रदेव के साथ इस पार्टी का संचालन करना शुरू किया।

कांग्रेस के इस स्वरूप और उसके अंदर कार्य करने की सीमा स्वीकार कर पार्टी ने बारह वर्षों तक जो कुछ किया है यहां बहुत संक्षेप में ही उसका उल्लेख किया जा सकता है।

कांग्रेस के अंदर पार्टी के कामों को चार हिस्सों में बांटा जा सकता है—(1) वैधानिकता के खिलाफ जेहाद जारी रखना; (2) जनता की आर्थिक समस्याओं के निराकरण की ओर कांग्रेस का ध्यान दिलाना; (3) कांग्रेस के संगठन की त्रुटियों को दूर कराने की चेष्टा करना, और (4) कांग्रेस को हमेशा युद्धोन्मुख बनाए रखना।

तैंतीस से सन् छत्तीस तक जे० पी० के उद्बुद्ध मानस के महत्त्वपूर्ण वर्ष रहे हैं। इसी बीच 'हवाई सोशलिज्म ?' नामक पुस्तक लिखकर 'आल इंडिया कांग्रेस

सोशलिस्ट पार्टी, बनारस' 1936 में प्रकाशित की। इस पुस्तक में चार महत्वपूर्ण निबंध हैं :

समाजवाद का आधार
कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी क्या है
विकल्प
उपाय और तरीके

कुल तीस-बत्तीस वर्ष की आयु में अपने मौलिक क्रांतिकारी विचारों एवं प्रतिभा से उन्होंने अखिल भारतीय व्यक्तित्व प्राप्त कर सही अर्थों में देश का नेतृत्व करना शुरू किया। 'समाजवाद क्यों' इसके विचारों से यह स्पष्ट है कि कोमिंटर्न तथा भारतीय साम्यवादी दल से स्वतंत्र कार्य पद्धति का अनुसरण करने का अर्थ जे० पी० का मार्क्सवाद में किसी भी तरह विश्वास कम होना नहीं था। उनका कहना है कि वह और कांग्रेस समाजवादी दल के उनके सहयोगी ही मार्क्सवाद को सही रीति से भारतीय परिस्थिति में लागू कर रहे हैं। समाजवाद का अर्थ बताते हुए उन्होंने स्पष्ट कहा है : 'समाजवाद का केवल एक रूप है, एक सिद्धांत है और वह मार्क्सवाद है।' वह स्वीकार करते हैं कि विभिन्न समाजवादी जमातों के बीच प्रक्रिया और व्यूह रचना के प्रश्न को लेकर मतभेद हैं, परंतु जे० पी० मानते हैं कि अभी तक केवल साम्यवादियों ने रूस में प्राप्त महान् और विलक्षण सफलता के द्वारा व्यूह रचना संबंधी अपने सिद्धांतों की सार्थकता प्रमाणित की है। निश्चय ही वह रूस में समाजवाद का मार्क्सवादी प्रतिपादन है। समाजवाद सामाजिक पुनर्निर्माण की एक पद्धति है। आदर्शवादियों का कोई समूह सत्ता हस्तगत किए बिना समाजवाद का निर्माण करना चाहे तो नहीं कर सकता। कोई भी सत्तारूढ़ समाजवादी दल समाजवाद का निर्माण सदैव कर सकता है, यदि उसके पास केवल दो वस्तुएं हों : प्रतिरोध को कुचलने के लिए बल-प्रयोग की पर्याप्त शक्ति और विरोध से निपटने के लिए पर्याप्त लोक समर्थन।

सांपत्तिक विषमता का मूल कारण ढूंढ़ते हुए जे० पी० ने दिखाया है कि किस तरह से चंद लोगों ने अपने लाभ के लिए प्रकृति प्रदत्त साधनों तथा उत्पादन के औजारों पर वैयक्तिक स्वामित्व स्थापित कर लिया है। इसीलिए अगर विषमताओं का निराकरण करना है तो उपाय यह है कि उत्पादन के साधनों पर से वैयक्तिक स्वामित्व को समाप्त कर उन पर संपूर्ण समाज का स्वामित्व स्थापित किया जाए।

कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी क्या है, क्यों है, इसकी कार्य पद्धति क्या है, इसका सविस्तार दर्शन जे० पी० ने दिया है। सबसे पहले जे० पी० इस तर्क का खंडन करते हैं कि समाजवाद की स्थापना भारत में इस कारण संभव नहीं कि इसकी परंपराएं योरोपीय देशों की परंपराओं से भिन्न हैं और यह औद्योगिक रूप से पिछड़ा हुआ है। जे० पी० ने गहन विवेचन करके दिखाया है कि यदि किसी समाजवादी दल के पास सत्ता हो तो वह विश्व के किसी भी भाग में समाजवाद का निर्माण कर सकता है। भारत में समाजवाद का निर्माण करने के लिए कौन-कौन से कदम आवश्यक हैं इस पर जे० पी० ने विचार किए हैं। और फिर कांग्रेस

समाजवादी दल का जो कार्यक्रम उन्होंने स्वयं तैयार किया था उसमें सुझाये गए कदमों का परिशोधन करते हैं, जैसे : उत्पादक जनता को सारी सत्ता का हस्तांतरण, देश के आर्थिक जीवन का राज्य द्वारा नियोजित और नियंत्रित विकास, उत्पादन, वितरण एवं विनिमय के साधनों के उत्तरोत्तर समाजीकरण की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण एवं प्रमुख बैंकों, उद्योगों, बीमा एवं सार्वजनिक सेवाओं का समाजीकरण, राजाओं, जमींदारों तथा अन्य सभी शोषक वर्गों का बिना क्षतिपूर्ति के उन्मूलन, किसानों में भूमि का पुनर्वितरण, सहकारी एवं सामूहिक कृषि का राज्य द्वारा प्रोत्साहन और कार्यान्वियन, काम करने या पोषण पाने के अधिकार की राज्य द्वारा मान्यता···आदि।

ऐसे कुल पंद्रह कदम थे पार्टी के कार्यक्रमों में। इन्हें जे० पी० ने वैज्ञानिक तौर पर मार्क्सवादी पद्धति के अनुसार ही देखा है। पर इनमें जे० पी० के स्वतंत्र विचारक के भी दर्शन होते हैं। जैसे सहकारी और सामूहिक कृषि का समर्थन करते हुए भी जे० पी० को कृषि-उत्पादन की इकाई के रूप में गांव ही दिखाई दिया न कि रूस के सामूहिक फार्म वाले कई गांवों का एकांश। यह ग्रामीकरण प्राचीन भारत के ग्रामकम्यूनों के अनुरूप होगा। इस भेद के साथ कि समाजवादी गांव एक सीमित संकीर्ण इकाई होने के बदले, वृहत्तर आर्थिक व्यवस्था का सक्रिय सहकारशील इकाई होगा। इसके अलावा सहकारी एवं सामूहिक खेती की दिशा में संक्रमण भी मंथर एवं क्रमिक रूप से होगा, त्वरित रूप से नहीं, जैसा कि रूस में हुआ। और रूस की रीति से भिन्न, इस संक्रमण के लिए बल-प्रयोग किया जाएगा। भारत की विशाल आबादी तथा अल्पभूमि क्षेत्र को ध्यान में रखते हुए यहां के लोगों के लिए श्रम बचाने वाले औजारों की आवश्यकता कम ही होगी। समाजवाद के अंतर्गत, नगरों का नियोजन किया जाएगा। और उद्योग को विकेंद्रित कर केंद्रीकरण का निवारण किया जाएगा। भौगोलिक तथा संख्यात्मक दोनों रूप से नियोजन होगा। इस प्रकार कृषि औद्योगिक गांव, जयप्रकाश के चिंतन के अनुसार भारत के भविष्य की योजना का आदर्श आधार है।

अंतिम लक्ष्यों तथा तात्कालिक राजनीतिक व्यूहरचना के प्रसंग से जे० पी० में स्वतंत्र चिंतन की क्षमता शीघ्र ही और पुष्ट हुई। यद्यपि जे० पी० ने कांग्रेस समाजवादी दल की नींव डालने में प्रमुख भाग लिया था और मुख्यतः इस विश्वास के कारण कि भारत के साम्यवादी राष्ट्रीय संघर्ष से अपने को अलग रखकर गलत मार्ग का अनुसरण कर रहे हैं, तथापि उनकी यह आशा बनी रही कि किसी दिन समाजवादी और साम्यवादी, मार्क्सवाद में अपनी समान भक्ति के कारण, एक साथ मिलेंगे, और इस प्रकार भारत में एक संयुक्त समाजवादी—साम्यवादी दल का उदय होगा। यह आशा तब और बलवती हुई जब सन् छत्तीस में कामिंटर्न के नये निर्देश के अनुसार भारत में साम्यवादी कार्यपद्धति में परिवर्तन हुआ। पर जे० पी० का जो सपना था उसमें साम्यवादी कभी भागीदार नहीं हुए।

पर जवाहरलाल नेहरू इस समाजवाद के साथ थे और मित्र थे समाजवादियों के। जे० पी० के तो 'भाई' थे। यह बात और है कि चौंतीस के वसंत में जब कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी बाकायदा संगठित हो रही थी उस समय नेहरू जेल में थे। जेल से बाहर आने के बाद उन्होंने औपचारिक रूप से कभी अपने आपको इस दल

से संबद्ध नहीं किया—जिससे उनके तमाम प्रशंसकों को निराशा हुई थी, पर केवल जे० पी० इससे अलग थे। नेहरू सी० एस० पी० के बुनियादी लक्ष्य से बिल्कुल सहमत थे कि कांग्रेस को समाजवादी संस्था में बदला जाए। फिर भी उन्हें लगा कि कांग्रेस समाजवादी पार्टी ने पाश्चात्य समाजवाद की भाषा को अपना लिया है और वह सर्वसाधारण के लिए बिल्कुल दुर्बोध होगी। इसके अतिरिक्त नेहरू को किसी तरह की गुटबंदी से शायद कभी कोई सहानुभूति नहीं रही। और उनकी नजरों में कांग्रेस समाजवादी पार्टी इसी प्रकार की एक संस्था थी। इसकी सदस्यता कांग्रेसी सदस्यों तक ही सीमित थी और यह कांग्रेस के कार्यक्रम और संविधान का समर्थन करती थी। पर इस तरह से सोचने और उसके भी पीछे मूल कारण यह था कि नेहरू राजनीतिज्ञ थे। शक्ति के मूल की पकड़ थी उन्हें। और वह इस माने में सर्वथा स्पष्ट थे कि यदि ये राष्ट्रीय नेता के रूप में अपना तादात्म्य बनाए रखेंगे तो कांग्रेस के अंदर समाजवाद को अधिक प्रतिष्ठित किया जा सकेगा।

एक आशंका उन्हें और थी कि वह औपचारिक रूप से कांग्रेस समाजवादी पार्टी के सदस्य बन जाएंगे तो गांधी की सहानुभूति खो बैठेंगे और इससे उनका भविष्य खतरे में पड़ सकता है। एक बात और। सी० एस० पी० एक साधारण संस्था थी नेहरू के लिए। जे० पी० ने आगे अपने एक पत्र में नेहरू की इस बात पर करारा व्यंग भी किया है।

इस भूमिका के साथ छत्तीस का लखनऊ कांग्रेस देखा जा सकता है जिसके अध्यक्ष जवाहरलाल थे। और उन्होंने अपने विश्वास, प्रयत्न और तमाम विरोधों के बावजूद पहली बार कांग्रेस वर्किंग कमेटी में तीन समाजवादियों को लिया—आचार्य नरेन्द्रदेव, जयप्रकाशनारायण और अच्युत पटवर्धन। शुक्रवार सत्रह अप्रैल सन् छत्तीस के 'बांबे क्रानिकल' के मुखपृष्ठ पर छपा था : 'समाजवादी कांग्रेस वर्किंग कमेटी में।' और तब पूरी कमेटी का स्वरूप इस प्रकार बना था : जवाहरलाल नेहरू अध्यक्ष, सेठ जमनालाल बजाज कोषाध्यक्ष, जे० बी० कृपलानी जनरल सेक्रेट्री, मौलाना आजाद, राजेन्द्रप्रसाद, आचार्य नरेन्द्रदेव, जयप्रकाश नारायण, अच्युत पटवर्धन, सरदार पटेल, खान अब्दुल गफ्फार खां, राज गोपालाचारी, सुभाषचन्द्र बोस, जयरामदास दौलतराम, शंकररावदेव और भूलाभाई देसाई—सदस्य।

इनमें केवल दो सदस्य—जयप्रकाश नारायण और राजा जी ए० आई० सी० सी० के सदस्य नहीं थे। और विधान के मुताबिक वर्किंग कमेटी का सदस्य वही बनाया जा सकता है जो ए० आई० सी० सी० का सदस्य हो। इसके लिए नेहरू ने लखनऊ कांग्रेस में नया नियम पारित किया। वर्धा में सत्ताईस अप्रैल. दिन के तीन बजे पहली बैठक हुई नई वर्किंग कमेटी की। जे० पी० की जगह सी० एस० पी० के जनरल सेक्रेट्री का पद मसानी ने संभाला।

लखनऊ कांग्रेस से लेकर वर्धा की उस बैठक और अगले चार पांच महीनों तक नेहरू और जे० पी० बिल्कुल साथ-साथ रहे। जे० पी० ने नेहरू को यह विश्वास दिया कि कांग्रेस से सभी बुनियादी परिवर्तन की आकांक्षा रखते हैं और सबकी आशा नेहरू पर है। समाजवादियों के इतने नजदीक का साथ पुराने महा-

रथियों को कतई अच्छा नहीं लग रहा था। अक्सर मुठभेड़ होती थी। नेहरू उग्र प्रस्तावों का प्रवर्तन करना चाहते थे, पर पुराने लोगों को विश्वास था ये उग्र प्रस्ताव जयप्रकाश के बनाए होते हैं। इसलिए उन प्रस्तावों को या तो ठुकरा देना या उद्दंडतापूर्वक उन्हें काट-छांट देना, एक आम बात हो गई थी। उस समय नेहरू को कांग्रेस से घोर निराशा हुई थी। एक बार तो उन्होंने अध्यक्ष पद से त्याग-पत्र देने का निश्चय किया। उन दिनों के मानसिक द्वंद्व में जे० पी० नेहरू के और भी करीब होते चले गए थे। आखीरकार जून छत्तीस के अंत में एक बड़ी मुठभेड़ हुई। और उसके फलस्वरूप कार्यकारिणी समिति के सात सदस्यों ने, जिनमें प्रमुख थे—राजेन्द्रप्रसाद, पटेल और राजा जी, त्यागपत्र दे दिए। जे० पी० और गांधी ने बीच बचाव किया और त्यागपत्र वापस ले लिये गए।

इन सारे संघर्षों और मुठभेड़ों के कारण थे तीनों समाजवादी, विशेषकर जयप्रकाश नारायण जो कांग्रेस को वामपंथी बनाने के प्रयत्न में थे।

पर चूंकि जे० पी० कांग्रेस की एकता को सबसे ज्यादा महत्त्वपूर्ण मानते थे भारत की आजादी की लड़ाई के लिए, इसलिए उन्होंने स्वयं छः महीने के बाद वर्किंग कमेटी से इस्तीफा देने का फैसला कर लिया। इनके उन छः महीनों के अनुभव बड़े दुखद रहे। उन्होंने कहा कि समाजवाद, कांग्रेस के लिए महज एक नीति है पर सी० एस० पी० के लिए समाजवाद एक आस्था है।

पर त्यागपत्र देने के फैसले को नेहरू तक पहले पहुंचाना था। जे० पी० ने सन् छत्तीस की जुलाई के अंत में नेहरू को उस आशय का व्यक्तिगत पत्र लिखा। जिसका उत्तर काफी विलंब से सात अगस्त को नेहरू ने दिया :

प्रिय जयप्रकाश,

तुम्हारा पत्र मुझे जुलाई के अंत में मिला। तार देने के अलावा मेरे लिए यह संभव नहीं था कि मैं उसका उत्तर देता। पर तार में क्या कह पाता, मुझे पता नहीं था। मैं तब दिमागी तौर पर बेहद थका हुआ था और लगातार तमाम यात्राओं और अन्य कार्यक्रमों में फंसा रहा। मैं कुछ भी सोचने लायक नहीं था इसीलिए उत्तर देने से कतराता रहा हूं।···जो सच्चाई है जैसा कि मैं जानता हूं, मैं चाहता हूँ कि तुम यहां बने रहते, पर ऐसी स्थिति में जहां तमाम निजी बातें उभरकर आ जाती हों, वहां कुछ सुझाव देने का प्रश्न असाधारण रूप से मुश्किल हो जाता है। फिर भी चूंकि तुमने ऐसा फैसला ले लिया है तो हमें उसका सामना करना ही पड़ेगा। हालांकि इससे स्थिति और बिगड़ेगी और मैं नहीं जानता कि फिर क्या होगा···।

सस्नेह तुम्हारा
जवाहरलाल

उस समय पटना में जे० पी० के पत्र 'सर्चलाइट' के मार्फत आते थे। नेहरू ने उसी पते पर यह पत्र भेजा था। तब जे० पी० के दौरे पार्टी के लिए, पूरे हिंदुस्तान के आम आदमी को उससे जोड़ने के लिए बहुत बढ़ गए थे। उन्हें लगातार एक साथ कई तरह के काम करने पड़ते थे। नये-नये स्थानों में पार्टी का गठन करना, लोगों से संपर्क स्थापित करना, समाजवादी चेतना जगाने के लिए लगातार भाषण, बहस और बातचीत करना, लेख लिखना, बयान जारी करते

रहना, सोशलिस्ट बुक क्लब स्थापित करना, पार्टी के लिए चंदे उगाहना, अध्ययन शिविर की योजना बनाना, पत्र-पत्रिकाएं निकलवाना, उनके लिए लिखना-लिखवाना, पार्टी के लिए प्रस्तावों को तैयार करना, कांग्रेस कार्यकारिणी, विशेषकर जवाहरलाल नेहरु का झुकाव वामपक्ष की ओर बना रहे और समाजवादी लक्ष्य में उनका योग प्राप्त होता रहे, इसके लिए विस्तृत पत्र और सुझावपूर्ण बयान देते रहना आदि।

जे० पी० के दौरे पूरे हिंदुस्तान भर में होते थे। प्रायः उनकी यात्रा रेल के तीसरे दर्जे में होती थी। दूर के सफर उन दिनों के इंटर क्लास में कर लेते थे। अधिकतर सफर उन्होंने रेलगाड़ी, मोटर से किया। कभी-कभी बैलगाड़ी और हाथी की भी सवारी की है। अक्सर राह-रहित, धूलि-धूसरित और पानी कीचड़ भरे रास्तों को पैदल तय किया है। गर्मियों में अगर उन्हें सुबह नाश्ते पर चना और जौ का सत्तू मिल गया है तो पूरे दिन की यात्रा अच्छी कटती थी। फिर कभी सुबह चिउड़ा दही का संयोग लग गया है तो क्या कहने। जाड़ों में सुबह नाश्ते पर काफी पीने की बड़ी तमन्ना थी। और कहीं कुछ न मिला तो चना चबैना से ही संतोष हो जाता था।

4

इसके बाद ही फरवरी सन् सैंतीस में विधानसभाओं का चुनाव आया। पार्टी ने अपने सदस्यों को प्रचार की दृष्टि से उस चुनाव में खड़े होने दिया। कांग्रेस को इन चुनावों के जीतने में पूरी मदद पहुंचाई। कांग्रेस को शानदार विजय मिली। किंतु इस विजय के बाद ही मंत्रिमंडल बनाने की ओर कांग्रेस के कुछ नेताओं का झुकाव दीख पड़ने लगा। कांग्रेस समाजवादी पार्टी (सी० एस० पी०) ने इसका विरोध किया। पर ए० आई० सी० सी० की दिल्ली बैठक में बहुमत उसी दल को मिला जो मंत्रिमंडल में जाना चाहते थे।

मंत्रिमंडल कायम हो जाने के बाद भी जब राजनीतिक बंदी जेलों में सड़ते रहे तो जयप्रकाश ने वह प्रसिद्ध नारा दिया : 'छोड़ो या इस्तीफा दो' (रिलीज और रिजाइन)। इस नारे का ऐसा प्रभाव पड़ा कि युक्तप्रांत (आज का उत्तर प्रदेश) और बिहार के मंत्रिमंडल को इस प्रश्न पर इस्तीफा तक देना पड़ा। इससे अंग्रेज साम्राज्यशाही घबरा उठी और सभी राजबंदियों को छोड़ दिया।

यहीं से कांग्रेस और उसके भीतर समाजवादी दल के बीच टकराव शुरू होता है। कांग्रेस के संगठनगत और चरित्रगत निर्बलताओं की ओर सी० एस० पी० का ध्यान शुरू से ही रहा। जयप्रकाश ने इस संबंध में सन् पैंतीस में ही बनारस से जारी किये गए एक परिपत्र द्वारा कहा : 'कांग्रेस का विकास एक दूसरी ओर करना है। यह उसके संगठन और विधान से संबंध रखता है। आजकल कांग्रेस का संगठन व्यक्तिगत सदस्यता के आधार पर होता है : जो बड़ा ही असंतोषप्रद है। इसके चलते कांग्रेस एक बनावटी संस्था-मात्र बन जाती है। वह जनता की संस्था न होकर एक मुट्ठी भर सदस्यों की संस्था बनी रहती है। हमें इसके संगठन को इस तरह बदलना है कि वह जनता की सीधी प्रतिनिधि-संस्था बन जाए। मेरे

विचार से इसके लिए आवश्यक है कि कांग्रेस में सामूहिक प्रतिनिधित्व का सिलसिला जारी किया जाए। वर्गों और समूहों की संस्थाओं से चुने गए व्यक्तियों से ही कांग्रेस की प्रारंभिक कमेटियों का संगठन किया जाए। वे किसानों, खेतिहरों व्यापारियों और दूसरे पेशों के प्रतिनिधियों की हैसियत रखने वाले सदस्यों से ही संगठित की जाएं। इस योजना का ब्योरा बनाना कठिन माना जा सकता है किंतु इसका सिद्धांत बहुत ही सरल और, मेरे विचार से, न्याययुक्त और उचित है।'

कांग्रेस के सन् सैंतीस के एसेंबली चुनाव की सफलता का एक बहुत बड़ा कारण था कांग्रेस के भीतर समाजवाद का वामपक्ष। सी० एस० पी० की सबसे बड़ी देन थी कि सारा किसान और मजदूर वर्ग कांग्रेस के प्रति आकृष्ट हुआ। चुनाव आंदोलन के ठीक पहले जयप्रकाश ने अपनी और कांग्रेस दोनों पार्टियों के मंचों से जो प्रस्ताव पारित किए उनमें महत्त्वपूर्ण भूमि-सुधारों के प्रवर्तन की प्रतिज्ञाएं थीं। मालगुजारी और लगान में कमी करके निर्धन किसानों की तात्कालिक सहायता के बचन थे। आर्थिक दृष्टि से अलाभकर जोत पर सब तरह की मालगुजारी की छूट थी। कर्ज चुकाने की कानूनी मोहलत थी। ग्रामीण ऋण की अदायगी में कटौती थी। और कम ब्याज दर पर उधार सुविधा की व्यवस्था थी।

सैंतीस की इस सफलता के घमंड से कांग्रेस ने अन्य सब राजनीतिक दलों के प्रति उपेक्षा का भाव रखना शुरू किया। नेहरू ने इस गर्वोक्ति के साथ अपना स्वर ऊंचा किया : 'भारत में आज केवल दो शक्तियां हैं, ब्रिटिश साम्राज्यवाद और भारतीय राष्ट्रवाद, जिसका प्रतिनिधित्व कांग्रेस कर रही है।'

इस पर जिन्ना ने फौरन प्रतिक्रिया व्यक्त की थी; 'नहीं, एक तीसरी पार्टी भी है, मुसलमानों की।'

कांग्रेस इन तिरस्कारपूर्ण शब्दों तक ही सीमित न रही। चुनाव आंदोलन के दौरान संयुक्त प्रांत में मुस्लिम लीग के साथ गुप्त रूप से समझौते भी कर रही थी—मिली-जुली सरकार बनाने के लिए। पर समय आने पर रियायत करने की कोई आवश्यकता नहीं समझी गई। मुस्लिम लीग के सामने कांग्रेस ने ऐसी अविश्वसनीय, अर्थहीन शर्तें रखीं कि जिन्ना उनसे नाराज होकर चिल्ला पड़ा : 'इस्लाम खतरे में है।'

यहीं से मुसलमान कांग्रेस और समाजवादी दल से विमुख होकर मुस्लिम लीग की ओर जाता है। जे० पी० के लिए ये स्थितियां, कांग्रेस का ऐसा चरित्र काफी दुखदायी था। जे० पी० सैंतीस और अड़तीस दोनों वर्षों में समूचे भारत के दूर-दूर स्थानों के दौरे करते थे और दम घोटने वाले राजनीतिक वातावरण में सांस लेने को विवश थे। पर अड़तीस के जून में नेहरू वायुपरिवर्तन के बहाने हिंदुस्तान से बाहर निकलकर योरोप की एक और 'तीर्थ यात्रा' पर चले गए। वह जैसे ही नवंबर में भारत लौटे जे० पी० ने कालीकट से, तेइस नवंबर को नेहरू को एक महत्त्वपूर्ण, मार्मिक लंबा पत्र लिखा जैसे वह इस बीच किसी स्वजन से बहुत कुछ कहने और अपने गहन अनुभवों को बताने के लिए कब से रास्ता जोह रहे हों :

'प्रिय भाई,

देशागमन पर आपके प्रति पूरे राष्ट्र के स्वागत में मैं अपने स्वागत को भी मिला देने के लिए आतुर हूं। काश मेरे लिए यह संभव होता कि मैं अभी इलाहाबाद पहुंचकर आपसे मिलता और उनके विषय में बातें कर पाता, जो आपने योरोप में इतनी करुण घटनाएं देखीं, और जो आपकी अनुपस्थिति में यहां घटती हुई मैंने देखीं। मैं कुछ ही सप्ताह में अपनी यह इच्छा पूरी करूंगा।···मैं यहां मलाबार में पड़ा अपनी 'साइटिका' मर्ज का एक विशेष आयुर्वेदिक उपचार करा रहा हूं। पहले से सुधार हुआ है पर रोगमुक्त नहीं हूं। प्रभावती मेरे साथ है। हमें यह समाचार पत्रों से पढ़कर प्रसन्नता है कि योरोप से लौटकर आपका स्वास्थ्य बहुत अच्छा हो गया है।

मुझे बहुत प्रसन्नता है कि आप वहां इतने व्यस्त होते हुए भी मेरे 'सोशलिस्ट बुक क्लब' जैसे साधारण प्रस्ताव को नहीं भूले। इस योजना में हमें थोड़ी सफलता मिली है। और सुभाष बाबू की मदद से कलकत्ते में इसके लिए हमने तीन हजार रुपये जुटा लिए हैं। इसका दफ्तर इलाहाबाद में है। अहमद इसका प्रबंधक है। क्लब एक गैर राजनीतिक चीज है। आपने अपने योरोप से भेजे खत में मुझे लिखा था कि आपको इस क्लब के बारे में पूरी जानकारी नहीं है। साथ ही आपने अपनी यह विवशता भी प्रकट की कि आप किसी ग्रुप से एकाकार नहीं होना चाहते। जैसा कि मैंने लिखा था क्लब ग्रुपबाजी जैसी चीज नहीं है और समाजवादी साहित्य के अलावा अन्य किसी से उसका सरोकार नहीं है। सुभाषचन्द्र बोस इसके संस्थापक सदस्य हो चुके हैं। आपकी मनाही हमारे प्रति आघात होगा। मैं मानता हूं क्लब का कार्य साधारण ढंग से चलेगा। पर भारतीय समाजवादी आंदोलन से यह आशा करना गैर मुनासिब होगा कि वह अपने साधनों से परे जाकर काम करे। और आप मुझे यह कहने के लिए क्षमा करें कि आप स्वभावतः हर काम 'ग्रेड स्केल' पर करने के अभ्यस्त रहे हैं। समाजवादी प्रयत्न सामान्य हैं, सिर्फ इसी आधार पर, तथा पुरानी और बड़े आकार की संस्थाओं की तुलना में यह सामान्य है, इसी वजह से आप इसे अपना सहयोग नहीं देंगे? आप इससे एकाकार न हों, पर समाजवादी होने के नाते आप हम समाजवादियों की कुछ तो मदद करें, हमारे कामों में।

आपने अपने पत्र में लिखा था कि भारतीय राजनीति एक लीक (रट) में पड़ गई है। आपकी अनुपस्थिति में यह और गहरे धंस गई। यहां ऐसी चीजें घट रही हैं कि कांग्रेस करोड़ों गरीब पिछड़े लोगों का प्रजातांत्रिक दल न होकर कुछ स्वार्थी लोगों का संगठन है। गांधीवाद के इस अभद्र अशिष्ट रूप ने नये कांग्रेस को इस संक्रांतिकाल में वह आवश्यक तथाकथित विधानात्मक रक्षातंत्र भी दिए हैं।'

जे० पी० ने इस पत्र में नेहरू को स्पष्ट कहा : 'अब समय आ गया है कि हम बहुत गहराई से कांग्रेस नीतियों को परखें। विशेषकर चुनाव में कांग्रेसी सफलता के बाद के कार्यों के परिप्रेक्ष्य में। कांग्रेसी सरकार का क्या दृष्टिकोण रहा है—मजदूर और किसान आंदोलनों के प्रति? यह उन लोगों के लिए आंखें खोलने वाली बात होगी जो यह नहीं चाहते कि मजदूरों और उनके संगठनों के हाथ पैर बांधकर मालिक के हाथ में दे देने के लिए मंत्रिमंडल का इस्तेमाल हो। आज वह

खतरा सामने है जहां भारतीय उद्योग और भारतीय राष्ट्रीयता दोनों को पर्याय मान लिया जा रहा है।'

जे० पी० ने फिर अपने पत्र में कांग्रेस पार्टी के चरित्र और कार्यों पर प्रकाश डालकर नेहरू को लिखा : 'मैं सोचता हूं आपको इन सवालों का अब उत्तर देना होगा। शब्दों में नहीं, अपने कार्यों से। जैसा कि महात्मा गांधी का विचार है कांग्रेस अपने लक्ष्यों को केवल रचनात्मक कार्यक्रमों पर मुनहसर रहकर हासिल करेगी या अन्य किसी उपाय से ? आप देश को बताइए। उत्तर दीजिए।' अपने उस पत्र में जे० पी० ने समाजवाद के आंदोलन के कार्यक्रमों में किसान सभा, मजदूर यूनियन, विद्यार्थी और युवा वर्ग के संगठनों के महत्त्व को बताया और इन सबको कांग्रेस के शरीर के अंग बताया जिसे नई कांग्रेस प्रतिद्वंदी संस्थाएं मानती थी। 'आपको इसकी गहराई में जाना होगा और उत्तर देना होगा कि अब ऐसा क्या किया जाय जिससे कि उस सामाजिक स्वतंत्रता की ओर एक निश्चित दिशा दिखाई दे। वह सामाजिक स्वतंत्रता जिसके लिए सारा देश स्वप्न देख रहा है और जिसकी कोई अभिव्यक्ति अब तक नहीं हो सकी है। मेरा विश्वास है इसके लिए बुनियादी काम करना होगा। और यह काम सिर्फ आप कर सकते हैं अगर आप इस ओर समय और ध्यान दें। जहां तक इस राष्ट्रीय आंदोलन में सामाजिक उद्देश्यों को एक दिशा और गति देने का प्रश्न है. वहां बड़ा सवाल है शत्रु पर नये प्रकार से आक्रमण करने का संकल्प। क्या उस बारे में हमारे विचार स्पष्ट हैं ? क्या हम इसके लिए तैयारी कर रहे हैं ? हम ऐसा आक्रमण दुश्मन पर कब करेंगे ? तब, जब हमें अपनी सुविधा से वह समय अंग्रेज देगा ? मैं मानता हूं सत्याग्रह विधान किसी को उस आक्रमण की पूर्व योजना तैयार करने की स्थिति ही नहीं देता। हमें सिर्फ एक उपाय देता है—चर्खा चलाओ, सूत कातो और आत्मा जगाओ। पर क्या आप इतने से संतुष्ट होंगे ? व्यावहारिक रूप से आपने अपने अथक प्रयत्नों से जो इतना सारा काम किया है—कांग्रेस को प्रजातांत्रिक बनाना, जनसंपर्क, मुस्लिम एकता, गुलाम विधान से युद्ध, इन सबको वर्किंग कमेटी ने काट-छांट कर रख दिया है।...'

इस बीच निपट मानव जयप्रकाश के बारे में कुछ वास्तविक जानकारी प्रभावती की डायरी से मिलती है।

26-8-34 : वर्धा

आज जयप्रकाश का तार मिला। मुझे जल्दी पटना बुलाया। उसी पर बापू से खूब बातें कीं।

29-8-34 : वर्धा

बापू ने मुझे जयप्रकाश के बारे में बहुत सी बातें समझाईं, जो बहुत अच्छी थीं।

14-9-34 : वर्धा

बापू से खूब बातें हुईं। उन्होंने खूब अच्छी तरह समझाया। सुंदर उपदेश दिया। अपने बारे में भी सुनाया। परमात्मा मेरी रक्षा करे। तबीयत बहुत अशांत है। ईश्वर पर भरोसा है।

8-10-34 : वर्धा

जयप्रकाश आए। आज तबीयत बहुत उदास और चिंतित है, इसलिए ज्यादा नहीं लिखती। कुछ समझ नहीं पड़ता। ईश्वर का ध्यान कर रही हूं। मुझे शांति दे। मालिश के समय बापू से थोड़ी बातें हुईं।

9-10-34 : वर्धा

बापू से बातें कीं। उन्होंने मुझे अच्छी तरह मेरा धर्म समझाया। उसके बाद बापू और जयप्रकाश के बीच जो बातें हुईं, सुनती रही।

14-10-34 : वर्धा

यह निश्चय हुआ कि एक साल तक मैं काका जी के चार्ज के नीचे यहां आश्रम में रहूंगी। रुपये 25/ मुझे देंगे। आश्रम खाने पीने को देगा। उस तरह से मैं अपने पैरों पर खड़ी होने की लियाकत प्राप्त कर सकूंगी। एक साल के बाद मैं जयप्रकाश के साथ रहूंगी।

14-11-34 : वर्धा

जयप्रकाश का खत आया। शाम को फिरते समय बापू से बातें कीं। बंबई जाने के बारे में धर्म क्या है? उसके बारे में उन्होंने समझाया।

इस बीच जयप्रकाश का दाम्पत्य, निजी जीवन क्या रहा होगा, इसका कुछ संकेत प्रभावती को लिखे हुए गांधी के दो तीन पत्रों से मिलता है :

दिल्ली
18-12-33

चि० प्रभावती,

तुम्हारा पत्र मिला। जयप्रकाश का भी। अगर तुम दोनों का यही निश्चय हो कि हमें सेवाधर्म का ही पालन करना है तो मुझे कुछ कहना नहीं है। मैंने तो दोनों को समझाया कि व्यक्तिगत कुटुंब धर्म का पालन करने में भी पाप नहीं है और सेवाधर्म का पालन करना हो तो व्यक्तिगत धर्म छूटने ही चाहिए। दोनों साथ-साथ पालन करते जाएंगे तो दोनों के बिगड़ने की संभावना है। राजेश्वर के लिए हर महीने 50/ प्राप्त करने में कठिनाई नहीं होगी। किंतु मुझे इतने में संतोष नहीं है। तुमने अपने खर्चे के लिए क्या व्यवस्था की? कर्ज के लिए क्या किया? जैसे भी हो यह व्यवस्था हो जाय। इससे तात्विक प्रश्न हल हुआ ऐसा नहीं कहा जाएगा। किंतु इस बात को बढ़ाना नहीं है। जयप्रकाश के उत्साह को मैं तोड़ना नहीं चाहता। उसका हेतु शुद्ध है। अतः सब ठीक होगा, ऐसा हम मानें।

बापू के आशीर्वाद

नंदी हिल
19-5-36

चि० प्रभावती,

बहुत दिनों बाद आज तुम्हारी चिट्ठी मिली। मैंने तो तुम्हें तीन पत्र लिखे। 1, 12 और 18 को। अप्रैल में लिखे वे अलग। अब तुम्हें एक भी न मिले तो किसका दोष? तुम्हें यह मान लेना चाहिए कि तुम्हारे खतों का जवाब मैं लिखता ही हूं।

हां, जयप्रकाश मिला। उसके साथ बात हुई। साथ में पटवर्धन थे। मैंने जो पत्र लिखा, उसका उत्तर उसने नहीं दिया। सोचा, उसे देना ही न था। तुम्हारे भविष्य के संबंध में ही बात की। वह तुम्हें काशी में तीन महीने के लिए मांटेसरी पद्धति सिखाना चाहता है, और तदुपरांत उसकी इच्छा है कि तुम पटना रहो। मेरी संमति मांगी। मैंने तुरंत दे दी। तुम मांटेसरी सीखोगी इसमें कुछ नुकसान तो है नहीं। मुझे उसका मोह नहीं है, पर उसकी इच्छा है तो पूरी कर लो। बाद में पटना या ऐसी ही किसी जगह रहोगी न ? इस बारे में तुम उसके साथ विचार विमर्श करोगी, ऐसा मैं मानता हूं। यह हमारी बातों का सार है।

तुम कितनी मूर्ख हो। तबीयत खराब थी फिर भी समाचार नहीं देती। अब भी 'फिट' आता है ? दूध पीने के बारे में क्या किया ?

बापू के आशीर्वाद

वर्धा
30-6-36

चि० प्रभा,

तुम्हारा पत्र फाड़ता हूं। किंतु उसमें फाड़ने जैसी क्या बात है ? तुम्हारे कार्यक्रम में नींद बहुत कम दिख रही है। रात को नींद जल्दी क्यों नहीं आती ? क्या चिंता करती हो ? राम नाम रटते हुए सो जाओ। दिन में सोती हो ऐसा नहीं लगता। पटना के समाचार मालूम हुए। जयप्रकाश के साथ रहकर उसकी सेवा करना तुम्हारे नसीब में ही नहीं है।

बापू के आशीर्वाद

सन् छत्तीस में द्वितीय महायुद्ध के आसार नजर आने लगे थे। भारत के राष्ट्रवादियों के परस्पर दृष्टिकोण में अंतर था। एक राष्ट्रवादी वर्ग अंग्रेजों की इस संकट की स्थिति में, प्रत्येक दशा में लाभ उठाना चाहता था। पर जयप्रकाश मित्र राष्ट्रों को संकट में ढकेलने में भागीदार नहीं बनना चाहते थे। किंतु युद्ध से भी सहमत नहीं थे। जे० पी० ने महायुद्ध को 'साम्राज्यवादी संघर्ष' कहा था। इन्हें बुनियादी चिंता भारत के स्वतंत्रता-संग्राम की थी। जे० पी० ने कहा था : यदि देश स्वतंत्र होता तो विश्व में दमन और अन्याय का अवश्य विरोध किया जाता। नाजीवादी साम्राज्यवादी और पूंजीवादी विषमता के किसी भी रूप के विरोध में हम खड़े होते। किसी से भी कंधा से कंधा भिड़ाकर सहचरण करते।

इसी सहचरण की प्रेरणा से जयप्रकाश ने भारत देश में समाजवादी और साम्यवादियों के योग और संगमन की कल्पना की। एकता की इस कल्पना से उनके मन में राष्ट्रीय स्वतंत्रता और भारतीय समाजवाद की प्रगति की आकांक्षा साकार हो गई। एकता के इस प्रश्न पर जे० पी० के साथ राममनोहर, अच्युत, अशोक मेहता और मीनू मसानी कोई भी सहमत न था। केवल नरेन्द्रदेव साथ थे जे० पी० के। जयप्रकाश ने साम्यवादियों से समझौता कर लिया। इस सहमति से कांग्रेस समाजवादी पक्ष के द्वार साम्यवादियों के लिए खुल गए। आगे इसका फल क्या हुआ यह बड़ा दिलचस्प है। दक्षिण भारत के सी० एस० पी० संगठन की इकाइयों पर साम्यवादियों का अधिकार होना शुरू हुआ और शीघ्र ही दक्षिण

भारत में समाजवादियों का प्रभाव क्षीण हो गया। साम्यवादियों की शक्ति बढ़ गई। जयप्रकाश को जल्दी ही अनुभव हुआ कि साम्यवादी इस देश में स्वतंत्र चिंतन और स्वतंत्र अस्तित्व के आधार पर कार्य नहीं कर सकते।

जैसे-जैसे विश्वयुद्ध के बादल घिरते गए, जे० पी० ने अपनी पार्टी की ओर से किसानों और मजदूरों का संगठन मजबूत किया। उन्हें जगाने के लिए शब्द और कार्य दोनों स्तरों से प्राण फूंकना शुरू किया।

बंगाल पार्टी सम्मेलन में जे० पी० का भाषण उनके विश्वासों को स्पष्ट करता है :

'साम्राज्य विरोधी शक्तियों का विकास सिर्फ सिद्धांतों के प्रचार से नहीं हो सकता। उसके साथ हम जनता में काम भी करें। क्योंकि साम्राज्य विरोधी आंदोलन सिर्फ सिद्धांतवादियों का जमघट नहीं रहेगा बल्कि उसमें किसानों, मजदूरों और गरीब मध्यवर्गीय लोगों का बोलबाला होना चाहिए। इन वर्गों में काम करना, इनकी राजनीतिक चेतना को जाग्रत् करना, इनके आर्थिक संघर्षों का संगठन करना—यही हमारा मुख्य और मौलिक कार्य है।'

अब तक किसान सभा किसानों की कुछ तात्कालिक मांगों के आधार पर चलती थी। पार्टी ने उसे पहली बार सैद्धांतिक आधार दिया। जमींदारी, तालुकेदारी का उन्मूलन और किसानों के कर्ज की मंसूखी उसकी प्रमुख मांग बनी। हिंदुस्तान के कोने-कोने में 'जमींदारी प्रथा नाश हो' के नारे उठने लगे और यह नारा इतना जबर्दस्त होता गया कि जमींदारी उन्मूलन के लिए कांग्रेस मंत्रि-मंडलों में भी आग्रह होने लगे। इसके अतिरिक्त—बकाया लगान रद्द किया जाय, मालगुजारी आधी कर दी जाय, जिस किसान के पास जीविका के योग्य पूरी जमीन न हो, उसे मालगुजारी नहीं देनी पड़े, किसानों से बेगार लेने पर जमींदारों को दंड दिया जाय, मालगुजारी या कर्ज की वसूली में किसानों के घर, खलिहान, खेती के साधन और किसान परिवार की परवरिश के लायक जमीन की नीलामी नहीं हो और किसानों को सहयोगी एवं सामूहिक खेती के लिए प्रोत्साहन दिया जाय—ये बातें किसानों की मांग में रखी गई। इससे किसान आंदोलन को एक ऊंचा धरातल मिला।

अखिल भारतीय किसान सभा का सबसे बड़ा सम्मेलन जे० पी० ने गया में किया। इसके सभापति आचार्य नरेन्द्रदेव थे। इसमें एक लाख किसान पूरे हिंदुस्तान से शामिल हुए थे। विहपुर में आगे प्रांतीय किसान सम्मेलन जे० पी० की ही अध्यक्षता में हुआ। वह कांग्रेस मंत्रिमंडल का जमाना था। और जे० पी० ने 'बकाश्त सत्याग्रह' छेड़ा था। खेड़ा का बकाश्त आंदोलन उनके ही योग्य नेतृत्व के कारण हिंदुस्तान भर में ख्याति प्राप्त कर सका।

मजदूरों के संगठन की हालत किसानों से कुछ अलग थी। जिस समय सी० एस० पी० का जन्म हुआ, उस समय हिंदुस्तान भर में तीन अखिल भारतीय मजदूर संस्थाएं थीं : 1—इंडियन ट्रेड्स यूनियन फेडरेशन, 2—आल इंडिया ट्रेड यूनियन कांग्रेस और 3—रेड ट्रेड यूनियन कांग्रेस परस्पर टकराती थीं। पार्टी ने तीनों को मिलाकर एक 'अखिल भारतीय मजदूर संघ' की स्थापना की। और जहां-जहां मजदूर असंगठित थे उन्हें संगठित करने का काम किया।

इस प्रसंग में पार्टी की ओर से जे० पी० ने स्पष्ट लिखा : 'पार्टी को मजदूरों की एकता पर दृढ़ विश्वास था और उसके लिए वह शुरू से ही काम करने लगी। जबतक यह एकता पूरी तरह कायम नहीं हो जाती तबतक आपने अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस के साथ ही काम करने को तय किया। पार्टी के अंदर जो मजदूर यूनियन बनाने वाले थे उनका संबंध ट्रेड यूनियन कांग्रेस से ही कराने का उसने निश्चय किया। मजदूरों की तीन संस्थाओं में ट्रेड यूनियन कांग्रेस को ही चुनकर पार्टी ने अपनी बुद्धिमत्ता का परिचय दिया, क्योंकि दो संस्थाएं उसी से फूटी थीं और अंततः उन्हें उसी में मिलना था।

अन्य मजदूर नेताओं ने आल इंडिया ट्रेड यूनियन कांग्रेस और नेशनल ट्रेड्स यूनियन फेडरेशन में एकता लाने की दिशा में प्रयत्न जारी रखे। आंदोलन में एकता लाने के लिए एन० एम० जोशी, हरिहरनाथ शास्त्री, आर० एस० रुईकर बी० विश्वनाथ और वी० वी० गिरि ने मिलकर महत्त्वपूर्ण प्रयत्न किए।

जयप्रकाश ने मजदूर आंदोलन का अधिक काम मुख्यतः बिहार में ही किया। अनेक स्थानों पर हड़तालों के दरम्यान काफी संख्या में पार्टी के सदस्य जेलों में गए। जे० पी० ने विशेष कर जमशेदपुर के लोहे के कारखाने में मजदूर आंदोलन को मजबूत नींव दी। सन् चालीस में जब तार कंपनी के मजदूरों ने हड़ताल की तब जयप्रकाश खुद जमशेदपुर गए और अपनी देखरेख में उस हड़ताल का संचालन किया। उस हड़ताल में एक बड़ी दुखद घटना घटी।

जिस समय मजदूर 'पिकेटिंग' कर रहे थे कंपनी के एक ड्राइवर ने अपनी गाड़ी पार्टी के एक बहादुर सदस्य, सरदार हजारासिंह, पर चढ़ा दी। सरदार की मृत्यु हो गई। इस बलिदान ने हड़ताल में ज्वाला फूंक दी। जे० पी० ने वहीं डेरा डाल दिया। अंततः अंग्रेजी साम्राज्यवाद और उसकी युद्धनीतियों के विरोध में भाषण देने के अपराध में जे० पी० गिरफ्तार किए गए और नौ महीने के लिए जेल में डाल दिए गए। इस बीच जे० पी० के साथ वामपंथियों का वैचारिक मतभेद शुरू हो रहा था।

गिरगांव रोड, बम्बई-4
दिनांक 5 सितम्बर, 1939

प्रिय जे० पी०

खेद है आपके खत से मेरे पल्ले और कुछ भी न पड़ा, सिवा इसके कि अपने आप में सोए हुए, अलग-थलग जैसे कि आप हैं, संतुलन भाव खो रहे हैं।

आप आंशिक आंदोलन को आदर्श मंडित कर रहे हैं। हम लोग इसी आंशिक आंदोलन के आधार पर जो होना है, हो चुके हैं। यह उतना मजदूर संगठन का काम नहीं है जितना कि उस वर्ग को संगठित करने की अनिवार्यता है जैसा कि हमारा राष्ट्रीय आंदोलन है जिसके कारण समाजवादी और साम्यवादी एकता की इच्छा उत्पन्न हुई है।

पर हम पाते क्या हैं, आप लोगों को एकसाथ काम करने की जैसे कोई परवाह ही नहीं है।

भारद्वाज जब से बम्बई से लखनऊ गया, नरेन्द्रदेव तबसे बिल्कुल मौन हैं। जे० पी० भारद्वाज को बिहार के किसी स्कूल में तै करना चाहते हैं, पर जे० पी० इसके बारे में कोई सूचना नहीं देते।

हमारा दुर्भाग्य है कि हम इतने अदने और ग्रात्मकेंद्रित हैं। लहरों पर सवारी करने के बजाय हम एक साथ तैर भी नहीं रहे हैं।

ग्राप मेरे खत को निराशाजनक बताते हैं, पर क्यों है, कारण नहीं बताते तो मैं इस तरह विवश हूं, न मैं अपनी गलतियां देख सकता हूं न ग्रापकी।

'फारवर्ड ब्लाक' के बारे में हम अध्ययन कर रहे हैं फिर कांग्रेस एकता के बारे में आप कहते हैं कि हम उतने ही संकीर्ण ढंग से सोच रहे हैं जितने कि वे लोग।'

ग्राशा है कि मेरा यह पत्र आपको ग्राहत नहीं करेगा। मैंने भयानक जल्दी में यह खत लिखा है।

प्रेम
आपका भाई
पी० सी० जोशी

जे० पी० ने 'कांग्रेस सोशलिस्ट' नामक ग्रंग्रेजी साप्ताहिक पत्रिका का प्रकाशन ग्रौर संचालन किया। इसके संपादक थे अशोक मेहता ग्रौर इसका कार्यालय था : 139, मेडोज स्ट्रीट, फोर्ट बंबई।

किसानों ग्रौर मजदूरों के अतिरिक्त साम्राज्यविरोधी शक्तियों के और भी कई वर्ग हैं जिनमें कार्य करना सी० एस० पी० ने प्रारंभ किया। जे० पी० ने पार्टी के कार्यों के ब्यौरे में इतने मुद्दों पर ध्यान आकृष्ट किया है : युवक संघ, महिला संघ, स्वयंसेवक संघ। जिससे कि वे पार्टी के कार्य-क्रम के समर्थक बन जायें। इसके निमित्त जयप्रकाश ने कई व्यावहारिक कार्य किए। उन्होंने ग्रंतर्राष्ट्रीय राजनीतिशास्त्र के स्तर की करीब पांच सौ पुस्तकों की तालिका बनाई है ग्रौर उन पुस्तकों में मुख्यतः मार्क्सवाद, मजदूर संगठन, क्रांतिदर्शन, समाजशास्त्र ग्रौर अर्थशास्त्र की महत्त्वपूर्ण पुस्तकों को चुनकर उनके अध्ययन का आग्रह किया है। उन पुस्तकों का अध्ययन पार्टी के लोगों के लिए अनिवार्य बनाया युवक उनके प्रति ग्राकृष्ट हों, इसके लिए उन्होंने जगह-जगह 'बुक क्लब' की स्थापना भी की।

इस संदर्भ में सुभाषचन्द्र बोस को जे० पी० का लिखा हुआ एक व्यक्तिगत पत्र महत्त्वपूर्ण है। खत ग्रंग्रेजी में है :

'प्रिय सुभाष बाबू,

कुछ दिनों पहले मैंने आपको लिखा था 'सोशलिस्ट बुक क्लब' के बारे में, जिसका मैं संगठन करना चाहता हूं। उसके नियम और उपनियमों को भी भेजा था। हम जानना चाहते हैं, क्या आप इसके संस्थापक और इसकी सलाहकार समिति के सदस्य बन सकते हैं ?

जिस दिन ग्रापको लिखा था उसी दिन मैंने जवाहरलाल नेहरू को भी 'केबिल' किया था इसकी सदस्यता के लिए। मुझे दुख है, उन्होंने हमारी

प्रार्थना को यह कह कर अस्वीकार कर दिया कि उन्हें इस योजना के बारे में पूरा ज्ञान नहीं है।

मैं पच्चीस तारीख को कलकत्ता में होऊंगा और क्लब के लिए धन इकट्ठा करने के निमित्त कुछ दिन रहूंगा। मुझे आपके सहयोग की पूरी आशा है।

सादर, आपका
जयप्रकाशनारायण

इसी प्रसंग में पार्टी की ओर से किए गए कुछ 'अध्ययन शिविर' उल्लेखनीय हैं। यही नहीं, नौजवानों और अन्य राष्ट्रीय संस्थाओं में काम करने वाले कार्यकर्त्ताओं के लिए पार्टी ने एक नये प्रकार का आयोजन प्रारंभ किया। पार्टी ने देश के भिन्न-भिन्न भागों में अस्थायी राजनीतिक विद्यालय खोले जो लगभग एक महीने तक चलते थे और जिनमें राजनीति और समाजशास्त्र के हर पहलू पर योग्य विद्वानों के व्याख्यान होते थे। ऐसे ही विद्यालयों में एक विद्यालय बिहार में सोनपुर में खुला जिसका नाम था 'राजनीतिक ग्रीष्म विद्यालय' जिसके आचार्य स्वयं जयप्रकाश थे। इसमें नरेन्द्रदेव भी व्याख्याता थे। 'जनतंत्र' और मानवतावाद समाजवाद के मूलाधार हैं, यही मूल दृष्टि थी उस विद्यालय के प्रशिक्षण की।

दूसरा बड़ा अध्ययन शिविर पंद्रह मई से लेकर इकत्तीस मई (सन् सैंतीस) तक अल्मोड़ा में आयोजित हुआ। इसके संयोजक थे यूसुफ मेहरअली। अल्मोड़ा से साढ़े आठ मील दूर शैल आश्रम में, आर० एस० पंडित के बंगले पर यह अध्ययन-शिविर सत्रह दिनों तक चला था। इसमें व्याख्याता थे : जवाहरलाल नेहरू, नरेन्द्रदेव, कमलादेवी, सम्पूर्णानन्द, डा० लोहिया, अच्युत पटवर्धन, अशोक मेहता, मसानी और जयप्रकाश।

मई-जून उनतालीस में लखनऊ के कान्यकुब्ज कॉलेज में एक बृहद् समाजवादी प्रशिक्षण शिविर का आयोजन किया गया। इसमें लगभग एक सौ कार्यकर्त्ताओं और विद्यार्थियों ने मार्क्सवाद तथा देश की विभिन्न समस्याओं का अध्ययन किया।

समाजवादी विचारों और दृष्टिकोणों को प्रसारित करने के लिए लखनऊ में नरेन्द्रदेव के ही संपादकत्व में 'संघर्ष' नामक हिंदी साप्ताहिक प्रकाशित होना शुरू हुआ।

तेईस-चौबीस दिसम्बर, सन् छत्तीस के फैजपुर पार्टी अधिवेशन में जिसकी अध्यक्षता जयप्रकाशनारायण ने की थी, चार प्रस्ताव पास हुए थे। सत्यवतीदेवी का प्रस्ताव : 'किंग्स कारोनेशन' का बहिष्कार। श्रीमती रजनी मुकर्जी का प्रस्ताव : हिंदुस्तान का किसी भी युद्ध में भाग लेने के प्रति विरोध। मोहनलाल कुलकर्णी का प्रस्ताव : समस्त राजनीतिक बंदियों की रिहाई। और डा० राममनोहर लोहिया का प्रस्ताव : पार्टी के विचारों और सिद्धांतों को प्रचारित करने के लिए चुनाव मंच का इस्तेमाल।

इसी तरह बारह-तेरह अप्रैल, सन् अड़तीस के लाहौर पार्टी के अधिवेशन में, जिसकी अध्यक्षता एम० आर० मसानी ने की, पहली बार कांग्रेस का तिरंगा और सी० एस० पी० का लाल झंडा जयप्रकाश द्वारा साथ-साथ फहराए गए थे।

पहली बार इस तरह दोनों झंडे क्यों फहराए गए। जे० पी० ने इसका कारण बताया : दोनों झंडों में कोई फर्क नहीं है, क्योंकि दोनों झंडों का एक ही लक्ष्य है। देश के स्वतंत्रता-संग्राम को शक्तिशाली करना। पहले इन झंडों के बीच असहमतियां हुई हैं पर बाद में क्रमशः हमने पाया कि स्वतंत्रता-संग्राम हमें तिरंगे झंडे के नीचे ही रहकर लड़ना है। यह सरासर गलत है कि समाजवादी तिरंगे झंडे का सम्मान नहीं करते। वस्तुतः हम तिरंगे झंडे के नीचे आजादी की लड़ाई लड़ रहे हैं और लाल झंडे के नीचे समाजवाद फैला रहे हैं।'

इस अधिवेशन में मुख्यतः दो प्रस्ताव पास हुए। अच्युत पटवर्धन द्वारा कांग्रेसी मंत्रियों के कार्यों के मूल्यांकन का प्रस्ताव तथा ट्रेड यूनियन कांग्रेस तथा नेशनल ट्रेड यूनियन फेडरेशन को मिलाकर सिर्फ आल इंडिया ट्रेड यूनियन कांग्रेस के निर्माण पर बधाई का प्रस्ताव। डा० राममनोहर लोहिया द्वारा, अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियों, विशेषकर विश्वयुद्ध की स्थिति को राष्ट्रीय हितों में इस्तेमाल करने का प्रस्ताव भी था।

5

और पहली सितंबर, उन्नीस सौ उनतालीस को द्वितीय महायुद्ध शुरू हो गया। जर्मनी ने पोलैंड पर चढ़ाई कर दी। संयोग से उन दिनों पार्टी के प्रमुख सदस्य एक मीटिंग के सिलसिले में पटने में ही थे। लड़ाई की खबर होते ही पार्टी की ओर से एक आम सभा 'अंजुमन इस्लामिया हाल' में बुलाई गई, जिसका सभापतित्व आचार्य नरेन्द्रदेव ने किया। उस सभा में प्रथम वक्ता के रूप में जयप्रकाश ने कहा : 'यह युद्ध साम्राज्यवादी युद्ध है। हम इसका विरोध करेंगे। आज हम सभा करके इसका ऐलान कर रहे हैं। वक्त आएगा जब हमें सभा भी नहीं करने दी जाएगी, तब हम सड़कों पर, गली के नुक्कड़ों पर यहां तक कि घरों की छतों पर से यही ऐलान करेंगे और इस मौके का फायदा उठाकर हम अपने को आजाद करने की कोशिश करेंगे।'

इसके बाद ही पार्टी की कार्यसमिति की बैठक लखनऊ में हुई और घोषणा प्रकाशित की गई जिसमें इस युद्ध के साम्राज्यवादी स्वरूप पर विस्तृत प्रकाश डाला गया और स्पष्ट कह दिया गया कि पार्टी इस युद्ध में किसी तरह का सहयोग नहीं कर सकती, बल्कि पार्टी इसका प्रबलतम विरोध करेगी और इसके नतीजों को भुगतने को भी तैयार रहेगी। वर्धा में पार्टी की कार्यसमिति जब बैठी तो उसने अपनी इस घोषणा को कार्य में लाने के लिए एक कार्य-क्रम तैयार किया :

(1) युद्ध विरोधी प्रचार जोरों से चलाना। इस सिलसिले में सार्वजनिक और राजनीतिक हड़तालों का संगठन करना।

(2) स्थानीय कांग्रेस कमेटियों को युद्ध विरोधी कार्य के लिए सक्रिय बनाना।

(3) पंजाब और बंगाल के सूबों में जहां आर्डिनेंसों के लागू होने से युद्ध विरोधी कार्य करना कठिन ही नहीं, असंभव हो चला है, जनता के उत्साह में

शिथिलता का आना रोकने के लिए पार्टी के सदस्यों द्वारा कानून का भंग करना और आर्डिनेंस की हुकूमत के खिलाफ सार्वजनिक आंदोलन खड़ा करना ।[1]

(4) कांग्रेसी सूबों में, जिनमें अब भी मंत्रिमंडल काम कर रहे हैं, अगर पार्टी के सदस्यों पर किसी खास काम के विरुद्ध, जिसका करना उनके लिए जायज हो, रोक लगा दी जाय तो इस प्रकार की पाबंदी का उल्लंघन करना ।

(5) स्वयंसेवकों की भरती के काम को आगे बढ़ाना ।

(6) पार्टी के अन्य साधारण कार्यों को जारी रखना, विशेषकर किसानों और मजदूरों के मोर्चे पर ।

और इस कार्यक्रम को चलाने के लिए पार्टी ने एक युद्धसमिति भी गठित की । उसी समय, वर्धा में ही, कांग्रेस की कार्यसमिति की भी बैठक हो रही थी और जयप्रकाश उसमें विशेषरूप से आमंत्रित किए गए थे । कार्यसमिति की बैठक में क्या हुआ, वह जयप्रकाश के ही शब्दों में उल्लेखनीय है :

'देश के सामने तीन नीतियां थीं । पहली थी महात्मा गांधी की नीति, जो ब्रिटेन को बिना शर्त सहायता देने के पक्ष में थी, यद्यपि वह सहायता सिर्फ नैतिक सहायता थी । दूसरी नीति हमारी पार्टी की थी, युद्ध का और ब्रिटिश सरकार का, जो हिंदुस्तान को उसमें घसीट रही थी, बिना शर्त के विरोध करना । इसका अर्थ अविलंब जन-संग्राम था । तीसरी बीच की नीति कांग्रेस कार्यसमिति की थी जो कि वस्तुतः इन दोनों नीतियों का समझौता थी । (यद्यपि जानबूझकर दोनों नीतियों में समझौता करने का प्रयत्न नहीं किया गया था) । कार्यसमिति ने ब्रिटिश सरकार से अपने युद्ध-संबंधी उद्देश्यों की घोषणा करने की मांग की थी विशेषकर हिंदोस्तान के संबंध में और इस शर्त पर अपने को युद्ध से संबंधित करने का वादा किया था कि इन उद्देश्यों का लक्ष्य साम्राज्य और उसके बाहर साम्राज्यवाद और फासिज्म का नाश करना हो । इस नीति का भी तर्कसंगत परिणाम सत्याग्रह ही था (क्योंकि ब्रिटेन इस युद्ध में उक्त प्रकार के उद्देश्यों से प्रेरित नहीं रहा है), लेकिन बहुत कुछ अनिश्चित रूप में ।'

कांग्रेस कार्यसमिति ने युद्ध के उद्देश्यों की घोषणा के लिए अंग्रेजी सरकार से अनुरोध किया वह ठुकरा दिया गया । फलतः कांग्रेसी मंत्रिमंडलों ने इस्तीफे दे दिए । और अब सिवा सत्याग्रह के और कोई उपाय कांग्रेस के सामने नहीं रह गया । इस नवीन परिस्थिति में जयप्रकाश ने पार्टी के प्रधानमंत्री की हैसियत से पार्टी के कार्यकर्त्ताओं के सामने निम्नलिखित कार्यक्रम रखे :

(1) सभाओं, प्रदर्शनों, हड़तालों, रैलियों, नोटिसों और पुस्तिकाओं के जरिए युद्ध विरोधी प्रचार । युद्ध का साम्राज्यवादी स्वरूप समझाया जाना चाहिए ।

(2) कांग्रेस और संविधान-परिषद् (कांस्टीच्युट असेंबली) की स्थिति के संबंध में प्रचार । कांग्रेस के जरिए राष्ट्रीय एकता के स्पष्टीकरण पर जोर दिया जाना चाहिए और साम्राज्यशाही के हथियार बनकर प्रतिक्रियावादी तथा संप्रदायवादी जिस प्रकार देश की उन्नति के मार्ग में रुकावट डाल रहे हैं उसकी पोल भी खोलना जरूरी है । स्वराज्य पंचायत के स्वरूप की व्याख्या और उसके

अर्थ को तोड़ने मरोड़ने की कोशिशों की आलोचना और विरोध होना चाहिए। स्वराज्य पंचायन के क्रांतिकारी महत्त्व पर जोर दिया जाना चाहिए।

(3) मुसलमानों तथा दूसरे प्रकार की अल्पसंख्यक जनता के बीच प्रचार पर विशेष ध्यान।

(4) देशव्यापी सविनय अवज्ञा आंदोलन चलाने के लिए प्रचार खासकर कांग्रेसजनों में सविनय अवज्ञा के अंतर्गत लगान, मालगुजारी तथा दूसरे प्रकार की करबंदी पर जोर देना चाहिए।

(5) लगानबंदी और करबंदी आंदोलनों के लिए प्रचार और संगठनात्मक तैयारियां।

(6) जनसंग्राम के लिए स्वयंसेवकों की भर्ती और उनके शिक्षण का प्रबंध। स्वयंसेवकों की प्रतिज्ञा और उनका शिक्षण किसी समूह विशेष की मनोवृत्ति से नहीं होना चाहिए। जहां कहीं संभव हो, कांग्रेस कमेटियों को इस कार्य को हाथ में लेने के लिए तैयार होना चाहिए।

(7) कांग्रेस कमेटियों को सक्रिय बनाना। चवन्नी के सदस्यों और मंडल कमेटियों के पास पहुंचने की कोशिश करनी चाहिए।

(8) किसानों और मजदूरों के आंदोलन को आगे बढ़ाना। बाजार दर की बढ़ती, संगठन पर रोक और मजदूर आंदोलन में भाग लेने वाले जंगजू कार्यकर्त्ताओं को क्षेत्र से हटाने की कोशिशों आदि को लेकर छोटी-छोटी लड़ाइयों को जोरदार बनाना।

(9) विद्यार्थियों में कार्य। विद्यार्थियों को इस बात के लिए तैयार करना चाहिए कि मुल्क की आजादी की लड़ाई शुरू होने पर वे सामूहिक रूप में पढ़ाई छोड़कर उसमें सम्मिलित हों।

(10) अनुशासन का पालन करते हुए रचनात्मक कार्यक्रम को पूरा करने में भाग लेना।

किंतु, एक ओर जहां जयप्रकाश और उसकी पार्टी युद्ध विरोध को ऊंचे से ऊंचे स्तर पर पहुंचाने और साम्राज्यवाद पर अंतिम सफल धावा करने के लिए देश को तैयार करने के प्रयत्न में लगी थो, वहां देश के दुर्भाग्य से, देश के राजनीतिक मंच पर कुछ लोग अजीब धमाचौकड़ी मचा रहे थे। महायुद्ध के पहले त्रिपुरी कांग्रेस हुई, जिसके सभापति दूसरी बार श्री सुभाषचन्द्र बोस चुने गए। सुभाष के चुने जाने में पार्टी का भी बड़ा हाथ था। पार्टी ने पूरी ताकत लगाकर डा० पट्टाभि सीतारामैया के विरुद्ध उनके विजयी होने में मदद की। किंतु उनके चुने जाने के बाद ही महात्मा जी ने डा० पट्टाभि की हार को अपनी हार बताया और कार्यसमिति के गांधीवादी सदस्यों ने इस्तीफे दे दिए। जयप्रकाश ने गांधी जी और उनके अनुयायियों के इस काम को पसंद नहीं किया और एक वक्तव्य देकर मिल जुलकर काम करने की नीति पर जोर डाला। किंतु इस विजय के बाद श्री सुभाष के इर्द-गिर्द जो लोग एकत्र हुए, वे भी गांधी वादियों को निकाल बाहर करने पर जैसे तुले हुए थे। इस विकट परिस्थिति में में त्रिपुरी कांग्रेस हुई। दोनों पक्षों की खींचातानी से मालूम होता था, अब कांग्रेस टूट कर रहेगी। पार्टी हमेशा संयुक्त मोर्चे की हिमायत करती आई थी।

जयप्रकाश ने दोनों पक्षों में सुलह कराने की पूरी कोशिश की लेकिन जब झगड़ा नहीं सुलझा, तो इस झगड़े से अपने को सर्वथा तटस्थ कर लिया।

त्रिपुरी में गांधीवादियों की जीत हुई। त्रिपुरी के बाद जब कलकत्ता में अखिल भारतीय कांग्रेस कमिटी की बैठक हुई, जयप्रकाश ने फिर दोनों पक्षों में सुलह कराने की कोशिश की और गांधीवादी यह मान गए कि श्री सुभाष सभापति और पंडित जवाहरलाल प्रधान मंत्री रहें और पांच वामपक्षी कार्य-समिति में लिये जायें। सुभाष का सभापतित्व और जवाहरलाल का मंत्रित्व अंतर्राष्ट्रीय परिस्थिति को देखते हुए पार्टी को बहुत उपयुक्त जंचा, किंतु सुभाष के पक्ष ने इसे स्वीकार नहीं किया। उसके बाद ही सुभाष ने फारवर्ड ब्लाक नाम से एक दल बनाया और देश में दौरे शुरू किए। कांग्रेस गृहयुद्ध का अखाड़ा बन गई। रामगढ़ कांग्रेस के मुकाबले में वहीं पर समझौता विरोधी सम्मेलन का आयोजन किया गया और नई कांग्रेस बनाने की बातें भी उठाई गईं। इस अवसर पर, मार्च, 1940 में, जयप्रकाश ने एक लेख लिखकर इस परिस्थिति की गुत्थी सुलझाने की कोशिश की :

'इस समय एक विचित्र वातावरण बन गया है। राजनीतिक हवा दूषित हो गई है। तरह-तरह के सवाल कार्यकर्त्ताओं को परेशान कर रहे हैं। कई तरह की बातें उन्हें कही जा रही हैं। कहीं काली झंडियां दिखाई जा रही हैं तो कहीं आग लगाई जा रही हैं। तरह-तरह के इल्जाम एक-दूसरे पर लगाए जा रहे हैं। इस बात का खतरा नजर आ रहा है कि 54 वर्षों की संकलित शक्ति आज छिन्न-भिन्न न हो जाए। कुछ लोगों को यही ख्याल प्रेरित कर रहा है कि कांग्रेस को लात मारकर निकल जाने से ही ब्रिटिश साम्राज्यशाही का ध्वंस हो जाएगा। कुछ लोग अभी से ही एक दूसरी कांग्रेस का स्वप्न देख रहे हैं। कुछ इसके प्रतिद्वन्द्वी स्वरूप एक नई स्वराज्य पार्टी बनाकर आने वाले चुनाव में खड़ा होना चाहते हैं और अगर अपना बहुमत बना सके तो वे मंत्रिमंडल भी कायम भी कर सकेंगे। कहीं हम देखते हैं कि कांग्रेस विरोधी शक्तियों जैसे हिंदूसभा, मुस्लिमलीग, आदिवासी आंदोलन आदि को प्रोत्साहन मिल रहा है।

'दूसरी तरफ एक और ही चित्र है। कांग्रेस मिनिस्ट्रियों के वापस आने की तारीख कहीं मुकर्रर हो रही हैं, कहीं केन्द्रीय सरकार के मंत्रियों के नाम तय हो रहे हैं। कहीं ब्रिटिश सरकार से समझौते की शर्तें निश्चित हो रही हैं और कहीं स्वराज्य पंचायत के क्रांतिकारी रूप को विकृत कर उसे एक गोल-मेज सम्मेलन का रूप दिया जा रहा है।

संसार के वर्तमान व्यक्तियों में सबसे बड़े होने के नाते महात्मा गांधी के कंधों पर बहुत बड़ा बोझ है। इस समय उनकी मुट्ठी में न सिर्फ 35 करोड़ भारतीयों का ही भाग्य है, बल्कि संसार के भविष्य के भी एक बड़े अंश को बनाने या बिगाड़ने की जिम्मेदारी उन पर है। इतिहास बड़ी कड़ाई के साथ उनकी जांच करेगा जैसा कि वह उन सभी की करता है जिन पर संकट के समय किसी बड़े काम की जिम्मेदारी रहती है। कर्नल हाउस ने लिखा है कि विल्सन महोदय वेल्स के जादूगर, लायड जार्ज, के प्रति कम से कम सशंक जरूर थे। महात्मा गांधी को वायसराय की सचाई में विश्वास है। इसलिए उन्हें दोहरी

होशियारी की जरूरत है। अगर वे चैंबरलेन के साथ समझौता करेंगे तो वे स्वतंत्रता और प्रजातंत्र, शांति और न्याय के हत्यारे के साथ समझौता करेंगे इस युद्ध के गर्भ में ऐसी ताकतें पैदा हो रही हैं जो चैंबरलेन और जिस व्यवस्था का वे प्रतिनिधित्व करते हैं उसे खत्म कर देंगी। उस मरती हुई व्यवस्था के साथ समझौता करके हम उसमें नई जान डालने की क्यों कोशिश करें?

किंतु पार्टी और जयप्रकाश के लिए यह वादविवाद ही सब कुछ नहीं था। वहऔर उनके साथी युद्ध विरोधी कार्यों को करते हुए देश को अंतिम मोर्चे के लिए तैयार करने में जीजान से लग पड़े थे। अंग्रेजी सरकार इसे भला किस तरह बर्दाश्त कर सकती थी? उनके बहुत से साथी भिन्न-भिन्न प्रांतों में गिरफ्तार कर लिए जाने लगे। अंततः जयप्रकाश को भी जमशेदपुर में किए गए एक युद्ध विरोधी भाषण के जुर्म में रामगढ़ कांग्रेस (1940) के पहले ही गिरफ्तार कर लिया गया। मजिस्ट्रेट के सामने जयप्रकाश ने जो बयान दिया, वह उनके युद्ध विरोधी विचारों का दस्तावेज है:

'मुझ पर यह दोष लगाया गया है कि मैंने युद्ध को सफल बनाने के लिए जिन अस्त्र-शस्त्रों और दूसरे जरूरी सामानों की आवश्यकता है उनके बनने में रोड़ा अटकाने की कोशिश की है और हिंदोस्तान की रक्षा के लिए जनता के जिस रुख और मनोवृति की जरूरत है उस पर विरोधी प्रभाव डालने की चेष्टा की है। मैं इस दोष को सानंद स्वीकार करता हूं।'

'क्योंकि इस दोष को मैं अपराध नहीं समझता बल्कि अपना कर्त्तव्य समझता हूं और उसके लिए मिलने वाली सजा को हंस-हंसकर झेलने को तैयार हूं। तलवार की ताकत पर कायम रहने वाली विदेशी हुकूमत के कानून इसको जुर्म समझते हैं, इसकी मुझे कोई परवाह नहीं। इन कानूनों का उद्देश्य उस राष्ट्रीय भारत के लक्ष्यों के सर्वथा विपरीत है जिसका मैं एक तुच्छ प्रतिनिधि हूं। यह स्वाभाविक ही है, हमारी मुठभेड़ उस कानून से हो।

'मेरा देश इस महायुद्ध में किसी भी रूप में हिस्सा लेने को तैयार नहीं है, क्योंकि वह जर्मन नाजीवाद और अंग्रेजी साम्राज्यवाद दोनों को अपना दुश्मन समझता है। वह साफ देख रहा है कि दोनों तरफ के लोग इस युद्ध में विजय और प्रभुत्व, शोषण और अत्याचार के स्वार्थपूर्ण गर्हित उद्देश्य के लिए लड़ रहे हैं। अंग्रेज इसलिए नहीं लड़ रहे हैं कि वे उस नाजीवाद का नाश चाहते हैं जिसे उन्होंने पाल-पोस कर बढ़ाया है, बल्कि वे अपने एक प्रतिद्वन्द्वी को कुचल देना चाहते हैं जो अब उनसे आंखें मिलाने की जुर्रत कर रहा है। वे संसार में अपनी प्रभुता बनाए रखना चाहते हैं और अपनी साम्राज्यवादी शक्ति और गौरव पर आंच नहीं आने देना चाहते हैं। जहां तक भारत से संबंध है, अंग्रेज अपने भारतीय साम्राज्य को कायम रखने के लिए लड़ रहे हैं।

'यह साफ है कि भारत ऐसी लड़ाई से कोई संबंध नहीं रख सकता। कोई भी भारतीय अपने देश के साधनों का उपयोग साम्राज्यवाद की रक्षा करने के लिए होने देना नहीं चाहेगा, क्योंकि ऐसा होने देना अपनी गुलामी की जंजीर को मजबूत बनाना है। राष्ट्रीय भारत की एक मात्र संस्था के रूप में कांग्रेस ने देशवासियों का ध्यान इस पवित्र कर्त्तव्य की ओर आकृष्ट किया है। कांग्रेस

के एक तुच्छ सेवक की हैसियत से मैंने उस कर्त्तव्य की पूर्ति मात्र करने की कोशिश की है।

'इसके विपरीत अंग्रेजी सरकार ने भारतीयों की सम्मति को बेरहमी से ठुकरा कर हिन्दोस्तान के इस युद्ध में शामिल होने की घोषणा कर दी है और हमारे स्पष्ट विरोध पर जरा भी ध्यान नहीं देकर हमारे देश के धन-जन और सामानों का उपयोग कर रही है। यह हमारे देश पर वैसा ही क्रूर आक्रमण है जैसा जर्मनी का पोलैंड पर। हिंदोस्तान इस आक्रमण का सामना करेगा ही। आज हर हिंदोस्तानी का यह देशभक्तिपूर्ण कर्त्तव्य हो गया है कि वह साम्राज्यवादी उद्देश्यों के लिए की जाने वाली हमारे देश के धन-जन के उपयोग की चेष्टा का खुलेआम विरोध करे। इसलिए मुझपर युद्ध में बाधा डालने का जो दोष लगाया गया है, वह तो मेरे देशभक्तिपूर्ण कर्त्तव्य का पालन मात्र है। जिसे देशभक्त भारतीय अपना कर्त्तव्य समझते हों, उसे अपराध करार देकर यह अंग्रेजी सरकार अपने साम्राज्यवादी रूप का आप ही ढिंढोरा पीट रही हैं।

'मैं कह नहीं सकता कि मेरे इस व्याख्यान ने अपने उद्देश्य में कहां तक सफलता पाई है। किन्तु मुझे सबसे बड़ी खुशी तब होगी जब मुझे यह मालूम हो जाय कि मेरे इस व्याख्यान ने सचमुच युद्ध के सफलतापूर्वक संचालन करने में बाधा पहुंचाई है। अपनी इस सफलता के लिए मैं सबसे बड़ी सजा भी हंसते-हंसते भुगतने को तैयार हूं।

'भारत की रक्षा में बाधा डालने का दोष मुझ पर लगाया गया है. इस उपहास पर क्या कहा जा सकता है भला? लेकिन याद रखिए गुलाम अपनी जंजीर की रक्षा करने के लिए बाध्य नहीं है। उसका कर्त्तव्य तो उसे इस बात के लिए बाध्य करता है कि वह उस जंजीर को तोड़ डाले। जब हम आजादी हासिल कर लेंगे; तो दुनिया देख लेगी हम अपने देश की रक्षा किस शान से करते हैं।'

6

जिस समय कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी कायम हुई, देश में चार पार्टियां ऐसी थीं, जो अपने को समाजवादी बतलाती थीं; वे थीं, कम्युनिस्ट पार्टी, एम० एन० राय ग्रुप, पंजाब सोशलिस्ट पार्टी और बंगाल लेबर पार्टी। जयप्रकाश, नरेन्द्रदेव तथा पार्टी के अनेक नेता और कार्यकर्ता समाजवादी शक्तियों के मेल और साम्राज्यवाद के विरुद्ध संयुक्त मोर्चे के सिद्धांत को मानते थे। जयप्रकाश भारत के कम्युनिस्टों से अपना मेल बढ़ाकर और कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी के साथ उनके सहयोग को दृढ़ कर उन्हें ठीक रास्ते पर लाना अपना कर्तव्य समझते थे। इन दोनों नेताओं की राय से जनवरी, सन् छत्तीस के अपने मेरठ अधिवेशन में सी० यस० पी० ने अपने को मार्क्सवादी घोषित किया और साम्यवादियों को सहयोग के लिए आमंत्रित किया।

कम्युनिस्ट पार्टी शुरू से ही कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी से वैरभाव रखती थी। इसको वे लोग मार्क्सवादी या समाजवादी पार्टी मानने को तैयार न थे।

वे इसे बुर्जुआ सुधारवाद का वामपक्ष और गांधीवाद की एक टुकड़ी मानते थे और इसके अस्तित्व को समाजवाद के लिए हानिकर समझते थे ।

पर योरुप में सन् पैंतीस में फासिस्ट और नाजीवाद का मुकाबला करने के लिए बुर्जुआ जनतांत्रिक और सुधारवादी समाजवादी शक्तियों से कम्युनिस्ट पार्टियों का संयुक्त मोर्चा कम्युनिस्ट इंटरनेशनल ने जरूरी समझा । उस सम्मेलन में यह भी कहा गया कि हिंदुस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी ने राष्ट्रीय आंदोलन से अलग रहकर बहुत भूल की है । तभी यहां के साम्यवादियों ने संयुक्त मोर्चे की बात सोची । और संयुक्त राष्ट्रीय मोर्चे के पक्ष में पोलिट ब्यूरो के वक्तव्य प्रकाशित होने लगे । जयप्रकाश ने अपनी पार्टी का दरवाजा उनके लिए खोल दिया । नम्बूदरीपाद, के० गोपालन, पी० सुन्दरैया, पी० राममूर्ति, जेड अहमद, मुहम्मद अशरफ, सज्जाद जहीर और बाटलीवाला आदि अनेक कम्युनिस्ट कांग्रेस के साथ-साथ, कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी में शामिल हुए । उनके चार सदस्यों को अपनी कार्यसमिति में लेकर सी० यस० पी० ने अपनी सदिच्छा का पक्का सबूत दिया । नम्बूदरीपाद ने कई वर्ष तक सी० यस० पी० के संयुक्त मंत्री की हैसियत से भी काम किया ।

पर कम्युनिस्टों का दिल साफ नहीं था । वे पार्टी के मंच को अपनी पार्टी का मंच बनाने में जरा भी नहीं हिचकते । पीठ पीछे सी० यस० पी० को वामपक्ष की आड़ में पूंजीपतियों की चालबाजी कहकर इसके प्रति विश्वासघात करते । उनके ऐसे व्यवहार से पार्टी में गहरा असंतोष पैदा हुआ । मीनू मसानी और अशोक मेहता ने कम्युनिस्टों की गतिविधियों का विरोध किया । अच्युत पटवर्धन और डाक्टर लोहिया ने उनके विरोध को पुष्ट किया । एक बार तो चारों ने मिलकर पार्टी की राष्ट्रीय समिति की सदस्यता से इस्तीफा भी दे दिया ।

कम्युनिस्टों ने अड़तीस में पार्टी के लाहौर अधिवेशन के अवसर पर सारी पार्टी पर छा जाने और उसपर अपना प्रभुत्व जमाने की भरसक कोशिश की । इस अधिवेशन में उन्होंने अपनी थीसिस पेश की जिसमें उन्होंने सी० यस० पी० को वामपक्षीय एकता के मंच में बदलने का प्रयास किया । इसके जवाब में नरेन्द्रदेव, अच्युत, अशोक, कमलादेवी ने दूसरी थीसिस पेश की । जिसमें इस बात पर जोर दिया गया कि सी० यस० पी० को अपनी सुनिश्चित नीति और कार्यक्रम के आधार पर एक पार्टी की हैसियत से काम करना चाहिए । सम्मेलन ने कम्युनिस्टों की थीसिस को नामंजूर करके अपनी थीसिस (जिसे अच्युत पटवर्धन ने तैयार किया था) को मंजूर किया । इस हार के बाद कम्युनिस्टों ने सम्मेलन में अपनी नई कार्यसमिति की एक सूची पेश की । पर इसे भी सम्मेलन ने नामंजूर कर दिया । पुराने नेतृत्व के हाथ में ही पार्टी का संचालन उचित समझकर उन्हें ही कार्यसमिति का सदस्य चुना गया । उसी समय सम्मेलन में मसानी ने कम्युनिस्टों का एक गुप्त परिपत्र प्रकट किया जिसमें ब्यौरेवार यह बताया गया था कि किस प्रकार सी० यस० पी० पर पूरा कब्जा किया जा सकता है ।

जयप्रकाश कम्युनिस्टों के इस व्यवहार से काफी दुखी हुए । फिर भी समाजवादी एकता को ध्यान में रखते हुए उन्होंने उनसे समझौते करने चाहे ।

जे० पी० की इस नीति से असंतुष्ट होकर अच्युत पटवर्धन, मसानी, लोहिया कमलादेवी ने पार्टी की कार्यसमिति से इस्तीफा दे दिया। जयप्रकाश ने मान लिया कि सी० यस० पी० में कम्युनिस्टों को शामिल करना गलत हुआ। इससे लाभ के बजाय हानि ही हुई।

ज्यों ही द्वितीय महायुद्ध शुरू हुआ। कम्युनिस्ट पार्टी ने एक नई थीसिस जारी की जिसमें यह स्पष्ट उल्लेख किया गया कि सी० यस० पी० रूस की बोलशेविक पार्टी की तरह से है, अर्थात् यह क्रांति विरोधी पार्टी है। इसका नाश होना चाहिए। इसी थीसिस में उन्होंने सुभाषचन्द्र बोस के फारवर्ड ब्लाक को 'अग्रगामी' के बदले 'पीछे भागने वाला दल' घोषित किया और उनकी नजर में कांग्रेस फिर 'अंग्रेजों की दासी' बन गई थी। इस थीसिस के बाद अब सोच-विचार की भी जरूरत नहीं रह गई थी। चालीस में रामगढ़ कांग्रेस के अवसर पर जब पार्टी की कार्यसमिति बैठी तो उसने कम्युनिस्टों को पार्टी से निकाल बाहर करने का प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकार किया।

कोमिंटर्न से निकाले जाने के बाद सन इकतीस में एम० एन० राय भारतवर्ष आए और कम्युनिस्ट पार्टी के अंदर उनके जो समर्थक थे उन्हें लेकर राय ग्रुप तैयार किया। इस ग्रुप के कायम होने के थोड़े दिनों बाद ही वे गिरफ्तार कर लिए गए। जब सी० एस० पी० कायम हुई, उस समय राय जेल में थे। सन् छत्तीस के अंत में राय जेल से छूटे तो उन्होंने सी० एस० पी० से पूरी सहानुभूति ही नहीं प्रकट की, बल्कि उसमें शामिल होने की बातचीत भी वे चलाने लगे। पर ज्यों-ज्यों दिन बीतते गए, उनका रुख बदलता गया। 'कांग्रेस के भीतर कोई पार्टी नहीं होनी चाहिए. कांग्रेस कमेटियों से अलग कोई किसान-सभा नहीं बननी चाहिए, ऐसे-ऐसे वक्तव्य उनके निकलने लगे। इसके बाद समय आया असेंबलियों के चुनाव का। पार्टी कांग्रेस द्वारा मंत्रिमंडल बनाए जाने के खिलाफ थी। पर राय कुछ शर्तों के साथ उसके पक्ष में थे। फलतः पार्टी को उनके खिलाफ वोट देने पड़े। इस पर नाराज होकर उन्होंने अपने अनुयायियों को पार्टी से अलग होने का फर्मान दे डाला। जयप्रकाश ने इस पर लिखा है :

'शायद उन्हें अब अच्छी तरह मालूम हो गया कि कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी उनके हाथों का खिलौना नहीं बन सकती, न ऐसा मंच ही बन सकती है जिस पर चढ़कर वह अपनी इच्छित प्रसिद्धि का छोर छू सकें।'

पार्टी से अलग होकर राय ग्रुप ने त्रिपुरी में सुभाषचन्द्र बोस से मिलकर 'समानांतर नेतृत्व के सिद्धांत की आजमाइश की। फिर कांग्रेस से निकल कर रेडिकल पार्टी बनाई।

बंगाल की लेबर पार्टी ने शुरू से ही पार्टी के खिलाफ रुख रखा। किंतु जयप्रकाश ने उसे हमेशा मिलाने की कोशिश की। उन्हीं के प्रयत्नों से बंगाल कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी और बंगाल लेबर पार्टी का समझौता हुआ। इसके लिए एक संयुक्त कमेटी भी बनाई गई। पर थोड़े ही दिनों बाद लेबर पार्टी कम्युनिस्ट पार्टी से मिल गई और फिर वहां से हटकर 'फारवर्ड ब्लाक' के साथ गठबंधन किया। आगे वह पार्टी बंगाल कांग्रेस में विलुप्त हो गई।

पंजाब सोशलिस्ट पार्टी मुख्यतः पंजाब की 'नौजवान भारत सभा' के सदस्यों

से बनी थी। इसी सभा में सरदार भगतसिंह थे। यह पार्टी कांग्रेस के प्रति अच्छा रुख नहीं रखती थी। इसके साथ काम करने में पार्टी को कुछ सैद्धांतिक कठिनाइयां हुईं। पर धीरे-धीरे उसके सदस्य पार्टी में सम्मिलित होते गए और कुछ ही दिनों में पंजाब सोशलिस्ट पार्टी, पंजाब कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी में विलीन हो गई।

सिर्फ एक प्रश्न अभी और है। पार्टी के साथ सुभाषचन्द्र बोस और उनके 'फारवर्ड ब्लाक' से कैसे क्या संबंध रहे ?

जिस समय सी० एस० पी० बनी, सुभाषचन्द्र बीमारी के कारण योरुप में थे। वहीं से 'इंडियन स्ट्रगल' नामक एक पुस्तक प्रकाशित की जिसमें फासिज्म की प्रशंसा थी। बीमारी से अच्छे होने के बाद जब सुभाष भारत लौटे तो उन्होंने समाजवाद की प्रशंसा की और सी० एस० पी० को हर तरह से सहायता पहुंचाने के वचन दिए। जब वे हरिपुर कांग्रेस के अध्यक्ष चुने गए तब उन्होंने पार्टी की खुलकर प्रशंसा की। पार्टी की ओर से समाजवादी साहित्य के प्रकाश और 'बुक क्लब' की प्रतिष्ठा में भी वे सहायक बने।

आगे हरिपुर के बाद त्रिपुरी कांग्रेस की वह ऐतिहासिक घटना घटी। पार्टी ने सुभाषचन्द्र को अपना संपूर्ण योग देकर कांग्रेस का अध्यक्ष बनाया जिसे गांधी ने डा० पट्टाभि की हार को अपनी हार मान ली और फलतः सरदार पटेल, राजेन्द्रप्रसाद ने कार्यसमिति से इस्तीफे दिए। जयप्रकाश अंतर्राष्ट्रीय परिस्थिति को देखते हुए समझ रहे थे कि इस अवसर पर कांग्रेस में फूट रहना देश के लिए बड़ा घातक होगा। उन्होंने गांधी और सुभाष के बीच समझौता कराने का पूरा प्रयत्न किया। पर उधर गांधी ने राजकोट में अनशन कर दिया, इधर सुभाष बीमार पड़ गए। इस स्थिति में पार्टी ने यह तय किया कि इस झगड़े से तटस्थ ही रहा जाय। पर व्यक्तिगत स्तर से जयप्रकाश समझौते के लिए अंत तक प्रयत्नशील रहे।

जयप्रकाश कांग्रेस और सुभाष के अनुयायियों से हार गए। सुभाष ने इस्तीफा दे दिया और राजेन्द्रप्रसाद कांग्रेस के नये अध्यक्ष बनाए गए। पर इस बार एक नई बात हुई। राजेन्द्रप्रसाद की कार्यसमिति में अपने सदस्यों को रखा जाना पार्टी ने पसंद नहीं किया और पार्टी तटस्थ रही।

इसके बाद ही सुभाषचन्द्र ने 'फारवर्ड ब्लाक' का संगठन किया और देश भर में दौरे करके कांग्रेस के प्रति बगावत की बात कही। त्रिपुरी के बाद रामगढ़ में कांग्रेस हो रही थी। इस अवसर पर उन्होंने वहीं समझौता विरोधी सम्मेलन किया और 'जंगे आजादी छेड़े दिलाग' की घोषणा की।

इतने पर भी जयप्रकाश के मन में सुभाष के प्रति कोई दुर्भावना न आई। इसका उदाहरण है : जे० पी० जब इकतालीस में हजारीबाग जेल से बाहर आए तो कलकत्ता जाकर सुभाष से भेंट की और फिर मिलजुल कर एक साथ काम करने का प्रस्ताव रखा। किंतु कलकत्ता के बाद जयप्रकाश जब बंबई पहुंचे वहीं फिर गिरफ्तार कर लिये गए। उधर सुभाष ने भी स्वदेश छोड़कर छद्मवेश में विदेश के लिए प्रस्थान कर दिया।

पर सुभाष के प्रति, उनके कार्यों के प्रति जे० पी० के हृदय में बड़ा स्थान

रहा है। हजारीबाग जेल से निकल भागने के बाद उन दिनों आजादी के सैनिकों के नाम जो दूसरा खत प्रकाशित किया था उसमें सुभाषचन्द्र बोस का स्थान बहुत ऊंचा है।

7

सन् चालीस। जाड़ों के दिन, सुबह का वक्त। पटने में अपने दिलदार अभिन्न मित्र फूलनप्रसाद वर्मा के घर जयप्रकाश बैठे चाय पी रहे थे और फूलन बाबू के साथ गपशप कर रहे थे। तभी एक मित्र ने आकर सूचना दी कि परसों तक जयप्रकाश की गिरफ्तारी निश्चित है।

बात सच निकली। अठारह फरवरी को जमशेदपुर में जयप्रकाश द्वारा किए भाषण के अपराध में उन पर वारंट निकल चुका था। वह वारंट पटना से जमशेदपुर गया और वहां से तीसरे दिन वापस आकर जयप्रकाश को चाइवासा जेल में डाल गया। इस गिरफ्तारी को जवाहरलाल नेहरू ने सरकार की चुनौती माना और कहा कि इसका जवाब रामगढ़ कांग्रेस देगी। गांधी ने इस गिरफ्तारी पर एक लेख लिखकर जयप्रकाश को भारतीय समाजवाद का आचार्य बताया और सरकार की इस कार्रवाई पर क्षोभ प्रकट किया। 'सर्चलाइट' (नौ मार्च) 'इंडियननेशन' ने जे० पी० की इस गिरफ्तारी के विरोध में लिखा। चौदह मार्च को पटना में 'जयप्रकाश दिवस' मनाया गया। गांधी ने कहा :

'श्री जयप्रकाशनारायण कोई साधारण कार्यकर्ता नहीं। ये समाजवाद के अधिकारी विशेषज्ञ हैं। यह कहा जा सकता है कि पश्चिमी समाजवाद के बारे में जो यह नहीं जानते उसे भारत में और कोई नहीं जानता। ये जन्मजात योद्धा हैं। देश के लिए उन्होंने अपना सब कुछ बलिदान चढ़ाया है। ये अथक परिश्रमी हैं। इतनी यातना और कोई नहीं भोग सकता।'

गांधी ने यह अंतिम वाक्य जयप्रकाश के संपूर्ण मनुष्य को याद करके ही लिखा होगा।

जब चाइवासा से नौ महीने की सजा लेकर जयप्रकाश हजारीबाग जेल पहुंचे, तो वहां उन्हें कम्युनिस्ट और फारवर्ड ब्लाक के अनेक साथी मिले। स्वामी सहजानन्द भी थे वहां पर। उन साथियों ने जे० पी० के साथ अजब व्यवहार किए। कुछ लोग बोले तक नहीं। इसके दो कारण थे। गांधी-नेहरू, दोनों जे० पी० के प्रशंसक थे। जे० पी० ही एक ऐसे वामपक्षी नेता थे उस समय जो कांग्रेस और गांधी की चाहे जितनी आलोचना करें, पर 'क्रांति-विरोधी' आदि अपशब्द उनके लिए नहीं इस्तेमाल करते थे जो वामपक्षी चाहते थे।

जयप्रकाश इन बातों से न ऊबे, न घबराए। शांति और धैर्य से काम लिया। जेल के साथियों को धीरे धीरे इकट्ठा किया। उन्हें राजनीति, अर्थ-शास्त्र और विज्ञान की शिक्षाएं देने लगे। थोड़े ही दिनों बाद जे० पी० ने बाहर के मित्रों से भी पत्र द्वारा संपर्क स्थापित किए। और गुप्त रूप से 'एक कांग्रेस सोशलिस्ट' के नाम से 'सर्चलाइट', 'नैशनल हेराल्ड' और 'बाम्बे क्रानिकल' आदि प्रमुख पत्रों में लेख भी प्रकाशित करने लगे। यही नहीं 'फ्रांस के पतन के

बाद जब कांग्रेस ने अंग्रेजी साम्राज्यवाद से समझौता कर 'राष्ट्रीय सरकार' बनाने का निर्णय किया तो उसके विरोध में जे० पी० ने जवाहरलाल को एक खत भेजा।

गांधी और जवाहर से जब भी असहमति प्रकट की है, उनके तीव्र विरोध किए हैं, जे० पी० की भाषा सदैव विनम्र और मर्यादित रही है। 'मैं बहुत संकोच के साथ आपसे अपना यह विरोध प्रकट करता हूं। प्रायः इसी एक वाक्य की विनम्र भूमिका के बाद उनका विरोध स्तर, उनकी तीव्र असहमति धीरे-धीरे पूरे तथ्यों और विवेचनाओं के साथ फैलने लगती है। ऐसे लिखते हैं जैसे वकील और प्रोफेसर दोनों एक साथ बने बैठे हों। खुलकर अपना मत प्रकट करते हैं। किसी को शब्दों से भी आहत नहीं करते। फिर भी विरोध और असहमति का गहरा असर पड़ता है।

उस समय रामगढ़ कांग्रेस की तैयारियां पूरी हो चुकी थीं। कांग्रेस अध्यक्ष थे मौलाना अबुलकलाम आजाद। समय था उन्नीस और बीस मार्च, सन् चालीस। उस समय प्रभावती से स्वयं-सेविका दल की प्रमुख बनने के लिए आग्रह किया जा रहा था। वे पद से भागती थीं लेकिन राजेन्द्रप्रसाद दबाव डालते रहे। आखिरकार बापू का आदेश मानकर उन्होंने वह काम उठाया। रामगढ़ कांग्रेस में बापू के साथ तालीम पाई हुई प्रभावती ने जिस कार्यक्षमता का परिचय दिया उसे देखकर बिहार वाले विश्वास न कर सके कि क्या सच-मुच कोई बिहारी लड़की ऐसा काम कर सकती है। और उनमें आकांक्षा भी पैदा हुई कि बिहारी महिलाएं प्रभावती जैसी बनें।

उस समय स्वराज्य का उद्देश्य क्या हो, उसकी रूपरेखा क्या हो, इस पर जयप्रकाश ने हजारीबाग जेल से एक ऐतिहासिक प्रस्ताव लिखकर बापू के पास भेजा। उस प्रस्ताव को बापू कांग्रेस अधिवेशन के सामने लाना चाहते थे। लेकिन कांग्रेस कार्यसमिति ने ऐसा नहीं होने दिया। फिर बापू ने जे० पी० के उस प्रस्ताव को बीस अप्रैल, सन् चालीस के 'हरिजन' में छापा।

कांग्रेस और देश के सामने आज एक महान् राष्ट्रीय उथल-पुथल का अवसर उपस्थित है। आजादी की आखिरी लड़ाई जल्द ही लड़ी जानेवाली है और यह सब ऐसे समय हो रहा है जब महान् शक्तिशाली परिवर्तनों के द्वारा सारा संसार जड़ से हिलाया जा रहा है। दुनिया भर के विचारक आज इस बात के लिए चिंतित हैं कि इस यूरोपीय युद्ध के महानाश में से एक ऐसी नई दुनिया का जन्म हो जिसकी जड़ राष्ट्रों-राष्ट्रों और मनुष्यों-मनुष्यों के बीच के सद्भावनापूर्ण सहयोग पर कायम की गई हो। ऐसे समय में कांग्रेस स्वतंत्रता के अपने उन आदर्शों को निश्चित रूप से व्यक्त कर देना आवश्यक समझती है जिन पर कि वह अड़ी हुई है और जिनके लिए वह जल्दी ही देश की जनता को अधिक से अधिक कष्ट सहने का न्योता देनेवाली है।

' स्वतंत्र भारतीय राष्ट्र का काम होगा कि वह राष्ट्रों के बीच शांति की स्थापना करे, संपूर्ण निःशस्त्रीकरण के लिए यत्नशील रहे और राष्ट्रीय झगड़ों को किसी स्वतंत्रतापूर्वक स्थापित अंतर्राष्ट्रीय सत्ता द्वारा शांतिपूर्वक निबटाने की कोशिश करे। वह खास तौर पर अपने पड़ोसी देशों के साथ, फिर वे महान् शक्तिशाली

साम्राज्य हों या छोटे-छोटे राष्ट्र, मित्र बनकर रहने का यत्न करेगा और किसी भी विदेशी राज्य या प्रदेश पर अपना अधिकार जमाने की इच्छा न करेगा ।

'देश के सभी कायदे-कानून सर्व साधारण जनता द्वारा स्वतंत्रतापूर्वक व्यक्त की गई इच्छा के अनुसार बनाए जाएंगे और देश में शांति सुव्यवस्था कायम रखने का अंतिम आधार जन-साधारण की स्वीकृति और सम्मति पर ही रहेगा।

'स्वतंत्र भारतीय राष्ट्र में जनता को संपूर्ण व्यक्तिगत और नागरिक स्वतंत्रता होगी और सांस्कृतिक तथा धार्मिक मामलों में पूरी आजादी दी जाएगी। पर इसका यह मतलब नहीं होगा कि हिंदुस्तान की जनता अपनी संविधान सभा द्वारा अपने लिए जो शासन-विधान तैयार करेगी, इसको हिंसा द्वारा उलट देने की आजादी किसी को रहेगा।

'देश की राष्ट्रीय सरकार राष्ट्र के नागरिकों के बीच किसी प्रकार का भेदभाव न रखेगी। प्रत्येक नागरिक के समान अधिकार रहेंगे। जन्म और परंपरा के कारण मिलने वाली सभी सुविधाएं या भेद-भाव मिटा दिए जाएंगे । न तो सरकार द्वारा किसी को कोई पद या उपाधि दी जाएगी और न परंपरागत किसी सामाजिक दर्जे के कारण ही कोई उपाधि का हकदार माना जाएगा।

'राज्य का राजनीतिक और आर्थिक संगठन सामाजिक न्याय और आर्थिक स्वतंत्रता के सिद्धांतों पर किया जाएगा। इस संगठन के फलस्वरूप जहां समाज के प्रत्येक व्यक्ति की राष्ट्रीय आवश्यकताओं की पूर्ति होगी वहां इसका उद्देश्य केवल भौतिक आवश्यकताओं की तृप्ति ही न रहेगा बल्कि अपेक्षा यह रखी जाएगी कि इसके कारण राष्ट्र का हरेक व्यक्ति स्वस्थ जीवन बिता सके और अपना नैतिक तथा बौद्धिक विकास कर सके। इसके लिए और समाज में समता की भावना स्थापित करने के लिए राज्य द्वारा छोटे पैमाने पर चलने वाले ऐसे उद्योग-धंधों को प्रोत्साहित किया जाएगा जो व्यक्तियों द्वारा या सहकारी संस्थाओं द्वारा सभी के समान हित की दृष्टि से चलाए जाएंगे । बड़े पैमाने पर सामूहिक रूप से चलने वाले सभी उद्योग धंधों को अंत में जाकर इस तरह चलाना होगा कि जिससे उनका अधिकार और आधिपत्य व्यक्तियों के हाथ से निकलकर समाज के हाथ में आ जाए । इस लक्ष्य की सिद्धि के लिए राज्य यातायात के भारी साधनों, व्यापारी जहाजों, खानों और दूसरे बड़े-बड़े उद्योग धंधों का राष्ट्रीयकरण शुरू कर देगा। वस्त्र व्यवसाय का प्रबंध इस तरह किया जाएगा कि जिससे उत्तरोत्तर उसका केंद्रीयकरण रुके और विकेंद्रीयकरण बढ़े ।

'गांवों के जीवन का पुनः संगठन किया जाएगा। उन्हें स्वतंत्र शासित इकाई बनाया जाएगा और जहां तक संभव होगा अधिक से अधिक स्वावलंबी बनाने का यत्न किया जाएगा । देश के जमीन संबंधी कानूनों में जड़-मूल से सुधार किया जाएगा और यह सुधार इस सिद्धांत पर होगा कि जमीन का मालिक उसे जोतने वाला ही हो सकता है । हर काश्तकार के पास उतनी ही जमीन होनी चाहिए जितनी से वह अपने परिवार का उचित रीति से भरण-पोषण कर सके । इससे जहां एक ओर जमींदारी की अनेक प्रथाएं बन्द हो जाएंगी, वहां खेती में गुलामी की प्रथा भी नष्ट हो जाएगी ।

'राज्य वर्गों के हितों या स्वार्थों की रक्षा करेगा । लेकिन जब ये स्वार्थ

गरीबों या पद-दलितों के स्वार्थ में बाधक होंगे, तो राज्य गरीबों और पद-दलितों के स्वार्थ की रक्षा करके सामाजिक न्याय की तुला को समतल रखेगा।

'राज्य की मालिकी वाले और राज्य की व्यवस्था में चलने वाले सभी उद्योग-धंधों के प्रबंध में मजदूरों को अपने चुने हुए प्रतिनिधि भेजने का अधिकार रहेगा और प्रबंध में उनका हिस्सा सरकार के प्रतिनिधियों के बराबर होगा।

'देशी राज्यों में संपूर्ण प्रजातंत्रात्मक सरकारें स्थापित होंगी और नागरिकों की समता के तथा सामाजिक भेदभाव को मिटाने के सिद्धांत के अनुसार राजाओं और नवाबों के रूप में देशी रियासतों में कोई नामधारी शासक नहीं रहेंगे।'

'हरिजन' के उसी अंक में गांधी जी ने इस प्रस्ताव पर जो अपना विचार व्यक्त किया वह आज कई अर्थों से उल्लेखनीय है :

मुझे श्री जयप्रकाश का यह प्रस्ताव पसंद आया और मैंने कार्यसमिति को उनका पत्र और प्रस्ताव का यह मसविदा पढ़कर सुनाया। लेकिन समिति ने यह सोचा कि रामगढ़ कांग्रेस में एक ही प्रस्ताव पास करने की बात पर डटे रहना जरूरी है और पटना में जो मूल प्रस्ताव पास हुआ था उसमें किसी प्रकार का परिवर्तन करना इष्ट नहीं है। समिति की यह दलील निरपवाद थी इसलिए प्रस्तुत प्रस्ताव के गुण-दोषों की चर्चा किए बिना ही उसे छोड़ दिया गया। मैंने श्री जयप्रकाश को अपने प्रयत्न के परिणाम से सूचित कर दिया। उन्होंने मुझे लिखा कि इसके बाद उनको संतोष देने वाली सबसे अच्छी बात यह होगी कि मैं उनके इस प्रस्ताव को अपनी पूरी सहमति या जितनी मैं दे सकूं उतनी सहमति के साथ प्रकाशित कर दूं।

श्री जयप्रकाश की इस इच्छा को पूरा करने में मुझे कोई कठिनाई नहीं मालूम होती। एक ऐसे आदर्श के नाते, जिसे देश के स्वतंत्र होते ही हमें कार्यरूप में परिणत करना है, मैं श्री जयप्रकाश की एक सूचना को छोड़कर शेष सभी सूचनाओं का आम तौर पर समर्थन करता हूं।

उस समय सुभाषचन्द्र बोस अनशन के बाद जेल से बाहर आए थे। उनके पास जे० पी० ने खत भेजा।

उस समय गांधी का व्यक्तिगत सत्याग्रह चल रहा था। जे० पी० हजारीबाग जेल से छूटे और तय किया कि अब की निकलने के बाद वह अपने को गिरफ्तार नहीं होने देंगे। जेल से बाहर आते ही जे० पी० गांधी से मिले फिर सुभाष से। उन्हें फिर कांग्रेस में लाकर साम्राज्यवाद को संयुक्त मोर्चा देना चाहते थे। कलकत्ते से लौटकर बिहार आए। उस समय बिहार में किसान-आंदोलन अपनी चरम सीमा पर था। स्वामी सहजानन्द उस आंदोलन के सबसे बड़े नेता थे। किसान-सभाओं के अन्य नेता, उमाशंकर शुक्ल (चंपारण जिला किसान-सभा), पीरजादा शाह सुलेमान, सुबोध सरकार, रमेशचन्द्र आचार्य जी (रांची) धनराज पुरी, रामानन्दन मिश्र (लहरिया सराय) आदि अंग्रेजी हकूमत से डटकर लोहा ले रहे थे और दमनचक्र के शिकार बनाए जा रहे थे।

जे० पी० बिहार से युक्त प्रांत होते हुए गुजरात गए और वहां से बंबई

पहुंचे। वहां गुप्त वेशों में घूमते और कार्य करते हुए सहसा एक दिन फिर गिरफ्तार हो गए।

बंबई का आर्थर रोड प्रिजन ! फिर देवली का कैंप।

देवली कैंप में समस्त भारत के भिन्न-भिन्न प्रांतों के लगभग पांच सौ नजरबंद थे। इनमें अधिकतर कम्युनिस्ट और क्रांतिकारी भी थे। आपने देवली जेल कैंप में ही भारत के भावी आंदोलन और संगठन की विशद रूपरेखा बनाई। वहां उन्होंने अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियों का गहन अध्ययन किया। उस समय गांधी जी का व्यक्तिगत सत्याग्रह चल रहा था जिसकी गतिविधि और स्वरूप से जे० पी० असंतुष्ट थे। इनके साथ कई चोटी के कम्युनिस्ट कार्यकर्त्ता और नेता थे। उनसे वे अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियों पर गवेषणापूर्ण तर्क किया करते थे। इनकी योग्यता को सब लोग स्वीकार करते थे। थर्ड कम्युनिस्ट इंटरनेशनल के समाजवादी दृष्टिकोण के प्रति इन्होंने गंभीर मतभेद प्रकट किया और इस विषय में अनेक कम्युनिस्ट कार्यकर्त्ताओं से इनकी बहस होती थी। स्पष्ट तर्क, योग्यता व ज्ञान की महिमा के कारण अनेक कम्युनिस्ट कार्यकर्त्ताओं को अपनी पार्टी में मिलाने से इनकी योग्यता का स्पष्ट पता लगता है।

जयप्रकाश जी जब से देवली कैंप जेल में आए तभी से वे एक महान गुप्त आंदोलन को संगठन करने का विचार कर रहे थे। उन्हें विश्वास था कि परिस्थितियोंवश कांग्रेस उनकी बात मानने को तैयार हो जाएगी। अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियां भी भारत को उस निर्णयात्मक आंदोलन के समीप ला रही थीं। इन बातों को किसी तरह जे० पी० गुप्त पत्रों द्वारा अपने साथियों तक पहुंचाना चाहते थे। इसके लिए सिर्फ यही उपाय था कि जेल से खत बाहर भेजा जाए।

देवली कैंप जेल से भी जे० पी० के लिए बाहर खत भेजना कोई मुश्किल काम नहीं था। उन्हीं दिनों की एक दिलचस्प घटना है।

प्रभावती जे० पी० से मिलने देवली जेल गईं। भीतर से जे० पी० लाए जाते हैं। दोनों को अलग-अलग बैठाया जाता है। टेबुल बीच में है। पास ही खुफिया बंगाली युवक बैठा है।

प्रणाम करने के बाद प्रभावती उन्हें एकटक देखने लगीं। जे० पी० ने पूछा : अच्छी हो।

—जी।

—और सब आनंद है ?

प्रभावती चुप देख रही हैं।

जे० पी० ने कहा : कागज पर मेरे पैर का नाप ले लो। इस नाप का चप्पल खरीदकर दे जाना।

खुफिया ने पूछा : क्या है ? कैसा कागज ?

जे० पी० ने कहा : देख लीजिए न, पैर का नाप है।

उसने पूछा : आपके पास और कागज हैं ? नाप के लिए यह कागज कहां से मिला ?

जे० पी० ने कहा : नहीं, और कागज नहीं है।

पर इस बीच जे० पी० ने एक बंद मोटा लिफाफा प्रभावती की कुर्सी पर रख दिया था जिसे वह नहीं देख सकी थीं। खुफिया ने दौड़कर उस खत को जब उठा लिया तब प्रभावती ने देखा। प्रभावती चिंता में डूब गईं : चिट्ठियों भरा लिफाफा था, मुझे दे रहे थे। तो गलती तो हुई, लेकिन पता नहीं वह क्या करेंगे।

प्रभावती कैंप सुपरिटेंडेंट से मिलीं। उसका नाम था : लेफ्टिनेंट कर्नल क्रिस्टाफर। तब तक वह चिट्ठी उसकी मेज पर आ गई थी।

उसने गुस्से से पूछा : ह्वाट इज दिस (यह क्या है) ?

प्रभावती ने कहा : मुझे अफसोस है।

—तो ?

—मैं उनसे फिर मिलना चाहती हूं।

—नो, नो इंटरव्यू एलाउड।

प्रभावती को चिंता थी कि जे० पी० इस घटना से कहीं भूख हड़ताल न करें। या कुछ सरकार ही न गड़बड़ करे।

प्रभावती फिर डिप्टी सुपरिटेंडेंट के पास गईं।

उसने पूछा : आपको पहले से मालूम था ?

प्रभावती बोलीं : नहीं। कत्तई नहीं।

उसने कहा : सुपरिटेंडेंट बहुत गुस्सा है।

प्रभावती ने कहा : यह बात तो ठीक है। मैं जे० पी० से एक बार मिलकर सिर्फ यह कहना चाहती हूं कि वह अपनी तरफ से कुछ न करें। जो सजा वह दें ठीक है।

उसने कहा : अच्छा आज आप रुक जाइए। कल मिलाने की कोशिश करूंगा।

उस रात प्रभावती देवली के डाक बंगले पर रुक गईं। बिल्कुल अकेली थीं। चर्खा चलाने लगीं ताकि रात कट जाए। मन थोड़ा शांत हो जाए।

और उसी शाम क्रिस्टाफर ने जे० पी० को बुलाया। डांटने लगा। जे० पी० बोले : चीखिए मत, सजा सुनाइए।

उसने हुक्म दिया : तीन महीनों तक तुम्हें न किसी से मिलने दिया जाएगा, न तुम्हें कोई खत-खिताबत करने दिया जाएगा। और यह लिखकर दो कि ऐसी गलती तुम भविष्य में कभी नहीं करोगे।

जयप्रकाश ने उत्तर दिया : मैं 'प्रोफेशनल ला ब्रेकर' हूं। मुझे आपके कानून की कोई इज्जत नहीं। मैं इसी वजह से जेल में हूं। मैं जिस तरह से जेल के बाहर कानून तोड़ता रहा, उसी तरह जेल के भीतर समय पाकर कानून तोड़ने में मुझे कोई संकोच नहीं होगा। इसके फल भोगने को मैं हमेशा तैयार हूं।

जयप्रकाश के साथ मुंशी अहमददीन, मास्टर मोटासिंह आनन्दपुरी को भी वही सजा सुनाई गई। तीन महीने तक……।

दूसरे दिन प्रभावती से मिलते ही क्रिस्टाफर ने पूछा : फर्ज कीजिए वह लिफाफा आपके हाथ लग गया होता तो आप क्या करतीं ?

प्रभावती ने उत्तर दिया : मेरे हाथ में पड़ता तो मैं फाड़ देती और किसी को न देती। लेकिन मुझे तो मालूम नहीं था।

उसी दिन प्रभावती बस से वापस चली आईं। रास्ते भर देवली की वह घटना और जे० पी० का वह मुख उनकी आंखों में डोलता रहा। फिर वह बापू से मिलीं। सुबह का वक्त था। बापू के साथ प्रभा टहल रही थीं। चिट्ठी की बात बापू से बताई। तब तक वह पकड़ी गई गुप्त चिट्ठी अखबारों में छप गई थी।

'नाजी जर्मनी द्वारा रूस पर आक्रमण की घटना ने वर्तमान महायुद्ध को सोशलिस्ट बना दिया है। अब इंग्लैंड और रूस दोनों मिलकर अपने एक शत्रु जर्मनी से युद्ध करेंगे। इसका अर्थ क्या यह हुआ कि हम अब इस युद्ध के प्रति अपना दृष्टिकोण बदल दें? इस प्रश्न पर गंभीरता से विचारना होगा। रूस पर इस आक्रमण से पहले तक हमने इस युद्ध को साम्राज्यवादी संघर्ष कहा है और इसके बहाने भारत पर अंग्रेजों का राज बनाए रखने का एक प्रयत्न। यह स्पष्ट है जब तक हम गुलाम हैं हम किसी भी तरह अंग्रेजों की मदद नहीं कर सकते। रूस पर जर्मनी के आक्रमण से स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं होता।

'.....अगर रूस और इंग्लैंड एक ही शत्रु का सामना कर रहे हैं तो इसके अर्थ यह नहीं कि दोनों के स्वार्थ समान हैं। वस्तुस्थितियों के अनुरूप इंग्लैंड रूस के प्रति सहयोग नहीं दे सकता। इंग्लैंड अपने स्वार्थों से प्रेरित होकर कभी भी रूस को अकेले युद्ध में छोड़कर हट सकता है। इसी तरह रूस भी जर्मनी से समय पाकर समझौता कर सकता है। जैसे भी हो, अगर रूस नाजियों को खत्म करना चाहता है तो उसे अपने ही साधनों पर भरोसा करना होगा।...ब्रिटेन को युद्ध में मदद करना उसी तरह नहीं है जिस तरह की रूस की मदद करना। ब्रिटेन की मदद करने का मतलब है उसके स्वार्थों को मदद पहुंचाना।...इसलिए रूस पर आक्रमण होना इस (साम्राज्यवादी) युद्ध के प्रति हमारे दृष्टिकोण को नहीं बदल सकता।

'इसलिए आगे अंग्रेजी साम्राज्यवाद पर हमारे आक्रमण रूस के लिए हितकर होंगे। इस हालत में हमें रूस की सीधी मदद करनी चाहिए। हम अपने यहां से जवानों को भर्ती कर रूस के मोर्चे पर सीधे भेजने के लिए मदद दें। निश्चय ही तब हमारी इस मदद को अंग्रेज अस्वीकार करेंगे और तब रूस के प्रति अंग्रेजों की बेईमानी प्रकट होगी और इस युद्ध में उनके साम्राज्यवादी चरित्र का तब पर्दाफाश होगा...।'

सरकार ने इनके और पत्रों के भी 'ब्लाक' बनाकर छपवाए। सरकार चाहती तो यह थी कि इस प्रकार वह जयप्रकाश व उनके साथियों के प्रति गांधी जी और कांग्रेस के हृदय में घृणा का भाव उत्पन्न करने में समर्थ हो जाएगी पर गांधी जी ने उस पर एक ऐतिहासिक वक्तव्य दिया जो कभी भुलाया नहीं जा सकता। गांधी जी ने कहा :

'मैं जानता हूं कि जयप्रकाश मेरी अहिंसा की नीति व सिद्धांत से सहमत नहीं पर इसके लिए उन्हें दोष नहीं दिया जा सकता। उन्होंने अपने जीवन के अनेक वर्ष अमरीका में बिताए हैं और विदेशों में ही उन्होंने अध्ययन किया है।

यदि ऐसी दशा में उनका दृष्टिकोण और विश्वास विदेशी आंदोलनों से प्रभावित हुआ है तो वह स्वाभाविक ही है। लेकिन एक ऐसी चीज स्पष्ट है : उन्होंने जो कुछ किया है वह पूर्ण रूप से राष्ट्र की स्वतंत्रता के लिए। चाहे मेरे और उनके तरीके में मतभेद है पर मैंने एक क्षण भी उनके साहस, त्याग और विचारों की दृढ़ता में संदेह नहीं किया। मैं नहीं समझता कि एक विदेशी सत्ता को जो एक युग से भारत पर अत्याचार और हिंसक मनोवृत्तियों को लाद रही है, उसे यह कहने का क्या अधिकार है कि जयप्रकाश को अहिंसा में विश्वास नहीं अतः वे निंदा के योग्य हैं। उन पत्रों को प्रकाशित कर सरकार ने उन्हें बदनाम करने की चेष्टा की है। यदि उसकी नजरों में सचमुच जयप्रकाश हिंसक मनोवृत्तियों के दोषी हैं, तो सर्वप्रथम अपराधी वे स्वयं हैं। अंग्रेजी शासन के दृढ़ स्तंभ क्लाइव और हैस्टिंग ने निरपराधों के रक्त से होली खेलकर छल-कपट और अत्याचारों के बल पर यह शासन स्थापित किया है, अतः सबसे पहले अपराधी वे हैं और उन्हें सबसे प्रथम फांसी दी जानी चाहिए थी।'

जयप्रकाश के मस्तिष्क में भावी आंदोलन की रूपरेखा तेजी से चक्कर काट रही थी। वे जानते थे कि क्रांति निकट है। पर उस क्रांति में वे अपना भाग किस प्रकार दे सकेंगे ? वे उस क्रांति में योग ही नहीं वरन् उसका पूर्ण संगठन चाहते थे, अतः उन्हें एक युक्ति सूझी और सिद्धि के लिए उन्होंने अपने प्राणों की बाजी लगाने में भी संकोच नहीं किया। उन्होंने जेल से भागने का निश्चय किया पर देवली कैंप जेल से भागना संभव नहीं था, अतः उन्होंने लगभग दो सौ पचास बंदियों के साथ भूख हड़ताल कर दी। उनकी मांगें ये थीं : (1) उन्हें अपने-अपने जिले के जेल में बदल दिया जाए; (2) प्रत्येक को ए क्लास में रखा जाय; (3) खाने पीने की सुविधाएं दी जाएं।

देवली कैंप में इन बंदियों के आमरण अनशन से देश में बड़ा भारी प्रदर्शन हुआ। विद्यार्थियों ने कानपुर, गोहाटी, बंबई, कराची आदि में प्रदर्शन किए। कई जगह लाठी चार्ज हुआ। अंत में बत्तीस दिन की भूख हड़ताल के बाद सरकार झुक गई। असेंबली में इसके विषय में अनेक प्रश्न पूछे गए, मजदूर नेता श्री जोशी ने जोरदार शब्दों में सरकार की इस नीति की निंदा की। सरकार को इन बंदियों की सब शर्तें मंजूर करनी पड़ीं और इन्हें अपने-अपने जिलों की जेल में बदल दिया गया, देवली कैंप जेल तोड़ दी गई। जयप्रकाश नारायण भी हजारीबाग जेल में बदल दिए गए। यह जयप्रकाश की महान विजय थी यद्यपि इस भूख हड़ताल से उनका स्वास्थ्य काफी गिर गया।

इस समय बरबस नेता जी सुभाषचन्द्र की याद आ जाती है जिन्होंने भारत से भागकर विदेश जाने के लिए कुछ ऐसा ही प्रयत्न किया था। वे कलकत्ता जेल में थे और अपनी रिहाई के लिए उन्हें भूख हड़ताल करनी पड़ी थी ताकि वे रिहा होकर भारत से बाहर जाने में समर्थ हो सकें।

जयप्रकाश के चरित्र का अत्यंत मानवीय पक्ष इसी देवली जेल में तब प्रकट हुआ जब वह स्वयं अनशन के कारण बहुत अस्वस्थ थे। उन्होंने जवाहरलाल नेहरू को आचार्य नरेन्द्रदेव के स्वास्थ्य के बारे में अपनी गहरी चिंता व्यक्त

करते हुए, उनके स्वास्थ्य-लाभ के उपायों को बताते हुए पत्र लिखा। पत्र निरीक्षित (सेंसर्ड) है। बीच-बीच में कैंची से काट दिया गया है फिर भी जो शेष है :

'प्रिय भाई,

आपको हार्दिक बधाई। (कटा हुआ)। आपके (जेल से) बाहर आने से मुझे अत्यंत प्रसन्नता है। ऐसे समय में आप मुक्त हुए हैं जब देश को आपकी सबसे ज्यादा जरूरत थी। (कटा हुआ भाग)। आपको नरेन्द्रदेव के स्वास्थ्य के बारे में पता चला होगा। उनकी सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि वह अपने विषय में कोई ख्याल नहीं रख सकते। मुझे डर है इस समय उन पर ध्यान न दिया गया तो हमेशा के लिए असमर्थ हो जाएंगे। उन्हें इस समय दवा की इतनी जरूरत नहीं है जितनी आराम की। यू० पी० या सुदूर दक्षिण उनके आराम के लिए उचित न होगा। उन्हें महाराष्ट्र में सतारा, मध्य दक्षिण में बेलारी, अनंतपुर ठीक रहेगा।...इस मामले में आप उन्हें एक बच्चे के रूप में देखिए, जैसे मां अपने बच्चे को देखती है। इस बारे में आप बापू से भी सलाह ले लीजिए।...'

देवली कैंप जेल में जे० पी० के जीवन से कई महत्वपूर्ण बातें सामने आती हैं। विशेषकर जे० पी० का क्रांतिकारी समाजवादी चरित्र सामने आता है। वह खत, जिसे वह प्रभावती के द्वारा बाहर भेजना चाहते थे—जिसे अंततः सरकार ने अपने ढंग से अखबारों में प्रकाशित किया—उस खत से यह स्पष्ट हुआ कि जे० पी० ब्रिटिश हुकूमत से लोहा लेने के लिए अब हिंसात्मक कार्यवाही को भी स्वीकार करते हैं। देवली जेल के कुप्रबंध के खिलाफ, दो सौ कैदियों की ओर से उनकी भूख हड़ताल, उनके इस विश्वास का साक्षी है कि एक व्यक्ति अपने सत्याग्रह से एक पूरी भ्रष्ट व्यवस्था को बदल सकता है। उस समय गांधी जी का व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा आंदोलन (सिविल नाफरमानी) चल रहा था। उसके बारे में जे० पी० के क्या विचार थे, इसकी झलक हमें उनके इस पत्र से मिल सकती है जिसे उन्होंने अपनी पत्नी प्रभावती को लिखा :

'प्रिय प्रभा,

सत्याग्रह से तुम्हारे दूर हटने का समाचार मैंने पढ़ा। मुझे अच्छा लगा। पर तुम्हें ऐसा कुछ करना चाहिए कि पार्टी का वह स्वतंत्र राजनीतिक आंदोलन, इस नकली सत्याग्रह की तुलना में सबके सामने प्रकट हो। मैं यह बहुत गहराई से सोचने लगा हूं कि अब ऐसा कुछ करना चाहिए जो सबकी आंखें खोल दे। इस समय चाहे हम कोई बड़ा काम न भी कर सकें, पर ऐसा कुछ तो करना ही होगा जो इस क्षण की राजनीतिक पूंजी बन सके। कोई परवाह नहीं, इसके लिए चाहे तुममें से तमाम लोगों को जेल में जाना पड़े। इस सिलसिले में, खासकर बिहार के संदर्भ में किसान-सभाओं के बदले अब किसान-आंदोलनों की जरूरत है। दोस्तों को अब ऐसे आंदोलन ऐसे क्षेत्रों में करने हैं ताकि उनसे नौजवानों में जोश पैदा हो।

कुछ जरूर सोचो।

तुम्हारा,
जयप्रकाश'

यह गांधी की नीतियों के खिलाफ एक तीव्र आलोचना है। पर प्रतिक्रिया नहीं है।

क्योंकि जे० पी० के पास कहीं अपना एक स्वतंत्र राजनीतिक कार्यक्रम है और उसके पीछे उनका वह गहरा विश्वास है, जिसकी अभिव्यक्ति उन्होंने सन् छत्तीस में 'समाजवाद क्यों ?' नामक उस पुस्तक के चारों राजनीतिक लेखों के द्वारा की थी। यह उनका वही समाजवादी चरित्र है, जिसने देवली जेल से ही गुप्त रूप में फारवर्ड ब्लाक के नेता सुभाषचन्द्र बोस को यह लिखने को विवश किया :

'सुभाष बाबू,

मुझे आपसे एक बात कहनी है। कम्युनिस्ट पार्टी, फारवर्ड ब्लाक और कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी दोनों पर समान रूप से आक्रमण करती है। और हम दोनों अलग-अलग हैं। हमने क्यों मिस्टर रंगा को कम्युनिस्टों से मिलने दिया ? क्यों नहीं हमारे लोग कवीश्वर, कामथ आदि लोगों से संपर्क करते, ताकि ऐसे लोग हमारे हाथ मजबूत करें ? मेरी आपसे तब की हुई बातें, जब मैं बाहर था, क्यों नहीं हिंदुस्तान के हित में इस्तेमाल होतीं ? गुलामी से छुटकारा न मिले, ऐसा कोई कर्त्तव्य नहीं है। हम महायुद्ध के तभी इतने खिलाफ थे और इस स्थिति को हम राष्ट्रीय मुक्ति-संग्राम के लिए इस्तेमाल करना चाहते थे।'

जे० पी० का यह खत सुभाषचन्द्र बोस को उससे पहले भेजा गया था, जब जापानियों ने विश्वासघातपूर्ण ढंग से पर्लहार्बर पर आक्रमण किया था।

सन् तैंतीस से जे० पी० का एक ही राजनीतिक उद्देश्य था—पहले किसी भी तरह भारत की स्वतंत्रता, फिर समाजवादी व्यवस्था की प्रतिष्ठा। इसीलिए जे० पी० ने बार-बार ऐसे तमाम लोगों की एकता और साहचर्य में विश्वास किया जो उनके चारों तरफ थे। पार्टियों की सीमाओं से ऊपर उठकर वह बुनियादी तौर पर आजादी और समाजवाद के अनन्य सेनानी थे।

जे० पी० के इसी चरित्र ने उन दिनों नेहरू को, जो कांग्रेस के इतने महत्त्वपूर्ण नेता थे, और जो दक्षिणपंथियों से बार-बार समझौते करने को विवश थे, उन्नीस सौ चालीस में हजारीबाग जेल से पत्रवाहक के हाथ यह व्यक्तिगत पत्र लिखा :

'प्रिय भाई,

आप कल्पना कर सकते हैं कि किस तरह इधर की घटनाओं ने हमें चोटें पहुंचाई हैं और दुखी किया है। राजा जी ने हमारी पीठ में छुरा भोंका है। यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आपने और खान साहब ने विरोध किया है। पर क्या इतना ही काफी है ? हम सब आपसे आशा करते हैं कि आप ए० आई० सी० सी० में देश में विरोध का नेतृत्व करें। कमेटी से अपने पद का त्याग-पत्र दे दें। समझौते के बाद, अगर ऐसा हुआ तो आप कांग्रेस को छोड़ दें और एक दूसरा राजनीतिक दल बनाइए जो शेष कार्य को पूरा कर सके। विशेषकर भारतीय क्रांति का सामाजिक कार्य। क्या कर सकते हैं ?....पता नहीं इससे आपको कितना लाभ होगा पर निश्चय ही इससे एक ऐसा रास्ता निकलेगा जिस

पर आपके पीछे लोग चलेंगे । यह भावुकता और गुस्से में नहीं लिखा गया है, शांत चित्त से निश्चय करके लिखा गया है ।

आपका
जयप्रकाश

नोट : अक्टूबर के मध्य तक रिहाई की आशा है ।'

पर जे० पी० को यह पता नहीं था कि नेहरू वैसे नहीं हैं, जैसे प्रभाव डालते हैं । जयप्रकाश और जवाहर दोनों बिल्कुल असमान थे । नेहरू बिल्कुल खुली आंखों से देखते थे कि शक्ति का स्रोत कहां है । सत्ता का मूल क्या है । सत्ता का मूल थी कांग्रेस, जिसे उन्होंने कभी नहीं छोड़ा । शक्ति के स्रोत थे महात्मा गांधी, उन्हें हर कीमत पर खुश रखा ।

बिहार में हजारीबाग जेल जंगल और पहाड़ के बीच है । इस जेल की स्थापना अंग्रेजों ने प्रथम विश्वयुद्ध के समय की थी । इसमें ऐसे कैदी रखे जाते थे जिन्हें अंग्रेज कालापानी नहीं भेजना चाहते थे । यह जेल खूंखार राजनीतिक कैदियों के लिए थी । वे राजबंदी मुख्यतः पंजाबी और बंगाली थे । बंगालियों में ज्यादातर नजरबंद लोग थे और पंजाबियों में गदर पार्टी के वे वीर पुरुष थे जिन्होंने फौज में बगावत की, या कराने की कोशिश की थी । बंगाली बाबुओं के लिए छः वार्ड बनाए गए और पंजाबियों के लिए तीन वार्ड । हर वार्ड में छब्बीस या अठाइस सेल, जिनमें दो सेल 'मजिस्टरी सेल' हैं । मजिस्टरी सेल में चक्की लगी थी । जिन्होंने जरा भी कसूर किया उन्हें इसी जेल में बंद होकर चक्की चलानी पड़ती थी । बाकी सेलों में सिर्फ उतनी ही जगह जहां एक कैदी रह सके ।

पंजाब से, बंगाल से राजबंदियों को लाकर सरकार ने इन्हीं काल कोठरियों में डाल दिया था । पंजाबियों से सरकार बहुत नाराज थी और उन्हें तरह-तरह के कष्ट भी दिए जाते थे । यहीं वह सनसनीखेज रहस्य और रोमांच से भरी हुई घटना घटी थी : सरदार सुच्चासिंह और गंडासिंह की । सेल के ऊपर जो सूराखें थीं, उन्हीं में से कैदी रात में निकले थे । वहां से सीधे ऊंघते हुए वार्डर पर टूट पड़े थे । उसकी मुश्क बांधकर उससे चाबियों का गुच्छा ले लिया और अपने वार्ड के सभी सेलों को खोल दिया था । सब लोग दीवार की तरफ भागे । भागने की आवाज से जेल में शोर हुआ । दूसरे वार्डर चौकन्ने हुए और पगली घंटी बज उठी । एक ओर मशालें लेकर जेल को घेरने की कोशिश होने लगी, दूसरी ओर एक के कंधे पर दूसरा, दूसरे पर तीसरा और फिर दीवार फांद कर उस पर कूदने लगे फरारी । बेहद रोमांचक घटना थी वह फरारियों की । टूटे पैरों और घायल बदनों से वे बारह लोग, भूखे-प्यासे रहकर छिपते-छिपाते निकल गए थे । दो-तीन लोग जो कूदने के बाद ज्यादा घायल होकर वहीं बेहोश हो गए थे, उन्हें उसी तरह घसीटते हुए फिर जेल में दूसरे दिन लाया गया था । केवल सुच्चासिंह किसी तरह पंजाब पहुंचे थे—अपने घर । फिर वह साधु बन गए और एक दिन फिर गिरफ्तार होकर उसी हजारीबाग में लाए गए ।

जयप्रकाश जब सन् चालीस में उसी हजारीबाग जेल में पहुंचे, सरदार सुच्चासिंह ने उनसे अपनी पूरी कहानी सुनाई थी।

8

चालीस से इकतालीस के अंत तक युद्ध विरोधी प्रचार के लिए कांग्रेस ने व्यक्तिगत सत्याग्रह का आंदोलन चलाया जिसमें सारे भारत से करीब पच्चीस हजार सत्याग्रही जेल में गए। इससे ब्रिटेन के दोस्तों, खासकर चीन और अमेरिका, को पता चला कि ब्रिटिश हुकूमत को युद्धकाल में सहयोग देने के लिए भारतीय जनता तैयार नहीं है। इधर जर्मनी की तरफ से जापान भी युद्ध में कूद पड़ा और देखते-देखते बर्मा की ओर लपका। ऐसे अवसर पर हिंदुस्तान की वाजिब मांगों को पूरा करके जनता से सहयोग प्राप्त कर लेने की सलाह चीन तथा अमरीका ने अंग्रेजों को दी। इसी दबाव के कारण अंग्रेजों ने क्रिप्स साहब को यहां हिंदुस्तान भेजा। हिंदुस्तान में स्वातंत्र्य और आत्मनिर्णय के तत्त्व किस ढंग से अंग्रेज लागू करना चाहते हैं, इसका क्रिप्स साहब के साथ भेजी योजना में स्पष्टीकरण किया गया था।

सारी योजना भयानक कूटनीतियों से भरी हुई थी और उतनी ही खतरनाक थी, हिंदुस्तान की एकता के लिए, उसकी स्वतंत्रता के लिए। दरअसल 'क्रिप्स मिशन' का उद्देश्य जापान को हराने में भारतवर्ष की मदद लेना था। इस योजना में मुस्लिमलीग को भी खूब खुश करने की कोशिश की गई थी। उन दिनों ब्रिटेन की हालत ऐसी हो गई थी कि गांधी जी ने 'क्रिप्स मिशन' को 'दिवालिया बैंक पर बाद की तारीख का चेक' घोषित किया। इसका मतलब साफ था कि जो शक्ति खुद ही अपनी अंतिम सांस गिन रही है उसके साथ सौदा क्या करना?

उस समय गांधी के बहुत निकट के लोग भी यह बात अनुभव कर रहे थे कि पुराना गांधीवादी तरीका तथा वैयक्तिक सत्याग्रह अब हथियार के रूप में बेकार हो चुके हैं। उन दिनों स्वयं गांधी जी के लेखों तक से अजीब ध्वनि निकल रही थी। बयालीस, उन्नीस जुलाई को गांधी जी ने लिखा : 'इस बार मैं मांगकर जेल नहीं जाने वाला हूं। इस संग्राम में मांगकर जेल जाना नहीं है। मांगकर जेल जाना तो बहुत नरम चीज होगी। अवश्य अबतक हमने मांगकर जेल जाने का व्यापार कर लिया था। अब की बार मेरा इरादा यह है कि आंदोलन को जहां तक हो सके शीघ्र तथा द्रुतगामी किया जाए।'

स्वभावतः गांधी जी के इस वक्तव्य से यह प्रश्न उठता था कि यदि अब की बार वह जेल जाने वाले नहीं थे तो क्या करने वाले थे? यदि लोग गिरफ्तारी से अपने को बचाने वाले थे तो वे बचकर क्या करने वाले थे? कहां तक अहिंसा का पालन करने वाले थे?

ये सारे प्रश्न हजारीबाग जेल में उस समय जयप्रकाश नारायण को घेरे हुए थे। गांधी जी ने छब्बीस जुलाई के अंत में फिर वक्तव्य दिया : 'आंदोलन को नरमी से चलाने के लिए जितने भी एहतियात हो सकते हैं, मैं उतने एहतियात

लूंगा। पर यदि मैं देखूंगा कि ब्रिटिश सरकार तथा भिन्न शक्तियों पर कोई छाप नहीं पड़ रही है तो मैं अंत तक जाऊंगा। भारत में जो कुछ होगा उसके लिए यह उचित ही है कि मैं भिन्न शक्तियों को जिम्मेदार समझूं क्योंकि यह चीज उनके हाथों में है कि लड़ाई में बाधक जो कुछ भी किया जाने वाला है उसको न होने दें।'

इन्हीं दिनों छः जुलाई को वर्धा में कांग्रेस कार्यसमिति की बैठक हुई। यह बैठक बहुत लंबी हुई। सच तो यह है कि यहीं पर कांग्रेस नेताओं ने संग्राम छेड़ने का अंतिम निश्चय कर लिया। चौदह जुलाई को कार्यसमिति ने बारह सौ शब्दों में एक प्रस्ताव प्रकाशित किया, जिसका स्वरूप था :

'दिन प्रतिदिन होने वाली घटनाएं और भारत की जनता जिस परिस्थिति में से गुजर रही है उसका अनुभव कांग्रेसजनों की उस राय को मजबूत बनाता है कि भारत में अंग्रेजी राज्य का शीघ्र अंत हो जाना चाहिए'''विश्वयुद्ध आरंभ होने के समय से ही कांग्रेस दृढ़तापूर्वक युद्ध में बाधा न पहुंचाने की नीति को बरतती आ रही है। अपने सत्याग्रह को निष्फल बना देने का खतरा उठा कर भी कांग्रेस ने जान-बूझकर इसे प्रतीकवादी रूप दिया, पर ये उम्मीदें चूर-चूर हो गईं। क्रिप्स प्रस्ताव की असफलता से यह स्पष्ट हो गया कि भारतवर्ष पर से अंग्रेजी दासता का पंजा हटने का नहीं है। क्रिप्स वार्ता में कांग्रेस के प्रवक्ताओं ने पूरी कोशिश लगाई—राष्ट्रीय मांग के अनुकूल कम से कम अधिकार मांगे, पर सब व्यर्थ। इस विफलता से ब्रिटिश विरोधी विचार और भी तीव्र हो गए और जापानियों की विजय पर लोगों में संतोष हुआ। कांग्रेस ब्रिटिश विरोधी वर्तमान भावना को शुभकामना में बदल देगी पर यह तभी संभव है जब भारत को स्वतंत्र किया जाए। अंग्रेजी शासन के भारत से विदा हो जाने का प्रस्ताव करते हुए कांग्रेस बिल्कुल नहीं चाहती कि ग्रेट ब्रिटेन अथवा दूसरी भिन्न शक्तियों को युद्धोद्योग में किसी भी प्रकार तंग किया जाए। कांग्रेस ऐसा कोई भी कार्य नहीं करना चाहती। कांग्रेस भिन्न शक्तियों के रक्षा साधन को किसी प्रकार हानि पहुंचाना नहीं चाहती। अतः कांग्रेस को इस बात में कोई उज्र नहीं कि भारत में भिन्न शक्तियों के सशस्त्र सैनिक यदि वे जापानी और दूसरे आक्रमण को रोकने के लिए तथा चीन की मदद करने के लिए रहें तो रह सकते हैं। यदि कांग्रेस की यह अपील व्यर्थ गई तो कांग्रेस ने 1920 से लेकर अब तक जितनी अहिंसात्मक शक्ति का संचय किया है वह अनिच्छापूर्वक उसका उपयोग करने के लिए बाध्य होगी।'

इसी प्रस्ताव में यह भी तय हुआ कि यह प्रश्न इतना महत्त्वपूर्ण है कि इस पर कोई अंतिम फैसला लेने के लिए सात अगस्त को अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की बैठक बुलाई जाए।

बंबई में, सात अगस्त, सन् बयालीस। संध्या छः बजे। वही बंबई के ग्वालियर तालाब का मैदान।

इन्कलाब : जिंदाबाद।

अंग्रेजो : भारत छोड़ दो।

एक आवाज ! तुमुल कोलाहल ! तिरंगा झंडा लहरा रहा है। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की बैठक। कांग्रेस कमेटी के ढाई सौ सदस्य और दर्शक रूप में एकत्रित लगभग पंद्रह हजार लोग। आजादी की लड़ाई के सैनिक। 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव पर कांग्रेस अध्यक्ष मौलाना आजाद के डेढ़ घंटे के जोशीले भाषण के बाद महात्मा गांधी उठे और बोलने लगे :

'मैं अब भी अहिंसा के सिद्धांत पर अटल हूं। अगर आप उससे थक गए हों तो आपको मेरे साथ आने की कोई आवश्यकता नहीं है।…एक-एक बच्चा भी वीर बन जाएगा। हम अपनी आजादी लड़कर प्राप्त करेंगे।…वह आकाश से टूटकर हमारे सामने नहीं आ सकती।…मैं आपको बताता हूं कि मैं पक्का बनिया हूं और मेरा सौदा स्वराज्य प्राप्त करना है।'

और अगले दिन !

आठ अगस्त को 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव पास हो गया।

इसी दिन गांधीजी ने राष्ट्र के नाम संदेश दिया : 'करो या मरो।'

अपार जनता जानना चाह रही थी : करो या मरो, इसका मतलब क्या है ?

गांधी जी ने बताया :

'आज बीच में समझौता नहीं है। मैं नमक की सुविधा या शराबबंदी लेने को नहीं जा रहा हूं। मैं तो एक चीज लेने जा रहा हूं, आजादी। नहीं देना है, तो कत्ल करें। मैं वह गांधी नहीं, जो बीच में कुछ चीज लेकर आ जाए। आप को तो मैं एक मंत्र देता हूं—'करेंगे या मरेंगे।' जेल को भूल जाएं। आप सुबह-शाम यही कहें कि खाता हूं, पीता हूं, सांस लेता हूं तो गुलामी की जंजीर तोड़ने के लिए। जो मरना जानते हैं, उन्होंने जीने की कला जानी है। आज से तय करें कि आजादी लेनी है। नहीं लेनी तो मरेंगे, आजादी डरपोकों के लिए नहीं। जिनमें करने की ताकत है, वही जिंदा रह सकते हैं। हम चींटियां नहीं, हम हाथी से भी बड़े हैं। हम शेर हैं।…

'…कोई कहते हैं, यह जल्दी होगी। तैयारी की जरूरत है। जितनी मुसाफिरी मैंने की, उतनी किसी ने नहीं कि जो जिंदा हैं। मैं लोगों को जानता हूं, मेरा तो दिल उनके पास है। और तैयारी का क्या करूं ? मेरी तैयारी कच्ची, मैं कच्चा और मेरा लश्कर भी कच्चा। पर हमला आ गया तो क्या करूं ? अब तैयारी कर लें। खुदा क्या कहेगा ? वह तमाचा नहीं मारेगा ? क्या वह यह नहीं कहेगा कि तुमको मैंने जो खजाना दिया, उसे तो निकाल देते। बाकी मैं तो पीछे था ही।…मेरे पास बहुत-सी लड़ाइयां लड़ने को पड़ी हैं।…अब ऐसे कब तक बैठेंगे ?…मैं क्यों न जुझूं ? आप मेरे दिल को समझ सकते हैं।…

'…आप मान लें कि हम आजाद बन गए। आजादी के माने क्या हैं ? गुलामी की जंजीरें तो छूटीं। अब मालिक से कहना है, मैंने गुलामी छोड़ दी, लेकिन आप से नहीं डरूंगा। आप जिंदा रखना चाहते हैं तो रखें। आप मुझे खुराक देते थे। पर वह तो मेरी ही पैदा की हुई थी।…

'…मुझे नेतागीरी बख्शी गई। फौजी परिभाषा में मुझे सेनापति पद दिया गया पर मैं इस दृष्टि से नहीं देखता। मेरे पास अपना सेनापति पद चलाने के लिए प्रेम के अलावा दूसरा शस्त्र नहीं है। जिस लकड़ी के सहारे मैं चलता हूं

उसे तो आप आसानी से तोड़ कर फेंक सकते हैं, ऐसी है। ऐसे अपंग आदमी को जब ऐसी लड़ाई का बोझ उठाने के लिए आमंत्रित किया जाए तो इसमें उसके लिए पौरुष अनुभव करने जैसा क्या है? मेरा वह बोझ आप तभी हल्का कर सकते हैं जब कि मैं आपके सेनापति के रूप में नहीं बल्कि आपके नम्र सेवक की तरह खड़ा रहूं। जो सेवा में सबसे बढ़ कर हो वह समान दरजे के सेवकों में अगुआ सेवक है, इतना ही इसका अर्थ है।...

'...मैं कहां जाऊं? चालीस करोड़ को कहां ले जाऊं? आज तो जनता के प्राण शोषित हो गए हैं—पीस दिए गए हैं, उनकी निस्तेज आंखों में तेज लाना हो तो आजादी कल नहीं, आज ही आनी चाहिए। इसी से मैंने आज कांग्रेस से यह बाजी लगवाई है कि या तो कांग्रेस देश को आजाद करेगी अथवा खुद फना हो जाएगी। करो या मरो।'

उस सभा में गांधी जी के एक-एक शब्द को मंत्र की तरह सुन रहे थे डा० लोहिया, अच्युत पटवर्धन, सादिक अली, पुरुषोत्तम, विक्रमदास, मोहनलाल सक्सेना, रामनन्दन मिश्र, सदाशिव, महादेव जोशी, साने गुरु जी, कमलादेवी, अरुणा आसफ अली, सुचेता कृपलानी और पूर्णिमा बनर्जी।

और इन सबके नेता जयप्रकाश हजारीबाग जेल की एक कोठरी में स्वयं से प्रश्न कर रहे थे: इस क्रांति के समय मैं क्या इसी जेल में सड़ता रहूंगा?

रविवार नौ अगस्त को गांधीजी अपने नित्य क्रमानुसार सुबह चार बजे प्रार्थना के लिए उठे। उसी वक्त गिरफ्तार कर लिए गए। कांग्रेस के अन्य सभी बड़े नेता जो बंबई में थे या कहीं भी थे देश में, गिरफ्तार कर लिए गए। यह सारा काम सरकार ने बड़ी तत्परता से किया जैसे इसकी पहले से पूरी तैयारी हो। गांधीजी ने गिरफ्तार होकर जाते समय प्यारेलाल के द्वारा राष्ट्र को यह संदेश दिया:

'स्वतंत्रता के प्रत्येक अहिंसक सैनिक को चाहिए कि वह किसी भी कागज पर या कपड़े पर 'करो या मरो' नारा लिखकर अपने कपड़ों पर लगाए रखे। अत: सत्याग्रह में यदि वह मारा जाए तो यह नारा इस बात का प्रमाण होगा कि वह व्यक्ति हिंसक न होकर अहिंसक था।'

बोरी बंदर स्टेशन पर स्पेशल गाड़ी की व्यवस्था की गई थी। वर्किंग कमेटी के सदस्यों तथा कांग्रेस के सभी नेताओं को पहले ही उस गाड़ी में ले जाकर बैठा दिया गया था। चिंचवड़ स्टेशन पहुंचते ही वर्किंग कमेटी के सदस्यों को गाड़ी से उतार लिया गया। तभी जवाहरलाल ने गांधी से पूछा:

बापू! अहिंसा और गुप्तता में विरोध क्यों है?

गांधीजी बोले: अहिंसा का अर्थ आप जो भी लगाना चाहते हैं, लगा सकते हैं।

समूचे देश के लिए यह एक अजीब निर्णायक क्षण था। इस क्षण गिरफ्तारी से बच रहे समाजवादी नेताओं ने आंदोलन के नेतृत्व का भार भसांला।

बंबई में जगह-जगह गोलियां चल रही थीं। समाजवादियों ने गुप्त बैठकें

करनी शुरू कीं। केंद्रीय संचालन मंडल बनाया गया। संगठन का काम अच्युत पटवर्धन को दिया गया। लोहिया पर नीति-निर्धारण का दायित्व सौंपा गया।

पर अगस्त क्रांति का नेता कहां है ?

यह ठीक है इसके नेता गांधी ने कह दिया है कि हर व्यक्ति अपना नेता है, पर आंदोलन चलाना, क्रांति करना कोई साधारण बात नहीं है। इसके लिए एक ठोस कार्यक्रम चाहिए। एक सबल नेतृत्व चाहिए।

इसी समय अंग्रेजी सरकार के लंदन स्थित भारत मंत्री एमरी का ब्रिटिश पार्लियामेंट में दिया गया एक बयान, भारत में रेडियो द्वारा विभिन्न भाषाओं में बाकायदा प्रसारित किया गया। जिसमें एमरी ने कहा था कि भारत की जनता 'खुली बगावत' के नाम पर रेल लाइन उखाड़ने, तार काटने, पुल तोड़ने, थानों पर कब्जा करने और कचहरियों से हुकूमत छीनने का काम कर रही है। रेडियो द्वारा यह बयान सुनकर भारतीय जनता ने समझा कि शायद आंदोलन का यही कार्यक्रम है। और सचमुच सारा देश इसी कार्यक्रम में लग गया।

जयप्रकाश हजारीबाग जेल में बंद सोच रहे हैं : क्या खुली बगावत का यही रूप है कि लोग अपने को पुलिस अफसरों के हवाले कर दें ? और फिर जेल में आकर पहले की तरह इस बार भी चुपचाप चरखा काता करें या अध्ययन किया करें ?

हजारीबाग जेल में जितने राजनीतिक कैदी थे, सबको एकत्र कर जे० पी० ने पूछा : गांधी जी ने गिरफ्तार होते समय एक मंत्र दिया था—'करो या मरो'--क्या इस मंत्र का अर्थ यह नहीं कि इस बार जान पर खेलकर भी हमें इस क्रांति को सफल बनाना है ?

जे० पी० के इस प्रश्न का उत्तर स्पष्ट था।

नौ अगस्त के बाद से ही कांग्रेसी नेता लोग इस जेल में आने लगे थे। जयप्रकाश उनसे पूछते : जनता अब क्या करेगी ?

लोग उत्तर देते : हम क्या करें, हम तो अचानक ही पकड़ लिए गए।

ऐसे उत्तर जे० पी० को बेहद दुखी कर जाते।

उनका स्वास्थ्य भी अच्छा नहीं है। देवली कैंप की उस लंबी भूख हड़ताल ने उन्हें अब तक तोड़ रखा है। और अब यह गहन मानसिक परेशानी। जब भारतीय इतिहास की शक्तियां गांधी जी और सरकार की इच्छा के विरुद्ध काम कर रही हों तो उसे समुचित नेतृत्व मिलना चाहिए। अंग्रेजों के खिलाफ वह खुला विद्रोह पिछले सभी आंदोलनों के ध्येय, युद्ध-नीति, संगठन, आकार और विस्तार आदि की दृष्टि से भिन्न था। वह ऐसी नई क्रांति चेतना थी जिसने गांधीवादी राजनीति के युग से निकलकर 'शक्ति पर कब्जा' के कार्यक्षेत्र में पदार्पण किया।

जे० पी० को नींद नहीं आती थी। वह हर वक्त इसी चिंता में थे कि नेताओं ने जनता को बिना किसी प्रोग्राम के युद्ध में छोड़ दिया है। इससे अगस्त क्रांति में संगठनहीनता आएगी और सरकार दमन करने में जल्दी कामयाब हो जाएगी।

बहुत सोचविचार कर जे० पी० ने अंत में एक योजना बनाई कि पूरा जेल ही खाली हो जाय। फ्रांस की क्रांति में बेस्टाइल जेल तोड़ा गया था। अब वही यहां दुहराना है। जे० पी० ने जेल की कोठरी में बैठे-बैठे यह अनुभव किया कि जनता की शक्ति 'दबाव की राजनीति' की धारा से निकलकर 'शक्ति पर कब्जा' की धारा में प्रवाहित हुई है जिसके सामने पहली बार अंग्रेज साम्राज्यवादी शक्ति ढहने जा रही है। ट्राट्स्की की वह बात याद आई : क्रांति की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उसमें जनता ऐतिहासिक घटनाओं से सीधे-सादे हस्तक्षेप करके चीजों को अपने हाथों में ले लेती है। साधारण समयों में राष्ट्र, चाहे वह राजतांत्रिक हो या लोकतांत्रिक, ऊपर उठकर खड़ा हो जाता है और उस दिशा में जो विशेषज्ञ होते हैं अर्थात् राजा, मंत्री, नौकरशाही के लोग, संसदवादी, पत्रकार लोग इतिहास का निर्माण करते हैं। पर क्रांति का इतिहास सर्वोपरि इस बात का इतिहास है कि जनता अपने भाग्य निर्माण के कार्य में जबरदस्ती घुस आए।

जे० पी० स्वयं और अपने मित्रों को उसी क्रांतिकारी जनता के बीच ले जाने के लिए व्याकुल थे। जेल में उपस्थित सभी क्रांतिकारियों के सामने जे० पी० ने वह योजना रखी। लोग उसे सुनकर घबरा गए। उस योजना के बारे में लोग रातभर सोचते रहे। दूसरे दिन जेल के एक अधिकारी ने जे० पी० से इस तरह की बातें कीं कि लगा जैसे गुप्त योजना की भनक अधिकारियों तक पहुंच गई है। उसी दिन से जेल के भीतर पहरे में भी रद्दोबदल कर दी गई। सुरक्षा की व्यवस्था भी कड़ी हो गई।

योगेन्द्र शुक्ल ने मजाक किया : लीजिये जनाब, जेल तोड़ने चले थे। ऐसे काम भला कहीं सार्वजनिक सलाह से होते हैं?

जेल से बाहर समाचार पत्रों का दमन होने के कारण जनता को देश की घटनाएं जान सकना मुश्किल हो गया। अपनी भावनाओं को प्रकट करना जनता के लिए असंभव हो उठा। सभाओं तथा जुलूसों पर पहले ही से प्रतिबंध लगा हुआ था। फिर भी यदि कोई जुलूस निकालता तो सरकार उस पर अश्रु गैस छोड़ती और गोलियां बरसाती थी। लोगों की भावनाएं असह्य हो उठी थीं। जनता के जुलूसों पर सरकार ने हवाई जहाजों का उपयोग करने में भी कमी नहीं की। अगस्त बीतते जेल में यह खबर आने लगी कि नेतृत्व के अभाव में 'क्रांति' ठंडी होती जा रही है। पश्चिम से नाजी, और पूरब से जापानी बढ़ते चले आ रहे थे। तभी जे० पी० ने तय किया : अब जेल में नहीं बैठा रहा जाता। यहां से निकलना है। चाहे जैसे!

और उसके लिए जे० पी० ने अपनी सारी तैयारियां गुप्त रूप से शुरू कर दीं। इस बार कुछ चुने हुए साथियों के साथ जेल से निकल भागने की योजना थी।

उस समय गांधी और 'बा' आगाखां पैलेस में बंदी थे और 'भारत छोड़ो आंदोलन' के संबंध में अंग्रेजों के झूठे प्रचार तथा दमन के खिलाफ सत्याग्रह के अंतिम अस्त्र अनशन के प्रयोग के बारे में सोच रहे थे। जवाहरलाल नेहरू अहमदनगर किले में 'डिस्कवरी आफ इंडिया' लिखने में लगे थे। प्रभावती

भागलपुर सेंट्रल जेल में थीं। वहां वह जेल को आश्रम बनाने में लगी हुई थीं।

जेल में जे० पी० की बंद कोठरी के दरवाजे पर सारी पुरानी बातें माथा टकरा रही थीं। सन् अड़तीस में जो व्यक्तिगत पत्र जवाहरलाल नेहरू को लिखा था, वे अपनी पंक्तियां उस क्षण ज्वाला की तरह दहक रही थीं—'भाई, सवाल है शत्रु पर धावा बोलने का। टूट पड़ने का। हम उसके लिए क्या तैयारी कर रहे हैं? हम किस समय का इंतजार कर रहे हैं?'

पर वही भाई नेहरू उस समय 'भारत की खोज' में लगे थे।

जे० पी० को गांधी से की हुई वे तमाम बातें आग बनकर सामने जल रही थीं :

'बापू, आपके सत्याग्रह में युद्ध की पूर्व तैयारी की गुंजाइश नहीं है।

'तुम जो चाहो अहिंसा की परिभाषा कर सकते हो।

'सवाल शत्रु पर धावा बोलने का है।'

किसी से कोई उत्तर नहीं मिलता। ऐसे समय और कौन उत्तर दे सकता है? यह उत्तर शब्दों में भी संभव नहीं। केवल कर्म से इसका उत्तर दिया जा सकता है।

मैं दूंगा इसका उत्तर!

क्योंकि प्रश्न मैंने किया था।

जे० पी० की शांत आंखों में ज्वाला धधक पड़ी। बापू कहते हैं सत्याग्रह न सही तो सविनय अवज्ञा करो। पर किस चीज की अवज्ञा करो? अगर सत्य ही मिल जाय तो आग्रह की क्या जरूरत? अवज्ञा किसकी? क्यों? जवाहरलाल को अंग्रेज 'आदर्श बंदी' कहते थे। वह 'डिस्कवरी आफ इंडिया' में अपनी भारतीय पृष्ठभूमि की खोज कर रहे थे। नहीं, वह इसकी खोज पूरी नहीं कर सकते।

क्यों?

'जो हर जगह अजनबी है, जिसका घर कहीं भी नहीं—यह नेहरू भारत की खोज नहीं कर सकते।'

बाहर निकलने के लिए साथी चुन लिए गए। और उसकी तैयारी भी नये सिरे से होने लगी। तभी एक दिन देखा गया, समूचे जेल पर सशस्त्र पुलिस का पहरा है। जेल की जो बुर्जियां, गुंबद सिर्फ शोभा के लिए थे उन पर दिन में बंदूकों की संगीनें चमकती हैं और रात को गैस की बत्तियां।

अगस्त बीता। सितंबर भी बीत गया। दिवाली आने को है। बहुत सारे बंदियों को अदालत से सजाएं मिल चुकीं और वे अन्य जेलों में भेजे जा चुके। फलतः सशस्त्र पुलिस का पहरा भी धीरे-धीरे हटा लिया गया। प्रांत के प्रायः सभी नेता यहां अब पहुंच चुके थे और जेल में वही सत्याग्रही जीवन बिताया जा रहा था। सरकार से उन दिनों दस आने का राशन लेना, डटकर खाना, पढ़ना, खेलना, सोना और हंसना। पर जे० पी० और उनके साथियों के भाग्य में यह भी नहीं बदा था—क्योंकि वे लोग यहां के 'सी० क्लास' के राजबंदियों के प्रश्न को लेकर संघर्ष कर रहे थे और अपने क्लास की सहूलियतों और आराम

को छोड़कर सात पैसे
थे।
इस भोजन ने
वह तेजी से चल
उनका हृदय और
जहां तक जेल
कठिन नहीं था।
बंदियों की कहानी
दीवार से बाहर
बुरा स्वास्थ्य।
तो यह थी कि
शहर पहुंचा दे।
गया, कोई ऐसा
स्थान पर पहुंचा
योजना तैयार हो
वार्डबंदी शुरू हो
होगा। यदि सात
जा सकता है।
फिर दौड़कर
उसी तरह
इसलिए को
जे० पी० के
मन देर होती है
तो?
तो क्या?
जे० पी० का मु
जे० पी०
जूद कई ऐसी
जेल के वार्डरों
सकता है।
जेल से नि
गया। चुनाव
साथियों को
वक्त तक वा
से अधिक स
अलावा अन्य
भागने में जे०
इस यु
कारी योगम

को छोड़कर सात पैसे रोजाना के ही राशन पर जिंदगी का सामना कर रहे थे।

इस भोजन ने जे० पी० के स्वास्थ्य को और भी चौपट कर डाला था। न वह तेजी से चल सकते थे न तनकर खड़े हो सकते थे। किंतु इस संकल्प से उनका हृदय और मस्तिष्क और भी मजबूत हो गया था।

जहां तक जेल की दीवार के उस पार जाने का सवाल था वह इतना कठिन नहीं था। उसका इतिहास तो था यहीं। सरदार सुच्चासिंह और सिख बंदियों की कहानी अभी ताजी थी। पर वही कहानी नहीं दुहरानी है। मतलब दीवार से बाहर जाकर न निकल भाग सकने की कहानी। फिर जे० पी० का बुरा स्वास्थ्य। उनके पैरों में 'साइटिका' का मर्ज। इसलिए पहली जरूरत तो यह थी कि कोई तेज सवारी हो, जो जे० पी० को तुरंत किसी स्टेशन या शहर पहुंचा दे। पर बाहर से ऐसी कोई योजना नहीं बन पाई। तब सोचा गया, कोई ऐसा आदमी खोजा जाय जो जंगलों की राह से किसी सुरक्षित स्थान पर पहुंचा दे। और यह सुरक्षित स्थान कम से कम दूरी पर हो। योजना तैयार होने लगी रात में ही जाया जा सकता है। नौ बजे रात को वार्डबंदी शुरू हो जाती है। इसलिए बिल्कुल शाम को ही निकल जाना ठीक होगा। यदि सात बजे शाम को भी जाया जाए, तो दो घंटे में काफी दूर निकला जा सकता है। क्योंकि वार्डबंदी के समय रहस्य का पता चल ही जाएगा। तो फिर दौड़कर पकड़ ही लेंगे।

उसी तरह जैसे सुच्चासिंह के साथ हुआ था।

इसलिए कोई दूसरी तरकीब सोची जाए।

जे० पी० के वैज्ञानिक दिमाग में आया त्योहारों के दिन वार्डबंदी में अमूमन देर होती है। विजयादशमी की रात, आधी रात तक वार्ड खुले रहते हैं।

तो?

तो क्या? विजयादशमी के बाद दिवाली। दिवाली की रात पक्की। सब जे० पी० का मुस्कान भरा-गंभीर मुंह देखते रह गए।

जे० पी० योजना के पूरे विस्तार में जाते हैं। बुर्जियों की रोशनी के बावजूद कई ऐसी जगहें हैं जहां दीवार के निकट अंधकार रहता है। ठीक है। जेल के वार्डरों और जमादारों को कुछ देर तक बातों में फंसा के रखा जा सकता है।

जेल से निकल भागने के लिए अंतिम रूप से साथियों का चुनाव पूरा हो गया। चुनाव में दो बातों का ध्यान रखा गया। एक तो यह कि कुछ ऐसे साथियों को जेल में रहना चाहिए जो दिवाली की उस रात को ज्यादा से ज्यादा वक्त तक वार्डबंदी में विलंब करा सकें। ताकि बाहर भागने वालों को अधिक से अधिक समय मिल सके। दूसरी बात, बाहर निकलने वालों में जयप्रकाश के अलावा अन्य ऐसे व्यक्ति हों जो वक्त पड़ने पर बाकायदे लड़ाई लड़ सकें। भागने में जे० पी० की मदद भी कर सकें।

इस चुनाव के बाद गुप्त योजना के नेता बनाए गए बिहार के प्रथम क्रांतिकारी योगेन्द्र शुक्ल, जे० पी० संचालक थे ही। अन्य लोगों में थे सूर्यनारायणसिंह,

गुलाबचन्द या गुलाली, रामनन्दन मिश्र और राह बताने के लिए हजारीबाग कांग्रेस कमेटी के मंत्री शालिग्राम।

दीवाली की सुबह। जयप्रकाश बहुत सुबह नहीं उठ पाते। पर आज जल्दी उठ गए हैं। दाढ़ी के बाल बढ़े हैं। और बहुत दुबले लग रहे हैं। आगे के दो दांत भी नहीं हैं। आंखें कुछ धंसी हुई। गाल पिचके हैं। चलते हैं तो अभी से जरा झुककर और जमीन को नापते हुए से। अपने वार्ड से बाबू वार्ड आते हैं। रामवृक्ष बेनीपुरी ने उनकी कमजोरी के बारे में चिंता व्यक्त की। जयप्रकाश बोले : क्या आप समझते हैं जिस्म ही सब कुछ है—स्पिरिट कुछ नहीं। और जब मैं तय कर चुका तो इस आखिरी वक्त में यह सब कहने का क्या फायदा? मुझे जाना चाहिए, मैं जा रहा हूं। आगे जो होना होगा, होगा।

लोग जे० पी० को चुपचाप देखते रह गए।

योजना अनुसार दीवाली मनाने की सारी तैयारियां हो रही हैं। खेल, दावतें, गाने, नाच मस्ती खुशी। उधर चुपचाप बाहर से रुपयों का इंतजाम हो गया है। रामनन्दन खजांची हैं। कपड़े, जूते, खाने का सामान एक गठरी में बांधा जा चुका है। इधर नये-नये पकवान बन रहे हैं। कई जगहों से जे० पी० को पकवान खाने की दावतें मिल चुकी हैं। शाम को कृष्णवल्लभ सहाय ने जे० पी० से बैडमिंटन का मैच बदा है। डाल्टेनगंज के जदू बाबू ने ताश में जे० पी० को हराकर दो टिन स्टेट एक्सप्रेस सिगरेट जीतने का निश्चय कर लिया है।

गाने-बजाने के साथ चिराग जलाए जाने लगे। मिठाई-पकवान खाने-पीने के बाद एक थाल में बयालीस दीपक जलाकर सजाए गए। जुलूस बनाकर शांति से उस थाल के साथ लोग हर वार्ड में घूमने लगे। योगेन्द्र शुक्ल गाने लगे :

'वह हिन्दू जो जिंदा कांप रहा है गूंज रही है तदबीरें।
उकताये हैं शायद कुछ कैदी और तोड़ रहे हैं जंजीरें।।"

उस वक्त उस जेल में जयप्रकाश की कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी के कुल सौ सदस्य थे। पर उन्हें भी उस रहस्य का पता नहीं। सारा रहस्य केवल बारह लोगों को पता है। छः जाने वाले, छः यहीं रहकर स्थिति संभालने वाले, बस।

सारे वार्डों में जलते हुए उन बयालीस चिरागों से सजी थाली के साथ वह जलूस नाचता-गाता घूम रहा था। उधर उसी बीच नई धोतियों की बनी रस्सी के सहारे वे छः कैदी जेल की वह ऊंची दीवार पार कर गए।

सारी रात इधर जेल के भीतर वही छः लोगों ने तरह-तरह के झूठ बोल कर, खाट बिछावन पर मसहरी गिराकर, गायब लोगों को बीमार बताकर, उनकी कोठरियों के दरवाजों पर पहरा देकर, बिता डाली। कहीं किसी को फरारियों के बारे में कानोंकान पता नहीं लग सका।

सुबह होती है। वही छः लोग उनके कमरों में देखते हैं : कपड़े यहीं छूट गए हैं। जूते रह गए हैं। खाना भूल गए हैं। साथ रुपये भी ले जाना भूल गए हैं।

थोड़ा-सा ही दिन चढ़ा होगा कि जेल की पगली घंटी बज उठी। सारा जेल गूंज गया।

जेल की दीवार फांदकर जे० पी० अपने दोस्तों के साथ पहले छाती के बल रेंगते हुए बढ़े थे। थोड़ी दूर के बाद हाथ और घुटनों के सहारे चले थे। फिर पेड़ों और झाड़ियों में छिपते हुए भागे थे। जे० पी० के शरीर पर सिर्फ एक ऊनी बनियान थी। कमर में पाजामा था। पैर नंगे थे। भाग रहे थे कि अचानक सबके सब कीचड़भरे नाले में गिर पड़े। दीवाली की अन्धेरी रात। हजारीबाग में नवंबर के प्रारंभ से ही जाड़ा पड़ने लगता है। सबके कपड़े कीचड़ में सन गए।

अजब रोमांचकारी थी वह यात्रा। जे० पी० को जैसे अब तक कुछ नहीं भूला है। जब सुबह होने लगी तो जे० पी० से अब आगे एक कदम भी नहीं चला जाता था। एक तो पैर में साइटिका का दर्द, दूसरे नंगे पैर, लहूलुहान हो गए थे। सब एक पेड़ के नीचे बैठ गए थे। अचानक रामनन्दन ने देखा, जेब में सिगरेट और माचिस है।

जे० पी० ने कहा : तो जरा आग जलाइए। कपड़ों तो सुखा लें।

जंगल की पत्तियां जुटाकर आग जलाई गई। कपड़ों और शरीर को गर्मी मिलने लगी। सुबह हुई। अब आगे और संभलकर चलना होगा।

दोपहर होते-होते मारे थकान और भूख के लोग बेहाल हो गए। योगेन्द्र शुक्ल की जेब में चवन्नी मिल जाती है। उसी से चूड़ा खरीदा गया। नमक और लाल मिर्च के साथ चूड़ा चबाना पड़ा। आगे चलने से जयप्रकाश के घायल पैरों ने इन्कार कर दिया। तब पांवों के तलुओं में लत्ते बांधकर साथियों के कंधों का सहारा लेकर जे० पी० बढ़े साहस के साथ आगे बढ़े। तभी आसमान में एक जहाज मंडराता हुआ दिखा। शक हुआ शायद पास के रांची हवाई अड्डे से इनकी ही खोज में जहाज तो नहीं है। अतः अब सबको अलग-अलग चलना चाहिए। योगेन्द्र और शालिग्राम ने एक-दूसरे का हाथ पकड़कर उस पर जयप्रकाश को बैठाया और इन्हें टांगकर ले चले।

शाम हो गई। रात को कहीं सोना भी खतरे से खाली नहीं था। इसलिए जे० पी० ने चलते ही रहने की सलाह दी। अंधेरे में एक बैलगाड़ी मिली। उससे कहा गया : 'भइया, जरा हमें अपनी बैलगाड़ी पर लेते चलिए। हम मुसाफिर हैं। रास्ते में हमें डाकुओं ने लूट लिया है।' पर गाड़ीवान तैयार नहीं हुआ।

आधी रात के बाद तक ये लोग उसी तरह किसी प्रकार चलते रहे। चवन्नी में खरीदा हुआ वही कुछ शेष चूड़ा खाया गया। थोड़ी नींद ली गई और ठीक चार बजे फिर यात्रा शुरू।

दिन के करीब एक बजे शालिग्राम का गांव आता है। शालिग्राम को गांव वाले देख न लें। इसलिए वह खलिहान में ही छिपकर घर का भोजन करते हैं। और शेष पांचों लोग घर में बैठकर भोजन करते हैं। पूरे पैंतालीस घंटे के बाद। शालिग्राम के बड़े भाई दुबे जी ने एक बैलगाड़ी दी। उस पर घायल और बीमार जयप्रकाश, रामनन्दन और गुलाली को देहाती कपड़े पहनाकर सुला दिया जाता है और कंधे पर कुल्हाड़ी रखे, सिर पर पग्गड़ बांधे योगेन्द्र, शालिग्राम और सूरज गाड़ी के पीछे-पीछे चलते हैं। इन कुल्हाड़ियों के कारण एक

जेल की दीवार फांदकर जे० पी० अपने दोस्तों के साथ पहले छाती के बल रेंगते हुए बढ़े थे। थोड़ी दूर के बाद हाथ और घुटनों के सहारे चले थे। फिर पेड़ों और झाड़ियों में छिपते हुए भागे थे। जे० पी० के शरीर पर सिर्फ एक ऊनी बनियान थी। कमर में पाजामा था। पैर नंगे थे। भाग रहे थे कि अचानक सबके सब कीचड़भरे नाले में गिर पड़े। दीवाली की अन्धेरी रात। हजारीबाग में नवंबर के प्रारंभ से ही जाड़ा पड़ने लगता है। सबके कपड़े कीचड़ में सन गए।

अजब रोमांचकारी थी वह यात्रा। जे० पी० को जैसे अब तक कुछ नहीं भूला है। जब सुबह होने लगी तो जे० पी० से अब आगे एक कदम भी नहीं चला जाता था। एक तो पैर में साइटिका का दर्द, दूसरे नंगे पैर, लहूलुहान हो गए थे। सब एक पेड़ के नीचे बैठ गए थे। अचानक रामनन्दन ने देखा, जेब में सिगरेट और माचिस है।

जे० पी० ने कहा : तो जरा आग जलाइए। कपड़ों तो सुखा लें।

जंगल की पत्तियां जुटाकर आग जलाई गई। कपड़ों और शरीर को गर्मी मिलने लगी। सुबह हुई। अब आगे और संभलकर चलना होगा।

दोपहर होते-होते मारे थकान और भूख के लोग बेहाल हो गए। योगेन्द्र शुक्ल की जेब में चवन्नी मिल जाती है। उसी से चूड़ा खरीदा गया। नमक और लाल मिर्च के साथ चूड़ा चबाना पड़ा। आगे चलने से जयप्रकाश के घायल पैरों ने इन्कार कर दिया। तब पांवों के तलुओं में लत्ते बांधकर साथियों के कंधों का सहारा लेकर जे० पी० बड़े साहस के साथ आगे बढ़े। तभी आसमान में एक जहाज मंडराता हुआ दिखा। शक हुआ शायद पास के रांची हवाई अड्डे से इनकी ही खोज में जहाज तो नहीं है। अतः अब सबको अलग-अलग चलना चाहिए। योगेन्द्र और शालिग्राम ने एक-दूसरे का हाथ पकड़कर उस पर जयप्रकाश को बैठाया और इन्हें टांगकर ले चले।

शाम हो गई। रात को कहीं सोना भी खतरे से खाली नहीं था। इसलिए जे० पी० ने चलते ही रहने की सलाह दी। अंधेरे में एक बैलगाड़ी मिली। उससे कहा गया : 'भइया, जरा हमें अपनी बैलगाड़ी पर लेते चलिए। हम मुसाफिर हैं। रास्ते में हमें डाकुओं ने लूट लिया है।' पर गाड़ीवान तैयार नहीं हुआ।

आधी रात के बाद तक ये लोग उसी तरह किसी प्रकार चलते रहे। चवन्नी में खरीदा हुआ वही कुछ शेष चूड़ा खाया गया। थोड़ी नींद ली गई और ठीक चार बजे फिर यात्रा शुरू।

दिन के करीब एक बजे शालिग्राम का गांव आता है। शालिग्राम को गांव वाले देख न लें। इसलिए वह खलिहान में ही छिपकर घर का भोजन करते हैं। और शेष पांचों लोग घर में बैठकर भोजन करते हैं। पूरे पैंतालीस घंटे के बाद। शालिग्राम के बड़े भाई दुबे जी ने एक बैलगाड़ी दी। उस पर घायल और बीमार जयप्रकाश, रामनन्दन और गुलाली को देहाती कपड़े पहनाकर सुला दिया जाता है और कंधे पर कुल्हाड़ी रखे, सिर पर पग्गड़ बांधे योगेन्द्र, शालिग्राम और सूरज गाड़ी के पीछे-पीछे चलते हैं। इन कुल्हाड़ियों के कारण एक

तो ऐसा मालूम पड़ता था कि ये लोग सचमुच जंगल से लौट रहे हैं, दूसरे मौका आने पर इन कुल्हाड़ियों से रक्षा भी की जा सकती थी। रास्ते में एक पुलिस चौकी मिली। सब सो रहे थे।

अगले दिन सुबह जे० पी० अपने मित्रों के साथ गया किले में पहुंच गए। दुबे जी की बैलगाड़ी लौटा दी गई। वहीं यह तय किया गया कि उन्हें अब दो दलों में बंटकर अलग-अलग दिशाओं में जाना होगा। एक दल में जयप्रकाश, रामनन्दन और शालिग्राम, इन्हें बनारस जाना है। दूसरे दल में शुक्ल जी, सूरज और गुलाली, इसे गंगापार उत्तर बिहार में जाना होगा।

अब तक अखबारों में जेल से इन छः फरारियों के समाचार गांव-गांव में फैल चुके थे। तरह-तरह की कहानियां और चर्चे चल रहे थे। कवियों ने तत्काल गीत बना डाले थे :

'गूंज उठा नीलाकाश
जयप्रकाश जयप्रकाश
किंतु बांध पाई नहीं
जीवित विद्रोह को
क्रांति के सेनानी
वीर जयप्रकाश को
दैन्य था हजारीबाग
दैन्य था कारागार
पराभूत सैनिक-सी
जेल की भीमकाय
दीवारें विनत हुई
अपनी पराजय पर !
अपनी परवशता पर !!'...

कोई कहीं पहचान न ले। किसी ने सिर मुंडन करा लिया है। कोई मुसलमान के भेष में। कोई पंडा बन गया है। फिर भी लोग पहचानने की कोशिश करते हैं :

—ए जी, आपको कहीं देखे रहल छी।

—दुरजी, हमर जात काहे ले रहल छी।

यह कहते हुए लोग निकल जाते हैं।

9

जयप्रकाश के साथ रामनन्दन और शालिग्राम बोधगया पहुंचते हैं। बोधगया के पास ही शालिग्राम की ससुराल, कचहरी थी। लोग वहां पहुंचे। पर सारा कुछ ससुराल में गुप्त रखा गया। वहां तीन दिनों तक विश्राम हुआ।

कचहरी में ही जयप्रकाश अपने सिर के खूबसूरत केश मुड़ा देते हैं। वहां से बैलगाड़ी पर चलते हैं। रास्ते में एक पहाड़ी के नजदीक पहुंच कर ससुराल की बैलगाड़ी लौटा दी जाती है। एक विशेष गाड़ी का प्रबंध किया गया था जिस

पर छावनी लगी है । नीचे तीसी के बोरे हैं । बोरों के बीच जगह बना दी गई है । उसी तंग जगह में छिपकर तीनों बैठते हैं और गया शहर को पार करते हैं । रात का समय था । 'ब्लैक आउट' का जमाना । कुशल से सब पार हो गया । रात के उसी अंधेरे में ही आगे फल्गु नदी का पुल । फिर गोड़ारु, ओबरा और पामरगंज, सब पार हो जाता है । गाड़ी वहीं छोड़ दी जाती है, क्योंकि आगे सोन के पुल पर अंग्रेजी सैनिकों के सख्त पहरे हैं । तो नहर पकड़कर सात मील की दूरी पर सोन को पार किया जाता है ।

और अब वे शाहाबाद जिले में हैं । अपनी मातृबोली भोजपुरी का प्रदेश । घुटने तक धोती । सिर पर धोती की ही पगड़ी । दाढ़ी बढ़ी है । बदन में गाढ़े का कुरता । हाथ में ऊंची लाठी : यह हैं जयप्रकाश, आगे-आगे चल रहे हैं ।

रास्ते में लोग पूछते ही हैं : कहां रउआं, जातानी ? कहां से आवातानी कहां के रहेवाला हईं हैं ?

जे० पी० उसी बोली में उत्तर दे देते हैं । पर देखने वाले लोग देखते ही रह जाते हैं : बड़ा सूधर लौकत बा ।

—कौनो देखनहारू जा रहल बा ।

अगले दिन करबदिया स्टेशन पर वह पैसेंजर गाड़ी मिलती है । थर्ड क्लास के डिब्बे की भीड़ में वे तीनों घुस जाते हैं । गाड़ी मुगल-सराय के लिए चल पड़ती है ।

मुगलसराय पहुंचकर एक्का किया जाता है । शालिग्राम को पहले बनारस भेज दिया जाता है । कुछ लोगों को खबर कर देने के लिए और कुछ विशेष तैयारी के लिए भी । पर क्या पता था कि शालिग्राम अब फिर बनारस में नहीं मिल सकेंगे । बनारस में घुसते ही पुलिस उनके पीछे पड़ गई और वह अकेले फरार हो गए ।

रामनन्दन को लेकर जयप्रकाश एक्के पर रामनगर की ओर चले । वहां से दो नावें की गईं । अलग-अलग नाव पर गंगा पार किया । नावें नगवा घाट पर लगीं, हिंदू विश्वविद्यालय के समीप । तब तक जयप्रकाश की गिरफ्तारी के लिए पांच हजार का इनाम घोषित हो चुका था ।

बनारस में छिपकर जे० पी० ने उन व्यक्तियों से संपर्क किया जो उत्तरी भारत में अगस्त आन्दोलन का संचालन कर रहे थे । इनमें मुख्य थे बनारस के विश्वनाथ शर्मा (सी० एस० पी० के संस्थापक सदस्यों में से एक, कृष्णनाथ के पिता), आगरे के श्रीराम शर्मा, मोहनलाल गौतम । उस समय बनारस ही उत्तरी भारत के आंदोलन का केन्द्र था । आंदोलन की समस्त प्रगति और गतिविधियों से जे० पी० परिचित हुए ।

उन दिनों जे० पी० की दाढ़ी बढ़ी हुई थी और वह यूरोपियन वेश में रहते थे । शीघ्र ही जे० पी० उत्तरी भारत की सत्याग्रह संचालन समिति से मिले, जो नेताओं की अनुपस्थिति में आन्दोलन का संचालन कर रही थी । जे० पी० डिक्टेटर बोर्ड के एक सदस्य बना लिए गए । पर शीघ्र ही कई बातों में और कार्यक्रम संबंधी मतभेदों के कारण उससे त्यागपत्र दे दिया और सीधे बंबई

चले गए। इतनी यात्रा में उन्होंने अगस्त क्रान्ति का जो रूप देखा उससे उन्हें अपने उस प्रस्ताव का साक्ष्य मिल गया, जिसे उन्होंने तब रामगढ़ कांग्रेस के लिए भेजा था, जिसमें उन्होंने इतने पहले अनुभव किया था कि निकट भविष्य में ऐसी ही क्रान्ति होगी, क्योंकि जे० पी० ने क्रांति का एक सामाजिक प्रक्रिया की तरह वैज्ञानिक अध्ययन किया था। उनका अध्ययन, उनकी दृष्टि, उनका पर्यवेक्षण सब कुछ उस समय यही बता रहा था कि भारत में ऐसी क्रांति अपरिहार्य है। इसे जानने के बाद उसमें अपना और अपनी पार्टी का स्थान और उसके कार्य को समझने में उन्हें देर नहीं लगी थी।

इसी को वह तब अपने पत्रों द्वारा जवाहरलाल नेहरू को बताकर उसके लिए उन्हें पूर्णत: तैयार करना चाहते थे। और उन्हें अपना क्रांतिकारी साथी बनाना चाहते थे पर वह नेहरू की तरफ से संभव न हुआ।

इस बार जे० पी० ने गांधी के 'करो या मरो' शब्दों को अपने चरित्र से अर्थ दिया। क्योंकि इसके लिए जे० पी० पहले से ही पूरी तरह तैयार थे। उन्हें पता था इस बार आंदोलन नहीं, क्रांति होगी। बहुत व्यापक स्तर पर, ऊंची सतह पर होगी और उसमें सच्चे क्रांतिकारियों को अपना जौहर दिखाने के लिए बड़े-बड़े अवसर मिलेंगे। तभी वह काफी पहले से कांग्रेस के, विशेषकर भाई नेहरू से आग्रह कर रहे थे कि वह क्रांति का पैगाम दें, तो दूसरी ओर अपनी सी० एस० पी० के एक-एक सदस्य से उसके लिए तैयार रहने की चेतावनी दे रहे थे। उस समय उनके पीछे ऐसे योग्य साथियों का दल था जो उनकी भावना को समझ गए थे और जब जे० पी० अचानक बंबई में गिरफ्तार होकर देवली कैंप में नजरबंद किए गए थे, तब उनकी अनुपस्थिति में साथियों ने महत्त्वपूर्ण कार्य किए थे। तब बंबई में सबसे ज्यादा कार्य किया था यूसुफ मेहरअली ने। मेहरअली तब बंबई के मेयर थे। उन्होंने पार्टी के हर सूबे की शाखाओं में इसकी खबर करा दी थी और गुप्त आदेश जारी कर दिये थे कि खबरदार, इस बार गल्ती नहीं होने पाए। क्रांति की तैयारी किये रहो, मौका मिलते ही टूट पड़ना। तभी अखिल भारतीय किसान सम्मेलन के बेदौल (मुजफ्फरपुर) अधिवेशन में मेहरअली और डा० लोहिया पहुंचे थे और सदस्यों की बैठक में स्पष्ट कह दिया था कि इस बार पार्टी के जो सदस्य गिरफ्तार हो जाएंगे, समझा जाएगा वे निकम्मे हैं।

स्वयं गांधी जी लोगों में गिरफ्तारी के खिलाफ मनोवृत्ति पैदा कर रहे थे। यही अर्थ था गांधी जी के उस मंत्र का : 'करो या मरो'। हजारीबाग जेल से बाहर निकलकर जे० पी० ने वही अर्थ दिया था। उसी अर्थ को लेकर उनके वे पांचों मित्र अलग-अलग दिशाओं में क्रांति की ज्वाला फैलाने निकल गए थे। उस समय क्रांति के केंद्रीय संचालक मंडल में थे—अच्युत पटवर्धन, युगल किशोर, डा० केसकर, दिवाकर, अरुणा आसफअली, सुचेता कृपलानी, मेहरअली, डा० लोहिया। संचालक मंडल के कार्यों के संपादन और नीति निर्धारण में बाबा राघवदास, अन्नदा चौधरी, वी० पी० सिन्हा, डा० गयराला, प्रोफेसर राधेश्याम, गोपीनाथसिंह, एन० एम० जोशी, गोरे, शाने गुरु जी, श्यामनन्दनसिंह, खानचंद गौतम और बसावनसिंह आदि थे।

बंबई में जे० पी० ने देखा कि अब ब्रिटिश सिंह का खूनी पंजा सारे क्रांतिकारियों के सिर पर था। दमन का भयानक चक्र चल रहा है। जे० पी० ने कहा : यह आंदोलन नहीं संघर्ष है। इसे गुप्त रूप देना होगा।

फिर क्रांतिदूत छिप-छिपकर देशभर में घूमने लगे। कांग्रेस और सी० एस० पी० के गैरकानूनी अखबार और बुलेटिनें फिर प्रकाशित होने लगीं। क्रांति की समिधा को प्रज्वलित रखने के लिए नौजवान कार्यकर्ता और विश्वविद्यालयों के छात्र अपनी जान हथेली पर लेकर घूमने लगे।

जे० पी० ने भारत के अनेक क्षेत्रों में गुप्त रूप से घूम कर उस संघर्ष का बड़ी गहराई से अध्ययन और संचालन किया। फिर तैंतालीस के जनवरी माह में स्वतंत्रता के सेनानियों के नाम उन्होंने अपना पहला ऐतिहासिक पत्र भेजा :

'साथियो !

सर्वप्रथम मैं उन समस्त वीर साथियों को हार्दिक बधाई देता हूं जो स्वतंत्रता के इस जनयुद्ध में बंदी बनाए गए हैं। ऐसी महान क्रांति इस राष्ट्र में कभी नहीं हुई और न इतना लंबा दमन उत्पीड़ित राष्ट्र में होने की संभावना थी। यह युद्ध वास्तविक अर्थों में एक 'खुला विद्रोह' था जिसे हमारे महान नेता महात्मा गांधी ने सोचा था।

'यह विद्रोह कुछ समय के लिए कुचल दिया गया-सा प्रतीत होता है, परंतु आप मुझसे सहमत होंगे कि यह स्थिति केवल क्षण-स्थायी है। उससे हम आश्चर्यचकित न हों। वस्तुतः यदि हमारा पहला दौर सफल हो जाता और उस जनशक्ति से साम्राज्यवाद नष्ट हो जाता तो वास्तव में यह एक आश्चर्य की बात होती। हमारी राष्ट्रीय क्रांति का प्रथम दौर कितना सफल था यह बात केवल इस बात से जानी जा सकती है कि स्वयं शत्रु ने स्वीकार किया है कि इस विद्रोह से उसकी सत्ता लगभग खतरे में पड़ गई थी।

'पर हमारे इस प्रथम दौर का दमन किस प्रकार किया गया ? क्या शत्रु की सैन्य शक्ति की अनवरत निरंकुशता, लूटमार, हत्याकांड एवं बर्बरता के कारण ही हमारी क्रांति कुचल दी गई ? यह समझना निर्मूल है कि विद्रोह का दमन हो गया। समस्त संसार की क्रांतियों के इतिहास हमें बताते हैं कि क्रांति एक घटना मात्र नहीं होती वरन् एक गति और सामाजिक प्रगति का मार्ग होता है। क्रांति के प्रारंभिक विकासोन्मुख काल में इसकी गति और इसका प्रवाह धीमा होता है। हमारी क्रांति भी आज उसी दिशा में है परंतु शीघ्र ही इसका वेग इतना प्रबल होगा कि उसके सम्मुख ब्रिटिश सत्ता टिक न सकेगी और अंत में विजय हमारी ही होगी। हमारी क्षणिक हार का कारण साम्राज्यवादी लुटेरों की शस्त्रों से सुसज्जित शक्तिशाली सैन्य नहीं वरन् अन्य महत्त्वपूर्ण कारण हैं।

'सर्वप्रथम, राष्ट्र में कोई ऐसा सुसंगठित संगठन नहीं था जो राष्ट्र की क्रांतिकारी बिखरी हुई शक्तियों का एकीकरण कर उनका समुचित नेतृत्व कर पाता। कांग्रेस यद्यपि एक महान संगठन था परंतु फिर भी उसका स्वर, उस महान क्रांति के अनुरूप शक्तिशाली नहीं था। संगठन के अभाव की कमी इतनी अधिक विद्यमान थी कि क्रांति के समय तक भी अनेक प्रमुख कांग्रेसजन यह न जान पाए कि आंदोलन का कार्यक्रम क्या होगा और जागरण की प्रथम बेला में उन्हें

यह बात संदिग्ध प्रतीत होती थी कि जनता के इस आंदोलन का रूप कांग्रेस कार्यक्रम के अनुकूल है अथवा नहीं। इस संबंध में यह खेद की बात है परंतु यह सत्य है कि बहुत-से प्रभावशाली कांग्रेसजनों ने अपने मस्तिष्क की वृत्ति को स्वतंत्रता के अंतिम युद्ध के अनुरूप न बनाया। जिस सच्चाई, दृढ़ता और आवश्यकीय दृष्टिकोण को लेकर कांग्रेस के चोटी के नेता महात्मा गांधी, पं० नेहरू, सरदार वल्लभ भाई पटेल एवं राजेन्द्रप्रसाद चले थे, उसकी झलक अन्य नेताओं के हृदय और मस्तिष्क में न थी।

'द्वितीय, उत्थान के प्रथम वेग के समाप्त होने के पश्चात् जनता के समक्ष कोई कार्यक्रम न था। जिन क्षेत्रों में ब्रिटिश राज्य का पूर्ण रूप से मूलोच्छेदन होगया वहां की जनता ने समझा कि उनका समस्त कार्य पूर्ण हो गया है और वे भविष्य के विषय में कोई कार्यक्रम न जानने के कारण अपने-अपने घरों को वापस चले गए। वे नहीं जानते थे कि अब क्या करें। यह अपराध उनका न था, असफलता हमारी हुई क्योंकि हमें उन्हें अगले कदम का कार्यक्रम बतलाना चाहिए था। इसके अभाव में विद्रोह शांत हो गया और निष्क्रियता का युग प्रारंभ हुआ। यह स्थिति उस समय से बहुत पहले ही प्रारंभ हो चुकी थी, जब कि असंख्य ब्रिटिश सैनिकों ने आकर आंदोलन की रही–सही गति को भी नष्ट कर दिया। अब प्रश्न यह है कि जनता के सम्मुख उस द्वितीय दौर के लिए क्या कार्यक्रम रखना चाहिए? प्रश्न का उत्तर स्वयं उस क्रांति के रूप से ही मिल जाता है। क्रांति एक ध्वंसकारी प्रवृत्ति ही नहीं वरन् उसके साथ ही साथ यह एक महान निर्माणकारी शक्ति भी है। कोई भी क्रांति केवल विनाशमयी प्रवृत्ति से सफल नहीं हो सकती। हमारी क्रांति ने भी नाश के ध्वसंकारी साधनों द्वारा अनेक क्षेत्रों को हस्तगत कर लिया था, तब एक यथार्थ निर्माणकारी कार्यक्रम की आवश्यकता थी। जिस जनता ने विदेशी सत्ता के शासन संबंधी समस्त साधन एवं शक्तियां नष्ट कर दी थीं वहां उसे अपने क्षेत्रों में अपनी क्रांतिकारी सरकार बनाने के साथ-साथ अपनी पुलिस और फौज का भी निर्माण करना चाहिए था। यदि जनता इस प्रकार कार्य करती तो निश्चित रूप से उसके द्वारा रचनात्मक कार्यक्रम को करने का एक विशाल क्षेत्र हमारे सम्मुख होता और उससे क्रांति की लहर निरंतर बढ़ती ही चली जाती और यदि यह उद्वेग और उत्थान अखिल भारतीय होता तो समस्त क्षेत्रों में साम्राज्यवादी सत्ता ध्वस्त हो जाती और शक्ति जनता के हाथ में आ जाती।

'सुसंगठित संगठन का अभाव और राष्ट्रीय क्रांति के कार्यक्रम का पूर्ण ज्ञान न होना इन्हीं दो कारणों से इस आंदोलन के प्रथम दौर के पश्चात् ही इसका ह्रास हो गया।

'प्रश्न उठता है कि अब हम क्या करें? सर्वप्रथम हमें अपने मस्तिष्क से समस्त निष्क्रियता निकाल देनी चाहिए। और जनता को भी इसी प्रकार का बनाना चाहिए। हमें आशा का वातावरण उत्पन्न करना चाहिए, मानो हमें अपने कृत्यों में सफलता मिली हो अथवा भविष्य में सफलता की आशा हो।

'इसके अतिरिक्त हमें अपने मस्तिष्क में क्रांति की रूपरेखा सदैव विद्यमान रखनी चाहिए। यह हमारी स्वतंत्रता का अंतिम युद्ध है। अतः हमारा उद्देश्य

विजय के अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं हो सकता, न इस आधार पर कोई समझौता ही हो सकता है। श्री राजगोपालाचारी जैसे व्यक्तियों का एक राष्ट्रीय सरकार बनाने का प्रयत्न व्यर्थ ही नहीं अपितु इन अर्थों में घातक भी है कि उससे जनता का ध्यान और मनोवृत्ति वास्तविक युद्ध से हट जाती है। 'भारत छोड़ो' और 'राष्ट्रीय सरकार' के नारों में कोई समानता या समझौता नहीं हो सकता। जो व्यक्ति कांग्रेस-लीग एकता का नारा लगा रहे हैं, वे केवल साम्राज्यवादी हितों की सुरक्षा और प्रचार में हाथ बटा रहे हैं। एकता का अभाव ही राष्ट्रीय सरकार बनाने में बाधक नहीं परंतु साम्राज्यवादी सत्ता स्वाभाविक रूप से स्वयं अपना अंत नहीं चाहती। श्री चर्चिल ने तो इस विषय में कोई संदेह बाकी छोड़ा ही नहीं है। उन्होंने स्पष्ट रूप से घोषणा कर दी है कि मैंने सम्राट् का मंत्रित्व इसलिए स्वीकार नहीं किया कि मैं नष्ट होते साम्राज्य की बागडोर संभालूं और उसका दोष अपने सिर पर लूं। श्री चर्चिल इतिहास के एक मूर्ख विद्यार्थी हैं यदि वे समझते हैं कि साम्राज्यवाद स्वयं ही नष्ट हो जाएगा।

'जबकि हमने अपना दृष्टिकोण पूर्ण रूप से विजय के लक्ष्य पर स्थिर कर दिया है तब हमें आगे बढ़ना है। हमें उसके लिए क्या ठोस कार्य करना होगा? एक सेनापति युद्ध के हारने एवं जीतने के पश्चात् क्या करता है? वह अगले युद्ध के लिए सामग्री एकत्रित करता है और युद्ध की आवश्यक तैयारियां प्रारंभ करता है। मार्शल रोमेल भी अल अलामीन पर आवश्यक तैयारी व संगठन के लिए अपनी महान विजय के पश्चात् रुक गया। सिकंदर ने भी तैयारियां की थीं और इसी कारण उसने अपनी गंभीर हार को विजय के मुखरित स्वर में बदल दिया। हमारी तो यह हार भी नहीं थी। वस्तुतः हमने लड़ाई की पहली टक्कर में विजय प्राप्त की, क्योंकि देश के अनेक लम्बे-चौड़े भागों पर ब्रिटिश साम्राज्य के शासन की जड़ें उखड़ गईं। जनता ने अनुभव के आधार पर यह बात जान ली है, कि ब्रिटिश साम्राज्य के कल-पुर्जे पुलिस, मजिस्ट्रेट, अदालतें और जेलें केवल ताश के भवन हैं, जो कभी भी ढहाए जा सकते हैं। यह पाठ कभी भुलाया नहीं जा सकता क्योंकि वे ही हमारे आगामी संग्राम के प्रथम लक्ष्य होंगे।

'आज हमारा तीसरा और सबसे प्रमुख कार्य आने वाले महान अभियान के लिए आवश्यक तैयारी करना है। हम अपने को संगठित करें और अनुशासन सीखें—यही हमारी आज की प्रमुख आवश्यकता और लक्ष्य है।

'आगामी युद्ध? हम कब अगला कदम उठाने की आशा रखते हैं? कुछ व्यक्ति सोचते हैं कि जनशक्तियां आगामी पांच या छः वर्षों तक नहीं उभर सकतीं। यह अनुमान शांतिकालीन माप के अनुसार ठीक हो सकता है परंतु एक तेजी से बढ़ती हुई, युद्ध और विप्लवों से पूर्ण दुनिया के लिए यह अनुमान गलत है। ब्रिटिश फासिस्टों के बर्बर अत्याचारी लिनलिथगो और हैलट अपने किराये के टट्टुओं के बल पर भले ही कुछ दूर के लिए जनता को झुकाने में सफल हो गए हों, पर वे कहीं भी जनता को अपना शुभचिंतक बनाने में सफल नहीं हो सके हैं। समस्त देश में जब कि नाजियों के समान यंत्रणाकारी जेलों के दरवाजे खुल गए, तभी से जनता के असंतोष एवं प्रतिहिंसा की आग सुलग

रही है । जनता को केवल यही समझना है कि शक्तिशाली तैयारियां फिर एक नये उत्साह में प्रकट होकर हमारे नये आक्रमण का रूप धारण करेंगी । जो कि कठोर अनुशासन एवं समन्वित शक्तियों द्वारा होगा । अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियां भी हमारी सहायता को प्रस्तुत हो सकती हैं । इसके अतिरिक्त गांधी जी का आमरण अनशन हमारे और जनता के लिए निरंतर एक ऐसी याद है जो जनता को कभी निष्क्रिय, शांत और अनिश्चित न होने की प्रेरणा देती है ।

'आगामी युद्ध का प्रश्न क्रांतिकारी के उस स्थिर और आवश्यक कार्य से जुड़ा हुआ है जिसके द्वारा हमें क्रांतिकारी सरकारों का निर्माण करना होगा और क्रांतिकारी सरकारों के निर्माण का प्रश्न हिंसा और हथियारबंद फौजों को रखने के प्रश्न से जुड़ा हुआ है । मैं इस कारण से इस प्रश्न पर अपने विचार आपके सम्मुख रखना चाहता हूं ताकि आप समझ सकें कि मेरा मस्तिष्क और मेरे विचार आगामी क्रांति पर गहन प्रकाश डालते हैं ।

'सबसे पहले मैं समझता हूं कि मुझे ब्रिटिश अधिकारियों द्वारा इस क्रांति में होने वाली हिंसा के अभियोग का उत्तर देना चाहिए । मैं स्वीकार करता हूं कि जनता ने अत्यंत उत्तेजनात्मक परिस्थितियों में कुछ हिंसा का प्रदर्शन किया, परंतु यह उस व्यक्तिगत एवं सामूहिक अहिंसा के प्रदर्शन के सम्मुख अत्यंत नगण्य था । हम यह कदाचित् नहीं सोचते कि विदेशी सत्ता के हजारों भारतीय और विदेशी नौकर कुछ दिनों तक जनता की दया पर निर्भर थे जिसने उनके विरोधी कृत्यों के पश्चात् भी उन पर दया का प्रदर्शन किया और उनके जीवन और धन की रक्षा की थी । आप उन हजारों नवयुवकों के विषय में क्या कहेंगे, जिन्होंने इतनी शांति और धैर्य के साथ शत्रु की गोलियों को सहा, जिनके हाथों में तिरंगे झंडे थे और मुख पर 'इन्कलाब जिंदाबाद' के गीत । क्या अंग्रेजों के पास उस नैसर्गिक साहस की प्रशंसा में एक भी शब्द है ?

'......मैं निःसंकोच स्वीकार करता हूं कि यदि वीरों की अहिंसा का एक बड़े रूप में प्रयोग किया जाए तो हिंसा की आवश्यकता न रह जाएगी, लेकिन जहां इस प्रकार की अहिंसा का अभाव है तो मैं नहीं चाहता कि कायरता शास्त्रीय एवं सिद्धांतगत सूक्ष्मताओं के आवरण में प्रकट होकर हमारे आंदोलन को विफल करने में सहायक हो सके ।

'प्रस्ताव के अंतिम भाग के अनुसार हमें अपनी शक्तियों को संगठित, सुशिक्षित और अनुशासनयुक्त बनाना चाहिए । हमें अपने प्रत्येक कार्य में यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि हमारा कदम केवल षड्यंत्रकारी और छुटपुट आतंकवादी नहीं है । हमारा उद्देश्य तो समस्त जाति की सामूहिक क्रांति है । अतः हमें यांत्रिक साधनों के अतिरिक्त गांवों के किसानों, कारखानों, खानों और रेलवे के मजदूरों और जनता में ठोस कार्य करना चाहिए । हमें उनमें प्रचार करना चाहिए और उनकी कठिनाइयों में उनकी सहायता करनी चाहिए । हमें उनकी वर्तमान मांगों की पूर्ति के लिए उन्हें लड़ने के लिए संगठित करना चाहिए और हमें उन्हें युद्ध के चुने हुए सैनिकों में भर्ती कर यांत्रिक एवं राजनैतिक शिक्षा देनी चाहिए । शिक्षा के पश्चात् कुछ थोड़े-से व्यक्ति पहले के हजारों के सम्मुख सफल हो सकते हैं । प्रत्येक जिले, प्रत्येक कस्बे, प्रत्येक तालुके, प्रत्येक

थाने और प्रत्येक कारखाने और औद्योगिक क्षेत्र में आगामी युद्ध के लिए उचित समझ और हथियारों से लैस हमारे सैनिक तैयार रहें।

'इसके अतिरिक्त भारतीय विभिन्न फौजों में कार्य करता है। हमारे लिए स्कूल, कालेज व बाजारों, रियासतों और भारत की सीमाओं पर कार्यक्षेत्र पड़ा है। मेरे लिए यह संभव नहीं कि अपनी तैयारियों को और स्पष्ट रूप से बता सकूं। आज तो इतना ही पर्याप्त होगा कि हमारे लिए महान कार्यक्षेत्र है और हममें से प्रत्येक को उसके लिए कार्य करना है। बहुत कुछ तो अभी हो रहा है पर बहुत कुछ अभी होना शेष है।

'इस कार्य को हमारे नवयुवकों के अतिरिक्त और कौन कर सकता है? हमें आशा है कि हमारे विद्यार्थी जिन्होंने इतना उज्ज्वल उदाहरण हमारे सम्मुख रखा है अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए और अपनी प्रतिज्ञाओं को निभाने के लिए निरंतर आगे बढ़ेंगे, इसके उत्तरदायी वे स्वयं होंगे।

'मैं यहां यह स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि तैयारी से मेरा अर्थ यह नहीं कि हमारा युद्ध अब पूर्णतया रुक गया, छोटी-छोटी टक्करें, सीमाओं के कार्य, हल्की तोड़-फोड़, गुरिल्ला लड़ाई और गश्त जारी रहनी चाहिए। ये कार्य स्वयं एक प्रकार से आगामी आक्रमण के लिए आवश्यक तैयारियों का काम करेंगे।

'तब हम जनता में पूर्ण विश्वास के साथ और अपने उद्देश्य की सच्चाई का आधार लेकर आगे बढ़ें। हमारी दृष्टि स्पष्ट हो और हमारा हृदय दृढ़ हो और हमारे कदम मजबूत हों। भारत की स्वतंत्रता का सूर्य क्षितिज में उदय हो चुका है। हमारे अपने अविश्वास, झगड़े, निष्क्रियता और विश्वासघात कहीं उस पर बादल बनकर न छा जाएं।

'अंत में साथियो! मैं यह सोच कर अत्यंत प्रसन्न और गर्वित हूं कि मैं अपनी सेवाओं को एक बार फिर अर्पित कर सकूंगा आपकी सेवा करने में। हमारे नेता के अंतिम शब्द 'करो या मरो' मेरे मार्गदर्शक होंगे। आपका सहयोग, मेरी शक्ति और आपका अधिकार हमें अवश्य सफलता की ओर ले जायेगा।

(भारत के किसी कोने से) —जयप्रकाशनारायण

इन्हीं विचारों और कार्यक्रमों के अनुसार जे० पी० ने अगले महीनों में क्रांति की ज्वाला को नये सिरे से प्रज्वलित किया। गुप्त रूप से उनके तूफानी दौरे होते थे। सब तरह की सवारियां करनी पड़ती थीं। नाना प्रकार के वेश धारण करने पड़ते थे। सरकार की विज्ञप्तियां चारों तरफ पढ़ने और सुनने को मिल जाती थीं :

'जयप्रकाश नारायण अपने पांच साथियों के साथ हजारीबाग सेंट्रल जेल से निकल भागे हैं। जो उन्हें पकड़ा देगा या पकड़ने में मदद देगा उसे कुल मिलाकर इक्कीस हजार रुपये इनाम में मिलेंगे। जयप्रकाश नारायण के लिए पांच हजार, योगेन्द्र शुक्ल के लिए पांच हजार, रामनन्दन मिश्र के लिए पांच हजार, सूरज-नारायण सिंह के लिए दो हजार, गुलाबचन्द गुप्त उर्फ गुलाली के लिए दो हजार और शालिग्राम के लिए दो हजार।'

जेल से जयप्रकाश के निकल भागने के प्रभाव के विषय में उसी जेल में

बेद रामवक्ष बेनीपुरी ने अपने एक साथी को पत्र में लिखा था :

'प्यारे साथी, तुम सोच नहीं सकते कि जयप्रकाश जी का निकल भागना हमारे लिए क्या सिद्ध हुआ है। हम हारे तो थे ही, थक भी कम नहीं गए थे। हमारे जिस्म जवाब दे रहे थे, दिमाग जवाब दे रहा था। दिल में आग तो थी, किंतु उसकी ज्वाला बुझ चुकी थी, चिनगारी पर राख की पर्त पड़ती जा रही थी। दमन के चलते लोगों में दहशत थी, भय था। वे हमें श्रद्धा की दृष्टि से देखते थे, हमारी मदद भी करना चाहते थे, किंतु दिन में हमारा चेहरा देखना पसंद नहीं करते थे। अगस्त में अपने बल से वे सरकार को उखाड़ चुके थे। वही सरकार जब फिर कायम हुई और उसने भीषण रूप दिखलाया, तो वे इस उम्मीद में सब्र किए रहे कि सुभाष बाबू की सेना चली आ रही है। सेगांव से बराबर आश्वासन दिया जाता रहा, हम अब आए, अब आए। रात में लोग तारों को देखते और उनकी रोशनी को सुभाष बाबू के हवाई जहाज की रोशनी मानने की कोशिश करते। किंतु धीरे-धीरे आशा की यह रोशनी भी बुझ गई। अब चारों ओर अंधकार ही अंधकार नजर आता था कि जयप्रकाश का आगमन हमारे बीच हुआ। उनके नाम की सार्थकता तुम नहीं समझ सकते, हमने समझी है। फिर एक बार चारों ओर प्रकाश ही प्रकाश है। कार्यकर्ताओं के दिल की चिनगारी फिर चमक उठी है, जनता सोचने लगी है कि हमारे नेताओं को कोई जेल में रख नहीं सकता। जयप्रकाश खुद जेल तोड़कर हमारे बीच में आए हैं, अब हम जेल तोड़कर गांधी जी और दूसरे नेताओं को छुड़ाएंगे। जनता में एक अजीब जोश और हिम्मत आ गई है। अब हम विजयी होकर ही दम लेंगे, यह हमारी पक्की आशा है—ध्रुव आशा। 'चालीस करोड़ नहीं दबेंगे !'

'करेंगे या मरेंगे।'

नेतृत्व सिर्फ उपदेश नहीं मांगता, साक्षात् कर्म मांगता है। जे० पी० उसी कर्म के परम उदाहरण सिद्ध हो रहे थे। क्रांति के पहले चरण की जो रोशनी मंद पड़ गई थी और जिससे कहीं-कहीं अंधकार दिखने लगा था, जयप्रकाश की गुप्त वाणी और कर्म ने फिर से नया प्रकाश भर दिया। आजादी के सैनिकों के अंधकारमय हृदयों में फिर से ज्वाला फूट पड़ी। संघर्ष को नेतृत्व मिल गया।

छः महीने बाद जे० पी० ने आजादी के सैनिकों के नाम दूसरा पत्र भारत में कहीं से पहली सितंबर सन् तैंतालीस को जारी किया :

'कुछ महीनों पहले दुश्मन के जेलखाने से बाहर निकलते ही मैंने उस राष्ट्रीय क्रांति के प्रसंग में आपके सामने अपने कुछ विचार रखे थे। कुछ सुझाव भी दिए थे। तब से काफी समय गुजर गया। अतः यह आवश्यक है कि इस समय हमारा संघर्ष क्या है, कैसा है, इस पर अब फिर विचार कर लें।'

कहने को जे० पी० का यह पत्र था, पर दरअस्ल यह एक विशद विचार-पत्रक है। करीब तीस पृष्ठों की ऐतिहासिक सारगर्भित पुस्तिका, आत्ममंथन, तत्कालीन राजनीति चिंतन का मूल्यवान दस्तावेज। जिसमें कुल सात अनुक्रम हैं—अध्याय पहले में उन गत छः महीनों के भीतर संघर्ष की एक यथार्थ तस्वीर है। संघर्ष

शिथिलता के पीछे राजनीतिक, सामाजिक और यहां तक कि मनोवैज्ञानिक कारण और तथ्य दिए गए हैं। दूसरे अनुक्रम में गांधी और वायसराय के बीच उस समय हुए पत्र व्यवहारों के आधार पर उन आलोचकों और राष्ट्रद्रोहियों के प्रति कड़ा बयान है, जिनका कहना था, अगस्त क्रांति कांग्रेस द्वारा नहीं चलाई गई है। तीसरे में राजगोपालाचारी, भूलाभाई देसाई और के० एम० मुंशी के प्रति कड़ी चुनौती है जो उस समय के संघर्ष को 'डेडलाक' की संज्ञा देकर समझौते की बात कह रहे थे। इस समय किसी भी समझौते के क्या अर्थ होते हैं, उसकी क्या प्रतिक्रिया होगी, अंग्रेजों ने इस बीच निःशस्त्र निर्दोष भारतीय जनता, निरपराध बच्चे, बूढ़ों और स्त्रियों पर क्या-क्या जुल्म-सितम ढाहे हैं, उसकी कीमत कौन चुकाएगा ? जब गांधी, नेहरू, मौलाना आजाद जैसे नेता जेलों के अंदर हों, तो ये गद्दार, अवसरवादी आलोचक लोग कौन हैं, इन सब तथ्यों की ओर ध्यान आकृष्ट किया है।

इसी अनुक्रम में कहा : 'वह उन्नीस सौ पैंतालीस का एक्ट अब मर चुका है। अब वापस नहीं मुड़ना है। इसे अच्छी तरह से समझ लियाजाए कि भारत अब उस साम्राज्यशाही से शांति का संबंध कभी नहीं रख सकता जिसने उसके साथ इतना बर्बर, अमानवीय व्यवहार किया है। 'क्रिप्स मिशन', उसकी योजनाएं और उसके वायदे झूठे, प्रपंचपूर्ण थे जिसे कांग्रेस ने उचित रूप से ठुकराना है।

चौथे अनुक्रम में कांग्रेस और मुस्लिम लीग के समझौते का अध्ययन है और 'राष्ट्रीय सरकार' की खोखली योजना का पर्दाफाश किया गया है। पांचवें अध्याय में सुभाषचन्द्र बोस के कार्यों और उनके व्यक्तित्व का अभिनंदनपूर्ण मूल्यांकन है। जे० पी० ने यहां भारतीय क्रांति को सुभाष बोस के चरित्र से जोड़कर उसे अंतर्राष्ट्रीय प्रसंगों में देखा है। और इस संघर्ष को विश्व के राजनीतिक धरातल पर रख अनेक आयाम दिए हैं। छठे अध्याय में जे० पी० ने मार्क्सवादियों और खासकर विश्वासघाती कम्युनिस्टों के इस प्रचार को कि द्वितीय महायुद्ध 'पीपुल्स वार' है, इसकी सच्चाइयों को बताते हुए पूरे महायुद्ध को चर्चिल, रूजवेल्ट, हिटलर और तोजो, अर्थात् फासिस्ट और साम्राज्यवादियों द्वारा विश्व के साधारण मनुष्य और पूरी मानवता के खिलाफ छेड़ा हुआ बर्बर युद्ध कहा। यह विश्व युद्ध वास्तव में सामान्य मनुष्य द्वारा रोका जा सकता है। इस युद्ध को साम्राज्यवादी शक्तियां भ्रष्ट पूंजीवाद की मिलीभगत से कभी नहीं खत्म होने देंगी। अगर यह युद्ध रुक भी गया तो यही शक्तियां भविष्य में नरसंहार के लिए और भयानक अस्त्र तैयार करेंगी। साधारण मनुष्य और मजदूर वर्ग के कल्याण का संरक्षक रूस जब दमनकारी हो सकता है तो पूंजीवादी, साम्राज्यवादी, सुपर साम्राज्यवादी एंग्लो अमेरिकन शक्तियां इसे क्यों जिंदा रहने देंगी ?

सातवें अनुक्रम में, इतनी विशद और गहन अंतर्राष्ट्रीय राजनीतिक भूमिका के बाद जे० पी० अगस्त क्रांति के वर्तमान चरण के संचालन, संपादन, नीति और कार्य तथा व्यूह रचना के बारे में बताते हैं। और इन शब्दों से समापन करते हैं :

'साथियो, इन शब्दों से मैंने आज की स्थितियों का विश्लेषण किया। बिना

किसी भावुकता के, छंदमय आलंकारिक शब्दों से रहित मैंने अपने विचार आपके सामने रखे। यह आपके विचारने के लिए है कि इसमें आपको कितना ग्राह्य है। आप सदैव मुझे अपना आज्ञापालक पाएंगे। 'करो या मरो' यही है हमारा और आपका ध्रुव नक्षत्र। आओ करें या मरें!

जयप्रकाश के ये खुले पत्र एक पराधीन देश के गौरव पत्रक हैं। क्रांति की अमिट घोषणाएं हैं। देश प्रेम के ऐतिहासिक दस्तावेज हैं। गांधी ने इन पत्रों में धधकती देशप्रेम ज्वाला का दर्शन किया।

इसके अलावा जे० पी० ने कुछ और लंबे पत्र और विज्ञप्तियां लिखीं। वे सभी खुली चिट्ठियों के रूप में थीं :

अमेरिकन फौज के अफसरों और भारतीय सैनिकों के नाम।
विद्यार्थियों के नाम।
किसानों के नाम।
बिहार की जनता के नाम।
बिहार के पुलिस सिपाहियों के नाम।

इनको पढ़ने से आज भी पाठक अपनी नसों में खून की नई रवानी अनुभव करता है। इनकी अनिवार्यता इसलिए थी कि दमन की प्रचंडता के कारण अक्सर ऐसा लगने लगता था जैसे क्रांति कुचल दी गई। पर जे० पी० के ही शब्द प्रेरक होते थे। उनसे एक अजस्र प्रकाश और ज्वाला फूटती थी: 'क्रांति कोई छुटपुट घटना नहीं है। क्रांति एक दौर है। एक सामाजिक प्रक्रिया है।'

उस समय हिंदुस्तान में जो अमरीकी अफसर और सैनिक जापान का सामना करने के लिए इकट्ठे किए गए थे, उनके नाम उन्होंने अपने पत्र में उस समय की याद दिलाई जब वह केलिफोर्निया, इयोवा, विस्कोंसिन और ओहायो में पढ़ते थे। और हो सकता है, उन विश्वविद्यालयों के छात्र भी अमेरिकन फौज में आए हों। अतः उनसे उन्होंने खासकर निवेदन किया था :

'मैं एक वैसे युद्धबंदी की हैसियत से आपको लिख रहा हूं जिसने दुश्मन की कैद से निकल भागने के अपने जन्मजात अधिकार का उपयोग किया है। मैं हाल ही में हजारीबाग जेल से भाग आया हूं, इसी उद्देश्य से कि मैं अपने देश को आजाद कराने में क्रियात्मक भाग ले सकूं। हमारे दुश्मन—इस अंग्रेजी साम्राज्य-शाही सरकार ने मुझे पकड़वाने के लिए इनाम की घोषणा की है, जैसे कि मैं कोई दागी कैदी होऊं। आप में से जो कोई भी कदाचित् युद्धबंदी बनाया जाएगा, वह मौका मिलते ही दुश्मन के कैंप से भाग आना कर्त्तव्य समझेगा और उसे आप और आपके देशवासी निस्संदेह 'हीरो' मानकर आदर करेंगे। 'हीरो' कहलाए जाने का हौसला मैं नहीं रखता, लेकिन मैं अपने को दागी कैदी भी नहीं समझता। मैं अपने को सिर्फ देश की आजादी की वेदी पर बलिदान करना चाहता हूं।'

अपने उस खुले पत्र में जयप्रकाश ने अंग्रेजों के झूठे प्रचार पर सख्त चोट की थी और उसकी पोल खोली थी : 'आप लोगों ने नाजियों की झुठाई की कहानियां सुनी होंगी। डा० गोयेबेल्स अपनी झुठाई के लिए संसार भर में बद-

नाम हैं। लेकिन चर्चिल, हैलिफेक्स, एमरी एवं कंपनी की भुठाई उससे भी बदतर है, क्योंकि उसके ऊपर पालिश की हुई होती है और वह गहरी मार करती है।'

जे० पी० ने अमेरिकन सैनिकों से तीन प्रकार की सहायता मांगी थी : 'अंग्रेजों ने हमारे साथ जो फासिस्ट लड़ाई छेड़ रखी है उसमें आप अंग्रेजों का साथ न दें। हिंदुस्तान के बारे में सही बातें अपने देशवासियों को बताएं और इस तरह अंग्रेजों के घृणित प्रचार को बेकार बना दें। आप लोग उन अंग्रेजों को समझाएं जो बेचारे व्यर्थ अपनी जान अंग्रेजी पूंजीपतियों के फेर में पड़कर दे रहे हैं। उनसे कहिए कि यदि वह सचमुच एक नई दुनिया के निर्माण के लिए लड़ रहे हैं तो फिर उनके लिए मुनासिब नहीं है कि फासिस्टों की तरह औरतों और बच्चों पर गोली चलाएं, घरों को जलाएं और लूटें तथा इस अति प्राचीन एशिया के जर्रे-जर्रे को चौंका देने वाली इस महानतम आजादी की लड़ाई को बेरहमी से कुचलें। उनसे कहिए, हम उनसे लड़ना नहीं चाहते, उनका कोई नुकसान करना नहीं चाहते, उनका बुरा भी नहीं चाहते। हमारी लड़ाई सिर्फ साम्राज्य से है, हम उसे ही नष्ट करना चाहते हैं क्योंकि वह आजादी का दुश्मन है, मानवता के सुख और वैभव का शत्रु है। उनसे कहिए, ज्यों ही हम आजाद होंगे, अंग्रेज सैनिकों के साथ कंधे से कंधा भिड़ा कर हम सभी तरह के शोषणों, उत्पीड़नों और पशुताओं से लड़ेंगे—चाहे उनका नाम नाजीवाद हो, साम्राज्यवाद हो या पूंजीवाद। इन पर विजय प्राप्त करके ही हम सब मिलजुल कर इस पृथ्वी पर एक नई दुनिया बसा सकेंगे।'

विद्यार्थियों, किसानों, बिहार की जनता एवं बिहार के पुलिस सिपाहियों के नाम जो पत्र प्रकाशित कराए, सब में देश के नाम पर, आजादी की इस अंतिम लड़ाई को अंत तक लड़ने की अपील की गई थी।

एक ओर ये अपीलें तैयार की जा रही थीं, दूसरी ओर गुप्त स्थानों पर साथियों को बुलाबुलाथ कर बातें भी चल रही थीं। महत्त्वपूर्ण बैठक उस दिन बनारस में जमी जब बिहार से बसावनसिंह, श्यामनन्दन और सूरजनारायण, बनारस से बी० पी० सिन्हा काशी विद्यापीठ के पूरे गिरोह के साथ आ मिले और बंबई से अच्युत पटवर्धन आए। जिसमें यह तय हुआ कि दिल्ली में केंद्रीय संचालक मंडल की बैठक बुलाई जाए और देश भर में एक निश्चित योजना पर पूरी मुस्तैदी से काम चलाया जाए।

तभी बनारस में जे० पी० की फरारी जिंदगी की एक दिलचस्प घटना है। जयप्रकाश और अच्युत पटवर्धन जहां टिके हुए थे वहां उन्हें कुछ संदेह हो गया। बसावनसिंह व्यापारी के रूप में एक सेठ के घर टिके हुए थे। अपने साथ जे०पी० और अच्युत को उस परिवार में ले गए और बोले कि ये दो उनके साथी व्यापारी हैं। अगले दिन घर के मालिक ने बसावनसिंह से पूछा : यह तो जय-प्रकाश जी हैं। यहां कैसे ले आए ?

बसावन ने कहा : नहीं-नहीं, आपको खामखा भ्रम हो रहा है। वह बोला : मैंने बीसों बार देखा है इन्हें। इनके भाषण सुने हैं। बालों और कपड़ों की उलट-पुलट से क्या आदमी को बदल दिया जा सकता है ?

बसावनसिंह चुप।

सेठ ने कहा : देखिए, मैं तो खतरा लेने को तैयार हूं, पर इस बात का पता मेरी बीबी को न चले, जी हां।

और थोड़ी ही देर बाद घर की मालकिन ने बसावनसिंह को अलग ले जाकर कहा : मैंने इन्हें कहीं देखा है, इन्हीं का नाम अच्युत पटवर्धन है। मैं तो इस रहस्य को पचा लूंगी। सेठ जी को खबर न होने पाए, हां।

उसी रात उस घर से जे० पी० भागते हैं। दूसरी जगह जाते हैं। वहां किसी के मुंह से सुनाई पड़ता है :' बउल जी'।

कितने घर बदले गए। कितने रूप धारण किए गए। कभी काबुलीवाला आगा, कभी फकीर, कभी पारसी, कभी व्यापारी, कभी रईस ताल्लुकेदार, कभी किसान, कभी गाड़ीवान और कभी इंग्लैंड का साहेब बहादुर।

जयप्रकाश हजारीबाग जेल से भागकर अगस्त क्रांति के सच्चे हीरो, जनता के नायक तो बन ही गए थे, और उनकी लुकाछिपी गतिविधियों ने स्वातंत्र्य के प्रयत्नों में रोमांटिक गाथाएं जोड़ दी थीं। अब जयप्रकाश के गुप्त आवास की सूचना-मात्र देने के लिए पांच हजार रुपया पुरस्कार घोषित कर दिया गया। कुछ ही दिनों बाद पुरस्कार की रकम दुगनी कर दी गई।

जिन दिनों दिल्ली में लार्ड लिनलिथगो और वैवेल की मीटिंग हो रही थी उन्हीं दिनों उसी दिल्ली में अगस्त क्रांति के केंद्रीय संचालक मंडल की गुप्त बैठक होने को थी। खुफिया पुलिस और सेना की आंखों में धूल झोंककर ये लोग नाना वाहन और नाना वेश में दिल्ली आए थे।

जयप्रकाश को बनारस से दिल्ली पहुंचना था और इनके लिए हिंदुस्तान के सारे चतुर सी० आई० डी० अफसर, सिपाही चारों तरफ जाल फैलाए तैनात थे। बनारस से मिर्जापुर तक जे० पी० अंग्रेजी भेष में आए। उनके साथ सेवक या चपरासी के रूप में थे श्यामनन्दन।

मिर्जापुर स्टेशन से उन्हें दिल्ली पहुंचने की गाड़ी पकड़नी थी। अब जे० पी० अवध के एक रईस बने हुए हैं। चुन्नटदार धोती है। आबेरवां का कुर्ता है। इत्र हिना की कोमल सुगंधि। धूप का चश्मा। सिर पर किश्तीनुमा टोपी। पैर में सलीमशाही जूते। हाथ में पान का डिब्बा लिए पीछे-पीछे कारिंदा के भेष में वही श्यामनन्दन। पूरी गाड़ी ठसाठस भरी है। किसी भी क्लास में जगह नहीं है। कलकत्ते में जापानियों द्वारा बमबारी हो चुकी थी। तभी इतनी भगदड़ मची हुई है। सारे मारवाड़ी जैसे दिल्ली भागे जा रहे हैं। फर्स्ट क्लास डिब्बे के सामने आकर कारिंदा खड़ा हो जाता है। भीतर से एक मारवाड़ी युवक देखता है। दरवाजा खोल देता है अवध के रईस के सम्मान में। अपनी आरक्षित जगह दे देता है। रईस साहब सो जाते हैं। कारिंदा युवक को बताने लगता है : का कहें साहेब, बड़ी परेशानी मा पड़े हैं। बाबू साहेब बीमार हैं। विंध्याचल आए रहे। बड़े-बड़े-वैद्यन की दवाएं गईं, कोऊ फायदा न भवा। भइयाहो, अब दिल्ली लिए जाय रहन हैं, अब वहीं हकीमन के इलाज होई।

मिर्जापुर से इलाहाबाद। इलाहाबाद से दिल्ली। इस बीच टी० टी० सी० को कुछ ज्यादा पैसे देकर दिल्ली का टिकट बनवा लिया गया।

दिल्ली में केंद्रीय संचालक मंडल की बैठक। इस ऐतिहासिक बैठक में एक नया प्रकाश आया था। जयप्रकाश। सब के चेहरे खिल गए थे। आंखों में चमक लौट आई थी। जयप्रकाश सारा कार्यक्रम बनारस से ही तैयार कर लाए थे। वह कार्यक्रम अगस्त क्रांति के दूसरे दौर की तैयारी का था। कार्यों की पूरी योजनाएं थीं। संघर्ष में व्यूह रचना के पूरे नक्शे थे।

बाजारों में चीजों की कमी थी। यातायात के साधन टूटे फूटे थे। हिंदुस्तानी फौज में असंतोष था। पुलिस की नैतिकता भ्रष्ट हो चुकी थी। कलकत्ते पर बमबारी के कारण लोगों में अजीब आतंक फैल गया था। क्रांति के लिए इन परस्थितियों का उपयोग आवश्यक है। अब दूसरी बार और तेज और व्यापक संघर्ष ज्वाला फैलनी है। लेकिन सिर्फ ज्वाला फूटने से ही काम चलने वाला नहीं, यह बात पहले दौर ने ही स्पष्ट कर दी है। जे० पी० ने योजना दी, क्रांतिकारियों के शिक्षित दस्ते तैयार किए जाएं और उन्हें सभी साधनों से लैस किया जाए, जिसमें जब कभी क्रांतिकारी परिस्थिति परिपक्व हो तो तत्काल धावा बोल दिया जाए। कार्य करने के लिए सारे साधन हर वक्त मौजूद रहें। पहले दौर की खामियों और गलतियों को पहले से ही दुरुस्त कर लेना है। पर सुचेता कृपलानी आदि कुछ गांधीवादियों ने इस 'आजाद दस्ते' की योजना से अपनी असहमति प्रकट की।

इस योजना के फलस्वरूप, मजदूरों में, किसानों में, विद्यार्थियों में काम करने के लिए अलग-अलग विभाग बनाए गए। मजदूरों को कम्युनिस्टों ने काफी गुमराह किया था। अतः उस ओर विशेष ध्यान देने की जरूरत थी। किसान को बुरी तरह कुचला गया था, उन्हें फिर से खड़ा करना था। निराश छात्र फिर कालेजों की ओर लौटने लगे थे, उन्हें सही दिशा देनी थी। फौज और पुलिस में घुसकर काम करना इस चरण का प्रमुख कार्यक्रम था। विदेशों से संपर्क की योजना थी। प्रचार कार्य के लिए साइक्लोस्टाइल मशीन, छोटे प्रैस और रेडियो प्रसारण का प्रबंध किया गया। 'आजाद दस्ता' के नाम से अगस्त के क्रांतिकारियों का गुरिल्ला संगठन करने और उन्हें शिक्षित करने की योजना को जे० पी० ने अपने हाथों में लिया।

दिल्ली में यह कार्य-क्रम स्वीकृत हो जाने के बाद जयप्रकाश बंबई की ओर चले। उनकी यह यात्रा मोटर से हुई। राजपूताने के रेगिस्तान को पार कर जयपुर होते हुए जे० पी० अहमदाबाद आए। फिर गुजरात को पारकर महाराष्ट्र और बंबई पहुंचे। बंबई में पूरे तीन महीने भूमिगत रह कर कार्य किए।

बंबई से जे० पी० अपने साथ अच्युत पटवर्धन की छोटी बहन विजया को लेकर मद्रास गए, वहां से कलकत्ता आए। कलकत्ते में क्रांति को शक्तिशाली रूप देने के उद्देश्य से कई गुप्त संस्थाएं बनाई गईं। वहीं अलग से कूट संकेत पद्धति तैयार की गई। बाहर से समाचार, संवाद देने और लेने के लिए। वहीं से ये पैंफलेट, पत्रक (अंग्रेजी में) तैयार होकर देश भर में गुप्त रूप से बांटे गए :

हमारा संघर्ष।
आजाद।
अंतिम संघर्ष।

कलकत्ते में ही यह तय किया गया कि वहीं से नेपाल में 'आजाद दस्ते' का निर्माण किया जाए। नेपाल के काम का सीधा संपर्क वहीं से हो। पर थोड़े ही दिनों बाद बिहार होते हुए श्यामनन्दन और सूर्यनारायण वहां पहुंचे, जयप्रकाश को नेपाल ले जाने के लिए।

जे० पी० नेपाल के लिए चल पड़े। संग सूरजनारायण और विजया।

कलकत्ता से कटिहार तक अंग्रेजी पोशाक में और कटिहार से आगे बंगाली जमींदार का रूप धारण कर लिया। और जयप्रकाश से अपना नाम ए० बी० सिन्हा बदल लिया। विजयाकुमारी सिन्हा हो गई पुत्री और सूरजनारायण जमींदार साहब के मुसाहब हो गए।

रेल की यात्रा खत्म कर, सोनबरसा से तीन लोगों की वह टोली नेपाल क्षेत्र की ओर बढ़ी थी। ए० बी० सिन्हा (जे० पी०) हाथी पर सवार थे। डोली में जमींदार की बेटी बैठी थी। महाराष्ट्री विजया पूरी बंगबालिका के रूप में उनके पीछे बैलगाड़ी पर मुसाहब बैठा है। जमींदार साहब के सारे साजो—सामान लादे हुए।

10

अगस्त क्रांति के पहले चरण में कुछ स्थानों को अंग्रेजी शासन से छीनकर वहां 'पंचायती राज' कायम किया गया। पर वह सिर्फ चन्द दिनों का खेल साबित हुआ। असली काम था उन जगहों की रक्षा के लिए फौज या पुलिस का संगठन करना। उत्तरोत्तर संगठित होकर इस तरह अपनी शक्ति का बढ़ाते चलना और अपनी ताकत को व्यवस्थित करते रहना। पर तब ऐसा कुछ न हो सका। जिन-जिन थानों को लूटा गया, वहां-वहां से कुछ बंदूकें क्रांतिकारियों के हाथ लगीं, कई जगहों से सैनिक छावनियों से भी बंदूकें मिलीं, अस्त्र-शस्त्र मिले, पर इनका कोई सुनियोजित उपयोग नहीं किया गया। जो अस्त्र हाथ लगे उन्हें लेकर थोड़े दिनों तक जोश चला, फिर या तो उन्हें नदी या कुएं में फेंक दिया गया या जमीन में गाड़ दिया गया। इस तरह की तमाम गल्तियां हो चुकी थीं।

पर इस दूसरे दौर में ऐसी कोई गल्ती न होने पाए, यही भूमिका थी उस 'आजाद दस्ते' की, जो जयप्रकाश नेपाल की भूमि पर तैयार कर रहे थे। इसमें देश के नौजवानों का एक दल पहले से ही संगठित किया जाए, जिसे जहां तक संभव हो अस्त्र-शस्त्र के प्रयोग और संघर्ष की पूरी व्यूह रचना और युद्ध-नीति से पूर्ण परिचित करा दिया जाए। जे० पी० ने अनेक तरह से यह सिद्ध कर दिया था कि कांग्रेस के 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव के बाद अंग्रेज सरकार भारतीय जनता की नजरों में एक ऐसी सरकार थी, जो जबरदस्ती मुल्क के सीने पर बैठी हुई थी और उसे हर तरह से तंग करना, लाचार करना भारतीय राष्ट्रवादियों का परम कर्त्तव्य था। इसकी एक मौजूदा मिसाल योरुप में उन दिनों जिन देशों पर जर्मनी ने कब्जा किया था, वहां के निवासी उसके खिलाफ 'छापे मार' दस्ते बनाकर गुरिल्ला युद्ध कर रहे थे।

इन्हीं दो उद्देश्यों को
वहां संगठन शुरू किया।
लिए उस समय 'आजाद
शासन चलाना गैर मुमकि
समझा गया।

'आजाद दस्ता' की
'तोड़-फोड़ गुलाम
द्वारा वह अपने शासकों
उसे चूसने-दुहने के लि
उनका संहार करना, उ
को बेकाम कर देना,
तोड़-फोड़ के अंदर आ
पटरी हटा दी जाती है
दिया जाता है, पेट्रोल
दिया जाता है, सरकारी
तोड़-फोड़ में आ जाते
किंतु यदि बाजार पर
यह काम शैतानी का

'लेकिन हमें यह
कार्य-क्रम नहीं है और
तो जनक्रांति के हिम
निर्भर करता है।
जा सकती। तोड़-
होता है, लेकिन इ

'तीसरी बात
लिए जरूरी यह है
आंदोलन का रूप

फिर उसमें
पहले तोड़-
की तोड़-फोड़
इंजिन और ला
जिसमें फैक्ट्री,
जिसमें सरकारी
भंडारों में आग
किस्में हैं : (1)
आदि शामिल
करने वाले रा
तोड़-फोड़

इन्हीं दो उद्देश्यों को ध्यान में रखकर जयप्रकाश ने 'आजाद दस्ता' का वहां संगठन शुरू किया। पर चूंकि क्रांति के दूसरे दौर में थोड़ी देर थी, इसलिए उस समय 'आजाद दस्ते' का काम था, सरकार को तंग करना, उसका शासन चलाना गैर मुमकिन कर देना। इसके लिए 'तोड़-फोड़' का ही काम मुख्य समझा गया।

'आजाद दस्ता' की हस्तपुस्तिका नंबर दो में जे० पी० ने कहा :

'तोड़-फोड़ गुलाम और पीड़ित जनता का एक अमोघ अस्त्र है, जिसके द्वारा वह अपने शासकों से लड़ती आई है। जनता को गुलाम बनाए रखने और उसे चूसने-दुहने के लिए जिन साधनों का निर्माण शासकों ने कर रखा है, उनका संहार करना, उनके कलपुर्जों को चकनाचूर करना, यातायात के साधनों को बेकाम कर देना, इमारतों और भंडारों को भस्मीभूत कर देना, ये सब काम तोड़-फोड़ के अंदर आते हैं। इसलिए यदि तार काट दिए जाते हैं, रेल की पटरी हटा दी जाती है, पुल उड़ा दिए जाते हैं, कारखानों का चलना बंद कर दिया जाता है, पेट्रोल की टंकियों में आग लगा दी जाती है, थानों को जला दिया जाता है, सरकारी कागजों को नष्ट कर दिया जाता है तो ये सब के सब तोड़-फोड़ में आ जाते है और इनका करना जनता के लिए सर्वथा उचित है। किंतु यदि बाजार पर, स्कूल में, धर्मशाला में बम फेंका जाता है, तो निःसंदेह यह काम शैतानी का है, शैतानों का है। यह तोड़फोड़ नहीं है।

'लेकिन हमें यह भी समझ लेना है कि तोड़-फोड़ ही हमारा एकमात्र कार्य-क्रम नहीं है और न सिर्फ वही हमारा उद्देश्य है। हमें याद रखना है कि हम तो जनक्रांति के हिमायती हैं और अंततः जनता की क्रांति पर ही सब कुछ निर्भर करता है। सिर्फ तोड़-फोड़ करने वाले गुप्त दस्तों से ही क्रांति नहीं की जा सकती। तोड़-फोड़ करने वाले दस्तों का भी क्रांति में एक बहुत बड़ा हिस्सा होता है, लेकिन इससे ज्यादा उसका महत्त्व नहीं है।

'तीसरी बात हमें यह समझ लेनी है कि तोड़-फोड़ को कामयाब होने के लिए जरूरी यह है कि वह बड़े पैमाने पर की जाय, वह खुद ही एक जन-आंदोलन का रूप धारण कर ले।'

फिर उसमें तोड़-फोड़ के विभिन्न रूपों की व्याख्या की गई है :

पहले तोड़-फोड़ को तीन हिस्सों में बांटा गया है : (1) यातायात के साधनों की तोड़-फोड़ जिसमें तार, टेलीफोन, डाक, बेतार के तार, रेलवे, सड़क, पुल, इंजिन और लारी बस शामिल हैं ; (2) औद्योगिक साधनों की तोड़-फोड़, जिसमें फैक्ट्री, मिल, खान और जहाजी अड्डे शामिल हैं; और (3) अग्निकांड, जिसमें सरकारी कागजपत्रों, इमारतों, पेट्रोल की टंकी और गोले-बारूद के भंडारों में आग लगाना शामिल है। तरीके के ख्याल से तोड़-फोड़ की दो किस्में हैं : (1) औजार से काम लेना जिसमें रेती, आरी, हथौड़ा, कुदाल, बालू आदि शामिल हैं और (2) रसायन से काम लेना, आग लगाने और विस्फोट करने वाले रासायनिक द्रव्यों का इस्तेमाल।

तोड़-फोड़ के इन रूपों और तरीकों को सफलतापूर्वक काम में लाने के लिए

दो तरह के संगठन की जरूरत बताई गई है । यातायात के साधनों एवं अग्नि-कांड के लिए 'आजाद दस्ता' का व्यापक संगठन होना चाहिए, किंतु औद्योगिक तोड़-फोड़ तभी कामयाब हो सकती है जब 'आजाद दस्ता' के सदस्य उसमें घुसकर चुपचाप काम करें । यों ही तोड़-फोड़ के लिए हमेशा महत्त्व की चीजों को ही चुनना चाहिए । छोटे-छोटे कामों में ही शक्ति बर्बाद नहीं करनी चाहिए । साथ ही ऐसी तोड़-फोड़ नहीं करनी चाहिए जिससे सरकार के बदले जनता को ही ज्यादा तकलीफ उठानी पड़े । तोड़-फोड़ तभी सफल होती है जब जनता का पूरा समर्थन उसे प्राप्त हो । जब जनता को तकलीफ होगी, उसमें और तोड़-फोड़ करने वाले दस्ते में एक खाई पड़ जाएगी, फिर न तो वह दस्ता काम कर सकता है, न तोड़-फोड़ का काम चल सकता है ।

'आजाद दस्ता' की आवश्यकता बताते हुए उसकी पहली हस्तपुस्तिका में बताया गया है कि किस तरह अगस्त क्रांति के बाद बहुत-से नौजवान चारों ओर मारे-मारे फिर रहे हैं और जिनके मन में जो आता है, करते फिरते हैं। इससे देश को नुकसान हो रहा है । बहुत-से नौजवान हथियारों के लिए अब परेशान हैं और एक पिस्तौल, एक बम या एक दर्जन बुलेट के लिए वे जान पर भी खेलने को तैयार हैं । यह पागलपन है या बेसब्री ? काश, हमारे ये दोस्त जानते कि एक हथौड़ी, एक छेनी, एक आरी, एक रेती, कुछ गज तार और रस्सी, एक कुदाल, एक लाठी, और एक सीढ़ी से वे इस समूची साम्राज्यशाही की नींव सालों तक हिलाए रख सकते हैं, कुछ रासायनिक द्रव्य भी उन्हें मिल जाएं तो फिर क्या कहना है ? हिन्दुस्तान में लगभग 250 जिले हैं, हर जिले में 20 थाने हैं । यदि हर थाने में पांच नौजवान भी निकल आवें तो वे इन साधारण ओजारों से बिना किसी एक व्यक्ति की हिंसा किए ही, अंग्रेजी राज का चलना असंभव बना सकते हैं ।

डा० राममनोहर लोहिया ने इन 'आजाद दस्तों' की प्रकृति और उपयोगिता के बारे में 'क्रांति की तैयारी करो' शीर्षक लेख में कहा है :

'धुन के पक्के और शिक्षा पाए हुए पांच-पांच आदमियों के दस्ते ऐसे तैयार किये जाएं, जो ज्यों ही क्रांति शुरू हो, आगे बढ़कर जनता का नेतृत्व करें और कामयाबी तक पहुंचाएं । बड़े से बड़ा बलिदान करके भी आप से आप विद्रोह के लिए खड़ी हुई जनता जो काम पूरे तौर से नहीं कर सकती, वे ही काम इन दस्तों के चलते आसानी से संपन्न हो सकेंगे । जुलूस पर गोली चलाने के लिए भेजे गए या अंग्रेजी सरकार के केंद्रों की रक्षा पर तैनात किए गए सैनिकों के हथियार छीनने की बात हो, या सड़क काटने, तार काटने, रेल की पटरियां उखाड़ने और रेलगाड़ियों का चलना बंद करने की बात हो, या थानों पर, जेलों पर कचहरियों पर, और सेक्रेटेरियट पर, जनसमूह को लेकर धावा करने की बात हो—इन कामों के लिए पहले से ही विशेष शिक्षा प्राप्त किए हुए नौजवानों से बने ये दस्ते कमाल कर दिखाएंगे । जिन-जिन क्षेत्रों में ऐसे दस्ते होंगे, वहां क्रांति शुरू होते ही अंग्रेजी राज का खात्मा चुटकी बजाकर कर दिया जा सकता है और इनसे प्रोत्साहन पाकर दूसरे क्षेत्रों में भी क्रांति की ज्वाला धधक उठेगी और अंग्रेजी राज को स्वाहा कर देगी ।

युक्त प्रांत के साथियों के नाम प्रकाशित 'आजाद राज कैसे बने ?' अपनी पुस्तिका में डा० लोहिया कहते हैं : मैं दावे के साथ कहता हूं कि अगर सूबे के हर जिले में सौ मजबूत आदमी 'और तैनात हों और एक जिले का दूसरे जिले के साथ ऐसा संगठन किया जाए कि सारे सूबे में एक साथ कुछ हो सके, तो हम फिर से एक जबर्दस्त और सफल क्रांति कर सकते हैं।'

कोसी नदी के कछार में 'बकरो का टापू' नामक स्थान पर जयप्रकाश के लिए फूस का एक मकान बनाया गया। और थोड़े दिनों के भीतर बिहार, बंगाल की तरफ से अनेक फरारी, गुप्त क्रांतिकारी वहां आने लगे। उनके लिए भी और झोंपड़ियां वहां बनीं। बाहर से संपर्क रखने के लिए दो घोड़े खरीदे गए। एक बैलगाड़ी खरीदी गई। पास के डाकखाना और स्टेशन से अखबार लाने का प्रबंध किया गया। दो हरकारे रखे गए। जे० पी० के निवास-स्थान से कुछ दूरी पर सामने एक पहाड़ी थी। योजना तैयार हुई कि उस पर समाचार प्रसारण के लिए रेडियो स्टेशन बनाया जाय। इस कार्य के लिए डा० राममनोहर को लेकर श्यामनन्दन वहां आए। लोहिया अपने साथ ट्रांसमीटर लेकर आए थे। वही भूमिगत आंदोलन के रेडियो प्रचार विभाग के संचालक बने।

बाहर से जो लोग भी वहां आते, पहले उन्हें दफ्तर में ले जाया जाता। दफ्तर को जब उन पर विश्वास हो जाता तब जयप्रकाश को उनके नाम और काम की सूचना दी जाती। जब जे० पी० स्वीकृति देते तभी उनसे मुलाकात का प्रबंध किया जाता।

सबसे पहले बिहार के लिए 'आजाद दस्ता' का संगठन किया गया जिसके संयोजक सूरजनारायण बनाए गए। इस दस्ते ने तीन शिक्षण शिविर-खोलने का निर्णय किया और तीनों शिविरों के लिए आजाद दस्ता के सैनिकों की भरती भी बिहार के जिले-जिले में शुरू कर दी गई। इस तरह जो पहला शिविर खोला गया था उसमें पैंतीस ऐसे सैनिकों को लिया गया जो जिलों में जाकर आजाद दस्ता का संगठन और शिक्षण का प्रबंध कर सकें। यह पहला शिविर इस तरह अफसरों का शिविर था। इसके मुख्य शिक्षक थे नित्यानन्द जो बाद में भागलपुर के सोनबरसा स्थान में पुलिस से लड़ते हुए गोली खाकर शहीद हुए। शिविर के लिए अन्न का प्रबंध नेपाल के ही लोगों ने किया था।

जयप्रकाश को वहां रहते हुए पूरे दो महीने हो गए थे। आजाद दस्ते और आजाद रेडियो प्रसारण के काम अच्छी तरह से चल रहे थे। तभी कुछ ऐसी भनक मिली कि सरकार को इस बात का सुराग मिल गया है कि जयप्रकाश और लोहिया नेपाल में हैं। यह भी पता चला कि अंग्रेजी सरकार नेपाल सरकार पर दोनों को गिरफ्तार करने का दबाव डाल रही है। पता चला कि इधर-उधर खुफिया दौड़ रहे हैं और किसी दिन भी जयप्रकाश और उनके पूरे आजाद दस्ते के शिविर पर छापा मारा जा सकता है।

जे० पी० ने तत्काल विजया को वापस पूना भेज दिया और चारों ओर आजाद दस्ता के सैनिक तैनात कर दिए गए। जे० पी० ने यह भी सोचा कि वहां से हटकर बाराह क्षेत्र में कैंप लगाया जाय जहां केवल पहाड़ और जंगल

हैं। पर इस कार्य के लिए कुछ धन की आवश्यकता थी। उसके प्रबंध में श्यामनन्दन बैलगाड़ी पर चले। थोड़ी ही दूर जाने पर उन्होंने देखा, नेपाली सैनिकों का एक दस्ता आ रहा है। दस्ते ने उन्हें घेर लिया।

—कौन हो ? कहां जा रहे हो ?

—साहेब पूर्णिया जिला के रहने वाले हैं। इधर न्योते में आए थे, अब घर लौट रहे हैं।

दस्ते के कप्तान को इससे संतोष न हुआ। दो सिपाहियों को उनकी देख-रेख करने को छोड़कर बाकी के साथ आगे बढ़ा। श्यामनन्दन समझ गए, यह धावा जयप्रकाश पर है। दोनों सिपाहियों को बहला लिया और चुपके से गाड़ीवान को भेजा कि दौड़कर जयप्रकाश को खबर कर दे। लेकिन जब तक गाड़ीवान पहुंचे, जयप्रकाश और लोहिया दो अन्य साथियों सहित गिरफ्तार कर लिये गए।

सब सिपाही सशस्त्र थे। उनको साथ लिये हुए हनुमाननगर की ओर चले।

संध्या समय कोसी नदी को पार कर रात में एक जगह पड़ाव पड़ा। सशस्त्र सिपाही चारों ओर घेरा डाले हुए थे। श्यामनन्दन ने मौका पाकर कप्तान से बातें शुरू कीं। एक कहानी गढ़ी :

—साहेब यह जो सिन्हा बाबू हैं न, एक बड़े घर के एकलौते सपूत हैं। इनका घर सीतामढ़ी के नजदीक है। जाति के ब्राह्मण हैं (नेपाल हुकूमत में ब्राह्मण अवध्य थे) इनका एक पट्टीदार है, जो खानदानी दुश्मन है। पट्टीदार की दोस्ती थानेदार से है। हाल ही में सीतामढ़ी का एस० डी० ओ० मारा गया है। अब साहब, पट्टीदार चाह रहा है कि अपने दोस्त थानेदार से मिलकर इन्हें उस कत्ल के मुकदमें में फंसा दें और इनको फांसी हो जाय। और इनकी सारी जमीन-जायदाद वह हड़प ले। यह बिलकुल अकेले हैं। पिता मर चुके हैं। सिर्फ मां बची हैं और पत्नी है

कप्तान ने कहा घबराइए मत। आप लोग छूट जाएंगे। कुछ बड़े क्रांतिकारी लोग यहां आ गए हैं, हम उन्हींकी तलाश में हैं। आप लोगों से सिर्फ पूछ-ताछ करके छोड़ दिया जाएगा।

दूसरे दिन सुबह चलने के लिए बैलगाड़ियों की तलाश में जब नेपाली सिपाही गांव में घूम रहे थे, दो सज्जन और पकड़े गए जो जे० पी० से मिलने आए थे। अब पांच से सात हो गए। उधर एक घटना और हुई।

भोर में जयप्रकाश शौच के लिए नदी की तरफ चले। सिपाही आसपास खड़े थे। तभी नदी के उस पार जे० पी० ने एक लड़के को देखा।

शशि !

जी।

जे० पी० ने इशारा किया। शशि दुबककर बैठ गया। फिर जे० पी० ने उसे संकेत पद्धति से संवाद दिया : प्रताप (सूरजनारायण) को जा कर खबर दो। जब हमें अंग्रेजी सरहद में ले जाया जाय तो चाहे जिस कीमत पर, हमें छुड़ाने की कोशिश करे।

मई के दिन । पूरा दिन ये लोग बैलगाड़ी पर बैठाकर शाम को हनुमान नगर पहुंचाए गए । उसी समय बड़ा हाकिम आया । उसने टेलीफोन पर काठमांडू से बातें कीं । इन सब लोगों को रात में गार्ड-रूम में रखा गया । सुबह कचहरी शुरू हुई ।

हाकिम के सामने सबसे पहला बयान श्यामनन्दन देते हैं । वही गढ़ी हुई कहानी दुहरा जाते हैं : मैं तो अपने इसी मालिक का मैनेजर हूं । हमारे बाबू बहुत सीधे-सादे आदमी हैं—बिल्कुल गऊ । सपने में भी किसी का बुरा नहीं सोचा फिर भी पट्टीदार दुश्मन पीछे पड़ा है । भागकर पशुपतिनाथ की शरण में आए थे··· ।

जयप्रकाश ने अपने बयान में केवल मैनेजर की हुंकारी भरी । विशेष और कुछ नहीं बोले ।

लेकिन डा० लोहिया ने जमकर बयान दिया : 'हम तो इनके (जे० पी०) दोस्त हैं । साथ चले आए थे हवा-पानी बदलने । क्या जानते थे कि यहां की सरकार को अच्छे-बुरे की पहचान भी नहीं है । शरणार्थी पर भी इतनी सख्ती होती है । नेपाल हिंदू राज्य है । सारी दुनिया में अकेला स्वतंत्र क्षत्रिय राज्य । क्षत्रिय तो शरण में आए हुए से ऐसा व्यवहार नहीं करते । बल्कि शरणार्थी की सहायता करना उनकी परंपरा रही है फिर हम तो किसी तरह भी नेपाल के अपराधी नहीं हैं । हमें क्यों सताया जा रहा है ? फिर नेपाल स्वतंत्र राज्य है और स्वतंत्र होकर वह अंग्रेजों की बात मानने को किसी तरह भी विवश नहीं है । अंग्रेजों की ऐसी चापलूसी करके नेपाल अपनी स्वतंत्रता व मर्यादा पर आघात करता है, स्वतंत्रता को अपमानित करता है । दुनिया का कोई भी अपराधी इंग्लैंड पहुंचकर अपने को सुरक्षित समझता है । फिर नेपाल की भूमि इंग्लैंड से अधिक पवित्र है, राज्य भी इंग्लैंड से ज्यादा धर्मनिष्ठ है । नेपाल की स्वतंत्रता ही तो भारत के लिए प्रेरणा है । क्या भारत के लोग नेपाल के प्रति अपनी श्रद्धा खो दें ? नेपाल को हमारी रक्षा करनी चाहिए न कि यों हैरान... ।'

शेष चार व्यक्ति भी अपने बयान देते हैं । वे बताते हैं कि अंग्रेजों ने भारत में बड़ा अन्याय मचा रखा है । बिना समझे-बूझे जिसे चाहते हैं गोली मार देते हैं । अंग्रेजों के डर से हम नेपाल की शरण में आए हैं । हम हिंदू हैं । आप हिंदू राजा हैं । म्लेच्छों से हमें बचाइए सरकार ।

बीच-बीच में हाकिम जिरह भी करता था और रह-रहकर काठमांडू से फोन पर बातें भी करता जाता था, नेपाली भाषा में । उसके पास कुछ फोटो भी हैं । उन्हीं से वह इनके चेहरों की मिलान भी कर रहा था । किसी का चेहरा पूरी तरह से नहीं मिल पा रहा था । लोहिया का चेहरा गुलाली के फोटो से थोड़ा मिलता है । किंतु इनमें जयप्रकाश कहीं नहीं है । हाकिम इस नतीजे पर आ गया ।

उधर शशि ने पक्का काम किया । आजाद शिविर में उसने खबर फैला दी कि जयप्रकाश गिरफ्तार हो गए, उन्हें किसी भी कीमत पर छुड़ा लाना है । सूरजनारायण अपने संग आजाद दस्ते के सभी पैंतीस सैनिकों को लेकर चल

पड़ते हैं। दूसरे दिन हनुमान नगर पहुंचे। उस समय उनके पास थीं, तीन बंदूकें, एक रायफल, एक डाइनामाइट, दो रिवाल्वर और बाकी लोगों के हाथ में बांस चीरकर बनाये गए फट्टे। नेपाल के सैनिक बंदूक से अधिक इन चिरे बांस के फट्टों से डरते हैं।

पूरा दिन एक जगह छिपकर विश्राम करते रहे और हमले की पूरी योजना निश्चित करते रहे। आधी रात के लगभग छापामारों का यह दस्ता हनुमान नगर कचहरी के समीप पहुंचा। सबसे पहले शशि और उसका एक साथी दोनों फूस के घर की ओर बढ़े, तेल छिड़का, दियासलाई जलाकर उस पर फेंकी किंतु आग नहीं लगी। वे घबराकर लौट आए। सूरजनारायण ने उन्हें फिर भेजा और स्वयं कुछ आदमियों को लेकर गार्ड-रूम की तरफ बढ़े। साथ में नित्यानन्द थे। देखा गया, संतरी निशान पर (अपनी जगह) नहीं है। उसी समय उधर से एक आदमी निकला। जब तक वह शोर मचाने की कोशिश करे उसकी गर्दन पर सूरज का हाथ था। डर के मारे उसने बता दिया, संतरी किधर है। नित्यानन्द ने निशाना लिया पर गोली नहीं चल पाई। बंदूक में कुछ गड़बड़ी थी। तब सूरजनारायण ने रिवाल्वर चला दी, जो सीधे जाकर रोशनी में लगी। शीशा फूट गया। इतने में संतरी की तरफ से भी फायर हुआ। अब सूरज ने अपनी रिवाल्वर नित्यानन्द को दे दी। वह रिवाल्वर चलाने लगे और सूरज उसी की ओट में बढ़कर संतरी की रायफल छीन लेते हैं। फिर तो चारों ओर कुहराम मच गया। दोनों ओर से गोलियां चलने लगीं।

मई का महीना था। गार्ड-रूम में ही सातों कैदी पड़े सो रहे थे। सामने दो संतरी बंदूक लिये पहरा दे रहे थे।

उधर ज्यों ही गोलियां चलने लगीं और चारों ओर शोर मचा, लोहिया जग गए :

—यह क्या खुरापात है।

—श्यामनन्दन बोले : शायद अपने ही लोग हैं।

संतरी सब भाग रहे हैं। सूरज ने गार्ड-रूम का दरवाजा तोड़ते हुए कहा : भागिए! भागिए!

सातों कैदी निकलते हैं। पर अंधेरे में कहीं कुछ भी नहीं सूझता। न कोई रास्ता, न कोई दुश्मन, न दोस्त। सूरज दुश्मन समझकर एक जगह झुके हुए लोहिया को जोरों से दबोच लेते हैं।

—अरे भाई मैं हूं, चश्मा खोज रहा हूं।

पर सब से ज्यादा आफत आई थी जयप्रकाश पर। एक तरफ पीछे कांटों का घेरा है और सामने छाती पर रिवाल्वर ताने कोई खड़ा है। श्यामनन्दन चिल्लाए : अरे जे० पी० हैं जे० पी०।

जान तो बच गई पर कांटों से जे० पी० के पैर घायल हो गए। सब मिले तो पता चला कि डा० लोहिया के पैर भी लहूलुहान हैं। जे० पी०, लोहिया दोनों से नहीं चला जा रहा है पर भागकर जल्दी से जल्दी दूर निकल जाना था।

रात-भर किसी तरह से चलते, भागते हुए सब काफी दूर निकल गए। सुबह हुई तो सबने अपने-अपने भेष बदले। जयप्रकाश ने किसान का रूप धारण

किया। लोहिया ने चश्मा उतार लिया और अपने केश बिखेर लिये। मंझारी घाट आया। नदी पार करनी थी। एक नाव तय की गई। पर इस बीच हनुमान नगर से क्रांतिकारियों की जेल तोड़कर भागने की खबर चारों ओर फैल चुकी थी। वह मल्लाह भांप गया। सरकारी इनाम की लालच में उसकी नीयत डोल गई। चुपके से आदमी दौड़ाकर इन्हें बातों में फंसाए रखने की कोशिश करने लगा। जयप्रकाश को शक हुआ। मल्लाह को चकमा देकर एक-एक कर सभी वहां से खिसके और नदी के किनारे-किनारे भागे। थोड़ी ही दूर जाने पर पीछे शोर सुनाई दिया। घूमकर देखा कि बीस-पच्चीस आदमी और दो-तीन सिपाही दौड़े आ रहे हैं।

जे० पी० और लोहिया के पैरों में चोट थी। वे दौड़ नहीं पा रहे थे। पीछा करने वाले पास आते चले जा रहे थे। तभी जे० पी० ने रिवाल्वर भरकर सूरज को पकड़ा दी। सूरज ने हवाई फायर किया। पीछा करने वाले डरकर थम गए। सूरज ने ललकारा : शर्म नहीं आती। हम चोर-डाकू हैं क्या ? हम सुराजी हैं। हम आजादी के लिए लड़ रहे हैं और तुम लोग हमें पकड़ने आ रहे हो ? शर्म खाओ और पीछे मुड़ो।

लोग पीछे मुड़ गए।

ये लोग कोसी के तट पर चलने लगे।

लोहिया ने मजाक किया : यह हिंसा है या अहिंसा ?

जे० पी० ने कहा : सो तुम जानो। मेरे पांव में तो घाव हो गए हैं।

लोग आगे बढ़े। लोहिया मुलायम घास पर पांव रख-रखकर चलते थे। जे० पी० ने मजाक किया : राममनोहर, गर्म बालू पर चलो। गर्मी से पांव सिक जाएंगे। घावों को आराम मिलेगा। लोहिया ने कहा : जे० पी०, तुम तो गलती से क्रांतिकारी हो गए, तुम्हें तो कवि होना चाहिए।

आज लगता है, वे सारे समाजवादी कवि थे, स्वप्नदर्शी :

> तलवार उठा ली है कलम छोड़ दिया है।
> इस दौर का हर शायरे नाजुक है सिपाही।

कोसी के कछार को वे लोग पार कर रहे हैं। शाम को एक अहीर के घर में वे लोग रुकते हैं। उसने तीन सेर दूध मोल दिया था तभी ठहरने की जगह दी थी। पर उतना दूध पिए कौन ? सब के सब थककर चूर हो गए हैं। बेहोश लोट गए हैं। जे०पी० एक-एक को उठाते हैं और गर्म दूध पिलाते हैं। रात में वर्षा होने लगी। ठंड हो आई है। जयप्रकाश ने सबके शरीर को कंबल से ढका।

सुबह फिर वही यात्रा।

रास्ते में रानीपुर डाकबंगला मिलता है। पुलिस वहां सतर्क है। वहां से बैलगाड़ी की जाती है। और एक मित्र के गांव पहुंचकर कुछ दिनों विश्राम किया जाता है। फिर कलकत्ते की ओर जाने की योजना बनती है।

अब जयप्रकाश और राममनोहर अलग-अलग हो कर चले।

रेलगाड़ी से यात्रा शुरू हुई। पार्वतीपुर, दिनाजपुर और स्यालदह स्टेशन। कलकत्ता महानगरी।

जब से जयप्रकाश हजारीबाग जेल से बाहर भागे, तभी से वह सुभाषचन्द्र बोस से संपर्क करने के लिए व्याकुल थे। विशेष कर तब, जब उन्हें यह मालूम हुआ कि सुभाष आजाद हिंद फौज का संगठन कर बर्मा की राह से हिंदुस्तान आ रहे हैं। इनसे संपर्क कायम करने के लिए इन्होंने आसाम के रास्ते से अपना एक आदमी भी उनके पास भेजने की कोशिश की। पर वह संभव न हुआ। उन दिनों 'आजादी के सैनिकों' के नाम जो दूसरा खत उन्होंने प्रकाशित किया उसमें सुभाष और उनके कार्यों के बारे में जे० पी० ने लिखा था :

'शायद आपको मालूम हो, श्री सुभाषचन्द्र बोस ने शोनान (सिंगापुर) में एक अस्थायी स्वतंत्र भारतीय सरकार कायम की है जिसे जापान की सरकार ने मंजूर कर लिया है। उन्होंने 'आजाद हिंद फौज' के नाम से एक सेना भी संगठित की है जो दिन-दिन बढ़ती जा रही है। ये घटनाएं हमारे लिए बहुत महत्त्व की हैं। ···यह आसान है कि श्री सुभाष को देशद्रोही कह दिया जाय। जो लोग खुद देशद्रोही हैं वे आज आसानी से उन्हें गालियां दे सकते हैं। लेकिन, राष्ट्रीय भारत उन्हें एक ज्वलंत देशभक्त के रूप में जानता है जिसने हमेशा अपने को देश की आजादी की लड़ाई की अगली कतार में रखा है। यह सोचा भी नहीं जा सकता है कि उनके ऐसा आदमी किसी भी हालत में अपने देश को बेचेगा।

कलकत्ते में आकर जे० पी० को पता चला कि सुभाष के दूत भारत में आए थे, पर उन्होंने ऐसे लोगों से संपर्क किए जो निहायत बुजदिल साबित हुए। फिर भी अब जे० पी० ने योजना बनाई कि आजाद हिंद फौज और आजाद दस्ते में संपर्क और सहयोग हो। उन्होंने अपना एक दूत आसाम की राह से बर्मा भेजने को तय किया। भागलपुर के एक सज्जन का आसाम में हाथी का रोजगार होता था। उन्हें राजनीति से कुछ लेना-देना नहीं था, पर जे० पी० की दोस्ती के नाते वही दूत बनकर आसाम की ओर चले। हाथी के व्यापारी के ही रूप में गए, फिर भी रास्ते में फौजी खुफिया विभाग को उन-पर संदेह हुआ और वह पकड़ लिये गए। किंतु अंत तक उन्होंने ऐसा स्वांग रचा कि उन्हें सचमुच हाथी का व्यापारी समझकर छोड़ दिया गया। छूटकर वह बर्मा की सरहद तक गए और वहां से ऐसे रास्तों का पता लगा लाए जिनसे बड़ी आसानी से बर्मा पहुंचा जा सकता था।

वह अगस्त में जे० पी० के पास लौटे, तब तक घनघोर बरसात पहुंच चुकी थी। आसाम ही जाना मुश्किल हो गया था अतः उस समय बर्मा की ओर जाने का प्रयत्न बेकार समझकर अक्टूबर के लिए स्थगित कर दिया गया।

कलकत्ते आकर जे० पी० इसीलिए सुभाष से संपर्क स्थापित करने के लिए बेचैन थे। उनसे राष्ट्रीय मोर्चाबंदी के बारे में निश्चित बातें करने की योजना थी। वह खुद बर्मा जाने को तैयार थे।

पर यह संभव न हो सका।

11

गांधी और 'बा' आ
में। और जयप्रकाश
संगठन कर रहे थे।
जान को कुर्बान करने
सुभाषचन्द्र बोस ने
जो पहला भाषण दिया
किया था। नेहरू
लगे थे। साथ ही
नियमित रूप से पत्र
व्यतीत कर रहे थे।
इस बीच बापू
ब्रिटिश सरकार ने
इकट्ठी कर ली थी
था। विश्वयुद्ध की
फौ समस्त दक्षि
पहुंच चुकी थीं। उन
में मांग कर रही
पोते-पोतियों को
याद किया। उन
को भागलपुर
जयप्रकाश
पुलिस से रक्षित
पर तैनात थे,
पूछते थे, वह
वती को उस
जे० पी०
को यह डर था
डिब्बे पर छाप
इतनी
के लिए व्या
हुई 'बा' अ
की सेवा में
अठाईस फर
चुना : 'तू
इन शब्दों
'बा' दुनि
महान

11

गांधी और 'बा' आगा खां पैलेस में बंदी। प्रभावती भागलपुर सेंट्रल जेल में। और जयप्रकाश भूमिगत होकर सारे भारत में क्रांति का संचालन और गुप्त संगठन कर रहे थे। अंग्रेजी हकूमत पर अंतिम प्रहार करने के लिए, अपनी जान को कुर्बान करने के लिए तैयार हजारों जवान इस काम में लगे हुए थे। उधर सुभाषचन्द्र बोस ने सिंगापुर में आजाद हिंद फौज की स्थापना कर रेडियो पर जो पहला भाषण दिया उसमें भारत के राष्ट्रपिता महात्मा गांधी को प्रणाम किया था। नेहरू अहमदनगर जेल में 'डिस्कवरी आफ इंडिया' पुस्तक लिखने में लगे थे। साथ ही बागबानी करते थे और अपनी बहन विजयलक्ष्मी पंडित को नियमित रूप से पत्र लिखते थे और जेल की सीमाओं में आनंद का जीवन व्यतीत कर रहे थे।

इस बीच बापू का इक्कीस दिनों का वह ऐतिहासिक उपवास हुआ जिसमें ब्रिटिश सरकार ने गांधी के लिए चंदन की लकड़ी तक (शव-दाह के लिए) इकट्ठी कर ली थी। समूचे भारत में सरकार का भीषण दमन-चक्र चल रहा था। विश्वयुद्ध की आग में विश्व के अनेक देश झुलस रहे थे। जापान की फौ॰ समस्त दक्षिण-पूर्व एशिया को जीतकर, बर्मा होकर भारत की सीमा तक पहुंच चुकी थीं। उन्हीं दिनों कस्तूर बा आगा खां महल जेल में अपनी अंतिम बीमारी में मांग कर रही थीं : मने प्रभा जोइए (मुझे प्रभा चाहिए)। अपने बेटे-बहू, पोते-पोतियों को छोड़कर 'बा' ने अंतिम घड़ी में अपनी बेटी (प्रभा) को ही याद किया। उनकी गंभीर हालत देखकर आखिर ब्रिटिश सरकार ने प्रभावती को भागलपुर जेल से पूना ले जाने का फैसला किया।

जयप्रकाश बताते हैं : प्रभा को जिस ट्रेन से ले जाया गया, वह सशस्त्र पुलिस से रक्षित थी। उस डिब्बे में इतने शस्त्रधारी सिपाही दिन-रात पहरे पर तैनात थे, हर स्टेशन पर उतने सिपाहियों को देखकर लोग हैरान होकर पूछते थे, वह खतरनाक बंदी कौन है ? कहां है ? लोग उस सरल शांत प्रभावती को उस रूप में देखकर आश्चर्यचकित रह जाते थे।

जे॰ पी॰ बताते हैं : ब्रिटिश सरकार और खासकर उसके खुफिया विभाग को यह डर था कि जयप्रकाश कभी भी, कहीं अपने 'आजाद दस्ते' के साथ डिब्बे पर छापा मारकर प्रभावती को उड़ा ले जा सकता है।

इतनी भयभीत और त्रस्त थी ब्रिटिश हकूमत जे॰ पी॰ से। 'बा' के दर्शन के लिए व्याकुल प्रभावती जब आगा खां महल में पहुंचीं तो मृत्यु-शय्या पर पड़ी हुई 'बा' अपनी बेटी को देखकर प्रफुल्लित हुईं। वहां पहुंचते ही प्रभावती 'बा' की सेवा में जुट गईं। उस समय उन्हें न दिन का पता था, न रात का। आखिर अठाईस फरवरी को, महाशिवरात्रि के दिन, 'बा' ने महाप्रयाण का पवित्र दिन चुना : 'तू जेल में मरेगी तो मैं तेरी जगदंबा के समान पूजा करूंगा', बापू के इन शब्दों को चरितार्थ करती हुई प्रभावती की गोद में सिर रखकर भारत की 'बा' दुनिया से विदा हो गईं। 'बा' का प्रभा की गोद में रखे सिर का वह महान चित्र पटना में जे॰ पी॰ के कमरे में (प्रभा-स्मृति-कक्ष) विद्यमान है।

इधर पूरे हिंदुस्तान में जयप्रकाश की खोज है। गांव, शहर, घोर देहातों के घरों में जे० पी० को पाने के लिए छापे मारे जा रहे हैं। न जाने कितनी-कितनी कहानियां, जनश्रुतियां प्रचलित हो गई हैं। जे० पी० की तरह पांच आदमी हैं। उनमें असली जे० पी० कौन है, कोई नहीं पता लगा सकता। जयप्रकाश के आगे-पीछे अंगरक्षक सेना चलती है। वह मंत्र-शक्ति से दुश्मनों के सामने से अदृश्य हो जाते हैं…।

उस समय भारत सरकार के गृहमंत्री सर रेजिनाल्ट मैक्सवेल विशेषकर जयप्रकाश के खून का प्यासा हो रहा था। उसने हुक्म दे रखा था, जयप्रकाश को जहां पाओ, गोली मार दो। उसने तय कर रखा था कि अगर जे० पी० जिंदा भी पकड़े गए तो भी उन्हें फांसी पर लटकाए बिना मैक्सवेल को चैन नहीं।

अपने उपवास से पहले गांधी जी ने ब्रिटिश सरकार को जो खत लिखा था, उसमें बापू ने जयप्रकाश की चर्चा करते हुए बड़े दर्द के साथ कहा था कि क्यों शिकारी जानवर की तरह इनका अहेर किया जा रहा है? जयप्रकाश का अपराध क्या है? यही न कि देश के, अपने देश के प्रति उनके हृदय में ज्वलंत प्रेम है। जयप्रकाश के ही संदर्भ और प्रसंग में गांधी ने लिखा :

'हिंसा के मामले में कांग्रेस दोषी है या नहीं, सरकार को चाहिए कि वह इस बात का फैसला निष्पक्ष पंचों से करवाए।

'आपका यह कहना सही है कि खुने आम होने वाले इस विद्रोह का मैं नेता हूं। इतना जरूर है कि इस विद्रोह के पीछे 'अहिंसात्मक' शब्द जोड़ना आप भूल गए हैं। जिस क्षण से मैं सत्याग्रही बन गया हूं, मैं प्रजा नहीं रहा, पर नागरिक जरूर हूं। नागरिक कानून का पालन अपनी खुशी से करता है, जबरदस्ती या दंड के भय से नहीं। जब वह जरूरी समझता है तब कानून को तोड़ देता है और उसके लिए आनंद से दंड भोगने के लिए तैयार रहता है।

'यह बिलकुल सच है कि आ० इ० कां० कमेटी की बैठक में मैंने हिंदुस्तानी जनता को संदेश दिया था कि इस क्षण से आप ऐसा व्यवहार कीजिए कि आप किसी के भी गुलाम न होकर पूरी तरह स्वतंत्र हैं। क्या यह जरूरी नहीं है कि जो लोग स्वतंत्रता प्राप्त करना चाहते हैं वे अपनी स्वतंत्रता की भावना पर अड़े रहें और परिणाम की परवाह न करें ?

'8 अगस्त को देश भर में जो हिंसा का तांडव नृत्य हुआ उसके लिए मैं तनिक भी जिम्मेदार नहीं हूं। उसकी सारी जिम्मेदारी सरकार पर है। मैंने जब किसी भी व्यक्ति के साथ अन्याय नहीं किया है तो उसके लिए पश्चात्ताप क्यों करूं ? कांग्रेस का किया हुआ यह विद्रोह हिंसा से पूर्णतः अलिप्त होने के कारण मैं उसे क्यों रोकूं? मुझे इस विद्रोह पर गर्व है। मुझे यदि अपनी सारी आयु जेल में भी बितानी पड़े तो मुझे इसमें जरा भी दुख न होगा।'

नेपाल का 'आजाद दस्ता' करीब-करीब टूट चुका था। देशभर में अगस्त क्रांति अब ठंडी होने लगी थी। पचास हजार से ज्यादा लोग जेलों में बंद थे। अबतक असंख्य युवक और युवतियों ने, जिनमें उन क्रांतिकारी समाजवादियों

के अलावा कितने नाम
मिश्र, महेन्द्र चौधरी,
बलिवेदी पर अपना सर्वस्व
संयुक्त प्रदेश, बंगाल,
उसकी प्रेरणा में चाकें
बिस्मिल, असफाक उल्ला
जैसे क्रांतिकारियों के
गांधी जी, डा० लोहिया

भूमिगत अगस्त क्रां
योगेन्द्र शुक्ल, एन० एम०
मिश्र, गंगासरन सिंह,
चारी, आरा के सूर्यना
सिंहप्रसादसिंह, गया के
पाठक आदि गिरफ्तार
मुक्त थे।

मित्रों का आग्रह
कहीं थोड़े दिन छिप
था, फिर भी बंगाल में
मलेरिया बुखार ने
का दौरा करना चाहा

तब तक बरसात
मित्रों के कहने से
की तरफ गुजारे जाय
लें। उधर के क्रांति
दिल्ली में पंजाब के
में पंजाब के विशेष
में भी उसी तरह की
हुआ था।

दिल्ली की
गया और उन्होंने
जयप्रकाश दो घंटे
पुलिस छापा में
जयप्रकाश को
थी। उन्होंने इस
थोड़ी सी मूंछें भी
वह रेलगा
ने पंजाब के
को आज भी

इधर पूरे हिंदुस्तान में जयप्रकाश की खोज है। गांव, शहर, घोर देहातों के घरों में जे० पी० को पाने के लिए छापे मारे जा रहे हैं। न जाने कितनी-कितनी कहानियां, जनश्रुतियां प्रचलित हो गई हैं। जे० पी० की तरह पांच आदमी हैं। उनमें असली जे० पी० कौन है, कोई नहीं पता लगा सकता। जयप्रकाश के आगे-पीछे अंगरक्षक सेना चलती है। वह मंत्र-शक्ति से दुश्मनों के सामने से अदृश्य हो जाते हैं···।

उस समय भारत सरकार के गृहमंत्री सर रेजिनाल्ट मैक्सवेल विशेषकर जयप्रकाश के खून का प्यासा हो रहा था। उसने हुक्म दे रखा था, जयप्रकाश को जहां पाओ, गोली मार दो। उसने तय कर रखा था कि अगर जे० पी० जिंदा भी पकड़े गए तो भी उन्हें फांसी पर लटकाए बिना मैक्सवेल को चैन नहीं।

अपने उपवास से पहले गांधी जी ने ब्रिटिश सरकार को जो खत लिखा था, उसमें बापू ने जयप्रकाश की चर्चा करते हुए बड़े दर्द के साथ कहा था कि क्यों शिकारी जानवर की तरह इनका अहेर किया जा रहा है? जयप्रकाश का अपराध क्या है? यही न कि देश के, अपने देश के प्रति उनके हृदय में ज्वलंत प्रेम है। जयप्रकाश के ही संदर्भ और प्रसंग में गांधी ने लिखा :

'हिंसा के मामले में कांग्रेस दोषी है या नहीं, सरकार को चाहिए कि वह इस बात का फैसला निष्पक्ष पंचों से करवाए।

'आपका यह कहना सही है कि खुले आम होने वाले इस विद्रोह का मैं नेता हूं। इतना जरूर है कि इस विद्रोह के पीछे 'अहिंसात्मक' शब्द जोड़ना आप भूल गए हैं। जिस क्षण से मैं सत्याग्रही बन गया हूं, मैं प्रजा नहीं रहा, पर नागरिक जरूर हूं। नागरिक कानून का पालन अपनी खुशी से करता है, जबरदस्ती या दंड के भय से नहीं। जब वह जरूरी समझता है तब कानून को तोड़ देता है और उसके लिए आनंद से दंड भोगने के लिए तैयार रहता है।

'यह बिल्कुल सच है कि आ० इ० कां० कमेटी की बैठक में मैंने हिंदुस्तानी जनता को संदेश दिया था कि इस क्षण से आप ऐसा व्यवहार कीजिए कि आप किसी के भी गुलाम न होकर पूरी तरह स्वतंत्र हैं। क्या यह जरूरी नहीं है कि जो लोग स्वतंत्रता प्राप्त करना चाहते हैं वे अपनी स्वतंत्रता की भावना पर अड़े रहें और परिणाम की परवाह न करें?

'8 अगस्त को देश भर में जो हिंसा का तांडव नृत्य हुआ उसके लिए मैं तनिक भी जिम्मेदार नहीं हूं। उसकी सारी जिम्मेदारी सरकार पर है। मैंने जब किसी भी व्यक्ति के साथ अन्याय नहीं किया है तो उसके लिए पश्चात्ताप क्यों करूं? कांग्रेस का किया हुआ यह विद्रोह हिंसा से पूर्णतः अलिप्त होने के कारण मैं उसे क्यों रोकूं? मुझे इस विद्रोह पर गर्व है। मुझे यदि अपनी सारी आयु जेल में भी बितानी पड़े तो मुझे इसमें जरा भी दुख न होगा।'

नेपाल का 'आजाद दस्ता' करीब-करीब टूट चुका था। देशभर में अगस्त क्रांति अब ठंडी होने लगी थी। पचास हजार से ज्यादा लोग जेलों में बंद थे। अबतक असंख्य युवक और युवतियों ने, जिनमें उन क्रांतिकारी समाजवादियों

के अलावा कितने नाम जनता में प्रसिद्ध हो चुके थे। जैसे राजनारायन, मिश्र, महेन्द्र चौधरी, फुलेनाप्रसाद, मातगिनी हजारा जिन्होंने देश की बलिवेदी पर अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दिया था। विशेषकर सारा बिहार, संयुक्त प्रदेश, बंगाल, मध्य प्रदेश, बंबई की जनता ने जो वीरता दिखाई उसकी प्रेरणा में चाफेकर बंधु, खुदीराम, कन्हाईलाल, करतारसिंह, रामप्रसाद बिस्मिल, असफाक उल्ला, राजेन्द्र लाहिड़ी भगतसिंह और चन्द्रशेखर आजाद जैसे क्रांतिकारियों के अमर नाम थे और नायक थे जयप्रकाश। नेता थे महात्मा गांधी जी, डा० लोहिया थे संचालक।

भूमिगत अगस्त क्रांति के अब तक जयप्रकाश के अनेक साथी सहायक जैसे योगेन्द्र शुक्ल, एन० एम० जोशी, गोरे, शाने गुरु जी, बी० पी० सिंहा, रामनंदन मिश्र, गंगासरन सिंह, श्यामबदनसिंह, भागलपुर के सियारामसिंह, पार्थ ब्रह्मचारी, आरा के सूर्यनाथ चौबे, मुजफ्फरपुर के रामचन्द्र शर्मा, पूर्णिया के नरसिंहप्रसादसिंह, गया के कुमार बद्रीकुमार नारायणसिंह और मुंगेर के सुरेश पाठक आदि गिरफ्तार हो चुके थे। साथियों में विशेष, डा० राममनोहर अभी मुक्त थे।

मित्रों का आग्रह था कि जयप्रकाश किसी दूसरे देश में चले जाएं या कहीं थोड़े दिन छिप जाएं। पर जयप्रकाश थे कि उनका स्वास्थ्य ठीक नहीं था, फिर भी बंगाल में अकाल पड़ा तो वहां काम करने के लिए भागे। वहां मलेरिया बुखार ने दबोच लेना चाहा। तभी कलकत्ता से दिल्ली और पंजाब का दौरा करना चाहा।

तब तक बरसात पहुंच चुकी थी और तबीयत भी सुधर नहीं रही थी। मित्रों के कहने से एक बार उन्होंने सोचा कि बरसात के दो महीने कश्मीर की तरफ गुजारे जांय। भारत की उत्तरी पश्चिमी सीमा से संपर्क ताजा कर लें। उधर के क्रांतिकारियों से मिल लें। पर अंत में निश्चय यह किया कि दिल्ली में पंजाब के कार्यकर्ताओं का एक सम्मेलन बुलाया जाय। अगस्त क्रांति में पंजाब के विशेष भाग न लेने पर जयप्रकाश बहुत असंतुष्ट थे। वह पंजाब में भी उसी तरह की संघर्ष-ज्वाला चाहते थे, जैसा कि समूचे पूर्वी भारत में हुआ था।

दिल्ली की पुलिस को पंजाब पुलिस की सहायता से इसका पता चल गया और उन्होंने एक साथ उस रोज कई मकानों की तलाशी ली। संयोग से जयप्रकाश दो घंटे पूर्व दिल्ली की सीमा छोड़ चुके थे। पर उस तलाशी और पुलिस छापा में बिहार के महत्त्वपूर्ण कार्यकर्त्ता बसावनसिंह गिरफ्तार हुए।

जयप्रकाश को याद है दिल्ली छोड़ते समय उन्होंने अपनी दाढ़ी मुड़ा ली थी। उन्होंने इस कहावत पर अमल किया था बेस्ट डिस्गाइज इज नो डिस्गाइज थोड़ी सी मूंछें थीं। भेष योरोपियन था, और कुछ खास नहीं।

वह रेलगाड़ी थी फ्रंटियर मेल। दिल्ली के एक पत्रकार एस. एल. कपूर ने पंजाब के खुफिया पुलिस को दिल्ली से ही भेद बता दिया था। जयप्रकाश को आज भी वह पूरी घटना याद है। रात की यात्रा अच्छी हुई थी। सुबह

अमृतसर स्टेशन पर चाय आती है। अखबार लिया जाता है। चाय बनाकर पीने ही जा रहे थे कि सादे कपड़े में एक अंग्रेज और दो सिक्ख डिब्बे में दाखिल होते हैं।

जयप्रकाश चाय पीते-पीते मजे से अखबार पढ़ रहे थे। उन्हें कतई कोई शक शुबहा नहीं। जब अमृतसर से लाहौर के लिए गाड़ी चल पड़ी तब उस अंग्रेज ने पूछा कहां जा रहे हैं ?

रावलपिंडी।

आपका साथी कहां है ?

साथी, मैं तो अकेला हूं।

तो आप सिर निकालकर पीछे किसे देख रहे थे ?

जयप्रकाश ने पूरे आत्मविश्वास से कहा : शायद आपको कुछ धोखा हो रहा है। उस अंग्रेज ने कहा : अब आप मुझे धोखा नहीं दे सकते, यह नेपाल नहीं।

नेपाल ?

जी हां, आज आप बुरी तरह से फंस गए हैं।

अखबार को सामने से हटाकर जयप्रकाश बोले : आप यह सब क्या कह रहे हैं ?

मैं कभी नेपाल नहीं गया। मैं बंबई का व्यापारी हूं।

उसने कहा : आप जयप्रकाश नारायण हैं।

जी नहीं, मैं हूं एस० पी० मेहता।

अच्छा पहले अपनी तलाशी दे दीजिए। हम लोग पुलिस अफसर हैं, यह तो आप समझ ही गए होंगे।

जैसी आप लोगों की मर्जी।

पूरी तलाशी ली जाती है : बिस्तर, सूटकेस, पर्स, पाकेट, तकिया, टिकट और सारे कागज पत्तर देखे जाते हैं।

जिसने जयप्रकाश की तलाशी ली, उसका नाम था विलियम राबिसन लाहौर का एस० पी०। उसे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि जयप्रकाश के पास न कोई पिस्तौल है, न और ऐसी कोई चीज। राबिसन ने सावधान किया : मेरे पास आपको शूट कर देने के आर्डर्स थे, अगर आपने गिरफ्तार होने से जरा भी विरोध किया होता।'

राबिसन को इसके पुरस्कार में दिल्ली का एस० एस० पी० बनाया गया था।

किसी ने पूछा : जब आप इस तरह गिरफ्तार हुए तो कैसा लगा ?

जयप्रकाश ने कहा : मुझे बहुत धक्का लगा। दुखी हुआ।

जयप्रकाश के चेहरे पर अब भी उस घटना की याद में उदासी छा जाती है, क्योंकि तब सारा काम अधूरा रह गया था।

जे० पी० कहते हैं—नहीं, यह बात नहीं। मैं तब न भी पकड़ा गया होता तो भी काम के पूरा होने में अभी काफी देर थी, दुख इस बात का था कि मैं आगे वह काम नहीं कर सका।

तलाशी लेते हुए राबिसन ने पूछा था।

आपके हथियार कहां हैं
यह सब आप क्या बोल
मेहता। मैं फजूल में तंग कि
आप बच गए। जरा भी भा
होती, तो आपको गोली मा
हमारे सिपाही तैनात हैं।
आदमी किस डिब्बे में हैं?
पर जयप्रकाश उसी
आप गलत आदमी को बै
प्रकाश का नाम जरूर सु
तलाशी भी ले ली।
फ्रंटियर मेल अपनी
कहा : आपके देश में प्र
नहीं है। यह आपकी
बादशाह हो जांय, पर अ
मुमकिन बात है।
अब भी जयप्रकाश
राजनीति क्या जानूं।
बातों बात में
उतारने के पहले जयप्र
जाते हैं। पहले से ही
खड़ी थी, जयप्रकाश को
पहले जयप्रकाश
तैंतालीस को भारत
जयप्रकाश का वह मि
अनंत यातनाएं।
उनको पकड़ने
किसी को मिला भी
हो सकता है। औ
रहेगा।
जयप्रकाश प
शायद वह बे
थी दस हजा
पुट अपान
इन दी पंजा
इट बिल बी
तब तीन
यह प्रश्न उठा

आपके हथियार कहां है ?

यह सब आप क्या बोल रहे हैं। मैं हूं बंबई का व्यापारी, एस० पी० मेहता। मैं फजूल में तंग किया जा रहा हूं। तब वह अंग्रेज बोला था : आज आप बच गए। जरा भी भागने की या और कुछ भी करने की कोशिश की होती, तो आपको गोली मार दी जाती। आप बिल्कुल घिरे हैं। चारों ओर हमारे सिपाही तैनात हैं। खैर, बताइए आपके हथियार कहां हैं ? आपके आदमी किस डिब्बे में हैं ?

पर जयप्रकाश उसी आत्मविश्वास के साथ अब तक कहते जा रहे थे। आप गलत आदमी को घेरे हुए हैं। मैं तो बंबई का व्यापारी हूं। हां जयप्रकाश का नाम जरूर सुना है, पर उनसे कोई वास्ता नहीं। अब तो आपने तलाशी भी ले ली।

फंटियर मेल अपनी पूरी गति से दौड़ रही थी। उस अंग्रेज अफसर ने कहा : आपके देश में प्रजातंत्र नामुमकिन है। यह आपकी जमीन की उपज नहीं है। यह आपकी चीज नहीं। हो सकता है जयप्रकाश आप बिहार के बादशाह हो जांय, पर आप यहां के प्रजातंत्र के प्रेजिडेंट हो जांय, यह गैर मुमकिन बात है।

अब भी जयप्रकाश बोले : आप गलत आदमी से ये बातें कह रहे हैं। मैं राजनीति क्या जानूं।

बातों बात में फंटियर मेल मुगलपुरा स्टेशन पहुंचता है। गाड़ी से उतारने के पहले जयप्रकाश के हाथ उन्हीं के होल्डाल के पट्टे से बांध दिए जाते हैं। पहले से ही सारा इंतजाम था। स्टेशन के बाहर एक खास मोटर खड़ी थी, जयप्रकाश को लाहौर के किले में ले जाने के लिए।

पहले जयप्रकाश कुछ दिनों नजरबंद रहे, फिर चौदह दिसंबर उन्नीस सौ तैंतालीस को भारत सरकार ने उन्हें राजबंदी घोषित किया। फिर शुरू हुआ जयप्रकाश का वह निर्मम 'इंटरोगेशन' पूछ-ताछ और उनपर बरसने लगीं अनंत यातनाएं।

उनको पकड़ने के लिए पुरस्कार घोषित किया गया था। वह रक्तधन किसी को मिला भी। वह पंजाब में पकड़े गए। उन्हें बेचने वाला पंजाबी ही हो सकता है। और यह सत्य है कि पंचनद की भूमि का यह कलंक अमिट रहेगा।

> जयप्रकाश पकड़े गए या विश्वासघाती द्वारा अंग्रेजी हुकूमत को बेचे गए ? शायद वह बेचे गए। उस समय उनके जिंदा या मुरदा सिर की कीमत थी दस हजार। जे० एस० ब्राइट ने लाहौर से लिखा था, 'ए प्राइस वाज पुट अपान हिज हेड एंड समबडी डिडगेट दी ब्लडमनी। ही वाज काट इन दी पंजाब। एंड सो दैट सेलर माइट बी ए पंजाबी। एंड इट इज टू इट विल बी परमानेंट ब्लेमिश आन दी लैंड आफ फाइव रिवर्स…।'
>
> (लाइफ एंड टाइम आफ जयप्रकाश)

तब तीन नवंबर उन्नीस सौ तैंतालीस को पंजाब एसेंबली में कलंक भरा यह प्रश्न उठाया गया था : पंजाब सरकार ने उत्तर देने से मना कर दिया।

एस० कपूरसिंह की ओर से पूछे गए सवाल पर प्राइवेट पार्लियामेंट्री सेक्रेटरी, सैयद अमजद अली ने सिर्फ इतना सा उत्तर दिया था : कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी के जनरल सेक्रेटरी श्री जयप्रकाशनारायण को पिछले दिनों पंजाब में दफा एक सौ उन्तीस के अंतर्गत गिरफ्तार किया गया और डिफेंस आफ इंडिया के दफा छब्बीस के तहत नजरबंद किया गया। जब वह नजरबंद किए गए तब उनका स्वास्थ्य अच्छा था और जब वह नजरबंद किए गए तब भी उनका स्वास्थ्य अच्छा था। उन्हें फर्स्ट क्लास, कैदी की कोटि में भोजन, अखबार और किताबें दी जाती हैं। जनता के हित में यह नहीं बताया जा सकता कि वह कहां, कैसे गिरफ्तार हुए और उन्हें इस तरह गिरफ्तार कराने में किसने पुलिस की मदद की और उसे क्या इनाम मिला।

लाहौर के उस किले की नींव अकबर ने डाली थी। जहांगीर ने उसे बनवाना शुरू किया और शाहजहां ने उसे पूरा किया। शीशमहल, दीवाने नौलखा मोती मस्जिद और चालीस खंबों का दरबार इन सब में रहस्य रोमांस और इतिहास की गूंज है। शीशमहल के हाल में ही पंजाब संधि हुई थी—भारत का अंतिम हिस्सा भी तब अंग्रेजों के हाथ चला गया था। इसलिए यह उचित ही था कि 'अंग्रेजो भारत छोड़ो' विद्रोह का नेता और नायक उसी लाहौर के ही किले में बंदी बनाया जाय। ठीक जैसे 'दिल्ली चलो' का नारा देने वाले सुभाषचन्द्र बोस के आई० एन० ए० के बहादुरों को लालकिले में रखा गया।

और उस समय लाहौर का यह किला 'नारकीय किला' के नाम से बदनाम हो चुका था। इसे नंबर एक नाज़ी कैंप भी कहा जाता था। तब जर्मन नाजी जेलों में दी जाने वाली यातनाओं का, अंग्रेजों ने (नाजी विरोध का) बड़ा प्रचार कर रखा था। पर लोगों को यह पता नहीं कि नाजी कैंपों से भी अधिक यंत्रणा देने वाले अंग्रेजों का एक केंद्र लाहौर में भी था। सोलह वर्ष पहले इसी किले में सरदार भगतसिंह ने क्रांति का एक अमर गीत गुनगुनाया था :

उसे फिक्र है हरदम नया तर्जे जफा क्या है,
हमें यह शौक देखें तो सितम की इंतिहा क्या है।
कोई दम का मेहमां हूं ऐ अहले महफिल,
चिरागे सहर हूं बुझा चाहता हूं।...
खुश रहो अहले वतन हम तो सफर करते हैं।

जयप्रकाश की उस गिरफ्तारी के बाद सरकार ने इस खबर को छिपाकर रखना चाहा। लेकिन धीरे-धीरे यह बात खुली और लोगों में अफवाहें फैलने लगीं कि लाहौर किले में जयप्रकाश को तरह-तरह की यातनाएं दी जा रही हैं। इनके खिलाफ लड़ने के लिए बंबई के प्रसिद्ध बैरिस्टर पारडीवाला लाहौर पहुंचे और लाहौर हाईकोर्ट में जयप्रकाश के लिए 'हाबियस कारपस' की दरख्वास्त की। इस पर उल्टे पंजाब पुलिस ने 'पारडीवाला' को ही गिरफ्तार कर

लिया। इस पर और भी सनस
वहां के प्रसिद्ध वकील जीवनला
दिलवाई। पंजाब की पुलिस ने
प्रिजनर' से बदलकर उन्नीस
बना दिया, ताकि 'हाबियस
कि ज्यों ही 'हाबियस' की
सेक्यूरिटी प्रिजनर बना दिया

उसके बाद ही बड़े जोरों
मुकदमा चलाने जा रही है
आदि के अभियोग भी लगाए
पुलिस की दौड़ धूप भी शु
विशेषज्ञ भी इस मामले में
सनसनी मची। जयप्रकाश
के बड़े बड़े वकीलों के ही
पार्टी ने भी अपनी ओर से
चला।

12

लाहौर किले में जे०
ही दस्तावेज है, उनकी
फोर्ट के नाम से, सोश
गया।

यह डायरी एक
पृष्ठ पर जेल इंस्पेक्टर
सत्रह फरवरी सन् चौवा
प्रकार है, 'दिस नोट बु

इस नोट बुक की

उसी पहले पेज पर
है अठारह फरवरी सन्

डायरी के उन पृ
घटनाओं और व्यक्ति
के बारे में स्पष्ट वि

लाहौर जेल में
और 'स्टेट्समैन'।
सभाओं के समाचार
जितना जो कुछ प
और विचार,
और क्रमबद्ध नहीं

लिया। इस पर और भी सनसनी फैली। तब पूर्णिमा बनर्जी पंजाब पहुंचीं और वहां के प्रसिद्ध वकील जीवनलाल कपूर द्वारा 'हाबियस कारपस' की दरख्वास्त दिलवाई। पंजाब की पुलिस ने दूसरी चालाकी की। जयप्रकाश को 'सेक्यूरिटी प्रिजनर' से बदलकर उन्नीस सौ अठारह के तीसरे 'रेगुलेशन' का स्टेट प्रिजनर बना दिया, ताकि 'हाबियस कारपस' लागू ही न हो सके। और तमाशा यह कि ज्यों ही 'हाबियस' की दरख्वास्त वापस की गई, त्यों ही उन्हें फिर सेक्यूरिटी प्रिजनर बना दिया गया।

उसके बाद ही बड़े जोरों से यह अफवाह फैली कि जयप्रकाश पर सरकार मुकदमा चलाने जा रही है और उन पर राजविद्रोह के अलावा षड्यंत्र हत्या आदि के अभियोग भी लगाए जाएंगे। इस मुकदमे के सिलसिले में बिहार में पुलिस की दौड़ धूप भी शुरू हुई और अफवाह थी कि स्काटलैंड यार्ड के विशेषज्ञ भी इस मामले में बुलाए गए हैं। मुकदमे की इस खबर से बड़ी सनसनी मची। जयप्रकाश के मुकदमे की पैरवी करने के लिए सिर्फ हिंदुस्तान के बड़े बड़े वकीलों के ही पैगाम नहीं आए, बल्कि इंग्लैंड की स्वतंत्र लेबर पार्टी ने भी अपनी ओर से वकील भेजने का संवाद दिया। और मुकदमा नहीं चला।

12

लाहौर किले में जे० पी० के जीवन और उनके चरित्र का केवल एक ही दस्तावेज है, उनकी लिखी हुई डायरी के कुछ पृष्ठ। इसे इनसाइड लाहौर फोर्ट के नाम से, सोशलिस्ट बुक सेंटर मद्रास की ओर से प्रकाशित किया गया।

यह डायरी एक साधारण कापी पर लिखी जा रही थी जिसके प्रथम पृष्ठ पर जेल इंस्पेक्टर नौरंगसिंह के हस्ताक्षर हैं। और उसपर दिनांक है सत्रह फरवरी सन् चौवालीस। उस पर इंस्पेक्टर की टिप्पणी अंग्रेजी में इस प्रकार है, 'दिस नोट बुक हैज बीन पेज्ड एंड इट कंटेंड्स। 52 पेजेज।'

इस नोट बुक की पृष्ठ संख्या अंकित की गई और यह 52 है।

उसी पहले पेज पर अंग्रेजी में ही जयप्रकाश के हस्ताक्षर हैं और दिनांक है अठारह फरवरी सन् उन्नीस सौ चौवालीस।

डायरी के उन पृष्ठों में हमें जयप्रकाश के, उस समय की ज्वलंत समस्याओं, घटनाओं और व्यक्तियों के प्रति और जेल में उनके द्वारा पढ़ी गई पुस्तकों के बारे में स्पष्ट विचार मिलते हैं।

लाहौर जेल में उन्हें कुल दो समाचार पत्र पढ़ने को मिलते थे: 'ट्रिब्यून' और 'स्टेट्समैन'। पर उन समाचार-पत्रों से युद्ध के समाचार भारतीय, विधान-सभाओं के समाचार और संपादकीय अंश काटे हुए मिलते थे। इसलिए उन्हें जितना जो कुछ पढ़ने को मिलता था, उसी के आधार पर उनकी प्रतिक्रियाएं और विचार, डायरी के पृष्ठों में अंकित हुए हैं। इसीलिए डायरी नियमित और क्रमबद्ध नहीं है। सारी डायरी अंग्रेजी में लिखी हुई है।

डायरी का पहला पेज है : 'यह है लाहौर फोर्ट' (शीर्षक)

नीचे उन्होंने गृह मंत्री, पंजाब सरकार को पहला पत्र फरवरी उन्नीस सौ चौवालीस को लिखा है :

'श्रीमान्,

···मैं गत अठारह सितंबर (उन्नीस सौ तैंतालीस) को अमृतसर के पास गिरफ्तार किया गया और उसी दिन इस किले में ले आया गया। नजरबंदी के एक महीने के बाद मैं पंजाब, बंगाल और बिहार के सी० आई० डी० के अफसरों के सामने यहां दफ्तर में हाजिर किया गया।···फिर मेरा 'इन्ट्रोगेशन, शुरू हुआ मैं नित्य उनके सामने ले जाया जाता।···सुबह आठ बजे से आधी रात तक मेरा 'इंट्रोगेशन' होता। मुझे तरह-तरह से डराया और धमकाया जाता। मुझे किसी तरह के प्रतिवेदन या विरोध प्रकट करने तक नहीं दिया जाता··· फिर आगे मुझे यातनाएं दी जाने लगीं। मुझे दिन-रात कभी सोने नहीं दिया जाता। पूरी तरह से तोड़ देने वाली वे यातनाएं होती थीं जिन्हें लिखकर बता पाना मुश्किल है···।'

ऐसे निवेदन-पत्र में भी जे० पी० अंत में यह कहना नहीं भूलते थे : 'आप का इतना समय ले लेने के लिए क्षमा-याचना करता हूं।'

आगे उसी किले में कैद रामनन्दन मिश्र के उस पत्र का अंश है, जो उन्होंने प्रधान मंत्री और पंजाब सरकार के मंत्रियों के नाम अपनी अमानवीय यत्रणाओं के बारे में लिखा था। और डा० राममनोहर के उस पत्र का अंश है जो उन्होंने उसी लाहौर के किले से प्रोफेसर लास्की को लिखा था।

आगे जे० पी० की डायरी में उस समय की ज्वलंत घटनाओं के बारे में उनके विचार पढ़ने को मिलते हैं :

बारह अप्रैल चौवालीस : 'कॉमिंटर्न की समाप्ति' के बारे में उनके विचार हैं कि इसके बाद भी अन्य देशों के कम्युनिस्टों पर से मास्को की गुलामी का अंत नहीं होता।

तेरह अप्रैल चौवालीस : 'स्वतंत्र भारत में गांव का स्थान' शहर नहीं गांव को ही केंद्र में रखकर स्वतंत्र भारत का स्वप्न देखा है।

उन्नीस अप्रैल : 'आर्थिक योजना और राजनीतिक विकेंद्रीकरण' के अंतर्गत, कांग्रेस और मुस्लिम लीग के बीच में राजनीतिक शक्तियों के लेन-देन और समझौते से जो विषाक्त और भयानक राजनीतिक समस्या अंग्रेज साम्राज्यवादियों ने खड़ी की थी उसके प्रति एक सशक्त विकल्प-दर्शन जे० पी० ने दिया है।

आठ मई : गांधी जी की रिहाई पर जे० पी० के संतोष उल्लास और आनंद का शब्दचित्र। पर जे० पी० लिखते हैं : 'मुझे इसलिए खुशी नहीं है कि गांधी जी की उस रिहाई से अंग्रेजी हुकूमत से हमारा कोई समझौता होने जा रहा है। लड़ाई के इस समय मैं कोई समझौता नहीं चाहता। क्योंकि इन परिस्थितियों में कोई भी समझौता भारत की स्वतंत्रता की लड़ाई में हितकर नहीं होगा। मुझे आशा है, गांधी जी ऐसा कोई भी समझौता नहीं करेंगे जो भारत के हित में न हो···।'

दस, तेरह, उन्नीस इन तीनों तिथियों की डायरी में जे० पी० ने लगातार गांधी जी की रिहाई से उत्पन्न कांग्रेस, मुस्लिम लीग, कांग्रेस और ब्रिटिश हुकूमत और स्वतंत्रता की लड़ाई के सवाल पर गंभीरता से विचार किया है।

फिर कुछ पढ़ी हुई पुस्तकों के बारे में जे० पी० की टिप्पणियां हैं। कुछ मुख्य पुस्तकें हैं : 'रशा फाइट्स' रीड का 'ऑल ओवर टुमारोज' माइकेल स्ट्रैट का 'मेक दिस द लास्ट वार' जिम फेलन का 'जेल जर्नी'।

सात अगस्त को मीनू मसानी ने जे० पी० को ये तीन पुस्तकें भेजी थीं : 'टुमारो सिकेण्ड', 'टाकिंग टू इंडिया' और 'गांधीज्म रीकंसीडर्ड'।

दस अगस्त से लेकर पच्चीस अगस्त तक कुछ महत्त्वपूर्ण घटनाओं, व्यक्तियों और समस्याओं पर टिप्पणियां हैं। इनमें मुख्य हैं : 'हिंदू मुस्लिम यूनिटी', 'कांग्रेस मुस्लिम लीग समझौते की समस्या', 'राजनीतिक योजना', 'पाकिस्तान और रूस', 'भारतीय अर्थशास्त्र', 'डा० भगवानदास और समाज संगठनशास्त्र', 'मीनू मसानी', 'जिन्ना'।

इस बीच कुछ पुस्तकें पढ़ी गई हैं। जैसे : 'पोलिश कांसपिरेसी', 'ह्वाई पाकिस्तान एंड ह्वाई नाट ?', 'फार हूम द बेल टाल्स', 'वियर आफ फ्रीडम', 'दि ट्रायल आफ मुसोलिनी' और कुछ पैंफ्लेट्स।

लाहौर फोर्ट के भीतर लिखे हुए जे० पी० के डायरी के पृष्ठ मुख्यतः उस समय के राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक प्रश्नों और घटनाओं पर उनके विचारों के दस्तावेज हैं। सरकार को लिखे गए उनके दोनों पत्र लाहौर जेल में उन पर यंत्रणाओं के सजीव चित्र हैं। अनेक लेखों के विचारों में मौलिकता का अभाव है। इसके दो कारण हैं : विचार स्फुट हैं और टिप्पणी के स्तर से व्यक्त किए गए हैं।

वस्तुतः : जे० पी० के चरित्र में आत्मगत चिंतन पक्ष का सर्वथा अभाव है। यह बड़ी गंभीरता से विचार करते हैं, पर (रिफलेक्ट) चिंतन नहीं करते। इसलिए डायरी के इन पृष्ठों से उनकी बौद्धिक चेतना का तो पता चलता है, पर इनके आंतरिक संसार की तस्वीर हमें नहीं मिलती। अगर कुछ मिलती है तो केवल उनकी राजनीतिक चेतना और उसकी करुणा की कुछ स्फुट झांकियां :

'पिछले कई सप्ताह से, जब से गांधी जी ने अगस्त क्रांति के बारे में अपनी राय दी है, मेरे दिल में बड़ी कटुता पैदा हो गई है। मैं जानता हूं, कटु होना निरर्थक है। पर शायद मैं चीजों को बड़ी गंभीरता से लेता हूं। मुझे अब तक याद है किस तरह त्रिपुरी कांग्रेस में जवाहरलाल ने मुझ पर व्यंग्य किया था जब कि उन तनाव के क्षणों में कुछ दोस्तों ने 'मारबिल राक्स' देखने की बात चलाई थी (और जे० पी० ने विरोध किया था)। जीवन, वास्तव में, कैसे इतना संकीर्ण और सीमित हो सकता है ? शायद बुनियादी तौर पर, चीजों को देखने का मेरा समाजवादी ढंग ऐसा है कि उस क्षण केवल वर्तमान राजनीतिक प्रश्न ही में, मैं बिल्कुल डूब जाता हूं। बहरहाल मैं उस कटुता से मुक्त नहीं हो पा रहा हूं जो तब से दिन-रात मेरे अंतस् को खाए जा रही है। मैं ऐसा नहीं कहता कि अंत में मुझे कांग्रेस राजनीति से विदा लेकर मजदूर

और समाजवादी आंदोलन में नहीं जाना चाहिए। मैं इसलिए कटुता का अनुभव कर रहा हूं कि हमें धोखा दिया गया है। व्यक्तिगत रूप से, नहीं, क्योंकि खुले आम मैंने हिंसा के लिए उपदेश दिया था और इसीलिए मैं इसकी किसी ऐसी असफलता के प्रति जवाबदेही के लिए भी तैयार हूं। पर इसलिए कि हजारों, लाखों भारतीय देशभक्तों को धोखा दिया गया है।'

गांधी जी और कांग्रेस ने अगस्त क्रांति को अस्वीकार (डिसओन) किया था, क्योंकि यह असफल रहा। इसी धोखेबाजी ने जे० पी० को मर्मांतक पीड़ा दी थी, और इसकी छाप डायरी के तमाम पृष्ठों पर है।

पर जे० पी० के मन प्राण की झांकी एक नीग्रो धर्मगीत से मिल सकती है जिसे उन्होंने पहली नवंबर सन् चौवालीस को अपनी डायरी में अंकित किया :

'और आह ! सब गुलाम हो जाओगे
आह ! सब कब्र में दफना दिए जाओगे
आह मेरे प्रभु के घर जाओ और मुक्त हो।

लाहौर किले की जिस कोठरी में जे० पी० यातना भोग रहे थे, उसका बाहरी दुनिया से क्या, किले के भीतर के किसी भाग से उनका संपर्क नहीं रहने दिया गया था। कई महीनों बाद जे० पी० को एक दिन पता चला कि उसी किले की एक अन्य यातना-कोठरी में साथी राममनोहर लोहिया भी यंत्रणा के शिकार हो रहे हैं।

तभी डा० लोहिया ने 'ब्रिटिश लेबर पार्टी' के तत्कालीन अध्यक्ष प्रोफेसर हेराल्ड जे० लास्की के नाम वह ऐतिहासिक पत्र लिखा और गुप्त रूप से उस किले के बाहर भिजवा दिया। उस पत्र में लोहिया ने जयप्रकाश और अपनी नजरबंदी, देश में हुए अत्याचार, दमन, लाहौर किले की यातनाएं और विशेष रूप से उन दोनों पर लगाए गए झूठे आरोपों के संबंध में स्पष्ट बातें लिखीं।

और पैंतालीस के प्रारंभ में जयप्रकाश को पूरे सोलह महीने के बाद, पंजाब सरकार ने लाहौर जेल से आगरा जेल में बदली कर दिया। उनके साथ डा० लोहिया भी थे।

आगरा जेल में जयप्रकाश अनिश्चित काल के लिए सजा भोग रहे थे। उसी बीच ब्रिटेन के संसद् सदस्यों का एक शिष्ट-मंडल भारत आया। शिष्ट-मंडल के प्रमुख रिनोल्ड आगरा जेल में जयप्रकाश और डा० लोहिया से मिले। उस भेंट की चर्चा उन्होंने बड़े मनोरंजक ढंग से की है :

'हम लोग शाम को जेल में दाखिल हुए। लंबे-लंबे लोहे के सींकचों वाले फाटकों के तालों व चाभियों की ही आवाज सुनाई देती थी। कई ऐसे फाटकों को पार कर हम लोग एक छोटे से आंगननुमा ऊंची दीवारों से घिरे स्थान में पहुंचे। वहीं सिपाहियों के घेरे में डा० लोहिया और जयप्रकाश लाए गए। फिर उनके चारों ओर कुर्सियों का घेरा डाल दिया गया जिन पर हम सब बैठे। उनसे हमने लगभग दो घंटे बातचीत की। जेल का सुपरिंटेंडेंट और अन्य अधिकारी थोड़ी-थोड़ी दूर पर बड़ी सतर्कता से खड़े रहे। अंधेरा होने के पहले ही दो बड़ी लालटेनें जलाकर वहीं पास में रख दी गईं जो केवल धुंधला प्रकाश

देने में ही सफल हो सकीं। यह अजीब दृश्य था—बहुत छोटा सा आंगन और खूब ऊंची दीवारें। अंधेरे वातावरण में कहीं-कहीं रोशनी के धुंधले पीले धब्बे थोड़ी दूर पर साए से खड़े जेल अधिकारी व कर्मचारी और उनके बीच बैठे, आधे दर्जन ब्रिटिश संसद्-सदस्य, जो थोड़ा झुककर एक जोड़ा खतरनाक भारतीय बंदियों से बातें कर रहे थे, जो अनिश्चित अवधि के लिए जेल में बंद थे। जब अंत में मैत्रीपूर्ण बातचीत समाप्त हुई तो अधिकारियों ने चैन की सांस ली।

तब हमने अपने भारतीय बंदी मित्रों की अंधेरी कारावास कोठरी में भी क्षण भर को झांक कर देखा। जहां बहुत कम सामान था, लेकिन कविता, दर्शन, कला और समाजशास्त्र पर पुस्तकों का एक अच्छा खासा संग्रह था।··· यदि किसी समय भी ये दोनों अपने विश्वासों व सिद्धांतों से थोड़ा भी मुंह मोड़ लेते तो ये कभी के मुक्त कर दिए जाते। लेकिन ऐसा वे कभी न करेंगे, क्योंकि दोनों ने ही कहा कि जेल से मुक्ति के अतिरिक्त भी अन्य महत्त्व के मामले हैं और वे दोनों अनिश्चित अवधि के लिए बंदी होकर भी वहां मस्त थे।

उन्होंने प्रसन्नता से हमसे हाथ मिलाए और हमें विदा दी। जैसे हम वहां उनके मेहमान बनकर मनोरंजन के लिए गए थे और अब वे फिर अपने एकांतवास का मजा लेने अपने कक्ष में चले जाएंगे।'

उसके बाद खबर उड़ने लगी कि जयप्रकाश छोड़ दिए जाएंगे। किंतु यह तब तक संभव न हुआ जब तक 'कैबिनेट मिशन' हिंदुस्तान नहीं पहुंचा। कहा जाता है कि गांधी जी ने अंग्रेजों की ईमानदारी के सबूत में यह बात भी रखी थी कि जयप्रकाश को जेल से रिहा किया जाय। रिहाई के पहले भारत सरकार के 'होम मेंबर' जयप्रकाश से मिलने आगरा जेल पहुंचे। अन्य बातों के साथ साथ 'होम मेंबर' ने जयप्रकाश के सामने हिंसा और अहिंसा के प्रश्न को उठाया। जे० पी० ने स्पष्ट कहा : हमारा मकसद आजादी है, अगर अहिंसा से मिली तो क्या कहने। किंतु जरूरत हुई तो हिंसा से भी उसे प्राप्त करने में हम नहीं मुकरेंगे।

ग्यारह अप्रैल सन् छियालीस को यह खबर समूचे देश में बिजली की तरह कौंध गई कि जयप्रकाश अपने साथी डा० लोहिया के साथ आगरा जेल से रिहा कर दिए गए।

जयप्रकाश को देश ने एक स्वर से अगस्त क्रांति का अग्रदूत कहकर जो स्वागत किया, जो अभिनंदन दिया, उसे लोग आज तक याद करते हैं।

नासिक, लाहौर, देवली, हजारीबाग—गुलाम देश के उत्तर, दक्षिण, पूरब, पश्चिम की अपनी लौह श्रृंखला में बांधने वाली काराओं ने जे० पी० की उसकी निर्बंध आत्मा को निगलने की जितनी कोशिशें कीं, जयप्रकाश के व्यक्तित्व की ज्वाला उतनी ही प्रज्वलित होती चली गई।

13

ग्यारह अप्रैल की शाम को आगरा जेल के फाटक से बाहर निकलते ही स्वागतकर्त्ताओं की उस अपार भीड़ में पत्रकारों के सामने, विशेष कर 'असो-

शियेटेड प्रेस आफ इंडिया' के संवाददाता के प्रश्न का उत्तर देते हुए जयप्रकाश ने कहा :

'अगर कैबिनेट मिशन से वर्तमान समझौता वार्ता असफल होती है तो दूसरा संघर्ष अनिवार्य है। इस बार मैं अपनी पूरी तैयारी के साथ कदम उठाऊंगा। कैबिनेट मिशन की यह समझौता वार्ता ब्रिटिश लेबर सरकार की सदाशयता का परिणाम नहीं, बल्कि सन् सत्तावन से लेकर आज तक के हमारे संघर्षों के फलस्वरूप है। साथ ही उस पर बाहरी दबाव और अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियों के कारण से है।'

जे० पी० की रिहाई से देश के नवयुवकों में फिर से उत्साह की लहर फैल गई। आगरा से सीधे दिल्ली आए। दिल्ली में जे० पी० से मिलने के लिए कैबिनेट मिशन के सदस्य इंपीरियल होटल आए और वहां तेरह अप्रैल को मिशन के सदस्यों ने लगभग एक घंटा बातचीत की।

दिल्ली से जे० पी० बनारस होकर सीधे पटना पहुंचने वाले थे। पटना में अगस्त क्रांति के नायक के स्वागत के लिए दिन रात तैयारियां चल रही थीं। पर निश्चित तिथि अनुसार तैयारियां पूरी न हो सकी थीं, इसलिए बिहार के साथियों ने तय किया कि जे० पी० को इस बीच दो तीन दिनों के लिए बनारस में ही रोक लिया जाय। पर यह जोखिम का काम करे कौन? अंत में जे० पी० के बड़े मुंहलगे दुलारे मित्र बसावनसिंह को यह काम सौंपा गया।

जे० पी० फिर गंगा पार से कृष्णाघाट पटना आए थे। जेलों से छूट-छूटकर सारे मित्र कृष्णाघाट पर उनके स्वागत में बाहें फैलाए आंखों में आंसू भरे खड़े थे।

और उसी शाम पटना के बांकीपुर मैदान में (गांधी मैदान) इक्कीस अप्रैल को जयप्रकाश का वह अपूर्व अभिनंदन हुआ। लाखों की भीड़ उनके दर्शन और स्वागत के लिए वहां जमा हुई। लहराते हुए तिरंगे झंडे के नीचे, इन्कलाब जिंदाबाद, जै हिंद, जयप्रकाश जिंदाबाद के नारों के बीच वह अपूर्व स्वागत समारोह शुरू हुआ। अध्यक्षता कर रहे थे बिहार केसरी श्रीकृष्ण सिन्हा। स्वागत करते हुए श्री बाबू ने कहा : जयप्रकाश भारत के हृदय हैं और नौजवानों के बादशाह हैं। यह हमारे स्वप्नों के प्रतीक हैं और जन-शक्ति के अप्रतिम नेता।

छात्र कांग्रेस, मोमिन छात्र कांग्रेस तथा अनेक संस्थाओं की ओर से अभिनंदन दिए गए। साइंस कालेज के छात्रों की ओर से कुमारी प्रमिला श्रीवास्तव, और बिहार महिला परिषद् की ओर से श्रीमती अन्नपूर्णा देवी ने स्वागत किया।

आगे स्वागत का कार्यक्रम शुरू हुआ, रामधारीसिंह दिनकर के काव्य-पाठ से। इस अवसर पर उन्होंने जयप्रकाश पर एक विशेष कविता लिखी थी जो हिंदी काव्य इतिहास में अमर हो गई :

झंझा सोई, तूफान रुका
प्लावन जा रहा कगारों में
जीवित है सब का तेज किंतु
अब भी तेरे हुंकारों में।

दो दिन पर्वत का मूल हिला
फिर उतर सिंधु का ज्वार गया
पर, सौंप देश के हाथों में
वह एक नई तलवार गया।।
सेनानी ! करो प्रयाण अभय
भावी इतिहास तुम्हारा है
ये नखत अमा के बुझते हैं
सारा आकाश तुम्हारा है।
हां, जयप्रकाश है नाम समय की
करवट का अंगड़ाई का
भूचाल बवंडर के ख्वाबों से
भरी हुई तरुणाई का ।।
है जयप्रकाश वह नाम जिसे
इतिहास समादर देता है
बढ़कर जिसके पद चिह्नों को
उर पर अंकित कर लेता है।

इस काव्य-पाठ के बाद जे० पी० जैसे ही बोलने को उठे, बहुत देर तक सारा आकाश असंख्य तालियों की आवाज और 'जयप्रकाश जिंदाबाद', 'इन्कलाब जिंदाबाद', 'महात्मा गांधी जिंदाबाद', 'अगस्त क्रांति जिंदाबाद' के तुमुल नारों से भरा रह गया।

सफेद खादी की धोती, कुर्त्ता पहने, सिर पर सफेद गांधी टोपी लगाए, जे० पी० ने आह्लाद भरे, पर गंभीर और शांत स्वरों में कहना शुरू किया :

'मुझे इतना पता है, यह मेरा निजी सम्मान नहीं, बल्कि अगस्त क्रांति चेतना के प्रति आप सबका यह अभिनंदन है। मैं जब जेल में था, तब अक्सर इस बात की चिंता करता था कि जेल से छूटकर जब मैं स्वतंत्र होऊंगा तो कैसे और किन लोगों के साथ फिर देश का काम करूंगा? पर आप लोगों के इस उल्लास भरे स्वागत ने मुझे यह विश्वास दिया है कि आगे आजादी की लड़ाई के लिए आप सब तैयार हैं। और मेरे साथ हैं।…अगर इस समय कांग्रेस की अंग्रेजों के साथ चल रही समझौतावार्ता असफल होती है तो अंग्रेजी हुकूमत से फिर कांग्रेस को उसी तरह से संघर्ष लेना होगा। जैसे उन्नीस सौ इकतीस में लेना पड़ा था। सरकार उसकी तैयारी में लगी है। नामों की लिस्ट बन रही है। सारे पुलिस थाने अस्त्रों से भरे जा रहे हैं। फिर हम हाथ पर हाथ रखे अब क्यों बैठे रहें? हमें इसके लिए पूरी तरह से तैयार हो जाना है।…अगस्त क्रांति में जमशेदपुर के सिपाहियों ने हमारे समर्थन में हड़ताल की और तब अंग्रेज सिपाही बुलाए गए। कांग्रेस नेता अगस्त क्रांति के दोषों की चर्चा करते हैं। परंतु उन्हें यह नहीं पता कि जैसा सन् बयालीस में हुआ है, ऐसी क्रांति किसी भी देश में बहुत कम होती है। यह अपूर्व स्थिति थी, जिसका पूर्ण सदुपयोग कांग्रेस नहीं कर सकी। करीब चालीस हजार लोगों ने इस क्रांति में अपने जीवन का बलिदान दिया…और हम पर अब अभियोग लगाया जा रहा

है कि हमने अहिंसा का पालन नहीं किया। मैं महात्मा गांधी की अहिंसा को जानता हूं। मैं उसके सामने नतशिर हूं। पर चूंकि मेरे पास उतनी आत्मशक्ति नहीं है। इसलिए मेरे पास केवल यही एक उपाय था कि मैं शस्त्र लेकर दुश्मनों से युद्ध करूं।···मैं एक ऐसी पार्टी का सदस्य हूं जिसे कांग्रेस एकता में तब तक विश्वास है, जब तक देश आजाद न हो जाय, इसके लिए मुझे चाहे जितनी कीमत चुकानी पड़े।···अंग्रेजी झंडा अब तक हमारे देश पर लहरा रहा है। इस झंडे को फाड़कर फेंक देना है और अपने स्वतंत्र देश के झंडे को लगाना है।···हमें फिर से संगठित होना है। मुझे गहरा दुख है, जब से कांग्रेस वैध घोषित हुई है, तब से वह अपने बुनियादी कार्यक्रम छोड़कर केवल चुनाव और समझौता वार्ता में लग गई है। महात्मा गांधी भी जब समझौते की बात करते हैं, तब हम सब को आश्चर्य होता है···।'

कुछ दिन पटना में ही रहकर जे० पी० ने 'समाजवाद-अध्ययन-शिविर' चलाया। नये पुराने लोगों के अलावा पटना के छात्रों ने इस शिविर में बड़े मनोयोग से भाग लिया। जे० पी० प्रतिदिन लगातार तीन घंटे बोलते थे। श्रोताओं में 'आजाद दस्ता' के लोग भी होते थे। फणीश्वरनाथ 'रेणु' से लेकर जयप्रकाश के सगे भांजे भक्तमाल तक।

अध्ययन-शिविर के व्याख्यानों में जे० पी० जहां भारतीय समाजवाद के गहन तत्त्वों और पक्षों के विश्लेषण करते थे, वहां वह भारतीय साम्यवाद और कांग्रेस के चरित्रों की व्याख्याएं करते थे। अगस्त विद्रोह का क्या प्रभाव द्वितीय महायुद्ध पर पड़ा, इसके कितने दूरगामी राजनीतिक परिणाम निकले, ऐसे सारे महत्त्वपूर्ण प्रश्न जे० पी० के व्याख्यानों के मूल विषय बने। जे० पी० लोगों को समझा रहे थे कि जिस समय भारत में 'अगस्त विद्रोह' की ज्वालाएं धधक रही थीं, उस समय भारतीय साम्यवादी दल के लोग क्यों और कैसे समाजवादी लोगों को पकड़वाने में मदद कर रहे थे। अगस्त क्रांति के प्रति क्यों साम्यवादियों ने विश्वासघात किया? क्यों राजगोपालाचारी ने गत्यवरोध हटाने के नाम पर गांधी जी और जिन्ना को मिलाया? कैसे लोगों ने गांधी जी के साथ जिन्ना को एक तरह की बराबरी का दर्जा दिलाने की कोशिश की? कैसे सन् बयालीस से लेकर पैंतालीस तक जो राजनीतिक रिक्तता आई। और उसमें मुस्लिम लीग ने कैसे मुसलमानों की धार्मिक भावनाओं को सफलतापूर्वक उकसाकर एक सामूहिक पार्टी तैयार कर ली?

और उसी समय उधर कैबिनेट मिशन मौलाना आजाद, जिन्ना और गांधी जी जैसे नेताओं से, भारत के राजाओं, विभिन्न प्रतिनिधि जातियों और वर्गों के लोगों से दिल्ली में मिलकर वार्तालाप कर रहा था। और इधर तेज बहादुर सप्रू ने 'अंतरिम सरकार' बनाने के संबंध में सुझाव दे दिया। होने लगे समझौते कांग्रेस और लीग से। विश्वास और अंधविश्वास से। अकाल और सांप्रदायिक दंगों से। राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय तत्त्वों से। फिर क्या था, अविलंब सरकारी मंत्रिमंडल बनने लगे। बंबई में नये मंत्रिमंडल ने शपथ ले ली। मध्य प्रदेश में

रविशंकर शुक्ल ने, बंगाल में सोहरावर्दी ने, उड़ीसा में हरिकृष्ण मेहताब ने, मद्रास में टी० प्रकाशम ने मंत्रिमंडल के गठन कर लिये।

मौलाना आजाद ने कांग्रेस अध्यक्ष पद के लिए जवाहरलाल का नाम प्रस्तावित किया। इतना सब उसी अप्रैल माह में हो गया। जे० पी० लोहिया अच्युत पटवर्धन, अरुणा आसफअली दिल्ली में वह सारा दृश्य देखते रहे। इन सब से ज्यादा सत्ता की उस राजनीति को महात्मा गांधी जी चुपचाप देख रहे थे।

छः जुलाई को अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की बैठक हुई। जवाहरलाल अध्यक्ष चुन लिये गए। कांग्रेस ने राष्ट्रीय मंत्रिमंडल में प्रवेश स्वीकार कर लिया। मंत्रिमंडल में कांग्रेस के नेताओं के साथ ऐसे व्यक्तियों को भी स्थान मिला जिन्होंने कभी स्वतंत्रता-संग्राम में कोई काम नहीं किया। जे० पी० ने इस स्थिति के औचित्य को स्वीकार नहीं किया। दिसंबर उन्नीस सौ छियालीस की अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की बैठक में जयप्रकाश ने विरोध प्रकट किया। उन्होंने इसे कांग्रेस की तुष्टीकरण की नीति माना और भविष्यवाणी की कि कांग्रेस की इस नीति से देश का विभाजन होगा।

उन्हीं दिनों बंबई में जे० पी० ने अपने भाषण में स्पष्ट कहा, 'कांग्रेस अपने तेजस्वी और क्रांतिकारी स्वरूप को छोड़ रही है।'

जहां जिन्ना सांप्रदायिक दंगों से पाकिस्तान भाग रहे थे, वहां जयप्रकाश का लक्ष्य था पूर्ण भारतीय स्वतंत्रता, जो वैज्ञानिक क्रांति के ही माध्यम से प्राप्त की जा सकती थी।

जवाहरलाल नेहरू के आग्रह पर जे० पी० ने कांग्रेस वर्किंग कमेटी की सदस्यता स्वीकार कर ली, पर वह कांग्रेस के बदलते हुए चरित्र के विरोध में बोलते रहे। साथ ही मुस्लिम लीग और विशेषकर जिन्ना को साम्राज्यवादी दलाल तक कहकर लोहा लेते रहे।

दस नवंबर उन्नीस सौ छियालीस को 'असोशियेटेड प्रेस आफ अमेरिका' को अपनी भेंट-वार्ता में जे० पी० ने कहा, 'भारत का हर अंग्रेज मुस्लिम लीगी है। इसलिए नहीं कि उसे इनसे प्यार है, ये उसके हाथ के सहज औजार हैं, इसलिए।'

जे० पी० से दिल्ली के अनेक पत्रकारों द्वारा यह पूछने पर कि आपने बंबई में कांग्रेस वर्किंग कमेटी में सदस्य होने से जब इन्कार कर दिया था तो दिल्ली में क्यों फिर स्वीकार कर लिया? जे० पी० ने इसके उत्तर में कहा : 'बंबई में जब मुझे और डा० लोहिया को अध्यक्ष ने सदस्य होने का निमंत्रण दिया और हमने तब किसी सिद्धांत के कारण नहीं बल्कि किन्हीं विशेष परिस्थितियों के उत्पन्न होने के नाते वैसा किया। कांग्रेस के भीतर सोशलिस्ट पार्टी का काम कांग्रेस संस्था के प्रति विरोध नहीं था। पर आगे कांग्रेस में ऐसी स्थिति उत्पन्न हुई कि आपसी मतभेदों के बावजूद हमें कांग्रेस में एकमत होकर इसके शत्रुओं का सामना करना था। विशेष कर जब कांग्रेस के अनेक नेता राष्ट्रीय सरकार में चले गए, तब हमें गैर सरकारी सदस्य होकर कांग्रेस के क्रांतिकारी

चरित्र को बनाए रखना हमारा कर्तव्य हो गया। पर इसका अर्थ यह नहीं कि हमारी यह सदस्यता आगे हमारी क्रांतिकारी योजनाओं के रास्ते में किसी प्रकार बाधक बनती। इसके लिए, समय आने पर मैं इससे इस्तीफा देने से जरा भी नहीं हिचकूंगा।'

मुस्लिम लीग के सांप्रदायिक दंगों, और उसके समस्त कारनामों के प्रति जे० पी० ने बड़ा सख्त दृष्टिकोण रखा। जिन्ना को चुनौतियां दीं।

फिर उन्होंने कहा कि अब आगे की क्रांति में गवर्नरों द्वारा गिरफ्तार होने के बजाय हमारे नेता स्वयं गवर्नरों को गिरफ्तार करेंगे।

पर आगे सारी राजनीतिक परिस्थितियां बड़ी तेजी से बदलने लगीं। उस समय देश की राजनीति में, विशेषकर कांग्रेस की सत्तावादी राजनीति में प्रतिक्षण नये मोड़ आ रहे थे। अब ऐसा वक्त आ गया था कि कांग्रेस को समाजवादी लोग उतने उपयोगी नहीं लग रहे थे, जितने कि उसे त्रिपुरी कांग्रेस के वक्त लगे थे। अब उन्हें 'भारत छोड़ो' के समय वाले भी समाजवादी नहीं चाहिए थे, क्योंकि अब सारी स्थिति बदल चुकी थी। अब उन्हें वे समाजवादी अरुचिकर लगने लगे थे, जो अब तक अंग्रेजों को अपना शत्रु मानते थे, क्योंकि अब अंग्रेज कांग्रेस को राज्य देकर भारत छोड़ रहे थे। अब कांग्रेस को वे समाजवादी अपेक्षित नहीं लग रहे थे जिन्हें फारवर्ड ब्लाक के विरोध में उन्होंने तब इस्तेमाल किया था। अब ऐसी कोई जरूरत नहीं रह गई थी कांग्रेस के भीतर समाजवादियों की। उनसे अब तक जितना काम लेना था, वह जैसे अब पूरा हो चुका था।

जे० पी० ने इतिहास के इस निर्मम मोड़ पर आकर जैसे पहली बार कांग्रेस की उस सत्तावादी राजनीति की करुणा को बड़ी गहराई से अनुभव किया। उन्होंने कांग्रेस वर्किंग कमेटी से त्याग-पत्र दे दिया।

नई दिल्ली, उनतीस दिसंबर उन्नीस सौ छियालीस को दसवें अखिल भारतीय विद्यार्थी कांग्रेस के चार दिवसीय सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए जे० पी० ने कहा, 'हम सब क्रांति की एक ऐसी दिशा में इतना तेजी से बढ़ रहे हैं, जहां अगस्त बयालीस से भी बढ़कर एक बड़ी क्रांति होने को है।'

इसके लिए जे० पी० ने छात्रों को पूरा कार्यक्रम दिया और नये सिरे से उन्हें क्रांति-नीतियां बताईं।

पर तब ऐसा कुछ भी न हुआ। अगर कुछ हुआ तो भयानक सांप्रदायिक दंगे हुए और बराबर होते रहे। नोआखाली से लेकर बिहार, दिल्ली और पंजाब तक उसकी भयानक रणनीति तैयार होती रही। पर इस बीच अगर कोई क्रांतिकारी घटना घटी तो वह थी गोआ का मुक्ति संग्राम, जिसके नेता थे डाक्टर लोहिया।

जयप्रकाश का कांग्रेस से बिलगाव का प्रारंभ हो चुका था। क्रांतिकारी और राष्ट्रीय मूल्यों से दूर हटती हुई कांग्रेस पूरी तरह से सत्ता लोलुप हो रही थी। देश में पार्थक्य की प्रवृत्ति बलवती थी। ऐसी स्थिति में फिर देश भर के

समाजवादी कानपुर में इकट्ठे हुए। छब्बीस, सत्ताईस और अट्ठाईस फरवरी सन् सैंतालीस को कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी का परम ऐतिहासिक सम्मेलन हुआ। अध्यक्ष थे डा० लोहिया। पूरे वातावरण में कांग्रेस का वह विचार, 'अब कांग्रेस में अन्य दल के लोग (समाजवादी) सदस्य नहीं रह सकते', बिल्कुल गर्म था। इसलिए सम्मेलन में सबसे पहले सिद्धांत 'कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी' के नाम से 'कांग्रेस' शब्द काट दिया गया और तब शुद्ध नाम बचा 'सोशलिस्ट पार्टी'।

इस अवसर पर जयप्रकाश के आग्रह से लोहिया ने अपने अध्यक्षीय भाषण में उस स्थिति की स्पष्ट अभिव्यक्ति दी :

'कांग्रेस शब्द हटाने का अर्थ कांग्रेस से विरोध नहीं। कांग्रेस हमारा राष्ट्रीय संगठन रहा है। अनिवार्य रूप से कांग्रेस का सदस्य बनने वाली शर्त हटाई गई है। इसका यह अर्थ नहीं कि हम कांग्रेस से निकल गए हैं। कांग्रेस शब्द हटाने से दूसरे गिरोह के लोग भी पार्टी में शामिल हो सकेंगे जो हमारे उद्देश्यों से सहमत हों, मगर जो कांग्रेस में शामिल नहीं होना चाहते।··· कांग्रेस का बंधन टूटा नहीं है, सिर्फ ढीला पड़ गया है।

'कांग्रेस हमारा घर है। घर छोड़ना बुरा लगता है। घर छोड़ने पर भी आदमी घर की बुराई नहीं कर सकता। जिस घर में वर्षों से रहा हूं, उसे अपने हाथों गिरा नहीं सकता। कांग्रेस की खूबसूरती हमने बढ़ाई है, अब उसे बदसूरत नहीं बना सकते।···कांग्रेस मंत्रिमंडलों का पुछल्ला बन गई है···। मुझे कांग्रेस छोड़ना मंजूर नहीं। हमारा यकीन है कि जब तक गांधी जी हैं तब तक वे कांग्रेस दल का क्रांतिकारी स्वरूप पूरा खतम नहीं होने देंगे। अब कम से कम सोशलिस्टों को कांग्रेस से लड़ने का मौका रहेगा और कुछ न्याय भी मिलेगा।'

इसीफरवरी माह में ब्रिटिश प्रधानमंत्री एटली ने घोषणा की कि अंग्रेज जून, सन् सैंतालीस में भारत देश छोड़कर चले जाएंगे। इसी के बाद भारत से लार्ड वैवल इंग्लैंड वापस बुला लिये गए और उनकी जगह लार्ड माउंटबेटन वाइसराय बनकर आए। अपने साथ माउंटबेटन एक योजना भी ले आए जिसमें देश-विभाजन के निश्चित तत्त्व मौजूद थे। भारत आते ही माउंटबेटन ने नेहरू से गहरी दोस्ती की। अन्य कांग्रेसी नेता भी इसी दोस्ती के जादू में आ गए, और मन ही मन कांग्रेसी नेताओं ने माउंटबेटन योजना स्वीकार कर ली।

उन्नीस सौ छियालीस के अंत में गांधी जी सांप्रदायिक दंगों से जूझने के लिए नोआखाली में थे। उस समय जब नेहरू गांधी जी से मिलने नोआखाली गए तब गांधी जी ने लोहिया को नेहरू से मिलने भेजा। बातचीत के दौरान नेहरू ने पूर्वी बंगाल में चतुर्दिक् फैले पानी, कीचड़, झाड़ियों व पेड़ों की चर्चा करते हुए कहा था : 'हिंदुस्तान के जिस रूप को मैं जानता हूं, उससे यह बिल्कुल अलग है।' लोहिया तभी नेहरू की नियत ताड़ गए थे। उन्हें स्पष्ट लगा था कि नेहरू ने विभाजन के पक्ष में अपना मन पक्का कर लिया है और अंतरात्मा की बची-खुची आवाज को यह भौगोलिक कारण खोज कर दबाना चाहते थे। यद्यपि नेहरू ने हाल में ही कहा था कि जब अंग्रेजों से समझौते की बात होगी तो हमारे और उनके बीच में भगतसिंह की लाश होगी। पर नेहरू स्वभाव से मन

के अनुसार अपनी जबान बदल लेने में बड़े पटु थे। गांधी भी खुले रूप में विभाजन के विरोधी थे। उन्होंने भी कहा था कि देश के विभाजन होने से पहले उनके शरीर का विभाजन होगा।

जवाहरलाल नेहरू का निमंत्रण पाकर गांधी जी पच्चीस मई को दिल्ली आए। उनकी उपस्थिति में सैंतालीस की चौदह और पन्द्रह जून को कांग्रेस महासमिति की बैठक हुई। गांधी एक-एक की नब्ज टटोल रहे थे। जयप्रकाश और लोहिया से उन्होंने अलग-अलग बातें कीं। बापू अब भी माउंटबेटन योजना और कांग्रेस नेताओं की देश-विभाजन को स्वीकृति के विरुद्ध समाजवादी शक्ति को साथ लेकर एक आखिरी लड़ाई लड़ना चाह रहे थे।

जे० पी० को वह क्षण याद है जब बापू ने कहा : जयप्रकाश, तुम अगस्त क्रांति के वीर सिपाही हो। तुम्हारी वीरता का फायदा कांग्रेस को मिले, यह मैं चाहता हूं।

जे० पी० ने संपूर्ण भक्ति से कहा : बापू, आप आज्ञा दीजिए।

बापू ने कहा : तुम कांग्रेस के अध्यक्ष बनो।

जे० पी० ने संकोचपूर्ण ढंग से उत्तर दिया : मैं तैयार हूं। आप जवाहरलाल और पटेल से पूछिए।

अगले दिन बापू ने अपनी वह इच्छा जवाहरलाल पर व्यक्त की। जवाहरलाल ने कहा : पर अभी जयप्रकाश से सीनियर लोग मौजूद हैं। आचार्य नरेन्द्रदेव···

बापू एकदम चुप हो गए। और आगे समय आने पर कांग्रेस अध्यक्ष बनाए गए राजेन्द्रप्रसाद।

कांग्रेस कार्यसमिति की वह बैठक बड़ी करुण थी। सारा वातावरण बेहद निर्जीव और उदास था। नेहरू और पटेल केवल यही दो लोग बोल रहे थे। शेष सब जैसे शब्दहीन थे। मौलाना आजाद दोनों दिनों की बैठक में एक कोने में चुपचाप बैठे सिगरेट फूंकते रहे। कांग्रेस अध्यक्ष कृपलानी माथा झुकाए बैठे ऊंघ रहे थे। जयप्रकाश और लोहिया बीच-बीच में नेहरू और पटेल से जूझ पड़ते थे। गांधी जी अजब सूनी-सूनी आंखों से बैठक का वह सारा रंग देख रहे थे। वह बार-बार जयप्रकाश, लोहिया और नेहरू की ओर देखते। उनका मन तड़प रहा था कि किसी तरह विभाजन न हो। उनके हृदय में जो गहरा दर्द था उसमें से अचानक शब्द फूटे : आप लोगों ने, आप में और माउंटबेटन के बीच समझौते की जो बातें चलीं, उस संबंध में मुझे कुछ नहीं कहा लेकिन···।'

गांधी जी आगे कुछ नहीं बोले, सिर्फ एक उदास नजर से नेहरू को देखा। नेहरू वह नजर सह नहीं सके। दूसरी ओर मुंह घुमाकर बोले : 'नोआखाली बहुत दूर है। हो सकता है कि योजना की पूरी तफसील न बताई गई हो, लेकिन विभाजन-योजना के बारे में मैंने आपको पत्र तो लिख दिया था।'

तत्काल जे० पी० बोले थे : बापू को पूरी बात नहीं बताई गई और इन्हें जानबूझकर अंधेरे में रखा गया था। लोगों ने यह कोशिश की है कि

जब तक योजना लागू करने का इरादा पक्का न कर लिया जाय तब तक बापू को बातचीत से अलग रखा जाय ।

नेहरू और पटेल दोनों के चेहरे तमतमा आए, तब गांधी जी ने सुझाव देते हुए कहा :

'अब आप लोग योजना स्वीकार कर चुके हैं। आपने विभाजन का तत्त्व भी मंजूर किया है । अब आप लोग अपने कदम से पीछे जाएं, मैं नहीं कहता। लेकिन मेरी एक बात मानेंगे ! ब्रिटिश वाइसराय को लिखो कि कांग्रेस कार्य-समिति ने विभाजन का तत्त्व मंजूर किया है, लेकिन यह तत्त्व निश्चित तफसील से अमल में लाने के लिए यहां कोई ब्रिटिश अधिकारी नहीं रहना चाहिए। यह तत्त्व स्वीकार होते ही तत्काल ब्रिटिश अधिकारी यहां से चले जाने चाहिए। कांग्रेस और मुस्लिमलीग के प्रतिनिधि यह तत्त्व सविस्तार और स्पष्ट रूप से साकार करने के लिए एक साथ बैठकर फैसला करेंगे ।'

गांधी जी का यह प्रस्ताव सुनकर जे० पी० और लोहिया को लगा जैसे बापू के पास अभी भी बिगड़ी बनाने का यह एक रहस्यमय उपाय है ।

पर कांग्रेस कार्यसमिति ने गांधी जी के इस प्रस्ताव की उपेक्षा की। प्रस्ताव बिना बहस के ही गिर गया । जयप्रकाश और लोहिया उत्तेजित थे । गांधी जी ने जे० पी० से कहा : 'अब विरोध मत करो । एकता रखो ।'

गांधी जी के प्रति इसी निष्ठा ने बार-बार इन क्रांतिकारी समाजवादियों को कांग्रेस के सामने शक्तिहीन किया है । निर्णय के प्रति चुप बनाया है। संघर्ष के सामने तटस्थ किया है । इसी का उदाहरण है त्रिपुरी कांग्रेस में जे० पी० का विजयी सुभाषचन्द्र बोस के प्रति तटस्थ हो जाना और सुभाष का इस तरह टूटना कि देश से आत्मनिष्कासित होकर अकेले उस तरह आजादी की लड़ाई लड़ते हुए अदृश्य हो जाना ।

इस बार फिर विभाजन के प्रस्ताव पर समाजवादी पार्टी तटस्थ रही । संघर्ष के आखिरी मोर्चों पर समाजवादियों और विशेष कर जे० पी० का इस तरह खामोश हो जाना, ऐसा संस्कारगत दोष है, जिसका दंड उन्हें आगे भोगना पड़ा है ।

दिल्ली में तब एक राष्ट्रीय सरकार बनी । जवाहरलाल प्रधानमंत्री थे। साथ ही दिल्ली में अंग्रेज वाइसराय लार्ड माउंटबेटन भी थे । और ब्रिटिश सेना के साथ अंग्रेज कमांडर इनचीफ भी मौजूद थी । इस पूरे कारुणिक विरोधाभास पर जे० पी० की चेतना अत्यंत क्षुब्ध थी । इसकी पहचान हमें जे० पी० की उन सारी बातों से मिलती है : छियालीस के बंबई ए० आई० सी० सी० के भाषण से लेकर नौ अगस्त के 'आजादी के सैनिकों' के नाम अपने उस तीसरे खत तक ।

उन्हें जितना असंतोष अंग्रेजों द्वारा निर्मित और प्रदत्त उस समय भारत की संविधान सभा के प्रति था, उससे कहीं ज्यादा दुख उन्हें कांग्रेस संगठन और उसके सत्ता लोलुप नेताओं से था । 'आजादी के सैनिकों के नाम' अपने उस तीसरे और अंतिम पत्र में जे० पी० ने पहले के दोनों पत्रों के ही अनुरूप पर

उनसे कहीं ज्यादा गंभीर शब्दों में अंग्रेजों से उस तरह सत्ता हस्तांतरण वाली आजादी के प्रति चेतावनी दी और शुद्ध सत्तावादी राजनीति की काली छाया के बीच, जे० पी० ने फिर भी न जाने किस विश्वास से वास्तविक आजादी की तस्वीर खींचनी चाही और उसके लिए कार्यक्रम दिए।

पर देश की सच्चाइयां कहीं ज्यादा यथार्थ थीं। बंगाल और बिहार में ''उत्तराधिकार के युद्ध' की लपटें उठ रही थीं और दिल्ली में अंतरिम सरकार किसी तरह अपने अस्तित्व को सिद्ध करने में लगी थी। किसी भी कीमत पर जिन्ना को पाकिस्तान मिल जाय, इसलिए हारकर उन्होंने भी मध्य अक्टबर में लीग के पांच नामजद सदस्यों को उस अंतरिम सरकार में शामिल करा दिया। नेहरू उस मिलीजुली सरकार के खतरे से अनभिज्ञ न थे पर स्थिति को बदलने की शक्ति उनमें नहीं थी। जिन्ना ने इसका फायदा उठाया। और शीघ्र ही समस्त लीगी सदस्यों को केन्द्रीय सभा का बाईकाट करने का आदेश देकर कैबिनेट मिशन योजना को प्राणघाती आघात पहुंचाया।

प्रधानमंत्री एटली ने वाइसराय, कांग्रेस, लीग और सिक्खों को बातचीत के लिए लंदन बुलाया। स्वभावत: वहां भी बात नहीं बनी। तब ब्रिटिश मंत्रिमंडल ने वही संविधान-सभा वाली राजनीति खेली, जिसके प्रति जे० पी० पहले से ही पूरे देश को आगाह कर रहे थे। अंग्रेजों की वह ऐसी भयानक राजनीति थी जिसने जिन्ना को अपनी जिद पर अड़े रहने के लिए आमंत्रित किया और अखंड भारत का स्वप्न टूट गया।

लंदन सम्मेलन के बाद संविधान-सभा आयोजित की गई। लीग अनुपस्थित थी, ऐसी स्थिति में लार्ड माउंटबेटन की राय से कांग्रेस ने देश का बंटवारा मंजूर कर लिया। तीन जून, सन् सैंतालीस को सरकार की ओर से इसकी घोषणा की गई और पंद्रह अगस्त को देश दो हिस्सों में बंट गया।

समाजवादी इस सब के विरुद्ध संघर्ष करके अंत में पूरी स्थिति से तटस्थ रहे। संविधान सभा से लेकर अंतरिम सरकार और देश के बंटवारे तक। समाजवादियों का कहना था कि चूंकि सोशलिस्टों के लिए बंटवारे के आत्मघातक सिद्धांत को स्वीकार करना, या भयंकर गृहयुद्ध की जिम्मेदारी लेना दोनों ही गलत होता, अतः 'तटस्थ' रहना ही उन्होंने ठीक समझा।

जयप्रकाश जी सुनाते हैं : 'आजादी के आने के समय हम (समाजवादी) लोग बापू के बहुत करीब आ गए थे। पाकिस्तान के मामले पर भी हमारा विचार बापू के जैसा था। आगरा जेल से छूटने पर हमने बापू से कहा था कि जब तक स्वराज्य नहीं हुआ था, तब तक हिंसक क्रांति की आवश्यकता मैं मानता था, क्योंकि शासन को बदलने का हिंसा के अलावा कोई दूसरा रास्ता नहीं दीख रहा था। लेकिन स्वराज्य आया, डेमोक्रेसी आई तो अब शासन के बदलने का डेमोक्रेटिक तरीका हाथ में आया है। इसलिए अब समाजवाद लाने के लिए हिंसा की जरूरत नहीं है।'

देश में द्वेष और हिंसा की आग भड़क रही थी। पूर्व बंगाल में, नोआखाली में हत्याकांड चल रहा था। गांधी वहां पहुंचे और एकाकी चलकर उन्होंने

उस आग को कुछ बुझाया, तो
के साथ बिहार का दौरा कर
सारा भारत ही जल रहा है,
हल निकल रहा है इस समय
शक्ति की। राजधानी में भी
वे दिल्ली पहुंचे, जहां से बहु
वे दिलों को जोड़ने का काम
कभी दोनों देश भी जुड़ जा
बापू दिल्ली पहुंचे तब प्रभा
दिल्ली के उन्हीं दिनों
बारे में बापू से मार्ग-दर्शन
'मुझे लगता है कि
उन्हें समझा सकूंगी।
बापू हंसते हुए बोले
साथ रहो। उसे सेवा की
जयप्रकाश जी के
उन्होंने पूछा तो बापू बो
निर्णय खुद करो।'
प्रभावती ने कहा
करूंगी।'
और बापू ने अपना
रहना है, उसकी सेवा
उनतीस जनवरी
चरणों को प्रणाम कर
'...एक दिन के
प्रभावती के अवरुद्ध
ने सुने हैं।
अपने प्राणों का
के अंतिम प्रयास में
पर उनका उपवास
में बम विस्फोट हुआ
तीस जनवरी
वाले सूर्य नाराय
समझकर प्रणाम
करते थे : 'मुझे
में। उस समय
हुए वे एक बार
है। जिस क्षण
जैसे मिट्टी का

उस आग को कुछ बुझाया, तो इधर बिहार में आग लग गई। बादशाह खान के साथ बिहार का दौरा कर शांति का संदेश देनेवाला फकीर जानता था कि सारा भारत ही जल रहा है, काल का समुद्र मथन चल रहा है, जिसमें से हलाहल निकल रहा है इस समय आवश्यकता है हलाहल का पान करनेवाली शिवशक्ति की। राजधानी में भी हिंसा का तांडव चल रहा था, उसको शांत करने वे दिल्ली पहुंचे, जहां से वह लाहौर जानेवाले थे। देश के टुकड़े होने पर भी वे दिलों को जोड़ने का काम कर रहे थे। वे जानते थे कि दिल जुड़ जायें तो कभी दोनों देश भी जुड़ जाएंगे। सन् उन्नीस सौ अड़तालीस की जनवरी में बापू दिल्ली पहुंचे तब प्रभावती और जयप्रकाश उनके साथ थे।

दिल्ली के उन्हीं दिनों की बात है। प्रभावती अपने भविष्य के कार्यक्रम के बारे में बापू से मार्ग-दर्शन चाह रही थीं :

'मुझे लगता है कि जयप्रकाश के साथ कुछ दिन रहूंगी तो आपके विचार उन्हें समझा सकूंगी।

बापू हंसते हुए बोले : 'विचार समझाने के लिए नहीं, सेवा के लिए उसके साथ रहो। उसे सेवा की जरूरत है। उसके स्वास्थ्य को संभालना।'

जयप्रकाश जी के साथ कब और कितने दिनों के लिए जाना है, इस पर उन्होंने पूछा तो बापू बोले : 'जयप्रकाश जैसा चाहे, वैसा करो। तुम अपना निर्णय खुद करो।'

प्रभावती ने कहा : 'मैं निर्णय नहीं कर सकती, आप जो कहेंगे, वही करूंगी।'

और बापू ने अपना निर्णय सुना दिया : 'तुम्हें अब जयप्रकाश के साथ रहना है, उसकी सेवा करनी है।'

उनतीस जनवरी की रात को बापू से यह अंतिम आदेश लेकर बापू के चरणों को प्रणाम कर प्रभावती पटना के लिए रवाना हुई थीं।

'...एक दिन के लिए, सिर्फ एक दिन के लिए मैं बापू से अलग हुई थी।' प्रभावती के अवरुद्ध कंठ से निकले उनके ये अश्रुरत शब्द बाद में कइयों ने सुने हैं।

अपने प्राणों का बलिदान चढ़ाकर मानवता और भारतीयता की रक्षा करने के अंतिम प्रयास में उनका अंतिम उपवास हुआ। शांति-स्थापना के आश्वासनों पर उनका उपवास छूटा। दूसरे ही दिन बीस जनवरी को उनकी प्रार्थना-सभा में बम विस्फोट हुआ। कालात्मा मानो महात्मा का बलिदान मांग रहा था।

तीस जनवरी, महात्मा के महानिर्वाण का दिन। अस्ताचल की ओर जाने वाले सूर्य नारायण की साक्षी में, जैसे सामने खड़े हुए हत्यारे को नारायण समझकर प्रणाम के लिए बापू के दो हाथ जुड़ गए। बापू कई वर्षों से कहा करते थे : 'मुझे अभी महात्मा मत कहो, मेरी असली परीक्षा होगी अंतिम घड़ी में। उस समय राम का नाम मुंह से निकले—'विनोबा जी के साथ चर्चा करते हुए वे एक बार बोले थे : 'इस देह में रहते हुए पूर्ण आत्मज्ञान नहीं हो सकता है। जिस क्षण पूर्ण आत्मज्ञान हो जाएगा उसी क्षण देह खड़े-खड़े ही ढह जाएगी, जैसे मिट्टी का ढेर ढह जाता है।'

तीन गोलियां चलीं और उनकी देह ठीक उसी तरह ढह गई।

मुख से निकला : 'हे राम' !

उस दिन पृथ्वी पर बसनेवाला हर मानव रोया था। हर आँख गीली हुई थी। हर दिल टूट गया था। पटना के हवाई अड्डे पर बापू के अंतिम दर्शन के लिए दिल्ली ले जानेवाले हवाई जहाज की प्रतीक्षा करती हुई प्रभावती दिन-भर रो रहीं। किसी भी हवाई जहाज में जगह नहीं मिली। पटना से एक विशेष हवाई जहाज दिल्ली के लिए निकला। उसमें एक बुजुर्ग मंत्री थे जो जानते थे कि बापू की बेटी यहां प्रतीक्षा में बैठी है, लेकिन वे भी उन्हें साथ नहीं ले गए। आखिर ट्रेन से चलकर जब वे तीसरे दिन दिल्ली पहुंचीं तो केवल भस्म ही शेष थी। उन्हें बापू के अंतिम दर्शन न हो सके।

बंबई से विशेष हवाई जहाज से ठीक समय पर दिल्ली पहुंचे हुए जयप्रकाश जब उन्हें दिल्ली स्टेशन पर मिले तब वे पूरी तरह टूट चुकी थीं, फूट-फूटकर रो रही थीं। जयप्रकाश चुप थे उनकी आंखों में जैसे बापू की चिता अब भी दहक रही थी। और उस चिता की आग से जो ज्वाला फूट रही थी उस पर न जाने कैसा अंधकार घिर रहा था ....।

अंधकार

और आह ! सब गुलाम हो जाओगे
आह ! सब कब्र में दफना दिए जाओगे
आह मेरे प्रभु के घर जाओ और मुक्त हो

—'लाहौर के किले' से

कहीं एकांत, सांझ के झुटपुटे अंधेरे में, जिसे शामेगम कहते हैं, अक्सर यही वक्त होता है जयप्रकाश जब थोड़ा अकेले टहलना चाहते हैं। पर केवल टहलने के लिए नहीं टहलते, कुछ सोचने और भुलाने के लिए टहलते हैं। घास पर, पार्क या किसी मैदान में। पर यह काम कभी अकेले नहीं हो सकता। साथ में दो-तीन लोग जरूर होने चाहिए। पता नहीं क्यों तब जे० पी० के साथ वह टहलना और उदास बना देता है। पर वह उदासी माथे पर भार नहीं बनती।

सब कुछ उदास, पर सब कुछ हल्का-हल्का लगने लगता है।

तब उस उदास खामोशी की अपनी एक भाषा होती है।

बिना कहे हुए बहुत सी बातें याद आने लगती हैं।

गांधी के लिए चर्खा स्वराज्य का प्रतीक था। इसी में उन्होंने भारत का मनुष्य देखा, उसका संगीत सुना, उसके धर्म और दर्शन को पाया। नई दिल्ली भंगी कालोनी में कनू गांधी ने चर्खा चलाने की ग्यारह दिनों की एक कक्षा शुरू की थी। अंतिम दिन कुल एक सौ दस लोग चर्खा-चालन परीक्षा में बैठे। गांधी उस दिन इतने खुश थे, इतने खुश कि जैसे उन्हें न जाने क्या मिल गया। जितना सूत काता गया उसकी एक प्रदर्शनी की गई। और उसका उद्घाटन किया जयप्रकाश ने। गांधी के सतहत्तरवें जन्म दिन पर वही उन्हें भेंट किया गया।

अंतरिम सरकार बन चुकी थी। गांधी बिहार से दिल्ली आए थे। दिल्ली स्टेशन पर तब उनके स्वागत में कोई कांग्रेसी नेता नहीं आया था।

दिल्ली में तब पटेल ने गांधी को देखकर कहा था : यह बुड्ढा फिर कहां से आ गया।

उस वक्त अंधेरा घिरने लगा था।

गांधी जिस दिन भारतीय राजनीति से चले गए, उसी दिन कांग्रेस और समाजवाद का सेतु ढह गया। वह कड़ी टूट गई, जहां नैतिकता और राजनीति का योग होता था।

गांधी का रामराज्य और जयप्रकाश का समाजवादी राज्य, दोनों में सामंजस्य स्थापित हो जाता अगर थोड़े दिन गांधी और जीवित रहते।

पर ज्वाला अचानक बुझ गई।

बापू अक्सर मजाक में कहा करते थे : मैं एक सौ पच्चीस वर्ष जीऊंगा। जे० पी० हिसाब लगाते हैं। उन्नीस सौ बीस से बाईस का असहयोग आंदोलन, तीस से बत्तीस का सविनय अवज्ञा आंदोलन और चालीस-बयालीस की अगस्त क्रांति, दस दस वर्ष का अंतर रखकर भारतीयों और अंग्रेजों को सोचने और हृदय-परिवर्तन का अवसर देते थे। इन वर्षों में तब गांधी क्या देखने के लिए जीवित रहते? स्वराज्य में वही सत्य देखने के लिए जिंदा रहते। राजनीति और धर्म सदाचार और नीति का जिस तरह अलगाव हो गया था और जिनका मिलाना अधिकांश कांग्रेसी नेताओं को सह्य नहीं था, उसे गांधी मिलाकर एक कर देते। सत्य, दया, प्रेम आदि सद्‌गुण केवल व्यक्तिगत या ज्यादा से ज्यादा पारिवारिक क्षेत्र में आचरण के उपयुक्त समझे जाते थे, गांधी संपूर्ण राष्ट्रीय जीवन और उनकी पूरी सामाजिकता में उन मूल्यों का आचरण होते देखना चाहते थे।

जे० पी० उस अंधेरे में उदास चुपचाप उसी आचरण के मर्म को अकेले ढूंढ़ने लगे थे।

जे० पी० ने जब बापू से पाकिस्तान बनने के विरोध में सत्याग्रह की बात की। तब बापू ने कहा : जयप्रकाश! मेरे पास दो मोहरे थे, नेहरू और पटेल, दोनों हाथ से चले गए। अब विरोध मत करो। जो हो गया, हो गया। दोनों को मिलाएंगे।

जे० पी० ने बाद में कहा है : एक गलती गांधी ने की पाकिस्तान के निर्माण का विरोध न करके, दूसरी गलती मैंने की गांधी की बात मानकर।

नोआखाली की प्रतिक्रिया से बिहार में सांप्रदायिक दंगे हुए थे। जे० पी० मुंगेर के तारापुर क्षेत्र में कार्य कर रहे थे। नेहरू ने तब बिहार का हवाई जहाज से दौरा किया था और बिहारियों पर नाराज होकर कहा था : बम गिराऊंगा इन्हें शांत करूंगा, पटना की सभा में छात्रों ने नेहरू को पकड़ लिया था। उनके कपड़े फाड़ डाले थे। तब जे० पी० ने बचाया नेहरू को। छात्रों से कहा : 'माफी मांगो।'

छात्रों ने माफी मांगी। इतना प्रभाव था जे० पी० का। पर अंधेरा गहरा होता जा रहा था।

राजनीति में एक सिद्धांत होता है। एक उद्देश्य होता है। पार्टी का लक्ष्य उसके सिद्धांतों से ही निकलता है। जे० पी० उसी अंधेरे में चलते-चलते सोचने लगे गोडसे ने बापू को किसी सिद्धांत के ही कारण मारा। उसका कोई निजी वैर तो गांधी से था नहीं। उसके सिद्धांत के अनुसार गांधी की हत्या करना गोडसे का परम लक्ष्य था। पर यह कैसा भयानक अंधकार है।

जे० पी० मार्क्सवादी समाजवाद के मानसपुत्र थे। इसी बिंदु से उनमें सैद्धांतिक वैचारिक मंथन शुरू हुआ। साधन-शुद्धि की बात यहीं आमने सामने खड़ी हो गई।

गांधी त्रिमूर्ति थे—महात्मा, राजनेता और क्रांतिकारी। और इन तीनों को आध्यात्मिक गांधी एकाकार करता था, महात्मा का कोई उत्तराधिकारी संभव नहीं था। राजनीतिक उत्तराधिकारी जवाहरलाल नेहरू हुए। आध्यात्मिक उत्तराधिकारी विनोबा भावे हुए। क्रांतिकारी उत्तराधिकार उस अंधेरे में जे० पी० के सामने था। यहीं से आस्था यात्रा शुरू हुई जयप्रकाश की।

विद्रोह और क्रांति में अंतर क्या है? अगस्त-आंदोलन विद्रोह था। विद्रोह का काम है—जो असत्य है, शोषक है, अर्थहीन है उसे नष्ट कर डालना, तोड़ फेंकना। पर क्रांति वह है जो आमूल, संपूर्ण परिवर्तन ला देती है। जो एक नई सृष्टि करती है मानवता की, उसके मूल्यों की।

तब जे० पी० को गांधी का आखिरी वसीयतनामा याद आने लगा।

'देश का बंटवारा होते हुए भी, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा मुहैया किए गए साधनों के जरिए हिंदुस्तान को आजादी मिल जाने के कारण मौजूदा स्वरूप वाली कांग्रेस का काम अब खतम हुआ, यानी प्रचार के वाहन और धारासभा की प्रवृत्ति चलाने वाले तंत्र के नाते उसकी उपयोगिता अब समाप्त हो गई है। शहरों और कस्बों से भिन्न उसके सात लाख गांवों की दृष्टि से हिंदुस्तान की सामाजिक, नैतिक और आर्थिक आजादी हासिल करना अभी बाकी है। लोकशाही के मकसद की तरफ हिंदुस्तान की प्रगति के दरमियान फौजी सत्ता पर मुल्की सत्ता को प्रधानता देने की लड़ाई अनिवार्य है। कांग्रेस को हमें राजनीतिक पार्टियों और सांप्रदायिक संस्थाओं के साथ की गंदी होड़ से बचाना चाहिए। इन और ऐसे ही दूसरे कारणों से अखिल भारत कांग्रेस कमेटी नीचे दिए हुए नियमों के मुताबिक अपनी मौजूदा संस्था को तोड़ने और लोकसेवक संघ के रूप में प्रकट होने का निश्चय करे। जरूरत के मुताबिक इन नियमों में फेरफार करने का इस संघ को अधिकार रहेगा।

गांव वाले या गांव वालों के जैसी मनोवृत्तिवाले पांच वयस्क पुरुषों या स्त्रियों की बनी हुई हरएक पंचायत एक इकाई बनेगी।

पास-पास की ऐसी हर दो पंचायतों की, उन्हीं में से चुने हुए एक नेता की रहनुमाई में, एक काम करने वाली पार्टी बनेगी।

जब ऐसी सौ पंचायतें बन जायं, तब पहले दर्जे के पचास नेता अपने में से दूसरे दर्जे का एक नेता चुनें और इस तरह पहले दर्जे का नेता दूसरे दर्जे के नेता के मातहत काम करे। दो सौ पंचायतों के ऐसे जोड़ कायम करना तब तक जारी रखा जाय, जब तक कि वे पूरे हिंदुस्तान को न ढक लें। और बाद में कायम की गई पंचायतों का हरएक समूह पहले की तरह दूसरे दर्जे का नेता चुनता जाय। दूसरे दर्जे के नेता सारे हिंदुस्तान के लिए सम्मिलित रीति से काम करें और अपने-अपने प्रदेशों में अलग-अलग काम करें। जब जरूरत महसूस हो, तब दूसरे दर्जे के नेता अपने में से एक मुखिया चुनें, और वह मुखिया चुनने वाले चाहें तब तक सब समूहों को व्यवस्थित करके उनकी रहनुमाई करें।'

समाजवादियों में आचार्य नरेन्द्रदेव अहिंसक वर्गसंघर्षवादी थे। डा० लोहिया गांधीवादी थे। जे० पी० मार्क्सवादी थे। और जैसे ही जे० पी० में वैचारिक

मंथन, विशेष कर साधन और साध्य के बुनियादी सवाल पर शुरू हुआ, समाजवादी दल में जितने मार्क्सवादी थे सब नाराज हुए जे० पी० से। कारण बहुत स्पष्ट था। जे० पी० के बहाने लोग आग उगलते थे, अब कहां उगलेंगे ?

कांग्रेस से अलग होने के पहले जयप्रकाश ने गांधी से पूछा था : बापू, मैं कांग्रेस से अलग होना चाहता हूं।

बापू चुप रह गए। पहले विरोध करते थे। उस क्षण विरोध नहीं किया। सिर्फ इतना कहा : बहुत कष्ट उठाना पड़ेगा।

जयप्रकाश ने उसे स्वीकार कर लिया, और चल पड़े उसी अंधेरे में।

स्वतंत्र भारत अपनी नई यात्रा की तैयारी कर रहा था। जयप्रकाश इस स्वतंत्र राष्ट्र की रूप-रचना पूर्ण जनाधिकार और जनतांत्रिक आधार पर करना चाहते थे। देश में संविधान सभा स्वतंत्र भारत का संविधान निर्मित करने की दिशा में लगी थी। जयप्रकाश ने संविधान सभा को वयस्क मताधिकार द्वारा निर्वाचित करने का बुनियादी प्रश्न उठाया। और विरोध में संविधान सभा की सदस्यता अस्वीकार कर दी और आजादी को अपूर्ण घोषित किया।

गांधी के निधन के बाद मार्च उन्नीस सौ अड़तालीस के शुरू में ही कांग्रेस ने बाकायदा निश्चय किया कि किसी दूसरी पार्टी का सदस्य कांग्रेस का सदस्य नहीं हो सकता। मूल उद्देश्य कांग्रेस के भीतर से समाजवादियों को बाहर निकालना था। राजेन्द्रप्रसाद के अलावा सब इस निर्णय के पक्ष में थे। उनका विचार था कि गांधी की निर्मम हत्या के बाद, देश की अनेक विकट परिस्थितियों को संभालने के लिए कोई ऐसा निर्णय न लिया जाय जिसके कारण उन लोगों को, जिन्होंने देश की स्वतंत्रता के लिए इतनी कुर्बानियां की हैं, कांग्रेस छोड़ देनी पड़े। उन्हें याद था, गांधी जी हमेशा चाहते थे कि समाजवादी कांग्रेस में बने रहें। पर वल्लभ भाई पटेल समाजवादियों को कांग्रेस से निकालने पर तुल गए थे। कारण इसके अनेक थे।

कांग्रेस के इस नये नियम बनने के बाद उसी मार्च महीने में पुरुषोत्तमदास त्रिकमदास की अध्यक्षता में नासिक में समाजवादी पार्टी का अधिवेशन हुआ। इसी में निश्चय हुआ कि सोशलिस्ट पार्टी के सब सदस्य कांग्रेस से अपना संबंध-विच्छेद कर लें। पार्टी के प्रस्ताव में कहा गया :

'कांग्रेस एक राष्ट्रीय मोर्चा थी, गांधी जी उसे 'जनसेवक का छत्ता' बनाना चाहते थे। उसे 'लोकसेवक' संघ का रूप देना चाहते थे, पर उसने अपने को एक राजनीतिक दल में बदल डाला है। 'शक्ति का फल चखना' ही उसका काम हो गया है। एक तरफ सोशलिस्टों को कांग्रेस से बाहर निकाला जाता है और दूसरी तरफ उसमें पूंजीपतियों और सम्प्रदायवादियों को शामिल किया जाता है। कांग्रेस के लक्ष्य और कांग्रेस सरकारों के व्यवहार में भारी अंतर पैदा हो गया है। अब कांग्रेस के अंदर जनतांत्रिक प्रक्रियाएं असंभव हो गई हैं। उसमें बने रहना असंभव है। कांग्रेस में सत्तावाद बढ़ रहा है। कांग्रेस सरकारें सर्वाधिकारी हो गई हैं। सत्ताधारी दल के विरुद्ध एक जनतांत्रिक, स्वतंत्र, निर्भीक और स्वस्थ विरोध की मांग है। सोशलिस्ट पार्टी ही इस मांग को

पूरा कर सकती है। इतिहास की इस चुनौती को हमें स्वीकार करना चाहिए। कांग्रेस 'निर्जीव' होती जा रही है, राष्ट्र आशा की एक नई किरण की खोज में है, उसे एक ऐसे स्रोत की खोज है जिससे नई आशा उत्पन्न हो। इस स्रोत का उद्गम किसानों और मजदूरों में है। इस नई आशा की किरण की खोज सोशलिस्ट पार्टी का उत्तरदायित्व है। हमें कांग्रेस से अलग होकर कुछ समय बियाबान में रहना होगा, पर मुझे विश्वास है कि हम समाजवादी समाज का विकास करने में, जनतांत्रिक समाजवाद को प्रतिष्ठित करने में सफल होंगे। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि जनतंत्र की जड़ें जनता में हैं, अगर जनता सबल है तो राज्य भी सबल होगा।'

जयप्रकाश ने इसी अधिवेशन में अपने प्रतिवेदन में 'साध्य और साधन' का महत्त्वपूर्ण प्रश्न उठाया :

'पश्चिम में प्रतिपक्षी दल अपने प्रतियोगी दल को कलंकित करने के लिए असत्य एवं मिथ्यात्व का सहारा लेना गलत नहीं समझते, वे यह नहीं मानते कि चुनाव में अनुकूल परिणाम प्राप्त करने के लिए रिश्वत और भ्रष्टाचार से भी सहारा लेना गलत है। कुछ ऐसे दल हैं जो असत्य एवं भ्रष्टाचार से भी बहुत आगे चले जाते हैं। उनके लिए हत्या, लूट और आगजनी भी राजनीतिक व्यूह रचना के अंग हैं। पिछले महीनों में हमने देखा है कि किस प्रकार इस व्यूह रचना के फलस्वरूप अत्यन्त वेदनापूर्ण घटनाएं हुई हैं।'

अपने इस विचार के संदर्भ में जे०पी० ने गांधी के साधन और साध्य दृष्टि से अपनी पूर्ण सहमति प्रकट की। साथ ही अपने एक अन्य वक्तव्य में उन्होंने जब आध्यात्मिक पुनर्जीवन की बात कही तो पार्टी के तमाम दोस्तों ने सोचा कि हाल की घटनाओं से विचलित होकर जे० पी० जीवन की कठोर वास्तविकताओं से भागने की कोशिश कर रहे हैं। इस पर जे० पी० ने जवाब दिया :

'आप में से जिन लोगों ने यह सोचा होगा, वे पूरे भ्रम में हैं। अगर आध्यात्मिक शब्द का कोई धार्मिक या तात्त्विक अर्थ लिया जाय तो मुझे ऐसी बातों का कोई ज्ञान नहीं है। मैं अचानक आत्मा या ब्रह्म जैसी किसी वस्तु में विश्वास नहीं करने लगा हूं। मेरा जो दर्शन है वह पार्थिव है, मानवीय है। समाज में जैसे लोगों के साथ मैं जीना चाहता हूं उनका रूप क्या हो, यह समस्या मेरी चिंता का विषय है। स्पष्टतः मैं ऐसे समाज में जीना नहीं चाहता जो मिथ्याभाषियों और हत्यारों का समाज है, ऐसे लोगों का समाज है जिनमें सज्जनता, सहिष्णुता और बंधुत्व की भावना न हो।'

अपने इसी प्रतिवेदन में जयप्रकाश राजनीति में सदाचार नीति का प्रश्न उठाते हैं। आगे वह दृढ़तापूर्वक इस धारणा को अस्वीकार करते हैं कि सारी राजनीति सत्ता की राजनीति है और उसमें निहित इस मान्यता का भी खंडन करते हैं कि राज्य ही सामाजिक कल्याण का एकमात्र साधन है। उन्होंने कहा :

'लोकतंत्र के लिए आवश्यक है कि राज्य पर जनता की निर्भरता यथासंभव कम से कम हो। और, महात्मा गांधी तथा कार्ल मार्क्स दोनों के अनुसार लोकतंत्र की सर्वोच्च स्थिति वह होगी जिसमें राज्य का लोप हो जाएगा। अधिनायकतंत्र, जो निहित स्वार्थों के छोटे से पराजित वर्ग पर लाखों-करोड़ों-

मेहनतकशों की संक्रमणकालीन 'तानाशाही' से भिन्न वस्तु है, पूर्ण लोकतंत्र तक पहुंचने के रास्ते में शायद ही कोई बीच की मंजिल हो सकती है। पूर्ण लोकतंत्र के विकास के लिए यह आवश्यक है कि लोकाभिक्रम को काम करने का यथासंभव अधिक से अधिक मुक्त अवसर प्राप्त हो, और जनता अपने विभिन्न प्रकार के आर्थिक एवं सांस्कृतिक संगठनों एवं संस्थाओं के माध्यम से अपनी स्थिति को सुधारने तथा अपने काम-काज की व्यवस्था करने में समर्थ और समुत्साहित हो।'

सन् छियालीस में, चूंकि कांग्रेस के सदस्य की हैसियत से ही समाजवादियों ने विधानसभाओं के चुनाव में हिस्सा लिया था, इसलिए अब अड़तालीस में समाजवादी विधायकों ने कांग्रेस छोड़ने के साथ विधानसभा से भी इस्तीफा देना उचित समझा।

समाजवादियों द्वारा विधानसभा की सदस्यता छोड़ने के बाद दो-तीन महीनों के अंदर ही उपचुनाव कराए गए और इन सब में कांग्रेस ने समाजवादियों के विरुद्ध उम्मीदवार खड़े किए। इन उपचुनावों में कांग्रेस ने राजनीतिक प्रश्नों पर पर्दा डालकर अप्रासंगिक प्रश्नों को उपस्थित कर जनता को भ्रम में डालने की पूरी कोशिश की। गलत प्रचारों; जाति, धर्म, विश्वास, अंध-विश्वास के तत्त्वों को चुनाव कार्य में इस्तेमाल किया गया। उदाहरण के लिए आचार्य नरेन्द्रदेव के खिलाफ कांग्रेस की ओर से राघवदास खड़े किए गए थे और जनता में यह प्रचार किया जा रहा था, 'आचार्य जी नास्तिक हैं। धर्म और संस्कृति को भ्रष्ट करना चाहते हैं, जब कि बाबा राघवदास संस्कृति के ज्ञाता और पोषक हैं तथा धर्म और संस्कृति की रक्षा के लिए ही महात्मा गांधी की दैवी प्रेरणा से आचार्य जी के विरुद्ध चुनाव लड़ रहे हैं।'

जे० पी० उन दिनों दिन-रात दौरा कर रहे थे। चुनाव के कार्य के साथ ही साथ जिला स्तर से लेकर राष्ट्रीय स्तर तक नई समाजवादी पार्टी का संगठन कर रहे थे। सब कुछ नये सिरे से, कार्यालय-व्यवस्था से लेकर उसके कार्यकर्त्ताओं तक। जे० पी० चुनाव की भ्रष्ट प्रकृति से सीधे अनुभव बटोर रहे थे। और जब चुनाव में, चालीस-बयालीस प्रतिशत तक वोट प्राप्त करने पर भी सारे क्षेत्रों में समाजवादी पराजित हुए तब जे० पी० ने कहा: 'हमें इस पराजय को अपनी पार्टी की नई चेतना-सृष्टि के लिए इस्तेमाल करना चाहिए। पंद्रह अगस्त सन् सैंतालीस के बाद हमारे दल के कर्त्तव्य रचनात्मक हो गए हैं। हमें एक नये भारत का निर्माण करना है···।'

उपचुनाव में समाजवादी पार्टी की हार पर जयप्रकाश नारायण ने कहा था, 'युक्त प्रांत के चुनाव के दौरे के सिलसिले में मैं अक्सर सोचता था कि अगर मैं इस प्रांत का एक ग्रामीण होता तो क्या सोशलिस्ट पार्टी को वोट देता। स्पष्ट है कि मैं नहीं देता। क्यों? चूंकि मैं सोचता कि इस पार्टी के बारे में कुछ नहीं जानता। चुनाव प्रचार के पहले इस पार्टी के लोग न तो कभी मेरे गांव आए और न कभी हम लोगों के लिए कुछ किया ही।'

तब सोशलिस्ट उम्मीदवार को लोगों ने क्यों इतने वोट दिए? इसका

प्रधान कारण तो था उम्मीदवार का व्यक्तिगत प्रभाव और ख्याति, दूसरा कारण था कांग्रेस से प्रचलित असंतोष। कम से कम देहात के इलाकों में सोशलिस्ट पार्टी के बारे में लोगों की बहुत थोड़ी जानकारी थी। शहरों में भी चुनाव संघर्ष तो अच्छा था पर पार्टी का कोई खास संगठन नहीं था।

इन सारी बातों और विश्वासों के बाद सच्चाई यह थी कि अब तक समाजवादियों को जो राष्ट्रीय सम्मान और स्थान प्राप्त था उसका एक बड़ा कारण यह था कि ये कांग्रेस के अभिन्न अंग थे। कांग्रेस से अलग होकर अपनी स्वतंत्र सत्ता इन्हें अर्जित करनी थी। कांग्रेस से अलग इनके प्रभाव के प्रमुख क्षेत्र थे—बिहार, उत्तर प्रदेश की कुल किसान-सभाएं, बंबई और उत्तर भारत के कुछ विश्वविद्यालय और कुछ औद्योगिक केंद्र। पर कांग्रेस के राष्ट्रीय प्रभाव की तुलना में इतना सब कुछ भी नहीं था। भारतीय समाजवादियों के जीवन की यह कैसी अजीब घटना थी कि अपने जीवन से लेकर इतने वर्षों तक इन्होंने स्वतंत्रता-संग्राम की लड़ाई में अपने पूरे त्याग और बलिदान से जिस कांग्रेस को महिमामंडित किया, जिसे राष्ट्रीय चेतना का अप्रतिम संस्थान बनाया, आजादी के बाद उसी से अलग होकर उसी के विरोध में खड़ा होना पड़ा। भारतीय मनुष्य बहुत देर में किसी चीज पर पूर्ण विश्वास कर पाता है और फिर दूना समय लेता है, उससे अपना विश्वास तोड़ने के लिए। इस बीच उसे अपने विश्वासों के लिए चाहे जितनी कीमत क्यों न अदा करनी पड़े। तब से यही संक्षिप्त इतिहास रहा है कांग्रेस और समाजवाद के सीधे संघर्षों का, प्रत्यक्ष विरोधों का।

जो श्रेष्ठ था, वह सब तो कांग्रेस को, गांधी को दे दिया गया, पर आजादी के बाद जब कांग्रेस सरकार बन गई, गांधी की हत्या हो गई तो सारे समाजवादी, विशेष कर जयप्रकाश और लोहिया दोनों, जैसे नितांत अकेले हो गए। इतनी बड़ी पार्टी के बावजूद एकाकी। तब से ऐसा अनेक अवसरों पर लगता कि जयप्रकाश और लोहिया भी एक-दूसरे के परम विरोधी हैं। अक्सर लगता कि जयप्रकाश और लोहिया एक-दूसरे के पूरक हैं और कभी-कभी अचानक ऐसा भी लगता कि जयप्रकाश लोहिया की ही भाषा में बोल रहे हैं, लोहिया के ही काम कर रहे हैं और लोहिया जयप्रकाश की भाषा में बोल रहे हैं, जे० पी० के ही काम कर रहे हैं।

अद्भुत जोड़ी थी वह। कृष्ण-बलराम और राम-लखन वाली जोड़ी की याद दिलाने वाली। वे दिन थे, जब फिर से इन्हें साधना की अग्नि में बैठना पड़ा। जो कुछ भी युद्ध के बाद शेष रह गया था उसी जमीन को जे० पी० और लोहिया ने फिर से बुहारना शुरू किया। उसके बिखरे हुए एक-एक कण को फिर से जोड़ना शुरू किया। पूरे भारतवर्ष और विशेषकर हिंदी क्षेत्र की परंपरा, मनीषा और लोकमत के भीतर से इनकी यात्राएं शुरू हुई। बड़ी करुण और साहसिक यात्राएं थीं वे। विरोध में एक ओर वह कांग्रेस थी, जिसे इन्होंने अपनी जवानी के रक्त से सींचा था। वही कांग्रेस जिसने भारत की आजादी के लिए गांधी का नेतृत्व स्वीकार किया था। इसलिए नहीं कि वे लोग गांधी के विचार

तथा पद्धति को मानते थे, बल्कि इसलिए कि उस समय गांधी ही ऐसे व्यक्ति थे जो उस स्वतंत्रता-संग्राम के लिए जनता को उभार सकते थ।

कांग्रेस की वह राजनीति एक-दूसरे को इस्तेमाल करने की राजनीति थी। गांधी इसके नेता थे। नेहरू इसके नियामक और भोक्ता दोनों थे, और इसमें सबसे ज्यादा इस्तेमाल हुए जयप्रकाश। मतलब सी० यस० पी० दौर का वह सारा समाजवादी आंदोलन।

और अब समाजवादियों की उस यात्रा में सबसे बड़े विरोधी थे वही कांग्रेस-जन। वही कांग्रेस संस्था। इसका मर्म अब समझ में आता है।

जब कभी कोई क्रांति किसी विशिष्ट नेता और विशिष्ट संस्था, शक्ति द्वारा चलाई जाती है, तो आगे चलकर वही क्रांति ही नेता और संस्था के लिए निहित स्वार्थ बन जाती है। फिर वे इस बात को बर्दाश्त नहीं कर पाते कि उस जमात के बाहर कोई स्वतंत्र शक्ति खड़ी हो।

नेहरू की कांग्रेस संस्था के सामने जयप्रकाश के समाजवादी दल की बिल्कुल यही हालत थी। कांग्रेस नहीं चाहती कि उसके अलावा कोई दूसरी शक्ति अन्याय, शोषण और विषमता के खिलाफ लड़ाई लड़े।

दूसरी ओर ये समाजवादी स्वयं थे, जैसे अपने खिलाफ बात-बात में पूर्वी हिंदी क्षेत्र के सगे भाइयों की तरह बेतरह लड़ जाना। और उस लड़ाई के बाद जब एक बार डा० राममनोहर ने जयप्रकाश को पत्र में 'आप' लिख दिया तो जे० पी० को इससे ज्यादा अपमानजनक और कुछ नहीं लगा। वह आगबबूला होकर बोले : राममनोहर, तूने मुझे 'आप' क्यों लिखा?

—अच्छा, गलती हो गई।

—खबरदार, फिर अगर गलती की।

जो लोग अभिन्न साथी थे दोनों के, वही जानते हैं कि जे० पी० और लोहिया प्रेम और युद्ध में, प्रेम और मनुहार में, मिलन और टूटन में फिर भी काफी के प्यालों पर, किस भाषा में बोलते थे।

तब वे दिन इसी समय से इन्हीं क्षणों से शुरू हुए थे। जब फिर से, नये सिरे से आस्था के बिखरे हुए बीज इकट्ठे किए जाने लगे थे।

गांधी की हत्या के बाद जो गहन अंधकार आजाद भारत के नैतिक जीवन पर उतरा था, वह उस दिन नासिक सम्मेलन के बाद थोड़ा टूटा था, जिस दिन जयप्रकाश ने प्रत्यक्ष अनुभव किया :

'पिछले वर्षों में दल-बदल का जो संक्रामक रोग देश के राजनीतिक जीवन में पैदा हुआ है उसको ध्यान में रखते हुए यहां यह भी उल्लेखनीय है कि जब नासिक में यह निर्णय हुआ कि समाजवादी कांग्रेस से पृथक् हो जाएं तो साथ-साथ यह भी तय पाया कि उनमें से जो कांग्रेस टिकट पर चुनाव में सफल होकर विधानसभाओं के सदस्य बने हैं उनको इस्तीफा देना चाहिए और फिर से उप-चुनाव लड़ना चाहिए। उस निर्णय का सभी संबंधित व्यक्तियों ने पालन किया। यह एक ऐसा आदर्श था जिसको स्मरण करके आज भी गौरव का अनुभव होता है।'

इसी आदर्श और गौरवमय क्षणों में कांग्रेस से स्वतंत्र, समाजवाद को जो नया जन्म मिला, उसमें कई बातें उल्लेखनीय हैं।

इस समाजवाद के दो पुरुष थे जयप्रकाश और लोहिया। दोनों मानसपुत्र थे भारतीय स्वतंत्रता-संग्राम के उषाकाल में गांधी के असहयोग आंदोलन के। दोनों की शिक्षा बाहर हुई, पर दोनों संस्कारतः दीक्षित थे भारतीय राष्ट्रीयता से जिसका मर्म है स्वतंत्रता, समानता। उसी संस्कार ने दोनों में बार-बार प्रश्न खड़े किए, साध्य और साधन के संगठन और असंगठन के, स्वीकार और अस्वीकार के, आत्मदृष्टि और समदृष्टि के।

समाजवादी सब कुछ छोड़कर आए थे, सिर्फ उनके साथ थीं उनकी व्यक्तिगत अनुभूतियां, करुण क्षण जो गत पंद्रह वर्षों के जीवंत इतिहास ने उनकी मुट्ठियों में बांध दिए थे। इनके पास तब न अपना कोई बना-बनाया राजनीतिक ढांचा था न संगठन का कोई ऐसा निश्चित स्वरूप जिसके नीचे ये एकमत हो खड़े हो जाते। जो कुछ भी अपने से बाहर का था, वह अब तक निस्संग हो चुका था।

ये निपट भारतीय थे। निम्न मध्यवर्ग के संस्कारों से निकले हुए लोग। भारत का जो कुछ भी श्रेष्ठ था वह इन्हें, इनकी उस नई तलाश में मिला और साथ ही भारत का, विशेष कर हिंदी क्षेत्र का जितना कुछ सड़ा-गला था स्वभावतः वह भी इन्हें मिला।

विरोधाभास के साथ श्रेष्ठ मूल्य। इन्हें संगठन चाहिए, पर स्वतंत्रता उससे भी बड़ी चीज है। जनक और रूसो की तरह ये व्यक्तिगत संपत्ति के सबसे बड़े विरोधी हैं पर इनके विश्वास हैं, जो व्यक्तिगत है वही श्रेष्ठ है।

इनका विश्वास है पालियामेंट्री डिमोक्रेसी में, पर यह जानते हैं गरीब देश के प्रजातंत्र में सब कुछ ऊपर के लोगों को मिलता है, प्रजा सिर्फ वोटर बनकर भेड़-बकरी की तरह चरवाहे का मुंह देखती रह जाती है। ये लोग जाति, धर्म, रूढ़ियां, कर्मकांड और ऐसे सारे अंधविश्वासों के खिलाफ हैं जिनसे यहां की मानवता की जय-यात्रा में रुकावटें पैदा हुई हैं, जिनसे आदमी दास, अविकसित और छोटा रह गया है, पर संस्कारतः ये आस्तिक लोग हैं। नीति और राजनीति के दो ध्रुवों पर ये घूमते हैं। ये विभाजित व्यक्तित्व के लोग हैं और हमारे सही प्रतिनिधि हैं। हमारी अपनी मनीषा के जयी अजयी पुत्र हैं ये भारतीय समाजवादी।

तब नासिक जेल में इस समाजवाद का जन्म हुआ। देखरेख खुद करनी पड़ी। लालन-पालन यहां के किसानों, मजदूरों और निम्न मध्यवर्ग ने किया। अगस्त क्रांति की वीरवधू ने इसके गले में जयमाल डाली।

पर एक दिन सब कुछ छोड़कर ये फिर वहीं नासिक गए। वहां हिसाब लगाया तो पूरे चौदह वर्ष बीत गए थे।

और तब जयप्रकाश ने फिर उसी नासिक से अपनी यात्रा शुरू की और तीन शब्द कहे :

—संघर्ष,

—रचनात्मक काम और

—संसदीय कार्यक्रम।

नई यात्रा के इन प्रारंभिक वर्षों में जयप्रकाश और जवाहरलाल के व्यक्ति-

गत संबंध स्वभावतः बहुत मधुर रहे, क्योंकि दोनों मूलतः आदर्शवादी थे। पर सत्ता में आने के बाद समाजवाद के बारे में नेहरू के दृष्टिकोण में काफी परिवर्तन दिखाई पड़ने लगा। सत्ता से दूर जयप्रकाश के दृष्टिकोण में वह अंतर कतई नहीं आया, जो व्यवस्था में, शक्ति में रहकर, समाजवाद के बारे में आ सकता था। उन्नीस सौ अड़तालीस से लेकर बावन तक जयप्रकाश और नेहरू के बीच हुए पत्र-व्यवहार, जो प्रायः उस समय सभी प्रश्नों और समस्याओं से संबंधित होते थे, उनसे स्पष्ट है कि सिद्धांत और आस्था इन दोनों धरातलों पर जे० पी० और नेहरू एक-दूसरे से दूर हटते चले जा रहे हैं। और धीरे-धीरे वह आधार-भूमि टूटती जा रही है जिस पर कभी दोनों समान रूप से खड़े थे।

अप्रैल सन् सैंतालीस के एक पत्र में नेहरू जे० पी० को लिखते हैं : 'ज्यादा नहीं, पर पिछले कई महीनों से मैं यह अनुभव कर रहा हूं कि विभिन्न समस्याओं के प्रति तुम्हारे और मेरे विचारों में काफी अंतर पड़ता जा रहा है। ये अंतर इतने बढ़ते जा रहे हैं कि वह मिलन बिंदु भी लगता है कठिन हो जाएगा।' आगे दोनों के पत्रों में कठोरता तक आ गई है। पर यह जे० पी० के चरित्र की विशेषता है कि इन सबके बावजूद उनका किसी से व्यक्तिगत रिश्ता कभी नहीं बिगड़ता। व्यक्तिगत संबंधों का आंतरिक माधुर्य, बाहरी कटुताओं से तिक्त नहीं होता, यही है जे० पी० का सामाजिक पुरुष।

उन्नीस सौ अड़तालीस से लेकर पचास-इक्यावन तक जयप्रकाश पार्टी के संगठन और स्वराज्य के बारे में अपने विचारों और कार्यक्रमों को बताने और कार्यान्वित करने के लिए पूरे देश का दौरा करते रहे। उस वक्त बिहार के हजारीबाग जिले के गिरीडीह में भाषण करते हुए जे० पी० ने कहा : 'स्वराज के पहले मैंने कहा था, इस समझौते से स्वराज नहीं। अब कह रहा हूं, मैंने कहा था स्वराज नहीं मिलेगा, मिल गया। पर क्या यह स्वराज है? मैंने कभी नहीं सोचा था कि मेरे उस स्वतंत्र भारत में लाहौर नहीं होगा। वह रावी तट न होगा जहां हमने पूर्ण आजादी की प्रतिज्ञा की थी। गांधी न होंगे उस आजाद भारत में···।'

अड़तालीस से लेकर उनचास तक पूरे वर्ष भर जे० पी० हिंदुस्तान भर में पार्टी की स्थापना, उसके कार्य तथा उपचुनाव-संचालन हेतु दिन-रात दौड़ते रहे हैं। छाया की तरह प्रभावती उनके साथ रहती थीं। हर वक्त जे० पी० के प्रति सेवारत। इस बीच प्रभावती ने अपनी डायरी में जे० पी० की पूरी यात्राओं की कैफियत दर्ज कर रखी है। 'अगस्त क्रांति के 'हीरो' के नाते देश में सर्वत्र उनका बड़े ही उत्साह से स्वागत होता था। चाहे मध्यप्रदेश की यात्रा हो, चाहे महाराष्ट्र की या मद्रास की, हजारों की भीड़ उमड़ पड़ती। थैली के रूप में धन की वर्षा होती।···कुल दौरा मोटर से साढ़े पांच सौ मील, रेल में साठ घंटे, सभा तीस, भाषण चालीस, थैली कुल दो लाख आठ सौ ग्यारह रुपये···।'

पर उन्नीस सौ अड़तालीस के उपचुनावों के अनुभवों ने जयप्रकाश को दहला दिया। ग्यारह जुलाई को 'जनता' में उन्होंने वक्तव्य दिया, 'प्रजातंत्र की

ऐसी अवहेलना देश को फासिज्म की ओर ले जाएगी ।' अपने उस वक्तव्य की भूमिका बताते हुए उन्होंने लिखा :

'अपने जीवन में पहली बार मैंने चुनाव संघर्ष में भाग लिया । उन्नीस जून से अट्ठाइस जून तक मैंने युक्त प्रांत का अलीगढ़ से गाजीपुर तक दौरा किया ।

'आज पहली जुलाई है और दो-एक दिनों के बाद ही चुनाव का नतीजा मालूम होगा । नतीजा क्या होगा मालूम नहीं । लेकिन अगर सोशलिस्ट उम्मीदवार हार गए तो ताज्जुब की कोई बात नहीं । पार्टी की उम्र कुछ ही महीनों की है । संगठन, रचनात्मक कार्य, जनता की सेवा और शिक्षात्मक प्रचार के क्षेत्र में बहुत कुछ करने के बाद ही हम निश्चित रूप से जीतने की उम्मीद कर सकते हैं । इन उपनिर्वाचनों ने हमें बहुत कीमती तजुर्बा और सबक सिखाया है जो इनके बिना शायद मुमकिन नहीं था । इस दृष्टिकोण से इनका हमारे लिए बड़ा मूल्य है ।

'युक्त प्रांत के इस चुनाव के नतीजे का, चाहे जीत हो या हार, देश के भविष्य से कोई वैसा निकट संबंध नहीं । युक्त प्रांत की सरकार और प्रांतीय कांग्रेस कमेटी ने जिस तरह इन चुनावों को लड़ा है वह कहीं ज्यादा महत्त्व की बात है । पिछले महीनों में युक्त प्रांत की सरकार द्वारा जनता के अधिकारों की अवहेलना लगातार बढ़ती गई । यही काफी गंभीर बात थी । लेकिन युक्त प्रांत की सरकार ने प्रजातंत्र की जिस अवहेलना का परिचय दिया है और युक्त प्रांत के कांग्रेसी नेताओं ने अपने दिमाग की जैसी तस्वीर सामने रखी है उससे न सिर्फ हिंदुस्तानी प्रजातंत्र का गला घुट जाएगा और उसकी जगह पर फासिज्म स्थापित हो जाएगा बल्कि सार्वजनिक जीवन से ईमानदारी और भलमनसाहत नाम की चीज का भी लोप हो जाएगा ।'

अब तक जे० पी० का विश्वास था कि चुनाव में सब की एक सार्वजनिक मर्यादा होती है । और महात्मा गांधी के देश में यह मर्यादा निश्चय ही कुछ ऊंचे स्तर की होनी चाहिए । पर जे० पी० ने इस उपचुनाव के बीच युक्त प्रांत में गोविन्दवल्लभ पंत द्वारा बिखेरे हुए कुछ रत्नों को बटोरा था और उसे 'जनता' में इस तरह प्रकाशित किया ।

'युक्त प्रांत के प्रधान मंत्री पं० गोविन्दवल्लभ पंत अपनी लखनऊ की उद्घाटन वाली तकरीर से ही व्यक्तिगत आक्षेप, हल्केपन और भौंडेपन पर उतर आए । पंडित पंत ने जो रत्न बिखेरे थे उनमें कुछ ये हैं :

(1) विरोधी पार्टी की कोई जरूरत नहीं ।

(2) हम हर विरोध को कुचल देंगे जैसे कि मुस्लिम लीग, हिंदू महासभा राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और कम्युनिस्ट इत्यादि को कुचल दिया ।

(3) समाजवादी लोग व्यक्तिगत उन्नति के फेर में हैं और व्यक्तिगत फायदे के लिए ही उन लोगों ने कांग्रेस छोड़ी है ।

(4) सोशलिस्ट लोग सांप हैं ।

(5) सोशलिस्टों को वोट देने का मतलब है रजाकारों को वोट देना, कश्मीर पर हमला करने वाले सीमा प्रांत के कबीले वालों को वोट देना ।

(6) कांग्रेस के लिए वोट देने का मतलब है गांधी की आत्मा को शांति देना ।

(7) युक्त प्रांत की सरकार ने हिंदी को सरकारी भाषा करार दिया है। सोशलिस्ट उसकी जगह पर हिंदुस्तानी रखेंगे।

(8) सोशलिस्टों का धर्म में विश्वास नहीं। अगर उनके हाथों में सत्ता गई तो मंदिरों का अस्तित्व नहीं रह जाएगा।

(9) एक तरफ नेहरू और पटेल, दूसरी तरफ जयप्रकाश और लोहिया के बीच चुनना है।

(10) कांग्रेस के खिलाफ वोट देने का मतलब है देश को कमजोर करना।

'कल्पना की जा सकती है कि पंडित पंत ने ही जब इस तरह की बातों से शुरू किया तो कांग्रेस के छुटभैयों ने क्या कहा होगा। सारे प्रांत में शायद बाबू पुरुषोत्तमदास टंडन ही एक ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने अपने तौर-तरीकों को बिगाड़ा नहीं या जिंदगी की अच्छाइयों को नहीं भुलाया।'

इस प्रथम उपचुनाव के कटु अनुभवों ने जयप्रकाश को हिलाकर रख दिया। उन्होंने बड़े दर्द से कहा : 'मैंने सोचा था कि कांग्रेस और हम लोगों के बीच कुछ तो मतसाम्य है ही। जैसे प्रजातंत्र, स्वतंत्रता की रक्षा, स्वच्छ सभ्य सार्वजनिक जीवन और सांप्रदायिकता तथा जातिवाद का विरोध। प्रजातंत्र में अगर विरोधी पार्टी का कुछ इस तरह का समान आधार नहीं हो तो प्रजातंत्र नहीं चल सकता। अगर कांग्रेस वोट लेने के लिए सांप्रदायिकता की नीची सतह पर उतर आती है तो हिंदुस्तान का क्या होगा?

'मुझे ताज्जुब होता है कि क्या जनता में इतनी शक्ति है कि स्वतंत्र राजनीतिक जीवन के प्रारंभ में ही इन धाराओं को रोक सके। बड़े ताज्जुब की बात है कि गांधी जी की मृत्यु के बाद क्या कांग्रेस में कोई ऐसा आदमी नहीं रह गया है जिसकी हिंदुस्तान में प्रजातंत्र से दिलचस्पी हो और जो पक्षपात से ऊपर उठकर इन घातक प्रवृत्तियों के खिलाफ आवाज उठा सके। पंडित नेहरू! शायद वह कर सकते हैं। लेकिन क्या वह करेंगे?

'किसी भी वजह से, आदत या डर से, जनता कांग्रेस को वोट देती रहे यह हो सकता है। लेकिन मैं जानता हूं कि आज भी कांग्रेस में लोगों का अगर विश्वास है तो इसलिए कि पंडित नेहरू यहां पर हैं। क्या पंडित नेहरू जरूरत पड़ने पर अपनी पार्टी के खिलाफ भी जनता के हकों के लिए लड़कर जनता के इस विश्वास की रक्षा करेंगे? उसके उत्तर पर बहुत कुछ निर्भर हो सकता है। लेकिन जब तक जनता यह न समझ लेगी कि गुलामी से बचने के लिए उन्हें स्वयं सतत सतर्क रहना पड़ेगा तब तक उन्हें कोई नहीं बचा सकता।'

युक्त प्रांत के उस चुनाव के परिणाम के बाद जे० पी० ने हैदराबाद की सीमा पर मध्यप्रांत, बिहार और आंध्र का दौरा किया। इस दौरे के सिलसिले में फिर नागपुर, चंदा, मद्रास, बेजवाड़ा, किस्तना, तेनाला, गुंटूर आदि स्थानों के भ्रमण किए। आंध्र में हैदराबाद की सीमा पर अनेक सभाएं हुईं। जे० पी० ने रजाकारों द्वारा उजाड़े गए सभी गांवों को देखा और वहां की जनता को अपनी ताकत पर खड़े रहने पर जोर दिया।

नन्दयाल होते हुए जे० पी० कुरनूल गए। वहां रजाकारों ने बाकायदा

आक्रमण कर गांवों को लूट लिया था। वहां पचास हजार जनता की सभा में (जिसका आयोजन कांग्रेस और समाजवादी पार्टी ने संयुक्त रूप से किया था) बोलते हुए जयप्रकाश ने कहा : 'यहां मुसलमान भाइयों पर अधिक उत्तरदायित्व है। आपको हिंदु सरकार के प्रति वफादारी रखनी चाहिए। आपको निजाम का जवाब देना चाहिए और उसे बतला देना चाहिए कि युद्ध के समय हम हिंद सरकार का साथ देंगे। हैदराबाद की लड़ाई सांप्रदायिक नहीं है, प्रजातंत्र की लड़ाई है।'

दक्षिण भारत के दौरे से लौटकर जे० पी० बिहार आते हैं और ग्यारह जुलाई को छपरा से दरभंगा पहुंचते हैं। वहां पहले दिन जिला सोशलिस्ट पार्टी की कार्यसमिति की बैठक में भाग लेते हैं। दूसरे दिन पार्टी की रैली में शरीक होकर दरभंगा जेल में सूर्यनारायणसिंह को देखने गए। सूर्यनारायण पहली जुलाई से ही जेल अधिकारियों के दुर्व्यवहार के प्रतिरोध में अनशन कर रहे थे। अगस्त के अंत तक पूरे वर्षा ऋतु में जे० पी० बिहार का दौरा करते रहे। इसी समय बांकीपुर जेल से अनशन करते हुए पुलिस नेता रामानन्द तिवारी के बारे में जे० पी० ने महत्त्वपूर्ण वक्तव्य जारी किया :

'मेरे सहयोगी और आजादी के बहादुर सिपाही रामानन्द तिवारी बांकीपुर जेल में पड़े हुए हैं और घुट-घुट कर मर रहे हैं। आज (पच्चीस अगस्त सन् अड़तालीस) उनके अनशन का दसवां दिन है और जैसा कि अखबारों की रिपोर्ट से मालूम होता है उनकी हालत कुछ अच्छी नहीं है।

'कुछ बड़े पुलिस अफसरों द्वारा उन लोगों से कठोरता के साथ बदला लिया जा रहा है जिनकी देश और वर्तमान शासन के प्रति वफादारी में मुझे कभी संदेह नहीं हुआ। बावजूद इसके कि उन लोगों ने निराश होकर कुछ अनुचित कार्य कर दिए। इस दुखद कहानी का अंत रामानन्द तिवारी की शहादत से होगा या नहीं, यह तो संकीर्ण मनोवृत्ति वाले अफसर ही बता सकते हैं जो ईमानदार और भले आदमियों को सता कर असंतोष का जहरीला बीज बो रहे हैं। अपनी ओर से मैं अपने प्रांत की जनता को केवल यही याद दिलाना चाहता हूं कि आज जो आदमी जेल में अपनी इच्छा से धीरे-धीरे जान दे रहा है वह अगस्त वीरों में से एक था। आज उनके सताने वाले ये पुलिस अफसर जब उन दिनों आग लगाने, लूटने और विद्रोही बिहार को आतंकित करने में व्यस्त थे तब रामानन्द तिवारी ने अपने साथियों के साथ दुश्मन के खिलाफ बहादुरी के साथ बगावत की थी।

'कांग्रेस की सरकार बनने के बाद जब जाग्रत् पुलिस वालों ने नई नीति की मांग की तो उनको जवाब में मिला नौकरशाहों का अपमानजनक बर्ताव। इसका परिणाम हुआ उथल-पुथल जिसमें पुलिस वाले अपने उतावलेपन में वैधानिक लड़ाई की सीमा पार कर गए। इससे नौकरशाही को दमन करने का मौका मिला, जिसके अलावा दूसरी कोई चीज वे जानते ही नहीं। यहां तक कि महात्मा गांधी के हस्तक्षेप को भी अस्वीकृत कर दिया गया और इस तरह उनको बदला लेने की कोशिश चल रही है। अतः मुझे ऐसा लगता है कि

अपने सम्मान और देशभक्ति की रक्षा के लिए रामानन्द तिवारी को शायद मरना ही है।

'तिवारी जी ने महात्मा गांधी की सलाह से आत्मसमर्पण किया था क्योंकि गांधी जी ने वचन दिया था कि वे पुलिस वालों के साथ न्याय कराने की कोशिश करेंगे। महात्मा जी अब रहे नहीं, अतः तिवारी जी और उनके अभागे साथियों को अन्याय सहना होगा जिस तरह आज बहुत से लोग सह रहे हैं।

'अगर तिवारी जी की जिंदगी बचाने के लिए कुछ किया गया तो मुझे आश्चर्य होगा क्योंकि ताकत के भूखे अपने देश के शासकों के आगे मानव जीवन का कुछ मूल्य नहीं रह गया है। अगर तिवारी जी को उच्चतम त्याग करना ही पड़ा तो मुझे इसमें संदेह नहीं कि जनता के दिलों में वे अमर रहेंगे और जो आज उनको जीवितावस्था में कुचल देना चाहते हैं मरकर भी वे उन्हें हरा देंगे।

'अंत में मैं यह भी सूचित कर दूं कि रामानन्द तिवारी से मिलने के लिए मैंने जो दरख्वास्त दी थी उसे नामंजूर कर दिया गया।'

पार्टी के कार्यवश इस बीच जे० पी० को कभी बंबई में अशोक मेहता, पुरुषोत्तमदास त्रिकमदास, मेहरअली आदि साथियों के साथ रहना पड़ा कभी बिहार, संयुक्त प्रांत के पार्टी कार्यकर्त्ता शिविर में। शेष यात्राएं और सभाएं।

जीवन की रफ्तार उन्नीस सौ उनचास के पटना अधिवेशन से और भी तेज हो गई। नासिक अधिवेशन में जे० पी० ने कहा, 'मैंने कांग्रेस-समाजवादियों की प्रतियोगिता और संघर्ष के प्रश्न पर अपने प्रस्ताव दिए थे और उसके लिए योजनाएं बताई थीं।' वहां पटना सम्मेलन में जे० पी० ने उसकी अनिवार्यता साबित की। समूचे कार्यक्रमों को इसी प्रकाश में देखा-परखा गया। यहीं पटना में जे० पी० ने कहा कि भारत एक ऐसा देश है जिसमें युगों से तमाम तरह के अंधविश्वास चलते आ रहे हैं। इसमें अनेक ढंग के सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक अन्याय प्रचलित रहे हैं। इन्होंने अब अपने दायरे और बढ़ा लिए हैं। इनके खिलाफ अथक लड़ाई लड़ने के लिए पार्टी का कर्त्तव्य है कि यह अपनी जड़ें उसी जन-मानस में, लोक-जीवन में मजबूत करे। इसके लिए सम्मेलन में पार्टी के लिए जनतांत्रिक और क्रांतिकारी दोनों तरीकों को इस्तेमाल करने की सहमति प्रदान की।

पार्टी विधान पर जे० पी० ने एक रिपोर्ट पेश की। रिपोर्ट में कहा गया था कि समय आ गया है जब हमें पार्टी का ढांचा बुनियादी तौर पर बदल कर सदस्यता पर से हर तरह का प्रतिबंध उठा देना है। लेकिन आम जनता को सदस्य बनाना इसकी सबसे बड़ी खासियत नहीं है। इसका सबसे महत्त्वपूर्ण पहलू है संगठित मजदूरों, किसानों, कारीगरों इत्यादि लोगों को पार्टी में स्थान देना। इस रिपोर्ट पर कार्यसमिति में पूरी बहस हुई। इसकी संशोधित प्रति पुस्तिका के रूप में प्रकाशित भी की गई। विभिन्न पार्टी-शाखाओं और सदस्यों की आलोचनाओं और उनके सुझावों पर गौर करने के लिए एक कमेटी भी बैठाई गई जो तफसील से विधान तैयार कर अगले सालाना अधिवेशन में पेश करे। कमेटी

के पास बहुत से सुभा
में डेलिगेटों के सामने
पटना कान्फ्रेंस में
राजनीतिक प्रस्ताव में
कहा जा सकता है कि
है। ढांचे में जो परि
ठट्ठर खड़ा करता है
है। इस तरह तीनों
जे० पी० ने क
विचार करने का प्र
रत समझाई। करी
बहुमत से इसे स्वी
उनका ऐसा विश्वा
हो सकता और ब
करनी होगी और
देश की राजनीति
अनुसार उनकी
नहीं। रोज ब र
विधान में प्रस्तावि
लेकिन विरोधी
समझा। इसमें
परिचय दे रही
गलत होगा कि
तो सिर्फ भाग्य
कि इन प्रवृत्ति
अनुकूल वाताव
प्रजातांत्रिक
की लड़ाई जी
पटना के
सरकार से
का राज क
उनचा
राष्ट्रीय सं
अध्यक्ष और
उस समय
कर घोष
नुभूति',
नेपा
नेपाल

न्द तिवारी को शायद
र्पण किया था क्योंकि
य कराने की कोशिश
उनके अभागे साथियों
ह रहे हैं।
किया गया तो मुझे
के आगे मानव जीवन
तम त्याग करना ही
अमर रहेंगे और जो
र भी वे उन्हें हरा
से मिलने के लिए
अशोक मेहता,
ना पड़ा कभी
एं और सभाएं।
ी और भी तेज
माजवादियों की
के लिए योज-
ार्यता साबित
वहीं पटना में
तमाम तरह के
आर्थिक और
र बढ़ा लिए
है कि यह
लिए सम्मे-
इस्तेमाल
कहा गया
बदल कर
जनता को
र्ण पहलू
था। इस
का के
बालो-
ई गई
कमेटी

के पास बहुत से सुझाव आए और एक मसविदा तैयार किया गया जो पटना में डेलिगेटों के सामने पेश हुआ।

पटना कान्फ्रेंस में बहुत से फैसले हुए। सभी एक सूत्र में बंधे हुए हैं। राजनीतिक प्रस्ताव में देश की राजनीतिक शक्तियों का विश्लेषण है और ऐसा कहा जा सकता है कि पार्टी की सुंदर रीति-नीति उसकी स्वाभाविक परिणति है। ढांचे में जो परिवर्तन हुए हैं उनका आधार कार्यक्रम ही है। नया ढांचा ठट्ठर खड़ा करता है और 'आगे की ओर' वाला प्रस्ताव उसमें रक्त मांस भरता है। इस तरह तीनों आपस में संबद्ध हैं और मिलजुल कर पूरे होते हैं।

जे० पी० ने नये मसविदे में प्रस्तावित प्राथमिक सिद्धांतों पर फिर से विचार करने का प्रस्ताव किया और पार्टी का आधार विस्तृत करने की जरूरत समझाई। करीब पैंतालीस मिनट की गरमागरम बहस के बाद तीन चौथाई बहुमत से इसे स्वीकार कर लिया। थोड़े से अल्पसंख्यकों ने विरोध किया। उनका ऐसा विश्वास था कि प्रजातांत्रिक उपायों द्वारा समाजवाद स्थापित नहीं हो सकता और अपने हाथों में सत्ता लाने के लिए कभी न कभी सशस्त्र क्रांति करनी होगी और क्रांतिकारियों की पार्टी ही हमें लक्ष्य तक पहुंचा सकती है। देश की राजनीतिक स्थिति का जैसा लेखा-जोखा उन लोगों ने किया उसी के अनुसार उनकी दलील हुई। उनका कहना था कि वर्तमान सरकार प्रजातांत्रिक नहीं। रोज ब रोज जनता की आजादी पर हमले किए जा रहे हैं और इसलिए विधान में प्रस्तावित परिवर्तन करने के बाद परिणाम बहुत भयंकर होगा। लेकिन विरोधी दल ने क्रम और उसकी परिणति के महत्त्वपूर्ण विभेद को नहीं समझा। इसमें कोई शक नहीं कि वर्तमान सरकार अधिकारवादी रूझानों का परिचय दे रही है लेकिन जैसा जयप्रकाश ने बताया कि अभी तक यह कहना गलत होगा कि देश में फासिज्म की जीत हो चुकी या वह अनिवार्य है। यह तो सिर्फ भाग्यवाद है। इसलिए यह सोशलिस्ट पार्टी का कर्तव्य हो जाता है कि इन प्रवृत्तियों के खिलाफ लड़ा जाय। और समाजवाद की स्थापना के लायक अनुकूल वातावरण तैयार किया जाय। प्रजातांत्रिक समाजवाद के लिए पहले प्रजातांत्रिक वातावरण तैयार करना होगा। और सोशलिस्ट पार्टी को प्रजातंत्र की लड़ाई जीतने में सारी ताकत लगानी होगी।

पटना के उस सम्मेलन में जे० पी० ने दो मुख्य बातें कही थीं : 'जनता सरकार से असंतुष्ट है तो अपनी पसंद की दूसरी सरकार बनाए।' और 'गरीबों का राज करना है तो गरीबों की अपनी एक पार्टी होनी चाहिए।'

उनचास की गर्मियों में मार्च से मई तक नेपाली प्रजातंत्रवादियों का राष्ट्रीय संघर्ष अपनी चरम सीमा पर पहुंच रहा था। नेपाली कांग्रेस के भूतपूर्व अध्यक्ष और भारत में अगस्त बयालीस के वीर सेनानी विश्वेश्वरप्रसाद कोइराला, उस समय नेपाल जेल में भूख हड़ताल कर रहे थे। जयप्रकाश बिहार में घूम-घूम कर घोषणा कर रहे थे : 'नेपाली प्रजातंत्रवादियों के साथ भारत की पूरी सहानुभूति', 'राणाशाही खत्म करो', 'राजनीतिक बंदियों की मांगें पूरी करो।'

नेपाल के संबंध में जयप्रकाश ने खुले शब्दों में अपील की : 'कुछ दिनों से नेपाल सरकार की जेलों में नेपाली राष्ट्रीय कांग्रेस के भूतपूर्व सभापति श्री

विश्वेश्वरप्रसाद कोइराला और उनके तीन साथियों की भूख हड़ताल की लगातार अफवाह सुनी जा रही है। कुछ दिन पहले राष्ट्रीय कांग्रेस के प्रधान दफ्तर से उक्त समाचार की पुष्टि की गई है। अब नेपाल सरकार ने स्वयं फिर से इस समाचार की पुष्टि की है।

'''दुनिया के किसी सभ्य देश में क्रांतिकारियों के साथ आम चोर डकैतों का सा-व्यवहार नहीं किया जाता। हिंदुस्तान की जनता के हृदय में नेपाल की जनता के प्रति गहरी दोस्ती और सद्भावना है तथा उनकी आजादी और प्रजातंत्र की लड़ाई से पूरी सहानुभूति है। नेपाल सरकार के अपने राजनीतिक विरोधियों के साथ अमानुषिक व्यवहार की हिंदुस्तान की जनता निंदा ही करेगी। बड़े दुख की बात है कि नेपाल के राणा इतिहास से सबक नहीं लेते, आगाह नहीं होते। उन्हें समझना चाहिए कि चाहे जितनी निरंकुशता और उत्पीड़न का सिलसिला वह चलावें उनकी सत्ता और सहूलियतों का खात्मा और जनता द्वारा नेपाल में प्रजातांत्रिक सरकार की स्थापना नहीं रुक सकती।

हिंदुस्तान की जनता नेपाली जनता भाई-भाई हैं, हम लोगों की ही तरह हिंदुस्तान की संतान हैं, उसकी सभ्यता और संस्कृति के वारिस हैं।...'

जे० पी० ने फिर नेपाल के महाराणा के पास तार भेजा : 'विश्वेश्वर प्रसाद कोइराला और उनके तीन साथियों के साथ जो अमानुषिक व्यवहार किया जा रहा है उसकी सूचना पाकर मैं बहुत ही चिंतित हूं। आपकी सरकार ने उन लोगों पर जो आरोप लगाए हैं वे राजनीतिक हैं, अतः उनके साथ राजनीतिक बंदियों का व्यवहार होना चाहिए। उनके अनशन की खबर से हम लोग दुखी हैं। मानवता के अधिकारों को भी अस्वीकार करना इस देश की जनता और बाहर के सभ्य समाज के लिए चुनौती है। ब्रिटिश जुल्म के अंत हो जाने से आपको सबक लेना चाहिए। भारत की जनता से आप इस तरह शत्रुता मोल ले रहे हैं। आपसे मेरा अनुरोध है कि राजनीतिक बंदियों की मांगें आप पूरी करें।'

यह वह समय था जब एक ओर दिल्ली में स्वतंत्र भारत का संविधान तैयार हो रहा था। दूसरी ओर कांग्रेसी सरकार की दोषपूर्ण अन्न-नीति, अर्थ-नीति और दृष्टिहीन राजनीति के कारण देश में भीषण संकट का अनुभव होने लगा था। इससे लोहा लेने के लिए संयुक्त मंत्रिमंडल की चर्चाएं भी इधर-उधर होने लगी थीं।

उनचास के सितंबर में जे० पी० बंबई और महाराष्ट्र के दौरे पर गए थे। बंबई में यू० पी० आई० और ब्लिट्ज के प्रतिनिधियों की मुलाकात में जयप्रकाश ने उन दोनों स्थितियों के बारे में उत्तर दिया :

'दिल्ली में जो विधान बन रहा है वह प्रजातंत्र का हथियार बनने के बदले निरंकुशशाही का हथियार होगा। कुछ दिन पहले कांग्रेस के प्रेसिडेंट ने प्रजातंत्र की व्याख्या करते हुए बताया कि प्रजातंत्र बहुमत की निरंकुशशाही है। यह हैरत में डालने वाली परिभाषा है। लेकिन अगर कांग्रेस के प्रेसिडेंट के प्रजातंत्र संबंधी विचार को कार्यान्वित करने के लिए किसी विधान की जरूरत है तो डा० अम्बेडकर का विधान उसे पूरा करता है।

'जो विधान आज बन रहा है वह हमें बिल्कुल ही नापसंद है। ज्यों ही मौका मिलेगा हम लोग बालिग वोट के आधार पर नया विधान बनाने के लिए एक नई विधानपरिषद् बुलायेंगे और यह विधान पूर्ण सामाजिक प्रजातंत्र की स्थापना के लिए हर नई सरकार के लिए फरमान जैसा होगा।

' सरकार की मौजूदा आर्थिक नीति की अगर सर्वश्रेष्ठ व्याख्या करनी है तो हम इसे 'योजनाविहीन' अर्थनीति कहेंगे। इसलिए अगर देश की आर्थिक उन्नति करनी है तो सबसे पहला काम जो करना है वह यह कि देश के सभी साधनों, आवश्यकताओं का ख्याल कर एक सुसंबद्ध आर्थिक योजना तैयार करना। इस योजना को कार्यान्वित करने का भार पूंजीपतियों पर न छोड़ा जाएगा। और दूसरा जो महत्त्वपूर्ण काम करना है वह है इस योजना को कार्यान्वित करने के लिए एक उचित मशीनरी स्थापित करना।

'हिंदुस्तान के आगे दो रास्ते हैं, जनता को इनमें से एक चुन लेना है। एक रास्ता है पूंजीवादी व्यवस्था के अंदर योजनाविहीन आर्थिक विकास का रास्ता जिसका सिवाय मुनाफा कमाने के दूसरा उद्देश्य नहीं हो सकता। दूसरा रास्ता है राज्य के नियंत्रण में सुसंबद्ध और सुयोजित विकास का।'

संयुक्त मंत्रिमंडल के सवाल पर जे० पी० ने बहुत साफ कहा : 'देश के सामने जो समस्याएं हैं उन्हें हल करने के लिए सोशलिस्ट पार्टी सभी देशभक्त पार्टियों के साथ, कांग्रेस के साथ भी, सहयोग करने को तैयार है लेकिन कांग्रेसी शासन की वर्तमान अवस्था में और एसेंबलियों तथा मंत्रिमंडल का गठन जिस ढंग पर हुआ है उस अवस्था में कांग्रेस के साथ संयुक्त मंत्रिमंडल हम नहीं बना सकते। दूसरे शासनारूढ़ पार्टी यानी कांग्रेस ने ऐसा कोई संकेत नहीं किया है कि वह सोशलिस्ट पार्टी के साथ संयुक्त मंत्रिमंडल बनाने के लिए उत्सुक है इसलिए यह सवाल ही पैदा नहीं होता। तब ऐसा सवाल पूछना बिल्कुल बेकार और निराधार है।

' आज हालत यह है कि एसेंबलियों में कांग्रेस का भारी बहुमत है और सोशलिस्टों का प्रतिनिधित्व बिल्कुल नहीं के बराबर है। तब कांग्रेस के साथ संयुक्त मंत्रिमंडल बनाना बिल्कुल कारगर नहीं होगा, उसका असर नहीं होगा।'

सितंबर के अंतिम सप्ताह में जे० पी० बंबई से बंगलौर गए। यहां चौबीस सितंबर से सोशलिस्ट पार्टी की राष्ट्रीय कार्यसमिति की बैठक शुरू हुई। उसके बाद चार से छः अक्तूबर को जनरल कौंसिल की भी बैठक हुई। राष्ट्रीय कार्यसमिति में जे० पी० ने, चीन की नई सरकार, प्रांत, मजदूर और विदेश-नीति विषयों पर पार्टी के विचार लिखे जो जनरल कौंसिल की बैठक में पास हो गए। जनरल कौंसिल की बैठक की अध्यक्षता यूसुफ मेहरअली ने की थी। पार्टी के महामंत्री जयप्रकाश ने अपनी संगठन संबंधी रिपोर्ट में बताया कि पटना अधिवेशन के बाद पार्टी संगठन की प्रगति संतोषजनक नहीं रही है। पटना अधिवेशन ने पार्टी को कुछ चुने हुए सदस्यों का संगठन नहीं रख कर उसके दायरे को बढ़ा कर जन-संगठन बनाने का निश्चय किया था पर यह कार्यक्रम अभी तक पूरा नहीं हुआ है दक्षिण में तो और भी नहीं। इसका कारण कार्यकर्त्ताओं का अभाव है।

जयप्रकाश नारायण ने घोषणा की कि पहले की तरह पार्टी की शाखाएं भाषावार प्रांतों के अनुसार न होकर शासन के अनुसार बनेंगी और इस तरह पार्टी की कुल अठारह प्रांतीय शाखाएं होंगी। बंबई कारपोरेशन के चुनाव में पार्टी की सफलता तथा मद्रास प्रांत में जिला बोर्डों के चुनाव में हुई हार पर टिप्पणी करते हुए उन्होंने कहा कि बंबई पार्टी ने साबित कर दिया कि यदि हमारे कार्यकर्ता मेहनत से काम करें तो वे जनता के प्रेमभाजन बन सकते हैं। पार्टी में ऐसे लोगों की कमी नहीं है जो सोचते हैं कि जनतांत्रिक तरीके से इस देश में कभी शासन-सत्ता पर कब्जा किया ही नहीं जा सकता है। जितनी ही बार चुनाव में पार्टी की हार होती है उसे लोग सबूत के रूप में पेश करते हैं कि वोट के बक्से से सरकार पर कब्जा करना नामुमकिन है। युक्त प्रांत में जो चुनाव में पार्टी की असफलता रही उसके बाद से यह भावना जोरों से फैली है। लेकिन मेरा विश्वास है कि अगर मेहनत से काम करें तो जनता हमारे साथ है। हम उनकी कुछ भलाई कर सकेंगे, यह तो हमारे ऊपर निर्भर करता है।

बंगलौर में तभी एक सार्वजनिक सभा में भाषण करते हुए जे० पी० ने कहा कि वर्तमान सरकार एक ऐसी नीति का अनुसरण कर रही है, जो पूंजीपतियों के पक्ष में तथा किसानों, मजदूरों और मध्यमवर्ग के विरुद्ध है। पूंजीपति भी सरकार के साथ हैं तथा वर्तमान परिस्थिति कायम रखने के लिए हाथ में हाथ मिलाए हुए हैं और इस प्रकार से गरीब जनता का शोषण करने की अपनी पुरानी चाल कायम रखना चाहते हैं।

जे० पी० ने अगले दस वर्षों तक उद्योगों के राष्ट्रीयकरण न करने की नेहरू सरकार की नीति की तीव्र आलोचना की। उन्होंने इसी नीति का श्री एटली की मजदूर सरकार की नीति से मुकाबला करते हुए बतलाया कि उसने चार वर्ष के थोड़े समय में ही बैंक आफ इंग्लैंड, यातायात, इस्पात तथा विद्युत् उद्योग का राष्ट्रीयकरण कर दिया।

उन्होंने कहा कि जब तक वर्तमान केंद्रीय सरकार का आमूल परिवर्तन नहीं कर दिया जाता तब तक भारतीय जनता की मुक्ति संभव नहीं। उसके लिए एक क्रियाशील अखिल भारतीय विरोधी दल की अत्यन्त आवश्यकता है। इस कार्य के लिए समाजवादी दल ही सबसे उपयुक्त दल है।

तेईस नवंबर सन् उन्नीस सौ उनचास को पटना की सड़कों पर किसानों का एक जत्था घूम रहा था—हाथ में लाल झंडा, सर से पैर तक धूल, चेहरे पर थोड़ी परेशानी, फिर भी जोश, मानो वे लड़ाई फतह कर आ रहे हों। हर मुसाफिर से जत्थे के किसान पूछते : सोशलिस्ट पार्टी का दफ्तर किधर है? और यह था पच्चीस नवंबर के ऐतिहासिक 'किसान-मार्च' के लिए आने वाले किसानों का पहला जत्था। उसके बाद एक, दो, तीन, पचासों जत्थे आए और सारा शहर लाल झंडों से जगमग हो उठा। चौबीस तारीख की शाम को जिधर देखिए किसान जत्थे। पटना शहर में इन किसानों के ठहरने के लिए जगह नहीं—धर्मशालाओं, खाली घरों के बरामदों और जहां कहीं भी जगह मिली किसान जमे रहे।

बाबुओं के घरों में, धनियों के महलों में, होटल और रेस्ट्रां में पच्चीस नवंबर की खूब चर्चा थी। कोई कहता : कुछ नहीं होगा, तमाशेबाजी है, राजनीतिक चाल है। कुछ ऐसे भी थे जो सोचते थे कि शायद कुछ हो जाए, आखिर सोशलिस्ट पागल तो नहीं हैं। चौबीस नवंबर की रात को सैकड़ों मशालों का जुलूस निकला। सोशलिस्ट पार्टी के दफ्तर से रात के सात बजे सैकड़ों आदमी निकले और उनके मशाल की रोशनी से बहुतों की आंखें खुलने लगीं। लोग घबरा कर घरों से निकले और हैरतभरी निगाह से देखने लगे। मशाल जुलूस सारे शहर में घूमता हुआ लौट आया और पच्चीस नवंबर के बारे में निराशावादियों की भी आंखें खुलीं।

पच्चीस तारीख की सुबह हुई। सूरज की लाल किरणों के साये में उत्तरी बिहार के किसान अपने लाल झंडे के साथ गंगा पार करने लगे। सारे शहर में, शहर की गली-गली में जिंदगी उफनाने लगी, पटना के नागरिक किसी अनहोनी घटना की प्रतीक्षा में उत्सुक रहे। दोपहर के बारह बजे हजारों किसानों के बीच जयप्रकाश नारायण ने लाल झंडा फहराया और हजारों कंठ से आवाज निकली : इन्कलाब जिन्दाबाद, सोशलिस्ट पार्टी जिन्दाबाद !

गांधी मैदान कांप गया। महलों की दीवारें थरथरा गईं। कांग्रेसी हुकूमत शुतुर्मुर्ग की तरह बालू में सर गाड़े रही। झंडाभिवादन के बाद किसानों का जुलूस निकला। कतारों में किसान निकल पड़े। उनके रहनुमा जयप्रकाश नारायण, जनाब अबुलहयात चांद आदि आगे की कतार में थे और उनके पीछे किसानों का लम्बा जनसमूह।

गांवों के किसान, खेती करने वाले, मिट्टी से सोना पैदा करने वाले हजारों किसानों के हाथों में लाल झंडा फहरा रहा था। किसान थके थे, परेशान थे, सर से पैर तक धूल में सने थे, आवाज भारी हो गई थी लेकिन चेहरे पर वैसा ही जोश था जैसा सन् बयालीस की क्रांति के अलावा कभी नहीं देखा गया। बूढ़ी हड्डियों में नई जिंदगी उभर आई थी। एक लंगड़ा किसान सारन जिले से मार्च करता हुआ आया था और पूरे जोश के साथ पटना की सड़कों पर मार्च कर रहा था। प्रांत के गांव-गांव से बूढ़े, बच्चे, औरत, मर्द, लंगड़े, अंधे किसान पटना में छा गए थे और जुलूस के साथ चल रहे थे। औरतें काफी संख्या में थीं। करीब डेढ़-दो मील लम्बा जुलूस पटना की सड़कों और शोषकों की छाती को रौंदता हुआ निकल गया। शहर के तमाशाई मुंह बाए खड़े थे। बिहार के अन्नदाता ने अंगड़ाई ली है, किसान जगे हैं, वे अपनी मांग पेश कर रहे हैं। किसान नारे लगा रहे थे।

जुलूस करीब चार बजे गांधी मैदान पहुंचा। स्थानीय आबादी, बाद को आए किसान करीब चालीस, पचास हजार की संख्या में जमा थे और किसान कार्यकर्त्ता दुख-दर्द की अपनी कहानी लोकगीतों द्वारा सुना रहे थे। जुलूस आया और गांधी मैदान में छा गया। लाल झंडे बुलंद रहे, शाम के डूबते सूरज की लाली लेकर वे गांधी मैदान में किसानों पर चमकते रहे। शाम तक सभा की संख्या बढ़ कर एक लाख को छूने लगी।

गांधी मैदान में किसानों की सभा के लिए सोशलिस्ट पार्टी बिहार के

मंत्री रियासतकरीम ने साथी अबुलहयात चांद का नाम सभापतित्व के लिए पेश किया। रामवृक्ष बेनीपुरी ने इस प्रस्ताव का समर्थन किया। अबुलहयात चांद ने सभापति के पद से छोटा-सा भाषण दिया और बताया कि किसानों की तकलीफें इस हद तक पहुंच गई है कि मार्च करना पड़ा। कांग्रेसी वायदों का जिक्र करते हुए उन्होंने कहा :

तेरे वादे पर सितमगर अभी और सब्र करते।
अगर अपनी जिंदगी का हमें एतबार होता।

चांद साहब ने रामनन्दन मिश्र से प्रस्ताव पेश करने का अनुरोध किया। मिश्र जी किसानों के साथ पैदल मार्च कर पटना आए थे और रास्ते में दुर्घटना के कारण उनके पांव में चोट आ गई थी। किसानों के बीच प्रस्ताव पेश करते हुए मिश्र जी ने कहा : 'बिहार के कोने-कोने से पैदल चल कर किसान आज यहां इकट्ठे हुए हैं। इस तरह के मार्च के दुनिया में और भी उदाहरण है। लेकिन कौम की जिंदगी में ऐसा मौका हमेशा नहीं आता। असाधारण-सी परिस्थिति में ही ऐसे मार्च होते हैं और इनके नतीजे भी काफी बड़े निकले हैं। सरकारें बदली हैं। इसका भी कोई बड़ा नतीजा होगा ही।

आज जैसी हालत है, जितनी खराब हालत है, इलाज भी उतना ही जबर्दस्त होना चाहिए। गांधी जी कहा करते थे कि अंग्रेजो, सात लाख गांवों की रोशनी हमें वापस दे दो। आजादी के बाद अगर यह रोशनी लंदन से वापस आई भी तो शहरों में ही अटकी पड़ी है। गांवों में अंधेरा ही अंधेरा है। हम भी आज कांग्रेसी नेताओं से वहीं कहते हैं : गांवों की रोशनी वापस दे दो।

काफी ठंड थी। बंद गले का ऊनी कोट और गांधी टोपी पहने थे जे० पी०। प्रभावती ने थर्मस से गर्म पानी दिया। जे० पी० दो घूंट पीकर उस किसान महामेला में बोलने को उठे और नारों से वहां का सारा वायुमंडल भर गया। जे० पी० ने बड़े आत्मविश्वास से बोलना आरंभ किया : 'साथियो, शुरू में ही मैं दो-एक चेतावनी दे दूं। आपने दो-एक कुछ ऐसे नारे लगाए हैं जिसमें मुझे अफसोस हुआ। आपने मेरे नाम का नारा लगाया, मैं ऐसे नारे को पसंद नहीं करता। स्वतंत्रता-आंदोलन के सिलसिले में आपने नेहरू, पटेल आदि के नारे लगाए लेकिन उसके बाद क्या हुआ ? आपको उनसे निराशा हुई, आज आपका दिल टूटा हुआ है। इसलिए मैं कहता हूं कि व्यक्ति का नारा न लगाकर खुद अपने अन्दर बल पैदा कीजिए ताकि आपको दुबारा निराश न होना पड़े।

'आपका इतनी भारी तादाद में इकट्ठा होना इस बात का प्रमाण है कि जनता में साहस है, वह दो कदम आगे बढ़ कर हमें बताती है : आगे बढ़े चलो। मौजूदा शासन के संबंध में आपकी जो राय है वह आप के नारों से ही साफ हो जाती है। आजादी के बाद भारतीय राजनीति के इतिहास को बताते हुए कहा : 'आज देश का नियंत्रण नेहरू, पटेल के हाथों में है। फिर भी इतनी बर्बादी क्यों ? नेहरू का राज अमीरों का राज है। क्यों ? भ्रष्टाचार वगैरह की बात अलग कीजिए। सब लोग ईमानदार बन भी जाएं, फिर भी अगर सरकार की नीति यही रही जो आज है तो सरकार अमीरों की ही रहेगी।···

इस समय जे० पी० का ट्रेड यूनियन नेता रूप और मजदूर आंदोलन मार्ग-दर्शक का रूप बड़ा महत्त्वपूर्ण है। उनका यह विश्वास कि सचेतन और सुसंगठित मजदूर ही समाजवादी आंदोलन की रीढ़ हैं, और उनकी यह दृष्टि कि आर्थिक और राजनीतिक व्यवस्था में क्रांतिकारी परिवर्तन के बाद ही पूंजीपतियों के आधिपत्य और शोषण से छुटकारा हो सकता है—इसने जे० पी० के ट्रेड यूनियन नेता के व्यक्तित्व को बड़ा अर्थ दिया।

उस समय मजदूर आंदोलन एक ओर कम्युनिस्टों और दूसरी ओर कांग्रेस के स्वार्थी प्रभावों में आकर विभिन्न संगठनों में बंट रहा था। जे० पी० ने 'रेलवे-मेन्स फेडरेशन' द्वारा मजदूर आंदोलन की एकता को पुन: कायम करने की कोशिश की। जे० पी० ने इसके अध्यक्ष की हैसियत से इसका महत्त्वपूर्ण नेतृत्व किया। इसी तरह जे० पी० ने 'फेडरेशन आफ पोस्ट एंड टेलीग्राफ' द्वारा कर्मचारियों और मजदूरों के आंदोलन को सबल नेतृत्व प्रदान किया।

प्रभावती की डायरी के पृष्ठों से उस समय जे० पी० का 'तूफानी दौरा', 'तेज रफ्तार वाला जीवन', 'निरंतर घूमने' वाला जो स्वरूप उभरता है उसके पीछे पार्टी के कार्यों के अलावा इन्हीं यूनियनों के जबर्दस्त काम उन्हें करने पड़ते थे। इसके अलावा निकट भविष्य में ही आने वाले इक्यावन-बावन के पहले आम चुनाव के लिए पार्टी को इतना सुसंगठित और शक्तिशाली बनाना था कि कांग्रेस से सफलतापूर्वक लोहा लेकर उसे पराजित कर सकें। इसी स्वप्न और संकल्प के पीछे उस समय दिन-रात जे० पी० दौड़ते रहते थे। अबाध गति से यात्राएं चलती रहती थीं।

पर जे० पी० कभी भी अपने जीवन को अस्त-व्यस्त नहीं होने देना चाहते थे। उन्हें हर जगह अपना घर जैसा लगना चाहिए, यह जे० पी० की एक बड़ी कमजोरी है। इसके पीछे शायद प्रभावती का चरित्र है। जो जे० पी० के उतने तूफानी जीवन में भी उनके साथ रहकर उनकी हर सुविधा का ख्याल रखती थीं और उनके लिए हर जगह अपना घर जैसा वातावरण निर्माण कर देती थीं। कभी किसानों में, कभी मजदूरों में और कभी 'लाल टोपी' वालों की भीड़ में, कभी यूनियन वालों के साथ संघर्ष की योजना में और कभी राष्ट्रपति, प्रधान-मंत्री के साथ भोजन में, कभी मद्रास, आंध्र में विशाल सभाएं, कभी मोटर से दौरा, कभी पूर्णिया-सहरसा में बैलगाड़ी और नाव से यात्रा—इन सारी विविध स्थितियों में जे० पी० अपने आप को व्यस्त रखते हुए भी कहीं कुछ अस्त-व्यस्त नहीं होने देते थे।

तब उन दिनों यात्रा में न भारत का कोई स्थान छूटता था, न यात्रा का कोई भारतीय ढंग छूटता था।

समाजवादी पार्टी का काम बड़े जोर-शोर से चल रहा था। लगता था कि जे० पी० अपने उस समय के बाहरी-भीतरी अंधकार से लड़ रहे हैं। और एक दिन लोग देखते हैं कि तीस जनवरी सन् पचास को पटना में अखंड चरखा-यज्ञ में प्रभा के साथ जयप्रकाश भी उस यज्ञ में शामिल होते हैं। वह दिन दोनों उपवास के दिन है।

जन सन् पचास में मेहरअली की अनुपस्थिति में अशोक मेहता की अध्यक्षता में सोशलिस्ट पार्टी का वार्षिक अधिवेशन मद्रास में हुआ। अस्वस्थ होने के कारण नरेन्द्रदेव इस अधिवेशन में शरीक न हो सके। लोहिया ने अपने विभाग की रिपोर्ट भेज दी। पर खुद सम्मेलन में शामिल न हुए। जयप्रकाश से मन मोटा किए हुए बंबई में बैठे रहे।

पार्टी का मद्रास अधिवेशन जे० पी० के जीवन का एक महत्त्वपूर्ण अध्याय है। यहीं उनसे और डा० लोहिया के गहरे मतभेद और आपसी संघर्ष दुनिया के सामने प्रकट होते हैं। इसी अधिवेशन में जे० पी० पार्टी के महामंत्री के नाते प्रस्तुत प्रतिवेदन के रूप में 'लोकतांत्रिक समाजवाद : आदर्श और विधि' का महत्त्वपूर्ण विचार देते हैं।

पर जे० पी०, लोहिया का वह संघर्ष-बिंदु क्या था? पहले यह जानना जरूरी है।

मद्रास अधिवेशन के थोड़े समय पहले ही कोरिया का युद्ध हुआ था। जिसमें दक्षिण कोरिया की ओर से यू० एन० ओ० की फौज उत्तर कोरिया की कम्युनिस्ट फौज से लड़ी थी। वस्तुतः यह लड़ाई कोरिया में अमेरिका और चीन के बीच की लड़ाई थी। उस समय बंबई में पार्टी की परराष्ट्र नीति-समिति की बैठक हुई। उसमें जयप्रकाश नारायण के साथ डा० लोहिया और अशोक मेहता उपस्थित थे। लोहिया का विचार था कि पार्टी को कोरिया युद्ध के संदर्भ में अमेरिका, चीन और रूस तीनों के प्रति समान रूप से तटस्थता की नीति रखनी चाहिए। जे० पी० तटस्थता के खिलाफ थे। इसी मतभेद के कारण लोहिया मद्रास सम्मेलन में नहीं गए। क्योंकि उन्हें पता था, वहां कोरिया के विषय में जे० पी० का प्रस्ताव आएगा और तब संघर्ष अपरिहार्य हो जाएगा।

दरअस्ल लोहिया ने परराष्ट्र नीति के अंतर्गत, गत महायुद्ध के समय संसार के राष्ट्रों के दो गुटों में विभक्त होने का विरोध किया था और एक तीसरी शक्ति, तीसरे खेमे की कल्पना की थी। महायुद्ध के बाद भी सारी दुनिया के दो गुटों में बंटे रहने को लोहिया शांति के लिए खतरनाक मानते थे। मद्रास सम्मेलन में काफी वाद-विवाद के बाद बहुमत से जवाहरलाल नेहरू की दक्षिण कोरिया संबंधी नीति के समर्थन में जयप्रकाश का वह विवादास्पद प्रस्ताव स्वीकार हुआ। डा० लोहिया ने तब खुलेआम समाचार पत्रों द्वारा इसकी कड़ी आलोचना की।

अपने महत्त्वपूर्ण प्रतिवेदन 'लोकतांत्रिक समाजवाद : आदर्श और विधि' में उन्नीस सौ अड़तालीस के नासिक सम्मेलन के 'साध्य और साधन' के बुनियादी विचार को जे० पी० और गहरे ले जाते हैं :

'तब से वर्षों बीत चुके हैं : वे वर्ष जो वेदनापूर्ण और दुःखद इतिहास के वर्ष थे, टूटे हुए सपनों के वर्ष थे और उस देवता के वर्ष थे जो विफल हो चुका है। इन सब बातों से वह नवोत्साही अनभिज्ञ है, और इसलिए आनंदमग्न है, उसे न तो वर्तमानकालीन समाजवाद की बुनियादी समस्याओं का ज्ञान है और न उन साहसपूर्ण प्रयासों की जानकारी है जो अब भी समाजवाद को उसके आवरण से मुक्त करने के लिए किए जा रहे हैं। वह अब भी 'सुधारवादी' और 'क्रांतिकारी

शब्दों पर बहस करता है, क्योंकि वह समझ नहीं पाया है कि जो क्रांतिकारी था, वह प्रतिक्रियावादी बन चुका है ।

'नवोत्साही व्यक्ति के मानसिक विकास की ऐसी स्थिति क्यों होती है ? इसका एक कारण तो यह है कि नई दीक्षा ग्रहण करने के उत्साह में वह जो नये शब्द, नये मुहावरे और सूत्र सीखता है, वे ही सर्वप्रधान हो जाते हैं और यह मान लिया जाता है कि उनमें सार होगा ही । समाजवादी सिद्धांत उसके लिए उन समाजवादी मूल्यों से अधिक महत्त्वपूर्ण बन जाते हैं, जिनकी प्राप्ति के लिए वे सिद्धांत विकसित हुए । वह मान लेता है कि वे सिद्धांत अनिवार्यत: उन मूल्यों तक उसको पहुंचा देंगे । इसलिए जब वे सिद्धांत राज्यधर्म बन जाते हैं तो वह विश्वास कर लेता है कि उन मूल्यों की प्राप्ति और समाजवाद की स्थापना पृथ्वी पर हो गई । विभिन्न धर्मों के इतिहास में भी यही बात पाई गई है ।

'समाजवाद' केवल पूंजीवाद नहीं है, न वह राज्यवाद है । उद्योगों का राष्ट्रीयकरण और कृषि का समूहीकरण समाजवादी अर्थ-रचना के महत्त्वपूर्ण पहलू हैं, वे अपने आप में समाजवाद नहीं हैं । समाजवाद के अंतर्गत मनुष्य द्वारा मनुष्य का शोषण नहीं होगा, अन्याय और उत्पीड़न नहीं होगा, असुरक्षा नहीं रहेगी, उसके अंतर्गत संपत्ति एवं सेवाओं तथा अवसरों का समान वितरण होगा । अब देखिए, राष्ट्रीयकृत एवं समूहीकृत अर्थ-रचना में भी शोषण, अन्याय, उत्पीड़न, असुरक्षा एवं घोर विषमताएं हो सकती हैं । ऐसी अर्थ-रचना के अंतर्गत, यदि समस्त राजनीतिक एवं आर्थिक सत्ता एक अपरिवर्तनीय एवं आत्मपरिरक्षणकारी दलीय अल्पतंत्र के हाथों में केंद्रित हो जाती है तो फिर समाजवाद नहीं, उसका दमन होगा; क्रांति नहीं, प्रतिक्रिया पनपेगी । जो साम्यवादी ऐसे अल्पतंत्रीय समाज में विश्वास करता है और उसके लिए कार्य करता है, वह क्रांतिकारी होने के बजाय प्रतिक्रियावादी है ।'

इस विचार से मार्क्सवाद में उनकी औपचारिक निष्ठा कायम रहती है । उन्होंने समाजवाद की प्राप्ति के लिए लोकतांत्रिक साधनों के पक्ष में उपस्थित तर्क का अनुमोदन मार्क्स द्वारा हेग में दिए गए व्याख्यान के आधार पर किया । पर जे० पी० के विचारों में मार्क्स की अपेक्षा गांधी की भावना परिव्याप्त है :

'जब से समाजवादी दल ने लोकतांत्रिक समाजवाद में अपनी आस्था घोषित की है, इसके सदस्यों में दो प्रकार की प्रवृत्ति पैदा हुई है । एक सामान्य तथा सुदूरव्यापी प्रवृत्ति, बिना किसी जीवित विश्वास के, लक्ष्य को स्वीकार कर लेने की है । लोकतांत्रिक समाजवाद उन साथियों के लिए कोई ज्वलंत प्रेरणा या विश्वास की वस्तु नहीं बन पाया है । तर्क मन को तो समझा लेता है, परंतु हृदय भावशून्य ही बना रहता है । लोकतांत्रिक समाजवाद उन्हें बौद्धिक तृप्ति तो शायद दे सका है, परंतु उनमें वह भावनापूर्ण संवेदना की सृष्टि नहीं कर सका है जो मनुष्यों को अपने विचारों के लिए मर मिटने के लिए प्रेरित करता है । केवल सिद्धांतों में लीन रहने और मूल्यों की उपेक्षा करने का ही यह परिणाम है । ऐसे साथियों ने उन लक्ष्यों को पूरी तरह नहीं समझा है जिनके लिए वे लड़ रहे हैं । अगर हम केवल सत्ता के लिए या 'सर्वहारा की ताना-

शाही' के लिए नहीं लड़ रहे हैं, बल्कि कुछ मूल्यों के लिए लड़ रहे हैं, और शोषण, अन्याय तथा हर प्रकार के उत्पीड़न के विरुद्ध संघर्ष कर रहे हैं, तो लोकतांत्रिक समाजवाद ही हमारा लक्ष्य हो सकता है, और यह हमारे अंदर अवश्यमेव वह निष्ठा, उत्साह एवं भक्ति पैदा कर सकता है जिसके द्वारा मुट्ठी-भर लोग पहाड़ को भी हिला सकते हैं। हममें से अनेक लोगों में भावना की तीव्रता नहीं है। यही कारण है कि हमारे दल में हजारों कार्यकर्त्ता रहने पर भी कुल काम अपेक्षाकृत बहुत कम होता है और इसी कारण हममें संघ-भावना एवं-सहयोग वृत्ति का भी ऐसा अभाव है। फिर भी मुझे विश्वास है कि ज्यों-ज्यों आस्था गहरी होती जाएगी और लोकतांत्रिक समाजवाद के मूल्यों का अवबोध बढ़ता जाएगा, त्यों-त्यों विश्वास और भक्ति भी गहरी होती जाएगी।'

मद्रास में सम्मेलन के समय जे० पी० के इस विचारोत्तेजक भाषण के संबंध में पार्टी के कुछ सदस्यों को यह संदेह हुआ कि वह सत्याग्रह का समर्थन कर मार्क्स और गांधी का समन्वय करना चाहते हैं। कुछ प्रतिनिधियों ने समाजवादी पार्टी के मूल सिद्धांत 'जनतांत्रिक समाजवाद' के बारे में अपना मतभेद प्रकट किया। उनके भ्रम को दूर करने के लिए और जे० पी० के विचारों के समर्थन में नरेन्द्रदेव ने दो लेख लिखे : 'मार्क्सवाद और सत्याग्रह', 'जनतांत्रिक समाजवाद ही क्यों ?'

जे० पी० के लिए इक्यावन-बावन का वह वर्ष स्वतंत्र भारत के प्रथम आम चुनाव की तैयारी में लगे अत्यंत व्यस्त समय के दिन थे। उस समय पार्टी के संचालन और चुनाव की योजना में कार्य करते हुए जे० पी० ने यह महसूस करना शुरू किया कि दल के अंदर अविलम्ब फल-प्राप्ति की भावना वाली प्रवृत्ति बढ़ रही है। बहुतों से उन्होंने यह कहते हुए सुना कि यह पहला आम चुनाव, पार्टी के भविष्य का निर्णय करेगा।

ऐसी बातें जे० पी० को उदास करने वाली होती थीं। वह तब अक्सर पार्टी के लोगों से कहा करते थे : 'हमारे लक्ष्य जहां ऊंचे हैं, और आशाएं बलवती हैं, वहां हमें गीता के सिखावन के अनुसार निष्काम भावना से काम करना चहिए।'

इन दिनों की अतिव्यस्तता, परिश्रम और दौड़धूप ने जे० पी० के स्वास्थ्य को बिगाड़ दिया। स्वास्थ्य-लाभ के लिए वह एक महीना मद्रास रहे। उस समय जे० पी० प्रभावती के मुख से कभी 'रामचरित मानस' सुनते, कभी 'अनासक्तियोग' और कभी सुशीला नैयर की 'कारावास की कहानी'। उस बार तीस जनवरी सन् इक्यावन मद्रास में ही बीता।

बावन का पहला आम चुनाव निकट आ गया था। जे० पी० को आशंका थी कि सत्ताधारी पक्ष, कांग्रेस अपनी स्थिति का अनुचित लाभ उठा सकती है। जे० पी० ने सरकार भंग करने की मांग की। सरकार क्यों तैयार होती ? जयप्रकाश की इस शंका का कारण सार्वजनिक जीवन या भारतीय चरित्र पर अविश्वास नहीं बल्कि सत्ताधारी पक्ष की मानवीय दुर्बलता के संस्थागत समा-

धान का सुझाव था। 'राजनीतिज्ञ का नैतिक होना पर्याप्त नहीं। नैतिकता की अनुभूति भी जनता को करानी अनिवार्य है।'

जे० पी० ने इस आम चुनाव में लोकतांत्रिक और समाजवादी तत्त्वों का संयुक्त मोर्चा बनाने का प्रयत्न किया। संसदीय लोकतंत्र को सुदृढ़ करने का जे० पी० का यह प्रयोग निष्फल रहा।

फिर भी समाजवादियों को पूरी आशा थी कि देश-भर में काफी सीटें मिलेंगी। बिहार में तो पार्टी की सरकार बनेगी। अगस्त क्रांति की स्मृति भी जनमानस में ताजी थी। क्रांति के नेताओं की सभाओं में भारी भीड़ इकट्ठी हो जाती थी। फूलमाला की वर्षा से वातावरण सुगंधित हो जाता था।

चार जनवरी को प्रातः आठ बजे जे० पी० और प्रभा दोनों पटना में कदमकुआं से चलकर वोट डालने जाते हैं। चुनाव के नतीजे निकलते हैं। सर्वत्र पार्टी की करारी हार होती है। और लोकसभा तथा विधानसभाओं में कांग्रेस प्रबल सत्ताधारी शासक के रूप में आ जाती है।

यह हार समाजवादियों के लिए बहुत विकट थी। इसकी कभी कल्पना भी नहीं की थी कि कांग्रेस इस चुनाव में सारी सरकारी मशीनरी, यहां तक कि राष्ट्रीय झंडे को पार्टी के लिए इस्तेमाल करेगी। लोकतंत्र के प्रति सारे विश्वासों को तोड़ देने वाला अनुभव था वहां।

मार्च में पटना के अंजुमन इस्लामिया हाल में बिहार पार्टी की मीटिंग हुई। चुनाव में हार के गहरे प्रभाव ने पूरे वातावरण को बेरंग कर रखा था। सब गुमसुम और टूटे-से थे। मीटिंग शुरू होने से पहले रामनन्दन मिश्र ने एक पुस्तिका बंटवाई जिसमें उन्होंने चुनाव में हार की मार्क्सवादी व्याख्या की थी और यह सिद्ध करना चाहा था कि समाजवाद ने जे० पी० के कारण वर्ग संघर्ष छोड़ा, इसीलिए समाजवादियों की हार हुई। मिश्र जी ने ही कहा : जे० पी० जवाहरलाल के दोस्त हैं। जे० पी० ने कांग्रेस की मदद की है।

उस पार्टी के लोग जिसे जे० पी० ने अपने रक्त और आंसुओं से सींचकर बड़ा किया हो, उनके मुंह से अविश्वास के ऐसे विषाक्त शब्दों ने जे० पी० को गहरी चोट दी। चुपचाप मंच से उठकर बाहर गए और एकांत में जाकर रोए। मंच पर आकर फिर बड़े शांत स्वर में बोले : दोस्तो! मैं बिहार छोड़ रहा हूं। मेरा घर भी इस समय संयोग से संयुक्त प्रांत में पड़ गया है।

रामनन्दन मिश्र घबरा गए। सारे साथी दुखी हुए। तब रामवृक्ष बेनीपुरी ने व्यंग्य किया : मिसिर जी, और जहर पिलाओ शंकर को!

शंकर माने जयप्रकाश। दोपहर का वक्त था। उन दिनों जे० पी० कदमकुआं में ही रहते थे। मीटिंग से निकलकर अकेले पटना मेडिकल कालेज की ओर बढ़े। काटेज वार्ड में उनके सेक्रेटरी शंकर शेट्टी बीमार पड़े थे। उन्हीं के सिरहाने चुपचाप जे० पी० बैठे रहे।

नये विचार जे० पी० को नये जीवन सिद्धांत दे रहे थे। 'साध्य और साधन', 'लोकतांत्रिक समाजवाद के नये आदर्श और विधियां' उन्हें तत्कालीन राजनीति से दूर ले जा रही थीं। ये व्यक्तिगत घटनाएं उस अंधकार में उन्हें क्रमशः किसी और दिशा में मुड़ जाने के लिए विवश कर रही थीं।

इसके बाद बहुत तेजी से घटनाएं घटने लगती हैं। मई में पार्टी का पंचमढ़ी में सम्मेलन होता है। पार्टी के अध्यक्ष नरेन्द्रदेव की अनुपस्थिति में (जो सद्‌भावना मंडल के एक सदस्य की हैसियत से चीन गए थे) डा० लोहिया सम्मेलन की अध्यक्षता करते हैं। अपने अध्यक्षीय भाषण में डा० लोहिया ने सोशलिस्टों के सर्वोदय की अपूर्णताओं को ध्यान में रखते हुए स्वैच्छिक भूमि-वितरण के अभियान में काम करने की सलाह दी। जे० पी० ने अपनी कुल पचास बीघे जोत की जमीन में आधी जमीन अपने गांव के भूमिहीन किसानों में बांट देने का निर्णय लिया। और मार्क्सवाद के प्रति अपनी निष्ठा को दुहराते हुए डा० लोहिया के विचारों के समर्थन में कहा : 'ये विचार समाजवादी चिंतन की अपूर्णताओं को किसी हद तक जरूर दूर करने में सफल होंगे।···सर्वोदयवादियों की दशा इस समय कांग्रेस जैसी है। उनके विभिन्न तथा परस्पर विरोधी दृष्टिकोण हैं। उनमें से कुछ कम्युनिज्म की ओर आकृष्ट हैं, कुछ कांग्रेस दल को अपना राजनीतिक मंच समझते हैं, और एक ग्रुप सिद्धांतों में हमारे निकट है। सर्वोदयवादियों का यह ग्रुप सोशलिस्ट पार्टी से सहयोग चाहता है।'

पहली जून को जे० पी० के सुझाव से सोशलिस्ट पार्टी और किसान मजदूर प्रजा पार्टी के संसदीय सदस्यों का सहकार संबंधी समझौता होता है। सितंबर में, बंबई सोशलिस्ट पार्टी की जनरल कौंसिल की बैठक होती है और पार्टी से के० एम० पी० पी० का विलयन होता है। और आचार्य कृपलानी की अध्यक्षता में प्रजा सोशलिस्ट पार्टी (पी० एस० पी०) का गठन होता है।

पर इसी बीच जे० पी० के जीवन में एक बड़ी घटना घटती है।

3

जयप्रकाश मूलतः भावना के आदमी हैं। दिल में जो बात छू जाती है, उसे बुद्धि से परखकर कर्म का रूप देते हैं। जे० पी० दूसरों के प्रति अनाग्रही व्यक्ति हैं। पर स्वयं सतत सीमा को लांघते हुए क्षितिज को छू लेने के आग्रही हैं।

विनोबा तेलंगाना की हिंसा को भूदान यज्ञ द्वारा शांत कर सैकड़ों मील पैदल चलते हुए उत्तर प्रदेश पहुंचे थे। तब तक एक लाख एकड़ से भी अधिक जमीन उन्हें हासिल हो चुकी थी। उत्तर प्रदेश के बांदा जिले में जयप्रकाश विनोबा से मिलने आए।

इससे पहले पनवार आश्रम में जे० पी० ने विनोबा को पहली बार देखा था—कुएं पर रहट चलाते हुए। साथ ही साथ विनोबा प्रार्थना-गीत भी गा रहे थे। उत्पादक श्रम से जुड़ी हुई उस प्रार्थना ने जे० पी० को बेतरह आकृष्ट किया था।

बापू के बाद, तब दूसरी बार जे० पी० ने विनोबा से हिंसा-अहिंसा के बारे में चर्चा की थी। जे० पी० ने पूछा था : क्या हिंसा कभी आम आदमी की ताकत बन सकती है?

—नहीं :

—क्यों ?

—वह तो मुट्ठी-भर लोगों की ही ताकत है । आम जनता की ताकत है अहिंसा ।

अब बांदा जिले में, जून सन् बावन की भयानक गर्मी और लू में बदन में सफेद कुर्ता और सिर पर लाल टोपी पहने हुए जयप्रकाश विनोबा के साथ चौदह-पंद्रह मील पदयात्रा कर शाम को पड़ाव पर पहुंचते हैं, तो वही चर्चा फिर चल पड़ती है ।

तभी भीतर-बाहर कई घटनाएं घटती हैं

पहले भीतर।

पहले विश्वास था सत्ता प्राप्त कर परिवर्तन लाया जा सकता है । पर दूसरों की तरह स्वयं को केंद्र में रखकर जे० पी० ने कभी नहीं सोचा । शक्ति की इच्छा (विल टु पावर) कहीं थी, पर उसके प्रति वैराग्य भी कम न था ।

सत्ता के मार्फत कर्म करने में अविश्वास होने लगा था जे० पी० में ।

—तो कर्म के लिए पहले आत्म शुद्ध होना चाहिए ।

—अच्छे कर्म के लिए मनुष्य कहां से प्रेरणा पाता है ?

—अब तक बोले हुए झूठ, किए गए छल, तन और मन की चोरी का प्रायश्चित्त हो सकता है ?

—हां, उसे कबूल करके हो सकता है ।

—नहीं, यह नीति है ।

—तो विश्वास क्या है ?

—उपवास से आत्मशुद्धि······ ।

तभी बाहर एक घटना घटी । जे० पी० पोस्ट एंड टेलीग्राफ यूनियन के अध्यक्ष थे । किदवई उस समय उस विभाग के मिनिस्टर थे । किदवई से उस समय हड़ताल के बाबत की हुई समझौता वार्त्ता के आधार पर जे० पी० ने यूनियन से कहा था कि हड़ताल की अवधि में वेतन देना सरकार ने स्वीकार किया है । पर उसके बाद किदवई ने साफ इंकार कर दिया कि मैंने ऐसा कोई आश्वासन नहीं दिया था, प्रधान मंत्री नेहरू भी लोकसभा में मुकर गए । जे० पी० के हृदय पर इस असत्य की बड़ी चोट लगी, पर उन्होंने इस प्रसंग में अपने को ही दोषी ठहराया । उन्होंने कहा : विश्वास व्यक्तिगत चीज है । मैंने यूनियन की तरफ से किदवई का विश्वास किया और उनसे निर्णय को लिखित रूप में नहीं लिया । यह मेरी गलती है । मेरे विश्वास का दोष······।

इस तरह देश जब चुनाव के फलाफल का हिसाब लगा रहा था, जब कांग्रेस के नेता अपनी विजय से मदांध हो चुके थे, जब बड़े-बड़े क्रांतिकारियों के पैर लड़खड़ा रहे थे, तब जयप्रकाश ने उस घोर अंधकार में फिर एक बार प्रकाश की ओर अंगुली-निर्देश किया ।

यों तो पूना का उनका इक्कीस दिनों का अनशन उन्हीं के शब्दों में आत्म-संशोधन के लिए था, किंतु वह इतना ही नहीं था ।

इस अनशन के सिलसिले में जयप्रकाश ने जो सत्रह पौंड रक्त सुखाया, वह अगली लड़ाई के लिए एक नई दिशा की ओर प्रेरित करता है ।

स्वर्गीय मश्रूवाला ने भी इस अनशन को गांधी जी के सिद्धांतों पर सोलह आने खरा उतरने वाला बताते हुए कहा था : 'जब गांधी जी के चेले भी अंधेरे में टटोल रहे हैं, तो जयप्रकाश ने इस अनशन द्वारा एक नया आदर्श पेश किया है।'

मश्रूवाला का ध्यान शायद गांधी जी के चेलों में फैली अनैतिकता की ओर अधिक था, किंतु इसे राजनीतिक अंधकार के लिए भी एक मशाल मानना चाहिए।

जे० पी० का विश्वास था कि अगली क्रांति के पहले हमें अपने को अधिक शुद्ध कर लेना होगा और हमें पसीने से ही संतोष नहीं करके अपने खून से इस क्रांति को अभिषिक्त करना पड़ेगा, तभी अगली क्रांति एक सफल क्रांति बनेगी।

गंदगीभरे हाथों से नये समाज की स्वच्छ, सुंदर, चमकदार इमारत की नींव नहीं डाली जा सकती। यदि अपने को पूरी तरह शुद्ध नहीं कर लिया, तो कोई भी कांग्रेस नेताओं की ही तरह गद्दी पर भले ही बैठ जाए, उससे नये समाज का निर्माण संभव नहीं होगा। और यदि सोचते हों कि सिर्फ व्याख्यानों से, प्रचारों से, चुनावों से ही लक्ष्य तक पहुंच सकेंगे, तो लोग बेवकूफों के स्वर्ग में हैं। आत्म-संशोधन और रक्तदान पर ही अगस्त की अधूरी क्रांति का पूरा होना और एक नये समाज का निर्माण करना संभव है—जयप्रकाश ने यह ताजा संदेश दिया।

पूना अनशन के वे इक्कीस दिन और उसके प्रत्येक क्षण अनेक अर्थों में मूल्यवान हैं। वह अनशन प्रसिद्ध प्रकृति चिकित्सक डाक्टर दीनशा मेहता के 'नेचर क्योर क्लीनिक' में संपन्न हुआ। उपवास से पहले उसकी पूरी तैयारी की गई थी। उस समय जे० पी० के साथ प्रभावती और उनके मित्र-सेक्रेट्री महावीरप्रसाद सिन्हा थे।

प्रभावती की शिष्या-सखी, महावीरप्रसाद की होने वाली पत्नी कृष्णा गौड़ (अब श्रीमती कृष्णा सिन्हा) को दोनों व्यक्तियों द्वारा लिखे गए खत उन क्षणों के जीवंत साक्ष्य हैं।

पूरे इक्कीस दिनों का वह उपवास बाइस जून को सुबह साढ़े नौ बजे से प्रारंभ हुआ था। शारीरिक और मानसिक स्तर पर एक सप्ताह पूर्व से इस उपवास की बाकायदा तैयारी की गई थी।

महावीरप्रसाद सिन्हा लिखते हैं : 'जे० पी० के···उपवास की तैयारी का आज सातवां दिन है। इस बीच जे० पी० को केवल पेय पदार्थ (लिकुइड्स) पर रहना पड़ा है। इसमें दूध और दूध से बने पदार्थ नहीं थे। केवल दो कप हारलिक्स के अलावा फल के रस और सब्जी झोल दिये जाते थे। इसके साथ ही हर तरह की सेंक, स्नान और बदन की मालिश।···

'···कल से जे० पी० का उपवास शुरू होने जा रहा है। जे० पी० बहुत प्रसन्न हैं। निःसंदेह जे० पी० इसमें पूर्णतः सफल होंगे और इन्हें नया बल मिलेगा···

'···आज उपवास का दूसरा दिन है। स्वभावतः जे० पी० के तमाम जिगरी दोस्त उनसे मिलने आते रहे। डाक्टर के आदेशों के प्रतिकूल उनसे बातें करते रहे। फलतः, शाम को बिल्कुल थक और चुक-से गए···।'

प्रभावती लिखती हैं :

'आज उपवास का बारहवां दिन भी सकुशल बीत रहा है। कल रात में सोने के ठीक पहले पेट कुछ गड़बड़ था। तीन बार शौच जाना पड़ा। पर उसके बाद पेट पर पट्टी रखी गई और वो सो गए। रात में नींद अच्छी आई। आज सवेरे भी मालिश और स्नान के बाद कई दिनों बाद लगभग एक घंटा सोए। आज भी पानी पर्याप्त मात्रा में पी रहे हैं। और पेशाब साफ है। मतली की कोई अलामत नहीं है। मालूम होता है, मतली नहीं होगी···।'

महावीर लिखते हैं : 'आज उपवास का चौदहवां दिन है। पर कमाल है, पहले से ज्यादा ताजा लगते हैं। मतली या और कोई झंझट नहीं आया है। रात में कमर में दर्द हो जाया करता था—सियाटिका के पुराने मरीज हैं। कल प्लास्टर लगाया गया, उससे राहत (रिलीफ) मिली। वजन रोज एक पौंड के हिसाब से घटा है। कमजोरी है। पर बाथरूम जाते हैं, चाहे जितनी बार जाना पड़े।'

प्रभावती लिखती हैं :

'आज उपवास का सोलहवां दिन भी अच्छी तरह खत्म हो रहा है। आज वजन एक सौ सत्ताइस पौंड है। रात कुछ ठीक नींद नहीं आई इसलिए आज कुछ थके लगते हैं।···'

और उपवास खत्म हो जाने के बाद प्रभावती लिखती हैं : 'जे० पी० की तबीयत धीरे-धीरे ठीक हो रही है। आज वजन एक पौंड बढ़ा। धीरे-धीरे ताकत आ रही है। आज वह स्वयं चलकर उपचार गृह में (जहां उन्हें एनिमा, मालिश, स्नान कराते हैं) गए। कल तक कुर्सी में उठाकर ले जाए जाते थे। नींद भी अच्छी आती है···।'

इस तरह पूना में जे० पी० को पूर्णतः स्वस्थ होते हुए करीब पांच महीने लग गये। जो बुनियादी बात और मानवीय समस्या उन्हें तब मथ रही थी और जिसके अंधकार से वह जूझ रहे थे, वहां से उन्हें अंत में प्रकाश मिला, अपने ही भीतर से। उपवास के बाद 'अच्छाई की प्रेरणा' (इंसेंटिव टु गुडनेस) क्यों और कहां से आती है, जे० पी० ने पा लिया: 'वर्तमान समाज में, जब कि धर्म का प्रभाव समाप्त हो चुका है, ईश्वर से विश्वास हिल चुका है, नैतिक मूल्यों को इतिहास के तमिस्र युगों की आधारभूत देन मानकर दूर फेंक डाला गया है, सारांशतः यह प्रश्न खड़ा होता है कि मनुष्य के हृदय में भौतिकवाद के प्रतिष्ठित होने के बाद क्या अच्छाई के लिए कोई प्रेरणा रह गई है? वास्तव में, क्या इस प्रश्न की कोई प्रासंगिकता मानव समाज के वर्तमान तथ्यों, समस्याओं एवं आदर्शों के संदर्भ में है? मैं दृढ़तापूर्वक यह मानता हूं कि इस प्रश्न से अधिक प्रासंगिक आज दूसरा कोई प्रश्न नहीं है।'

उन्होंने अपने चारों ओर फैलते हुए पतन और भ्रष्टाचार के मर्म में जाकर जैसे मूल सूत्र को पकड़ लिया : 'व्यक्ति आज यह प्रश्न करता है कि वह अच्छा क्यों बने? अब तो कोई ईश्वर नहीं है, कोई आत्मा नहीं, नैतिकता नहीं, इस जीवन के बाद कोई जीवन नहीं, और जन्म-मरण का कोई चक्कर नहीं है। वह द्रव्य का एक समुच्चय-मात्र है जो अनायास बन गया है, और

शीघ्र ही द्रव्य के असीम महासमुद्र में बिखर जाने वाला है। वह अपने चारों ओर बुराई को—भ्रष्टाचार, मुनाफाखोरी, झूठ, फरेब, क्रूरता, सत्ताधारित राजनीति, हिंसा आदि को—सफल होते देखता है। वह सहज की प्रश्न करता है कि वह सदाचारी क्यों बने ? आज हमारे जो सामाजिक रूप हैं और मनुष्यों के कार्य-कलाप पर जिस भौतिकतावादी दर्शन का प्रभुत्व है वे उत्तर देते हैं कि उसे सदाचारी बनने की आवश्यकता नहीं। अब, वह जितना ही अधिक चतुर है, जितना ही प्रतिभासंपन्न है, वह उतने ही साहस के साथ इस नई निर्नैतिकता को अपने आचरण में उतारता है, और इस निर्नैतिकता के चक्कर में मानव जाति के सारे सपने और अरमान भी मुड़कर और सिकुड़ कर रह जाते हैं।'

आगे उन्होंने अनुभूति पाई : 'अनेक वर्षों तक मैंने द्वंद्वात्मक भौतिकवाद की देवी के मन्दिर में उपासना की है, यह दर्शन मुझे अन्य किसी भी दर्शन की अपेक्षा बौद्धिक रूप से अधिक तुष्टिकारक प्रतीत होता था। परंतु जहां दर्शन की मेरी मुख्य जिज्ञासा अतृप्त ही रही है, वहां यह मेरे सामने प्रत्यक्ष हो गया है कि भौतिकवाद, चाहे वह किसी प्रकार का हो, मनुष्य को सच्चे अर्थ में मानवीय बनने के साधनों से ही वंचित कर देता है। भौतिकवादी सभ्यता से मनुष्य को अच्छा बनने के लिए कोई युक्तिसंगत प्रेरणा नहीं मिलती। संभव है, द्वंद्वात्मक भौतिकवाद के राज्य में भय मनुष्य को अनुगत होने की प्रेरणा देता हो और दल भगवान का स्थान ले लेता हो। लेकिन जब भगवान ही बुरा हो जाता है, तो फिर बुरा होना ही एक सार्वत्रिक नियम बन जाता है।'

उपवास के उन मौन, उदास और क्लांत क्षणों में जे० पी० ने पाया था : 'निर्दोष शिष्ट मानव सामाजिक उत्प्रेरणाओं के फलस्वरूप अचानक अशिष्ट और सदोष बन जा सकते हैं। हमें यह कटु अनुभव प्राप्त ही है कि किस प्रकार शांतिपूर्वक साथ रहने वाले अच्छे हिंदू और मुसलमान, सामाजिक वासनाएं उभर जाने के बाद, एक-दूसरे पर टूट पड़े, और ऐसा करने में उन्हें कोई हिचक नहीं हुई। समाज के चरित्र के लिए एवं उसके विकास की दिशा के लिए जो महत्त्वपूर्ण वस्तु होती है, वह अक्रिय जनसमूह के चरित्र में उतनी नहीं, जितनी कि विशिष्ट वर्ग के चरित्र में निहित होती है। इन विशिष्टों के समूह का जो दर्शन और जो कार्य होते हैं, वही मनुष्यों का भाग्य निर्धारण करते हैं। ये विशिष्ट जिस सीमा तक निरीश्वर और निर्नैतिक होते हैं, उसी सीमा तक बुराई मानव जाति को आक्रांत करती है।······अभौतिकवाद—इस नकारात्मक शब्द का प्रयोग मैं कर रहा हूं, इसलिए कि मेरे मन में किसी पंथ विशेष की कल्पना नहीं है—द्रव्य को अंतिम वास्तविकता नहीं मानकर व्यक्ति को अविलंब एक नैतिक धरातल पर उठा ले जाता है और उसको, स्वयं से परे किसी लक्ष्य की ओर संकेत किए बिना, अपना ही सच्चा स्वभाव प्राप्त करने की, तथा अपने अस्तित्व को उद्देश्यपूर्ण बनाने हेतु प्रयास करने की प्रेरणा देता है। यह प्रयास एक शक्तिशाली प्रेरक तत्त्व बन जाता है जो सहज रूप से उसको अच्छाई और सच्चाई की ओर बढ़ने के लिए प्रवृत्त करता है। इसके महत्त्वपूर्ण अनुसिद्धांत के रूप में यह प्रकट है कि भौतिकवाद के परे जाने के

बाद ही वैयक्तिक मानव स्वयं की ओर आता है और स्वयं साध्य बन जाता है ।'

पूना में पूरी गर्मी बिताकर जे० पी० जाड़ों में पटना लौटे थे : नवंबर के अंत में । पहली दिसंबर को पटना में कुछ अंतरंग साथियों के बीच उन्होंने कहा : 'इस उपवास से मेरा जो व्यक्तिगत लाभ हुआ, वह मेरी अपनी चीज है । दूसरों को जो लाभ हुआ, उससे मुझे खुशी हुई । हम हड्डी और मांस-मज्जा से बने हुए हैं, इसमें अशुद्धियां हैं । इस उपवास से उन्हें दूर करने के लिए एक ताकत मिली । जब मैं उपवास कर रहा था, मुझे कुछ सोचना पड़ा । और मैंने कुछ पाया……।'

पटना से फिर बारह दिसंबर को पंडौल भूमि पुनर्वितरण सत्याग्रह के औचित्य पर जे० पी० ने पंडौल गांव की आम सभा में भाषण दिया और सागरपुर, ब्रह्मोत्रा, सोहराय, मंडौल और नकोडा गांवों में गए तथा सत्याग्रह के सिलसिले में जेल गए सत्याग्रहियों के परिवार वालों से मुलाकातें कीं । वहीं लोगों से उन्होंने कहा : 'सबके स्वार्थ कुछ लोगों के स्वार्थ के ऊपर हैं । दान सबके लिए, दूसरे क्रांतिकारी कदमों की बुनियाद है । भूमि का ग्रामीकरण करना ही होगा । अर्थात् ग्राम की सारी जमीन को ग्रामीण समुदाय के स्वामित्व और प्रबंध में रखना होगा, तभी धनी और निर्धन के बीच का संघर्ष खत्म होगा तथा एक नये सहयोगी जीवन तथा एक नई सभ्यता का निर्माण होगा, जो ग्राम-राज का द्योतक होगा ।'

गांधी की हत्या से उपजे हुए उस अंधकार में जयप्रकाश के भीतर जो हृदय मंथन चल रहा था वह समाजवाद से भागने के लिए नहीं, उसे प्रकाश में लाने के लिए था । समाजवादी अपने हाथों में सत्ता चाहते हैं, यदि उनमें कोई नैतिक मूल्य नहीं तो कभी कोई अच्छा समाज नहीं बन सकता । उल्टे समाजवाद बदनाम हो जाएगा । हमारे ऋषि-मुनियों ने अपने ढंग से, अपने समयानुसार इस प्रश्न का मर्म ढूंढ़ा था । व्यक्ति के अन्दर सब बुराइयां है । इसे अच्छा बना दो, समाज अच्छा हो जाएगा । बुद्ध का यह निदान था, तृष्णा ही सब दुख का मूल है, सब अंशतः सही है । किंतु एक बच्चा राजा के घर में और दूसरा रंक के घर में पैदा हुआ तो इसका कारण तृष्णा तो नहीं है । इसी तरह हमारे लिए पूरा सच समाज था । उन्होंने जिस तरह अंतस को ही सब कुछ मान लिया, हमने भी बाहर को ही सब कुछ समझ लिया ।

उस अंधकार में जयप्रकाश को कुछ दिखाई पड़ा । वह तड़प उठे, क्या है वह ?……

प्रकाश

तुम्हारे खेल के कठोर विचार से
मैं सहमत हूं ।
और उसमें भाग लेने को प्रस्तुत हूं
पर इसी समय एक दूसरा खेल भी चल रहा है
मुझे फिलहाल अपने इस खेल से मुक्त कर दो
इसके बावजूद कि उस खेल के सारे अंक, घटनाक्रम
सब निश्चित हो चुके हैं
और आखिरी पर्दा गिरने तक उसे कोई नहीं रोक सकता
मैं अकेला खड़ा हूं
शेष सब पाखंडियों द्वारा लूट ले जाया गया है
जीवन अंत तक जीना बच्चों का खेल नहीं है ।

—बोरिस पास्तरनाक

जयप्रकाश ने स्वराज्य की लड़ाई में अहिंसा का प्रयोग तो अवश्य ही किया, लेकिन फिर भी उनके दिमाग के किसी कोने में हिंसा थी और हिंसा का विचार भी छिपा हुआ था । स्वराज्य की प्राप्ति किसी प्रकार हुई, पर जिस पद्धति से हुई, उससे जो जे० पी० की विचार-पद्धति थी, उसकी बुनियाद थी, उसको चोट लगी ।

जे० पी० ने इस चोट को स्वीकार किया था, 'स्वराज्य के बाद भी चूंकि विचार के अपने-अपने रास्ते बन जाते हैं, आदतें और रूढ़ियां बन जाती हैं । इसलिए इन बड़े अनुभवों के बाद भी हमारी बुनियादी बातों में कुछ अधिक फर्क नहीं आया और स्वराज्य के बाद हमें ऐसा लगने लगा कि जो नया समाज बनाने का काम था, उसकी ओर से लोगों का ध्यान हटता जा रहा है और उसकी आशा घटती जा रही है । वह समाज उसी तरह सिद्धांतों के आधार पर बन सकेगा जिसका पाठ हमने स्वराज्य की लड़ाई में सीखा था, ऐसा लगता था परंतु अब लोग सोचने लगे थे कि इससे कुछ होने वाला नहीं है और अब एक ही रास्ता बाकी रह गया है और वह है हिंसा का, जिसे दुनिया के और देशों ने अपनाया था ।'

इसी बीच विनोबा ने भूदान यज्ञ का अनुष्ठान किया । इसके बारे में तब कोई भी बुद्धिवादी आश्वस्त नहीं हुआ ।

डा० लोहिया ने कहा : विनोबा तो राजगुरु है, यह परिवर्तन के पक्ष में क्यों होगा ।

जे० पी० ने भी कहा : 'पहले-पहल तो हमारे दिमाग ने भी इस बात को स्वीकार करने में अपने को मजबूर पाया कि गांव-गांव घूमकर दान मांग कर इस बड़ी आर्थिक समस्या का हल नहीं होगा ।'

उसके पीछे दरअस्ल एक गहरी मनोदशा थी ।

स्वराज्य के बाद हमारे दिल और दिमागों में जो यह अंधकार छा गया था, जो यह निराशा पैदा हो गई थी कि अहिंसा के रास्ते से समाज का रूप नहीं बदलने जा रहा है, क्योंकि अहिंसा के पुजारी सत्तारूढ़ थे और समाज को बदलने का कोई नक्शा, कोई कार्यक्रम उनके सामने नहीं था । तब महात्मा गांधी विहीन समाज में अहिंसा का अर्थ सिर्फ इतना समझा जाता था कि हम किसी को मारें पीटें नहीं । इससे अधिक कोई अर्थ अहिंसा के प्रति हमारे पास नहीं था । मतलब शोषण, दरिद्रता, विषमता का अंत कैसे हो, हमारे पास कोई जवाब नहीं था । इसीलिए देश में अंधकार छाया हुआ था और चारों ओर हिंसा के बादल घिरे हुए थे । इतने में ही वह प्रकाश सामने आया । जैसे-जैसे वह प्रकाश फैलता गया वैसे-वैसे बादल हटते गए ।'''मैं मानता हूं कि देश में जो एक सर्वांगीण क्रांति होने जा रही है, आर्थिक सामाजिक क्रांति, उसका उद्‌घोष भूदान यज्ञ है । भूदान यज्ञ नये समाज का शिलान्यास है, इसलिए हमारी जितनी ताकत है, वह सारी उसमें लगा देनी चाहिए । राजनीतिक पार्टी वालों का एक अहंकार होता है'''।'

एक ओर पूना के उस उपवास से पैदा हुआ वह आत्मप्रकाश, दूसरी ओर भूदान यज्ञ की यह नई प्रतीति जिस जयप्रकाश को मिली थी, उसको फरवरी तिरपन में प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू अपनी सरकार से सहकार के लिए बुला रहे हैं, पर शायद नेहरू को पता नहीं था ।

नेहरू राजनीतिज्ञ थे ।

जयप्रकाश उससे बड़ी यात्रा पर मुड़ गए थे । जे० पी० रंगून एशियन सोशलिस्ट कान्फ्रेंस से लौटकर दिल्ली में नेहरू से मिलते हैं । जे० पी० लिखते हैं : 'दिल्ली में जवाहरलाल जी से तीन दिनों तक कांग्रेस और प्रजा सोशलिस्ट पार्टी के परस्पर सहयोग के विषय पर चर्चा हुई । बाद में मैंने जवाहरलाल जी को एक पत्र में चौदह सूत्री कार्यक्रम लिख भेजा जिसको मैंने दोनों पार्टियों के परस्पर सहयोग का आधार बताया । लगभग तीन सप्ताह के बाद जवाहरलाल जी से मिलकर फिर आखिरी निर्णय करना था । उन दिनों कृपलानी जी हमारी पार्टी के अध्यक्ष थे । उन्होंने पूरी तरह से सहयोग के विचार का समर्थन किया । दिल्ली वापस जाने के पहले मैं काशी गया और वहां काफी विस्तार से नरेन्द्रदेव जी से उस विषय पर चर्चा की । वह जवाहरलाल जी के प्रस्ताव के विरुद्ध थे । उनका कहना था कि कांग्रेस के साथ मिलकर काम करना असंभव होगा । कांग्रेस, चाहे जवाहरलाल जी की निजी राय कुछ भी हो, समाजवाद से बहुत दूर है । उनका तीसरा कारण यह था कि शासन में घुसने के बाद अपने लोगों पर बुरा असर पड़ सकता है और उनकी दुर्बलताएं बढ़ सकती हैं । इन दलीलों में ताकत थी । फिर

भी मैं नरेन्द्रदेव जी से सहमत नहीं हुआ। मैंने उनसे कहा कि अपने लोगों पर हमें विश्वास करना चाहिए। कांग्रेस समाजवादी संस्था न होते हुए भी यदि हमारे चौदह सूत्री कार्यक्रम को, या उसमें के अधिकांश को, मान लेती है तो हमारे और उसके सहयोग से समाजवाद को कुछ आगे बढ़ने का मौका मिलेगा, पार्टी की शक्ति और प्रभाव बढ़ेगा, और यदि अनुभव से यह सिद्ध हुआ कि कांग्रेस ने हमारे कार्यक्रम को सिर्फ ऊपरी दिल से माना था और हम आगे प्रगति नहीं कर रहे हैं तो हम इस्तीफा देकर बाहर आ सकते हैं और जनता के सामने इस चीज को सफाई से पेश करके उसको प्रभावित कर सकते हैं। मेरा यह विचार आज तक बदला नहीं है और आज भी मैं मानता हूं कि यदि हमारी शर्तों पर सहयोग हो पाता तो समाजवाद के लिए अच्छा होता।'

उक्त संदर्भ में गया जाते हुए ट्रेन से 4 मार्च, 1953 को जवाहरलाल को लिखा गया जे० पी० का पत्र विशेष रूप से अनेक अर्थों में महत्त्वपूर्ण है :

'मैं अपने सहकर्मियों से परामर्श नहीं कर सकने के कारण कार्यक्रम का प्रारूप आपको नहीं भेज पाया था। अब इस पत्र के साथ वह प्रेषित है। प्रास्ताविक टिप्पणी के तौर पर मैं यहां कुछ कहना चाहूंगा।

'मैं आपसे लम्बे अर्से के बाद जब मिलता हूं तो मेरे ऊपर यह असर होता है कि हम लोगों के कार्य, कथन या चिंतन से आपका संपर्क नहीं है। पिछले कई अवसरों पर मैं जब आपसे मिला तो मैंने देखा कि प्रायः एक ही भाषा में कुछ बातें आप हमेशा दुहराते हैं। उदाहरण के लिए, राष्ट्रीयकरण के विषय में आपकी टिप्पणियों को लेता हूं। मुझे भय है कि आप हम लोगों को ऐसे अव्यावहारिक समाजवादी समझ बैठे हैं जो घिसे-पिटे सिद्धांत सूत्रों से चिपके हुए हों। लेकिन यदि आपने हमारे आंदोलन में चिंतन के विकास को और अच्छी तरह जानने की कोशिश की होती तो समाजवादी पुनर्निर्माण की अनुभवसिद्ध एवं परिवर्तनशील प्रक्रियाओं से हमें प्रभावित करने की आवश्यकता आप महसूस नहीं करते।

'मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि समाजवाद के प्रति हमारा दृष्टिकोण अव्यावहारिक, संकीर्ण या अनुदार नहीं है। परंतु मैं एक बात स्पष्ट कर देना आवश्यक समझता हूं। चाहे हमारा दृष्टिकोण कितना भी अनुभवमूलक और प्रायोगिक हो, समाजवाद के लक्ष्य और मूल्य हमारे सामने अपरिवर्तनीय रूप से निश्चित हैं। हम चाहें इसे किसी वाद की संज्ञा दें या न दें, इसमें रंचमात्र भी संदेह नहीं है कि हम सभी एक ऐसे नये समाज का निर्माण करना चाहते हैं जिसमें शोषण न हो, जिसमें आर्थिक एवं सामाजिक समानता हो, जिसमें सब के लिए स्वतंत्रता और सब का कल्याण हो। इसके अलावा, ये लक्ष्य हमारी दृष्टि से, और इसलिए किसी भी समाजवादी की दृष्टि से, सुदूर भविष्य में नहीं, बल्कि शीघ्रातिशीघ्र प्राप्त किए जाने चाहिए।

'आपने मुझे एक बार लिखा था, जब शायद आप कुछ उत्तेजित थे कि समाजवाद को आप जहां किसी दल विशेष का एकाधिकार नहीं मानते, वहां किसी भी स्थिति में आप स्वयं कोई 'औपचारिक' समाजवादी नहीं हैं। आपके कहने का अर्थ शायद यह था कि आप समाजवाद के किसी सिद्धांत विशेष के समर्थक नहीं हैं। लेकिन आपके कथन का यह अर्थ नहीं होगा कि आप समाजवाद

के लक्ष्यों और मूल्यों को स्वीकार नहीं करते हैं। वे मूल्य और लक्ष्य दिशा-संकेत करते हैं और एक त्वरा की भावना पैदा करते हैं जिसका अभाव आपकी नीतियों में रहा है, यह आप भी स्वीकार करेंगे। कहीं बहुत अधिक उलट फेर न हो जाए, इसलिए सावधानी के तौर पर बहुत कुछ कहा जा सकता है, लेकिन अंत में, अगर हमारे पास एक निश्चित राजनीतिक दर्शन है, तो हमें अपने लक्ष्यों की दिशा में कार्य करते हुए साहसपूर्वक आगे बढ़ना होगा। आरंभ में हमारी गति, कुछ नया कदम उठाते समय इस प्रक्रिया के मध्य या अंत की अपेक्षा, अधिक तेज और जोरदार भी होनी चाहिए। इसके अलावा, हमारी गति ऐसी भी होनी चाहिए कि आम लोग यह समझ सकें और महसूस कर सकें कि वे आगे बढ़ रहे हैं। हां, कभी-कभी सही दिशा में, लेकिन ऐसे स्तरों और बिंदुओं पर भी कदम उठाना पड़ सकता है, जो जनसाधारण की समझ के परे होंगे।

'मैं आपके सामने एक सैद्धांतिक विचार प्रस्तुत करना चाहूंगा। हम सब लोगों पर महात्मा गांधी का गहरा असर पड़ा है। मुझे यह कहने में कोई संकोच नहीं है कि इधर कुछ समय से मैं उनका पुनरन्वेषण कर रहा हूं, और उन्हें फिर से समझ रहा हूं। मैं मानता हूं कि वे आधुनिक युग के सबसे प्राणवंत चिंतकों में थे। मुझे विश्वास है कि आज और कल भी उनसे बहुत कुछ सीखा जा सकता है। मैं यह भी विश्वास करता हूं कि अगर वे जीवित रहते तो उनके विचारों में और भी विकास हुआ होता, जैसा कि उनमें निरंतर हो रहा था। और तब, जिन लक्ष्यों को हम सम्मिलित रूप से मानते हैं, उनकी प्राप्ति के लिए वे जिस तरीके का अनुसरण करते, उसका और भी स्पष्ट चित्र हमारे सामने होता। गांधी जी में जो गतिशीलता थी और अपने अंतिम मूल्यों की दिशा में अनवरत शोध करने की प्रवृत्ति थी, वह आज मैं विनोबा को छोड़ और किसी में नहीं पाता हूं, जिन्होंने देश की सब से बड़ी समस्या, भूमि-समस्या के हल का एक विलक्षण गांधीवादी तरीका निकाल लिया है। मैं विश्वासपूर्वक अनुभव करता हूं कि गांधीवादियों और समाजवादियों को, अपने-अपने अनर्थक प्रलाप छोड़कर, एक साथ काम करना चाहिए। मैंने यह सब केवल इस बात पर बल देने के लिए कहा है कि आपकी नीतियों में मुझे इन विचारों के प्रति कोई जागरूकता या उनका स्पष्ट बोध नहीं दिखाई देता। जब-तब भारत सरकार की नीतियों में गांधी के साथ रियायत की जाती है, लेकिन वह तो आखिर रियायत ही है।

'मैं एक तीसरा विचार भी आपके सामने रखना चाहूंगा। एशिया में चीन और भारत दो ऐसे देश हैं जिन पर समस्त एशिया और अफ्रीका की नजर लगी हुई है। यदि भारत कल्याणकारी राज्य (यह अभिव्यक्ति खास तौर से मैं पसंद नहीं करता हूं, गांधी और विनोबा का सर्वोदय इससे कहीं सुंदर अभिव्यक्ति है) की फीकी तस्वीर से कोई अच्छी चीज पेश नहीं कर पाता तो मुझे भय है कि चीन का आकर्षण अदम्य बनेगा और वह करोड़ों लोगों को प्रभावित कर इतिहास की धारा को विनाशकारी दिशा में मोड़ देगा।

मैं यह भी निवेदन करना चाहूंगा कि विदेश के लोगों से आपकी सरकार को जो तारीफ की पर्चियां मिली हैं, उनसे आप अत्यधिक प्रभावित मालूम होते हैं। मेरी नजर में उन पर्चियों का बहुत महत्त्व नहीं है। अक्सर वे विदेशी हमारे

सामान्य लक्ष्यों में विश्वास नहीं रखते। अक्सर वे यह देखने के लिए आते हैं कि किस प्रकार एक पिछड़ा हुआ राष्ट्र अपने काम-काज की व्यवस्था करना सीख रहा है, और जब वे हमारी संसद् को, केंद्रीय सचिवालय को, दामोदर घाटी निगम को देखते हैं और हमारी परिष्कृत अंग्रेजी सुनते हैं, तो बस, मुग्ध हो जाते हैं। लेकिन हमारी तो अपनी आकांक्षाएं हैं, हम उस बिंदु से शुरू करना चाहते हैं जहां पूर्व और पश्चिम पहुंचकर रुक गए हैं और उनसे अधिक उन्नत (भौतिक संपत्ति में नहीं) समाज का निर्माण करना चाहते हैं। हमारे मापदंड विदेशी आगंतुकों के मापदंड से भिन्न होने चाहिए, और अपनी सफलताओं का मूल्यांकन हमें अधिक कठोरता से करना चाहिए।'''

'''इसलिए हमारी सफलता बहुत कुछ इस बात पर निर्भर करेगी कि आपने हमारे सहयोग की जो मांग की है, उसके पीछे आपकी कल्पना क्या है? अगर इसका केवल यह अर्थ है कि हममें से कुछ लोग आपके मंत्रिमंडल में तथा कतिपय राज्यों के मंत्रिमंडलों में शामिल होकर आपकी सरकार को और आपके हाथों को, आपकी वर्तमान नीतियों के कार्यान्वयन के लिए मजबूत करेंगे, तो यह प्रयास करने योग्य नहीं है। परंतु यदि इसका अर्थ राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के लिए एक साहसपूर्ण संयुक्त प्रयास शुरू करना है तब फिर वह एक ऐतिहासिक कदम हो सकता है। आपके पास असीमित समय नहीं है, इसलिए अभी ही आपको कदम उठाना चाहिए।

' इसी दृष्टि से कार्यक्रम का यह प्रारूप तैयार किया गया है। यह कोई बहुत महत्त्वाकांक्षी कार्यक्रम नहीं है, और यदि हम सब एक सुदृढ़ प्रयत्न करें तो अगले चार सालों में इसे क्रियान्वित किया जा सकता है।

' '''अगर यही कल्पना आपकी भी नहीं है तो मैं सविनय निवेदन करूंगा कि सहयोग का पूरा विचार ही छोड़ दिया जाए। अभी ऐसा करने से कोई हानि नहीं होगी, और हमारे पक्ष में भी कोई गलतफहमी या कटुता पैदा नहीं होगी। चूंकि इस विषय में सार्वजनिक अटकलबाजी बहुत हुई है, इसलिए आप समुचित अवसर पर यह कह दे सकते हैं कि सहयोग के प्रश्न पर आपने कुछ वार्ता हम लोगों से चलाई, परंतु वार्ता के दौरान देश की समस्याओं के प्रति समान दृष्टि-कोण प्रकट नहीं हुआ, इसलिए वह समाप्त कर दी गई।'

पत्र रूप में प्रेषित जे० पी० के इस समाजवादी प्रस्ताव का कोई परिणाम नहीं निकला। नेहरू ने जयप्रकाश के उन चौदह सूत्री कार्यक्रमों के बारे में कहा कि उसके लिए अभी समय अनुकूल नहीं है।

बिना किसी शर्त के सरकार से सहयोग हो यह तो संभव था, परंतु जयप्रकाश उसके लिए कतई तैयार नहीं थे और बात वहीं खत्म हो गई।

पर वहीं से एक नई बात शुरू हुई। जे० पी० बताते हैं: 'यह बात तो खतम हो गई परंतु दुर्भाग्यवश उसकी प्रतिक्रियाएं पार्टी में बहुत खराब हुईं। जिसको अंग्रेजी में 'कैरेक्टर असेसिनेशन' (चरित्र-बध) कहते हैं उसका पूरा कैम्पेन (अभियान) ही शुरू हो गया, जिसका प्रमुख शिकार मैं स्वयं था।'

जे० पी० और नेहरू वार्ता ने आगे पूरे प्रजा सोशलिस्ट पार्टी में एक विवाद

खड़ा कर दिया। अशोक मेह
देश की पिछड़ी आर्थिक दशा
को देश प्रगति के लिए घातक
इसी पृष्ठभूमि में जून
जे० पी० लिखते हैं: '''
जिसमें विचारों का आदान-
पार्टी की कार्यकारिणी से
पर मैंने अपना इस्तीफा वा
हो गया और मैं धीरे-धीरे
के दिन भारतीय समाजवा
बढ़ाया। उसका दुखद प्रभ
नहीं लगता कि कभी उस
गया, परंतु आचार्य जी
का प्रयास करते रहे। इस
उसका घातक असर उनके
और महान् व्यक्ति के विक
जो चरित्रबल में उनको
का एक अत्यंत काला पृष्
और छः महीने बाद
सम्मेलन उनतीस से इक
जगह डॉ० लोहिया को
अगले वर्ष सन् चौ
पी० पी०) और सोशलि
बढ़े। डॉ० लोहिया के
भारतीय परंपरा का क
फैलने लगा। उधर जय
रहे। फिर भी सब कहीं
परस्पर विरोधी स्थिति
कुछ पत्र-व्यवहार से प्र

प्रिय जयप्रकाश,
दूसरे लोग तुमको
कोई नतीजा न निका
जाता है।
अपना स्वधर्म छो
मैंने सुना है कि तुमको
में थोड़ा बहुत अनुभ
तुमको जनरल कौंसि

खड़ा कर दिया। अशोक मेहता कांग्रेस और प्रजा सोशलिस्ट पार्टी के मेल को देश की पिछड़ी आर्थिक दशा की मजबूरी मानते थे। डॉ० लोहिया मेल की वार्ता को देश प्रगति के लिए घातक समझते थे।

इसी पृष्ठभूमि में जून तिरपन में बैतूल का विशेष सम्मेलन बुलाया गया। जे० पी० लिखते हैं : '···बैतूल में तो हवा ही कुछ ऐसी जहरीली हो गई थी जिसमें विचारों का आदान-प्रदान असंभव था।···इस वातावरण से क्षुब्ध हो मैंने पार्टी की कार्यकारिणी से वहां इस्तीफा घोषित किया। यद्यपि लोगों के आग्रह पर मैंने अपना इस्तीफा वापस ले लिया, पर मेरे लिए पार्टी में काम करना कठिन हो गया और मैं धीरे-धीरे पार्टी से अलग हो गया। मेरे विचार में बैतूल कान्फ्रेंस के दिन भारतीय समाजवाद के लिए बुरे दिन थे। उसने विघटन की प्रक्रिया को बढ़ाया। उसका दुखद प्रभाव आज भी उस आंदोलन पर बना हुआ है और ऐसा नहीं लगता कि कभी उससे उसका उद्धार होगा। मैं तो पार्टी से अलग हो ही गया, परंतु आचार्य जी उसमें कायम रहे और यथाशक्ति उसको आगे ले जाने का प्रयास करते रहे। इस प्रयास में जो मानसिक और हार्दिक क्लेश उन्हें हुआ उसका घातक असर उनके स्वास्थ्य पर पड़ा। उनके जैसे निष्कपट, उदारचरित और महान् व्यक्ति के विषय में जो बातें उन दिनों कही गई, और उन लोगों द्वारा जो चरित्रबल में उनको छू तक नहीं सकते थे, वह भारतीय समाजवादी आंदोलन का एक अत्यंत काला पृष्ठ है।'

और छः महीने बाद इसी विकासक्रम में प्रजा सोशलिस्ट पार्टी का राष्ट्रीय सम्मेलन उनतीस से इकतीस दिसंबर तक इलाहाबाद में हुआ। जे० पी० ने अपनी जगह डॉ० लोहिया को पार्टी का महामंत्री बनाया।

अगले वर्ष सन् चौवन में पार्टी के भीतर प्रजा पार्टी (पहले की के० एम० पी० पी०) और सोशलिस्टों के बीच आपसी मतभेद और संघर्ष बहुत तेजी से बढ़े। डॉ० लोहिया के अनुसार समाजवादियों या प्रजा समाजवादियों में, जो भारतीय परंपरा का कचड़ा है, अंदरूनी निष्क्रियता और व्यक्तिवाद का जहर अब फैलने लगा। उधर जयप्रकाश अपनी भीतरी और बाहरी यात्रा में चुपचाप चलते रहे। फिर भी सब कहीं बहुत गहरे परस्पर मानवीय मूल्यों में बंधे रहे। ये सारी परस्पर विरोधी स्थितियां उस समय जे० पी० और डॉ० लोहिया के बीच हुए कुछ पत्र-व्यवहार से प्रकट हैं :

कलकत्ता
30 मार्च, 1954

प्रिय जयप्रकाश,

दूसरे लोग तुमको पत्र लिखते होंगे। मैं नहीं लिखता लेकिन इससे तुमने कोई नतीजा न निकाला होगा। मैं पत्र तभी लिखता हूं जब कोई जरूरी संकट आ जाता है।

अपना स्वधर्म छोड़ने के कारण मुझे नई-नई बीमारियां लग रही हैं। वैसे तो मैंने सुना है कि तुमको भी कुछ बीमारियां पकड़ रही हैं। लेकिन तुम्हारे जीवन में थोड़ा बहुत अनुशासन है, और भी आ सकता है, मेरे लिए असंभव है। अब तुमको जनरल कौंसिल के समय पर मेरी जगह संभालनी चाहिए। अब मेरी

समझ में फिर से देश और पार्टी के हिलाने का समय आ रहा है। जैसा तुम हिला सकते हो वैसा और कोई नहीं हिला सकता। हां, हिलाने वाला खुद न हिले, कांग्रेस और कम्युनिस्टों के बीच, अटलांटिक और सोवियत कैम्पों के बीच हिलाने वाले को खुद नहीं हिलना चाहिए।

मुझसे यह काम नहीं हो सकता। अब की देवघर में भी पंडों के यहां मेरे वंश का खाता बंद हो गया है, मथुरा में पहले ही हो चुका है। मेरा रास्ता कुछ और है। कुछ-कुछ तुम्हारा भी वही हाल है। लेकिन तुम्हारे बीवी, भाई, भतीजे हैं। देश से तुम्हारा ममता का संबंध है। तुम्हीं देश के नेता हो सकते हो और समाजवाद को बढ़ा सकते हो। और जो सैकड़ों कारण हैं उनका जिक्र करना फिजूल है। मेरी अंतरात्मा कहती है कि तुम्हें अब पार्टी संभालनी चाहिए और मेरे लिए यही सबसे बड़ा कारण है। हो सकता है तुम्हारे लिए न हो। लेकिन मेरे साथ सहानुभूति करके कुछ ज्यादा सोचोगे तो तुम्हें भी इस कारण का महत्त्व मालूम होगा।

तुम्हारा जवाब ठीक न हुआ तो जनरल कौंसिल के समय शायद मुझे कुछ ऐसा करना पड़े जो सभी दृष्टि से ठीक न हो।

प्रभा को प्रणाम कहना,

तुम्हारा
राममनोहर

मैं सात तारीख को कानपुर और नौ को बंबई रहूंगा।

गया
2-4-54

प्रिय राममनोहर,

तुम्हारा पत्र पाकर बड़ी प्रसन्नता हुई। तुम्हारे स्वास्थ्य के बारे में बेनीपुरी जी से हाल मिला था। चिंता हुई थी और है। उसकी संभाल के लिए यत्न करना चाहिए। जितना करना चाहिए उतना नहीं करते हो। यह देश के लिए अच्छा नहीं है।

मेरा स्वास्थ्य इधर कुछ बिगड़ा अवश्य है। यों तो पुरानी बीमारियां थीं, लेकिन अब मधुमेह की शिकायत हो गई है। आशा करता हूं कि यह शीघ्र ही दूर हो जाएगी।

तुम्हारा प्रस्ताव पढ़ कर मुझे आश्चर्य हुआ। एक तो स्वधर्म की बात बेमानी कर रहे हो। यह कार्य तो उत्तम ढंग से चला रहे हो, जैसा कि केवल तुम ही कर सकते हो। दूसरे, मेरे जो इस समय विचार हैं उनको जानते हुए यह प्रस्ताव तुम्हें करना ही नहीं चाहिए। देश को हिला सकने की शक्ति मुझ में न कभी थी, न आज है। न उस प्रकार हिलाने का मेरे पास बहुत महत्त्व ही है। और मैं खुद जो हिल चुका हूं। दुख की बात तो यह है कि जो मुझे आज सब से ठीक लगता है, समाजवाद और देश के लिए वह तुम्हें हिलने जैसा लगता है। तुमसे पटना में कहा था कि एक शिक्षण-केंद्र खोलने का विचार है जिसमें विधायक कर्मियों का शिक्षण हो सके और जहां विधायक प्रयोग किए जा सकें। आगे का कुछ समय तो एकाग्रता से इसी कार्य में मुझे देना होगा। मेरा विचार है कि विधायक कर्मियों को किसी

भी प्रकार के चुनाव में भाग लेना चाहिए। तदनुकूल मुझे भी पार्टी का 'चवन्नी' का ही सदस्य बन के रहना होगा।

सर्वोदय सम्मेलन के बाद कुछ आवश्यक कार्यों का संपादन करके एक महीने के लिए सिंहगढ़ जाने का विचार है। जून में बिहार लौटूंगा।

आशा करता हूं स्वास्थ्य की देख-रेख करोगे।

प्रभा प्रणाम कहती है।

तुम्हारा सप्रेम
जयप्रकाश

बंबई
15-4-54

प्रिय जयप्रकाश,

तुम्हारा पत्र मिला। मैंने बहुत उम्मीद तो नहीं बांधी थी फिर भी कुछ निराशा तो हुई। अब भी थोड़ी बहुत आशा है।

विधायक काम में लगने को मैंने हिलना कभी नहीं समझा, इतना मैं साफ कह देना चाहता हूं। पार्टी के संगठन को संभालने में और विधायक काम करते रहने में मुझे कोई द्वंद्व नहीं मालूम पड़ता।

इधर कृपलानी जी के सामने भी कुछ प्रस्ताव आए हैं, वे तुमसे बात करेंगे ही, बनारस विश्वविद्यालय को लेकर।

मैं बार-बार इतना ही कहूंगा कि मेरे प्रस्ताव को यों ही न ठुकरा दो।

प्रभा को प्रणाम कहना।

तुम्हारा
राममनोहर

पवनी (मध्य प्रदेश)
28-4-54

प्रिय राममनोहर,

तुम्हारे दोनों पत्र मिले।

पहले, पहले के बारे में। 'हिलने' की जो बात पिछले पत्र में लिखी थी उससे रचनात्मक कार्य का मतलब नहीं था। कांग्रेस से सहयोग संबंधी मेरे जो विचार हैं, उनका मतलब था। मेरे तो अब भी वही विचार हैं जो जवाहरलाल जी के पत्र में व्यक्त किए थे, अथवा बैतूल में।

राजनीति से अलग होने की बात। प्रथम तो यह कि ऐसी बातों का फैसला बराबर व्यक्तिगत ही हो सकता है। मित्रों से सलाह-मशविरा होना चाहिए। तो कम से कम तुमको अपने मानस का परिचय पटना में दिया था। पिछले पत्र में भी 'हर प्रकार' के चुनाव से अलग रहने की बात लिखी थी। बोधगया का निश्चय उसी निश्चय का प्रकटीकरण था। अब केवल 'चार आने' का पार्टी सदस्य रहूंगा।

जीवन का यह अंतिम चुनाव दौरा काल समाप्त होगा। फिर बिहार लौटूंगा। वहां से इंदौर होता हुआ 10 मई, को बंबई पहुंचूंगा। 17 मई, तक सिंहगढ़ पहुंच

जाऊंगा। 9 जून तक वहां रहूंगा। 15 जून से दो सप्ताह की भूदान यात्रा है—केरल प्रदेश की। फिर बिहार।

आशा है स्वास्थ्य-सुधार का प्रयत्न कर रहे होगे।

तुम्हारा सप्रेम
जयप्रकाश

2

पर इस बीच जयप्रकाश जिस दूसरी दिशा में चले गए थे, वहां कीचड़, मिट्टी थी पर सारा आकाश निरभ्र था। वहां के रास्तों पर धूल और गर्द के बवंडर उड़ते थे, पर धूप में अजब प्रकाश था। वहां गांवों में पैदल चलना था पर हर गांव से आगे एक नया क्षितिज दिखाई दे जाता था।

जयप्रकाश का गया जिले से जैसे कोई विशेष संबंध है। कांग्रेस समाजवादी जमाने से ही यह जगह इनकी कर्मभूमि रही है। यहीं से जे० पी० की वह नई यात्रा शुरू होती है।

हिंसा और तंत्र से जमीन का बंटवारा दुनिया ने देखा था, लेकिन क्या करुणा और सहज सहानुभूति से उस खेत का बंटवारा हो सकता है, जो यहां के लोगों की सबसे बड़ी माया रही है। स्वभावतः समाजवादियों और साम्यवादियों के मन में यह प्रश्न था कि क्या मांगने से जमीन मिल सकती है?

अगस्त क्रांति के नायक जयप्रकाश गया जिले की जनता की विशाल सभाओं में जब यह भाषण देते : 'जब तक गांव में कोई मानसिक परिवर्तन नहीं होता, कोई सामाजिक परिवर्तन नहीं होता, कुछ नया नहीं होता, कोई दृष्टि नहीं होती, पारस्परिक संबंधों में कोई अंतर नहीं आता, तो जैसे गांव हैं, वहां जिस प्रकार की शक्तियां काम कर रही हैं, परंपरागत जातियां हैं, जातिभेद हैं, वर्गभेद हैं, वह सारा जो वहां का नक्शा है, उसमें पंचायती राज डाल दीजिए, सामूहिक विकास डाल दीजिए या रुपया डाल दीजिए। किसी सड़क के लिए, किसी उद्योग के लिए सब योजनाएं डाल दीजिए, जो कुछ उसमें से होकर निकलेगा, आप देखेंगे कि उसमें से न तो गांव का निर्माण हुआ, न गरीबों का भला हुआ। यह पूरा का पूरा नक्शा जैसा का तैसा रहे और उसमें पंचायती राज के नाम पर अधिकार दे दें, विकास-योजनाओं के नाम पर पैसा दे दें, तो दोनों मिलकर तो और भी अनर्थ वहां फैलाते जाएंगे। साधारण सी बात है, मुखिया जी के चुनाव में आपस में ही गोली चल गई। यह मैं नहीं कहता कि सब जगह गोली ही चलती है या सब जगह उतनी ही खराबी है, लेकिन उसका सुधार कैसे होगा, उसका रास्ता क्या होगा?' तब भी उन्हें पूर्ण विश्वास नहीं है कि लोग सचमुच भूदान देंगे। लेकिन जब जनता जे० पी० की झोली दानपत्रों से भरने लगी, तो वह अनुभव अपूर्व था। हर गांव में हर पड़ाव पर वही अनुभव।

फिर एक गांव में जयप्रकाश सर्वथा एक नई भाषा शैली में बोल पड़ते हैं : 'यह कर्ण की, हरिश्चंद्र की भूमि है, अपनी हड्डियों का दान देने वाले दधीचि की भूमि है। कोई देगा यहां भूदान, संत विनोबा को?'

ो सप्ताह की भूदान यात्रा है—

होंगे।

तुम्हारा सप्रेम
जयप्रकाश

ए थे, वहां कीचड़, मिट्टी थी
धूल और गर्द के बवंडर उड़ते
स चलना था पर हर गांव से

बंध है। कांग्रेस समाजवादी
हीं से जे० पी० की वह नई

ने देखा था, लेकिन क्या
हो सकता है, जो यहां के
ादियों और साम्यवादियों
ती है ?

ता की विशाल सभाओं
परिवर्तन नहीं होता,
कोई दृष्टि नहीं होती,
हैं, वहां जिस प्रकार
भेद हैं, वर्गभेद हैं,
दीजिए, सामूहिक
लिए, किसी उद्योग
गा, आप देखेंगे
। यह पूरा का
पर अधिकार दे
और भी अनर्थ
में आपस में ही
या सब जगह
क्या होगा ?'
जब जनता
। हर गांव

पड़ते हैं :
ीचि की

एक किसान खड़ा हो जाता है, हाथ जोड़कर बोलता है :

—साहब, मेरे पास छः बीघा जमीन है। सब लिख लीजिए।

जे० पी० घबरा गए। उसे समझाने लगे :

—अरे भाई, सब दे दोगे तो तुम क्या खाओगे ?

—क्या साहब ?

—विनोबा जी छठा हिस्सा मांगते हैं, तो आप एक बीघा दे दीजिए।

—नहीं, मैं सब जमीन देना चाहता हूं। भगवान ने मुझे हाथ दिए हैं, मजूरी करके खा लूंगा।

जयप्रकाश की आंखों से आंसूओं की धारा बहने लगती है : धन्य हैं आप। धन्य है यह देश। आप जैसे कर्ण, दधीचियों ने इस देश को बनाया है।

और फिर गांव सभा में दान देने वालों की होड़ शुरू हो जाती है।

मूक भारतीय जनता जे० पी० जैसे मार्क्सवादी को अहिंसक क्रांति की दीक्षा देती जाती है। जे० पी० अब अपने भाषणों में अहिंसा का वैज्ञानिक विवेचन करते हैं :

'दूसरी क्रांतियां इसीलिए असफल हुईं कि उनके कर्णधारों ने ऐसे साधनों का उपयोग किया, जो उनके साध्यों के अनुकूल नहीं थे। उदाहरण के लिए, यदि लक्ष्य, एक सत्ता विहीन समाज था, तो उसकी प्राप्ति के साधन स्वयं राज्य की प्रतिरोधी शक्तियां थीं, यदि लक्ष्य बंधुत्व था, तो भाइयों के आपसी संघर्ष को साधन बनाया गया या फिर यदि लक्ष्य जीवन का संचालन करने वाली स्वार्थ-परता से मुक्त होना था, तो समाज के कुछ वर्गों की स्वार्थपरता को सामाजिक क्रांति का संचालन करने वाली शक्ति की तरह इस्तेमाल किया गया। क्रांति की सर्वोदय-प्रणाली में साधन और साध्य एक हो जाते हैं। यदि नई समाज-व्यवस्था में संपत्ति पर समाज का स्वामित्व होने वाला है और संपत्ति का मालिक केवल एक ट्रस्टी रहने वाला है, तो अलग-अलग लोगों के अपने को अभी से ट्रस्टी बना लेने पर क्रांति शुरू हो जाएगी।'

इसे सुनकर अब सजल आंखों से प्रभावती किसी के कानों में धीरे से कहती हैं : 'काश यही भाषण ये बापू के रहते करते तो बापू को कितनी खुशी होती।'

भूदान गंगा वेगवान गति से आगे बढ़ती है। चांडिल के सर्वोदय सम्मेलन में विनोबा ने हिंसा शक्ति की विरोधी, दंडशक्ति से भिन्न स्वतंत्र लोकशक्ति का शास्त्रीय विवेचन किया। इसी सम्मेलन में जयप्रकाश ने भूदान यज्ञ की क्रांतिकारी संभावनाएं और उसके असली स्वरूप का जो चित्र खींचा उससे युवकों की आंखें चमक उठीं और छात्र समुदाय को जो स्वभावतः गांधीवादी पद्धति तथा गांधीवादी भाषा से स्फूर्ति नहीं महसूस करता था, जयप्रकाश के भाषण ने मुग्ध कर लिया और जब जयप्रकाश ने छात्रों को एक वर्ष के लिए स्कूल कॉलेज छोड़कर इस आर्थिक क्रांति के मैदान में कूद पड़ने का आह्वान किया तो कलकत्ता, इलाहाबाद तथा नागपुर विश्वविद्यालयों के दर्जनों छात्रों ने तत्काल इस महान् कार्य में जीवन-दान का संकल्प घोषित किया।

दूसरी ओर जयप्रकाश अभी पार्टी से जुड़े थे। सक्रिय सहयोग था उनका।

कभी पार्टी के काम, कभी भूदान के। यह क्रम चलता रहा। उधर पार्टी में वैचारिक और व्यावहारिक दोनों स्तरों पर मतभेद उभरते चले जा रहे थे।

भूदान-आंदोलन में जे० पी० समाजवाद का ही एक नया प्रकाश देख रहे थे और उसकी उष्णता अनुभव कर रहे थे। तभी आया अठारह से बीस अप्रैल तक का उन्नीस सौ चौवन का बोधगया का सर्वोदय-सम्मेलन। गया से सात मील की दूरी पर स्थित बुद्ध गया के रमणीक आम्रकुंज में फल्गु नदी के किनारे हजारों लोग सभा में आए थे। इसमें मुख्यतः भाग लेने आए थे : जयप्रकाश नारायण, कृपलानी, राधाकृष्णन, पी० सी० घोष, दादा धर्माधिकारी, काकासाहेब कालेलकर, आर्यनायकम, जानकीदेवी बजाज, श्रीमन्नारायण, अन्नासाहेब सहस्रबुधे, प्रोफेसर वंग आदि।

दूसरे दिन, उन्नीस अप्रैल को अधिवेशन में भाषण करते हुए जयप्रकाश नारायण ने कहा कि उन्होंने भूदान-यज्ञ की सफलता के लिए अपना जीवन अर्पित करने का निर्णय किया है और देश के युवकों तथा छात्रों को भी ऐसा ही करना चाहिए।

उन्होंने कहा कि भूदान-आंदोलन से केवल भूमि-समस्या का ही समाधान नहीं होगा बल्कि अनेक सामाजिक तथा व्यक्तिगत समस्याओं का भी समाधान हो जाएगा। भूदान से जीवन में सुधार और नैतिक पुनरुत्थान होगा। इससे आधार-भूत समस्या का समाधान हो जाएगा।

जयप्रकाश नारायण ने कहा कि उनके तथा कांग्रेस के बीच एक दीवार खड़ी हो गई है। यह बहुत ही दुखद बात है कि मतभेद की दीवार तोड़ने में अभी तक मुझे सफलता नहीं मिली है।

उन्होंने कहा कि बिहार अपना कोटा नहीं पूरा कर सका है, क्योंकि कार्य-कर्त्ताओं ने लगन के साथ काम नहीं किया है। बिहार के लिए बत्तीस लाख एकड़ भूमि निर्धारित की गई थी। बिहार प्रदेश कांग्रेस समिति ने कोटा पूरा करने की प्रतिज्ञा की थी और प्रजा समाजवादी दल ने उसका समर्थन किया था। इन दलों में कार्यकर्त्ताओं की कमी न रहने पर भी कोटा नहीं पूरा हो सका। यदि दोनों दलों के कार्यकर्त्ताओं ने मिल जुलकर काम किया होता तो कोटा पूरा करने के अतिरिक्त जमीन मिल सकती थी। इस प्रश्न पर प्रत्येक कार्यकर्त्ता को गंभीरतापूर्वक विचार करना चाहिए। यदि वे आत्मविश्लेषण करें तो उन्हें अपनी भूल मालूम हो जाएगी। उस सर्वोदय सम्मेलन में जयप्रकाश नारायण ने घोषणा की : 'भूदान-आंदोलन को सफल बनाने के लिए मैं अपना जीवन अर्पित कर रहा हूं। मैं प्रजा सोशलिस्ट पार्टी की सदस्यता से इस्तीफा नहीं देने जा रहा हूं, सिर्फ साधारण सदस्य बना रहूंगा।'

और उसी रात विनोबा का एक पत्र जे० पी० के हाथ में दिया जाता है :

'श्री जयप्रकाश जी,

भूदान यज्ञमूलक ग्रामोद्योग प्रधान, अहिंसक क्रांति के लिए मेरा जीवन-समर्पण।

—विनोबा

बिल्कुल सुबह प्रभावती विनोबा को प्रणाम करने जाती हैं। प्रभा की आंखें

भरी हुई हैं। उनमें तृप्ति और आनंद के आंसू हैं। वह बोलीं : ईश्वर ने यह दिन दिखाया, इसलिए उसका जितना अनुग्रह मानूं उतना कम ही है। लेकिन बाबा···।'

—बोलो, रुक क्यों गई ?

—यह जीवन परिवर्तन बापू के सामने हुआ होता···।

आगे कंठ अवरुद्ध रह गया। आंसू झरने लगे।

बोधगया सर्वोदय की विशेषता यह थी कि वहां जे० पी० के जीवनदान के रूप में एक नये आंदोलन का श्रीगणेश हुआ। जे० पी० के जीवन की वह एक बड़ी घटना थी और उससे भारत के राजनीतिक क्षेत्रों में बड़ी-बड़ी चर्चाएं शुरू हुईं। भारत के प्रायः सभी पत्र-पत्रिकाओं ने तरह-तरह के लेख और टिप्पणियां प्रकाशित कीं।

जे० पी० ने उन चर्चाओं और टिप्पणियों के प्रकाश में अंग्रेजी 'जनता' में एक लेख लिखकर बताया : 'सर्वप्रथम, जीवन-दान किसी आदर्श के प्रति जीवन-समर्पण से भिन्न नहीं है। परंतु यह एक विशेष आदर्श के प्रति समर्पण है। यह केवल भूदान के प्रति समर्पण नहीं है, जैसा कि अक्सर कहा जाता रहा है, बल्कि उन सब आदर्शों के प्रति समर्पण है जिनका समर्थन भूदान करता है। बोधगया में जो लोग इकट्ठे हुए थे, प्रायः वे सभी एक या दूसरे अर्थ में जीवन-दानी ही थे, यानी वे पहले से ही राजनीति, खादी, बुनियादी तालीम, हरिजनोद्धार, धर्म या और किसी आदर्श के प्रति अपना जीवन समर्पित कर चुके थे। जब उन्होंने मेरे आह्वान के उत्तर में अपने जीवन-दान की घोषणा की, तो इससे यह नहीं प्रकट होता था कि वे पहले से जो कुछ कर रहे थे, वही करने का संकल्प फिर से दुहरा रहे थे, और इस अर्थ में उनका यह एक सारहीन या व्यर्थ संकेत था। इसके विपरीत, उसका अर्थ यह था कि उन्हें भूदान-आंदोलन की संपूर्ण कल्पना का ऐसा स्पष्ट दर्शन हुआ कि उससे प्रेरित होकर उन्होंने राजनीति सहित हर दूसरे कार्य को छोड़कर इस आंदोलन के लिए जीवन समर्पित किया।···

3

बोध गया के सर्वोदय सम्मेलन से प्रवाहित हुई जीवनदान-धारा में सबसे अधिक जल आया बिहार भूमि से। अहिंसक क्रांति के लिए अपना जीवन-समर्पण करने वालों में ग्रामीण किसानों से लेकर छात्र, अध्यापक, रचनात्मक कार्यकर्ता, बुद्धिजीवी आदि समाज के प्रायः सभी वर्गों के हर उम्र के लोग थे, जिनमें नौजवानों की संख्या बहुत अधिक थी।

इधर बोधगया में धर्म-समन्वय के उद्देश्य को लेकर विनोबा द्वारा 'समन्वयाश्रम' की स्थापना हुई तो उधर जयप्रकाश ने गया जिले के जंगल पहाड़ों वाले एक अत्यंत पिछड़े गांव—सोखोदेवरा में सर्वोदय आश्रम की स्थापना की।

जे० पी० बताते हैं, उस अंचल में और विशेष कर उसी सोखोदेवरा गांव में आजादी की लड़ाई के दिनों में किसान-आंदोलन हुआ था।

नदी नाले पार करते आगे जंगल के रास्ते से ही सोखोदेवरा पहुंचा जा सकता है। बरसात के दिनों में तो इसका शेष दुनिया से जैसे रिश्ता ही टूट जाता है। इसी जगह जे० पी० की प्रेरणा से धीरे-धीरे सोखोदेवरा आश्रम अपना स्वरूप पाने लगा। देश भर से आए हुए शिक्षित नौजवानों का दल वहां कार्यरत हुआ। साथ ही वहां समाजवादी पार्टी और रचनात्मक संस्थाओं के लोगों की टोलियां भी पहुंचीं।

सोखोदेवरा आश्रम के निर्माण में जे० पी० के साथ प्रभावती का बहुत बड़ा हाथ है। प्रभावती की अभिन्न और सर्वोदय की प्रमुख महिला निर्मला देशपांडे बताती हैं कि जहां दिन में पक्षियों का मधुर कलरव और रात में जंगली जानवरों का भय, ऐसे स्थान में कुछ झोपड़ियां बनाई गईं। एक झोपड़ी में जंगल में मंगल बनाकर, जे० पी० के लिए कुछ रहने लायक स्थान बनाकर प्रभावती जो अब सब की दीदी बन चुकी थीं, आश्रम को सुचारु रूप देने में जुटी रहती थीं। कभी चौके में चूल्हा फूंकती हुईं, बीमार की सेवा करती हुईं, नियमित प्रार्थना और चरखे की तालीम अपने जीवन से और प्रेम से डांटकर भी, देती हुईं, श्रम-यज्ञ में शामिल होती हुईं, अनुभवहीन जवानों के आपस के झगड़ों को मिटाती हुईं, पति-पत्नी के बीच सुलह कराती हुईं, बाहर से आने वाले अतिथियों का उस अभावग्रस्त इलाके में भी समुचित स्वागत करती हुईं, साथ-साथ जे० पी० का खाना बनाना, खिलाना, कपड़े धोना—यह सब चलता ही था। जे० पी० मधुमेह से पीड़ित थे, इसलिए रोज उनको सूई लगाने का काम भी दीदी किया करती थीं। अव्यवस्था आलस, अनियमितता को वे जरा भी बरदाश्त नहीं कर पाती थीं। आश्रम-जीवन उनकी रग-रग में समाया था। जहां किसी की गलती पर वे उसे जोर से डांट देतीं, वहां कुछ देर बाद ठीक काम करने पर उसकी पीठ भी थपथपातीं। कार्यकर्ताओं के लिए वे मां बनी थीं, जिसके डांटने-पीटने पर भी बच्चा उसी के आंचल में मुंह छिपाकर रोता है। जे० पी० बड़े नेता थे, जिनके पास पहुंचने में दिल की बात करने में कार्यकर्त्ता संकोच महसूस करते, इसलिए हर कोई दीदी के पास जाकर अपने दिल की बात सुनाता, आपस के राग द्वेष, मनमुटाव आदि सब दीदी के पास पहुंचते। कई बार रात को जे० पी० को सुलाकर, दीदी कार्यकर्ताओं का समाधान करने में घंटों बातें करती बैठतीं, लेकिन दूसरे दिन भोर की प्रार्थना में समय पर पहुंचतीं। आराम उनके लिए हराम था, थकना उन्होंने जाना नहीं था।

धीरे-धीरे आश्रम आकार धारण कर रहा था। जे० पी० का भूदान के लिए देश भर का दौरा चलता ही था, लेकिन अब उनका हैड क्वार्टर आश्रम बना था, जहां रेल, मोटर, बैलगाड़ी और अंत में हाथी की सवारी करके वे पहुंचते थे। उन दिनों जे० पी० आश्रम की सुबह शामवाली प्रार्थना में दीदी की बगल में बैठे हुए, तो कभी वर्षा में खड़े-खड़े प्रार्थना करते हुए, श्रम-यज्ञ में कुदाली चलाते हुए, सूत्र-यज्ञ में चरखा चलाते हुए, कार्यकर्ताओं का वर्ग लेकर, साम्यवाद से सर्वोदय कैसे अधिक वैज्ञानिक है यह बताते हुए, विदेशी अतिथियों को भारतीय क्रांति का अपना ढंग, भारत की संस्कृति, आध्यात्मिक मूल्यों की आवश्यकता समझाते हुए दीखते।

...के रास्ते से ही सोखोदेवरा पहुंचा जा
...का शेष दुनिया से जैसे रिश्ता ही टूट जाता
...से धीरे-धीरे सोखोदेवरा आश्रम अपना
... शिक्षित नौजवानों का दल वहां कार्यरत
...और रचनात्मक संस्थाओं के लोगों की

...पी० के साथ प्रभावती का बहुत बड़ा
... की प्रमुख महिला निर्मला देशपांडे
...कलरव और रात में जंगली जानवरों
...ई। एक झोपड़ी में जंगल में मंगल
...स्थान बनाकर प्रभावती जो अब
...म देने में जुटी रहती थीं। कभी
...ती हुई, नियमित प्रार्थना और
...कर भी, देती हुई, श्रम-यज्ञ में
...झगड़ों को मिटाती हुईं, पति-
...अतिथियों का उस अभावग्रस्त
...जे० पी० का खाना बनाना,
...पी० मधुमेह से पीड़ित थे,
...ा करती थीं। अव्यवस्था
...पाती थीं। आश्रम-जीवन
...र वे उसे जोर से डांट
...भी थपथपातीं। कार्य-
...बच्चा उसी के आंचल
... पहुंचने में दिल की
... कोई दीदी के पास
...व आदि सब दीदी
...ी कार्यकताओं का
... भोर की प्रार्थना
... उन्होंने जाना

...भूदान के लिए
...श्रम बना था,
... पहुंचते थे।
...जंगल में बैठे
...जाते हुए,
...से सर्वोदय
...क्रांति का
...ाते हुए

लेकिन इस बीच पार्टी की ओर से जे० पी० दिल्ली, नागपुर आदि जहां भी बुलाये गए वहां गए। सलाह मांगी गई तो सलाह दी। पर चौवन के बाइस अक्तूबर को पटना में अंजुमन इस्लामिया हाल में बिहार पार्टी के सदस्यों की रैली में जो जयप्रकाश बोले, वह उस समय के जे० पी० के चरित्र की मार्मिक झांकी है। उन्होंने कहा कि जहां पार्टी होती है, वहां मतभेद होते हैं। जहां मतभेद न हो वहां जीवन का अभाव भी समझा जा सकता है। किंतु विचारों में जितने मतभेद हों, एक दूसरे पर विश्वास तो होना चाहिए। यदि एक दूसरे की नीयत पर शक रखें तो मतभेद नहीं मिट सकता।

यहीं जे० पी० ने पार्टी से अलग हटने की प्रक्रिया में महत्त्वपूर्ण बात कही : 'बोधगया सर्वोदय के लिए मैंने अपना जीवन-दान दिया। उस समय और पीछे एक लेख में भी यह मैंने साफ किया कि सर्वोदय के लिए काम करते हुए भी पार्टी का सदस्य रहूंगा और कमेटी में या जहां भी मुझसे सलाह मांगी जाएगी मैं पेश कर दूंगा। क्रियाशील सदस्य तो रहूंगा नहीं, इसलिए सलाह भर दूंगा, लोग चाहे जो फैसला करें। इसीलिए मैं बिहार की कार्यकारिणी में शामिल हुआ और दिल्ली की कार्यकारिणी में भी खास बुलाहट आने पर मैं गया था।

लेकिन अब एक और फैसला कर लिया है कि अब से मैं कमेटियों या आपकी दूसरी बैठकों में सलाह देने के लिए भी शिरकत नहीं करूंगा। इस फैसले से लाभ हो या हानि। मैंने ऐसा फैसला क्यों किया, इस पर मुझे कुछ नहीं कहना है। समझिए, सहज कि यह फैसला हो गया। तराजू के बराबर के पलड़े पर एक तिनका भी पड़ने से फैसला हो जाता है। मेरे इस फैसले पर बहस की कोई गुंजाइश नहीं है। यदि मेरे काम से आप समझें कि पार्टी को हानि हो रही है तो तो मेरा नाम भी पार्टी की सदस्यता से आप काट देंगे। किंतु यह काम आपको ही करना होगा, मैं कहने नहीं जाऊंगा। क्योंकि मैं जो कुछ कर रहा हूं, उसे मैं समाजवाद का ही काम समझता हूं, समाजवादी आंदोलन का ही एक अंग मानता हू।'

तीस जनवरी सन् पचपन को सोखोदेवरा आश्रम में जे० पी० ने प्रभा के साथ उपवास किया। चरखा चलाया और जीवन में पहली बार दोनों ने साथ बैठकर प्रार्थना की।

उसी जनवरी के ही अंत में एक प्रातःकाल विनोबा जी अपनी बिहार-यात्रा पूरी कर बिहार से विदा लेकर बंगाल जा रहे थे। तब बिहार वालों की तरफ से जे० पी० उस विदाई समारोह में बोलने को उठे। बड़ी कठिनाई से जे० पी० ने अपने भरे कंठ को खोला। रुंधे स्वर में बोले : 'विदाई में बोलने का काम किसी मजबूत दिलवाले को देना चाहिए था।···मैं प्रतिज्ञा करता हूं कि बाबा का काम जारी रखूंगा।'

इसके उत्तर में विनोबा ने कहा था : 'मैं तो साढ़े तीन ही वर्ष चला और मेरे प्रभु रामचंद्र चौदह वर्ष चले। बिहार की मेरी यात्रा आनंद यात्रा थी। पैर में कांटे चुभे तो भी वे सुख देते थे। मैं आप सब में जनक, बुद्धदेव महावीर देखता हूं।'

एक ओर सर्वोदयी जयप्रकाश दूसरी ओर पार्टी के जे० पी०; बहुत व्यस्त जीवन था। अब दुगुनी यात्राएं करनी पड़ती थीं। इधर मधुमेह की बीमारी। उनकी नाक के अग्र भाग पर तब से उभरी हुई छाई उसी का चिह्न है। सुई लगाने का काम प्रभावती करती रहीं। जे० पी० अब शाकाहारी हो जाते हैं। इस समय प्रभावती के नाम डॉ० राजेंद्रप्रसाद का भोजपुरी बोली में लिखा व्यक्तिगत पत्र मार्मिक है :

राष्ट्रपति भवन, नई दिल्ली,
3 दिसंबर, 1954

चि० प्रभावती,

आशीर्वाद। तोहार खत अभी-अभी मिलल। खत पाके खुशी भईल। हमार स्वास्थ्य ठीक बाटे। मगर जयप्रकाश बाबू के स्वास्थ्य के खबर से कुछ चिंता भईल। दौरा के कारण अगर परहेज में दिक्कत पड़ेला त कुछ दिन एक जगह रहके ठीक से दवा और परहेज करेके चाहीं। जब शरीर स्वस्थ रहेला त आदमी बहुत काम कर सकेला। एह वास्ते ई जरूरी बा कि उ अपना स्वास्थ्य पर पहिले ध्यान देंय।

जयप्रकाश बाबू के हमार आशीर्वाद कह दिह।

तोहार
राजेंद्रप्रसाद

पर अब नित्य प्रवास का जीवन। इतने सारे काम। और उसके ऊपर जे० पी० के आभिजात्य चरित्र के गुण दोष।

जो कुछ भी हो, जैसे भी हो, विशेष चाय के प्यालों से लेकर साफ-सुथरे वस्त्र, विशेष भोजन और रहन-सहन तक जे० पी० की वह विशिष्टता अजब है। हर तरह के सामानों के अलावा कौन सी किताब और किस फाइल की कब मांग हो जाए, इसे तब अकेली प्रभावती ही जानती थीं। उन्हें यह भी पता था कि रास्ते के सफर में जे० पी० सहसा किसी भी चीज की फर्माइश कर सकते हैं। इसीलिए उन दिनों प्रभावती को जे० पी० के लिए तरह-तरह के तमाम सामान लेकर चलने पड़ते थे। एक मित्र ने व्यंग्य से कहा : 'जे० पी० के स्वागत के लिए स्टेशन गया था। प्रभावती जी सामान गिन रही थीं। छोटी-बड़ी चीजें मिलाकर संख्या हुई सत्तावन।' ट्रेन में चढ़ने वाले सामान देखकर कभी-कभी जे० पी० झुंझलाते : 'तुम बहुत ज्यादा सामान साथ लेती हो।'

गया जिले की पदयात्रा का एक प्रसंग। निर्मला देशपांडे गवाह हैं : बनारस से मैं उनसे मिलने गई तो जून की धूप में गांव के एक आधे गिरे हुए स्कूल की टूटी कुर्सी पर बैठकर जे० पी० कुछ पढ़ रहे थे। मेरी आंखें दीदी को ढूंढ़ रही थीं। जे० पी० ने कुछ रोष के साथ कहा : 'निर्मला, आज हमारा प्रभावती से झगड़ा हुआ है। इसलिए वह साथ नहीं आई।' मैं खामोश रही, डेढ़ बज चुका था, खाना अभी तक नहीं आया था। जे० पी० ने कुछ गुस्सा होकर पूछा : 'कब आएगा खाना?' कार्यकर्ताओं ने बिहारी लहजे में कहा : 'तुरंत आ रहा है।' जे० पी० और बिगड़े : 'चार घंटे से यही सुन रहा हूं कि तुरंत आ रहा है।' ···

कार्यकर्ता दौड़धूप करने लगे। शायद दो ढाई बजे होंगे, जब पीतल की, बगैर कलई वाली गंदी थाली सामने आई। चावल का पहाड़, दाल का तालाब और पहाड़ के ऊपर दो-चार आलूवाले छोटे से मंदिर जे० पी० और बिगड़ पड़े।

फिर दोपहर की चाय का समय हुआ। देर-सबेर सही, लेकिन चाय जब पहुंची तो टूटे कप में भरपूर चीनी वाली तेज चाय जे० पी० के गले के नीचे उतरी ही नहीं। एक घूंट पीकर उन्होंने कप रख दिया और झुंझला कर किसी साथी से कहा : 'पत्रों की वह फाइल लाओ।' जवाब मिला कि फाइल तो उस बक्से में है, जो जे० पी० के कहने पर गया में छोड़ा गया था।

आखिर शाम होते-होते जे० पी० ने दीदी के पास खबर भिजवाई : 'कुल सामान लेकर चली आओ।' घंटे भर में दीदी जीप लेकर पहुंचीं। सामानको ठीक से जमाती हुई आवेश के साथ बोल रही थीं : 'देखिए निर्मला बहन, इसी सामान के लिए हमारा झगड़ा हुआ था। जे० पी० ने गुस्से में कहा कि तुम बहुत सामान साथ लेती हो, कुछ कम करो। यह सब इन्हीं के लिए तो है। मैं तो एक झोला लेकर घूम सकती हूं। बापू के साथ इस तरह घूमने का अभ्यास है मेरा। लेकिन इन्हीं को चाहिए, तो फिर सामान बढ़ जाते हैं। अब देखिए, क्या यह 'टी सैट' मेरे लिए है? मैं तो चाय पीती भी नहीं। क्या यह थाली मेरे लिए है? मैं तो किसी भी थाली में खा लूंगी। लेकिन इनको सब चीजें ढंग की चाहिएं।' जे०पी० क्या बोलते? अपनी भूल को स्वीकार कर चुपचाप सुन रहे थे।

इसी बीच बारह और तेरह अगस्त उन्नीस सौ पचपन को पटना के छात्रों पर जो भीषण पुलिस गोली-कांड हुआ, उससे जे० पी० के हृदय में कांग्रेस की निरंकुश सत्ता के प्रति गहरी चोट लगी। उन्होंने प्रधानमंत्री जवाहरलाल को पटना गोली-कांड के खिलाफ पटना के 'इंडियन नेशनल' में दो सितंबर को इतना क्रोधभरा आक्रामक पर मार्मिक बयान दिया कि उससे प्रकट हो गया कि जवाहरलाल नेहरू के प्रति जे० पी० के सारे राजनीतिक संबंध टूट गए।

पुलिस गोली-कांड के बाद नेहरू तुरंत पटना आए थे और गांधी मैदान में आम सभा में राजशाही गुस्से से बोलते हुए कहा था कि उन्हें कोई परवाह नहीं, अगर दस हजार, लाख आदमी मार दिए जाएं, पर राष्ट्रीय झंडे का अपमान वह हर्गिज नहीं सह सकते।

जे० पी० ने पूर्ण निर्भय होकर अपने बयान में बिहार पुलिस की हिंसा, सरकार की निरंकुशता और नेहरू के तानाशाही दृष्टिकोण और झूठे बयान के प्रति तीव्र विरोध प्रकट किया।

जे० पी० के इस चरित्र से बिहार युवा समाज, विशेष कर छात्र वर्ग उनसे आकृष्ट होकर करीब आने लगा।

जे० पी० के आहत मन का एक उदाहरण इसी बीच अट्ठाईस जून सन् पचपन को राष्ट्रपति राजेंद्रप्रसाद को लिखा गया उनका व्यक्तिगत पत्र है जिसमें जे० पी० ने डॉ० प्रसाद से राष्ट्रपति का पद त्याग करने को लिखा :

सर्वोदय आश्रम, सोखोदेवरा
जिला गया, बिहार
28-6-55

पूज्य बाबू जी,

सादर प्रणाम।

जब से बंबई में आपका पत्र मिला, जवाब देने की सोचता रहा, सोचते-सोचते इतने दिन गुजर गए, इस असमंजस में भी रहा कि इस विषय में फिर कुछ लिखना उचित होगा या नहीं। अब यही निश्चय किया कि दो शब्द लिख दूं।

उस विषय में आपसे मिलने के बाद जितना ही सोचता रहा, उतना ही यह मत दृढ़ होता गया कि देश के लिए, खास कर अहिंसा, धर्म और समाज-रचना के लिए, आपका अपने पद से हट जाना वांछनीय है। जवाहरलाल जी इस विचार को समझ नहीं सकते ऐसा तो मुझे नहीं लगता। बुद्धिमान् व्यक्ति हैं। बापू जी का उन पर भी प्रभाव पड़ा है, लेकिन अगर उनके प्रति अन्याय न कर रहा हूं तो मुझे ऐसा लगता है कि सरकार की शक्ति, यानि अपनी शक्ति के अलावा दूसरी किसी शक्ति को देश में बढ़ते नहीं देखना चाहते। आप जब तक राष्ट्रपति हैं, उनकी ही आवाज देश में सब से बुलंद है। आपके अलग हो जाने पर ऐसा न होगा।

आप अपने विचार मुक्त रूप से जनता के सामने रख सकेंगे और जनता उसे ध्यान से सुनेगी। सरकार वालों को यह पसंद न होगा, वह तो बापू की आवाज भी नापसंद करने लगे थे। लेकिन जनता के लिए, देश के लिए, दुनिया के लिए बापू की आवाज कितने महत्त्व की थी, यह इतिहास बता रहा है। आज एक मात्र स्वतंत्र आवाज निष्पक्ष, निःस्पृह-विनोबा जी की उठ रही है, लेकिन वह बहुत कुछ जंगलों और पहाड़ों में लुप्त हो जाती है। अंग्रेजी अखबार उनकी बातें समझ भी नहीं पाते, छापना तो दूर रहा। आपके साथ ऐसा नहीं होगा। इससे सरकार वालों को खतरा महसूस होता है। यह उनकी अदूरदर्शिता है, लेकिन सत्य है।

जवाहरलाल जी के सामने और भी दिक्कतें हो सकती हैं, लेकिन पक्ष और विपक्ष को तौलने पर पक्ष कहीं वजनी साबित होता है। इसमें कोई संदेह नहीं।

सार्वजनिक प्रश्नों को व्यक्तिगत दृष्टि से देखना उचित नहीं होता, लेकिन यदि उस दृष्टि से इस प्रश्न पर विचार किया जाए तो इसमें कोई संदेह ही नहीं कि आपके व्यक्तिगत यश के लिए आपका पद से अलग होना अत्यंत लाभप्रद होगा। स्वतंत्र भारत का प्रथम राष्ट्रपति होना किसी के लिए भी गौरव की बात थी और उस पद पर बैठने के योग्य आपको छोड़कर दूसरा कोई था नहीं, लेकिन अब उस पद पर कायम रहने में कम से कम आपका कोई गौरव नहीं हो सकता। वहां से हट कर जनता के बीच जाकर उनकी सेवा में लग जाना ही आपके लिए गौरव की बात होगी। अंत में मुझे लगता है कि बापू आप पर एक ऋण छोड़ गए हैं, जिसको चुकाने के लिए भी आपको पद छोड़कर जनता के बीच आ जाना चाहिए। धृष्टता के लिए क्षमा करेंगे।

सप्रेम
जयप्रकाश

डॉ० राजेंद्रप्रसाद की ओर से जे० पी० के इस पत्र का उत्तर था :

राष्ट्रपति भवन,
नई दिल्ली,
18 मई, 1955

प्रिय जयप्रकाश जी,

प्रभावती के पत्र से आपके समाचार जानकर खुशी हुई, यहां के अन्य समाचार तो उसके पत्र से आपको ज्ञात हो ही जाएंगे।

जवाहरलाल जी से मेरी बातें हुईं उन्होंने मेरे विचार को पसंद नहीं किया और मुझसे आग्रह किया कि मैं वैसा न करूं। अब आगे और सोचूंगा कि क्या करना चाहिए।

आपका
राजेंद्रप्रसाद

श्री जयप्रकाश नारायण,
बंबई।

दूसरे आम चुनाव के पूर्व जयप्रकाश ने निर्णय लिया कि वह पक्षगत निष्क्रिय सदस्यता का भी त्याग कर देंगे। किंतु उन दिनों आचार्य नरेन्द्रदेव अस्वस्थ थे। जयप्रकाश उनसे विचार-विमर्श नहीं कर सके। उन्नीस फरवरी सन् छप्पन को नरेन्द्रदेव जी का इरोड में स्वर्गवास हुआ। उनकी मृत्यु से जे० पी० को अपार दुःख हुआ।

सन् सत्तावन के दूसरे आम चुनाव के पहले सन् पचपन में ही समाजवादी आंदोलन में फूट पड़ गई। तभी प्रजा सोशलिस्ट पार्टी के दो टुकड़े हो गए। डॉ० लोहिया के नेतृत्व में फिर सोशलिस्ट पार्टी के नाम से एक स्वतंत्र समाजवादी पार्टी बनी।

इस बीच, विशेष कर चुनाव से पहले जहां सोशलिस्ट पार्टी और प्रजा सोशलिस्ट पार्टी चुनाव में एक-दूसरे के विरोध में लड़ने जा रही थीं, जे० पी० की स्थिति उस करुण बुजुर्ग की तरह थी जिसके संयुक्त परिवार में भाई-भाई लड़ रहे हों और घर का वह बुजुर्ग विवश होकर चुपचाप आंसू पी रहा हो।

अब पार्टी और राजनीति से अलग हो जाने की पूरी स्थिति आ गई थी। पर प्रसोपा के साथियों ने चुनाव तक त्याग-पत्र न देने का आग्रह किया। जे० पी० मान गए। पर यह सिर्फ कहने की बात थी। जे० पी० ने वस्तुतः पार्टी और राजनीति उसी दिन छोड़ दिया, जिस दिन उन्होंने सर्वोदय को जीवन-दान दिया। जिस क्षण उनके भीतर राजनीति के स्थान पर लोकनीति का प्रकाश फूटा। पर जिन कारणों से जे० पी० ने ऐसा किया वे भी कम न थे। उन्हें जे० पी० ने गहरे दुख के साथ बताया है : 'जिन कारणों ने मुझे पार्टी और राजनीति छोड़कर सर्वोदय आंदोलन में जाने को प्रेरित किया उनमें वह आत्मिक दुख भी था जो पार्टी में चरित्र-वध और उसके विघटन के समय मुझे हुआ। राजनीति में मतभेद तो पैदा होते ही हैं और जब वह एक मर्यादा के बाहर चले जाते हैं तो फिर जिनके मत मिलते नहीं उनका अलग हो जाना स्वाभाविक होता है। परंतु हर मतभेद के लिए कोई गुप्त कारण है, कोई बुरी नीयत है, कोई आंतरिक दुर्बलता है, इस प्रकार से जब चर्चा और प्रचार होता है तो वह अत्यंत दुखदायी होता है। आज तक मुझे विश्वास है कि उस समय के मतभेद इतने बड़े नहीं थे कि उनके कारण

साथी अलग हों। परंतु जिनको ऐसा लगा कि वह साथ नहीं चल सकते उनका अलग होना अनावश्यक होते हुए भी समझने लायक हो सकता है। परंतु नीयत पर शक करना, चरित्र-वध का जहर फैलाना यह तो राजनीति के दायरे के बाहर की बात होती है। मैं अपने तथा साथी आचार्य जी दोनों के ही बारे में कह सकता हूं कि हममें से कोई भी न थक गया था, न पद-लोलुपता का ही शिकार हो गया था, न हम यही चाहते थे कि पार्टी कांग्रेस में मिल जाय। हां, इतना है कि आचार्य जी का और मेरा जवाहरलाल जी से बड़ा निकट का संबंध था। लेकिन जब हम लोगों की उनसे मुलाकात हो तो उसका यह कोई मानी नहीं था कि उनके साथ समाजवादी आंदोलन को खत्म कर देने का कोई षड्यंत्र हम रच रहे हैं। उस एक बार को छोड़कर जब कि जवाहरलाल जी ने मेरा तथा पार्टी का सहयोग चाहा था, कभी भी उन्होंने प्रजा सोशलिस्ट पार्टी को अथवा जब सोशलिस्ट पार्टी थी तो उसको, कांग्रेस में मिलाने की या उसके साथ सहयोग करने की कोई बात मुझसे नहीं छेड़ी। परंतु व्यक्तिगत मित्रता का भी जब ऐसा राजनीतिक अर्थ निकाला जाता था तो उसका हमारे पास कोई जवाब नहीं था।'

निश्चय ही इस तरह जयप्रकाश द्वारा दलीय राजनीति का परित्याग एक राजनीतिक विस्फोट था। यह कदम उन्होंने सत्तावन में, दूसरे आम चुनाव के कुछ ही महीनों बाद उठाया। यह निर्णय लेना उनके लिए आसान न था। जीवन भर के साथियों से एकदम संबंध-विच्छेद करना कभी आसान नहीं होता। विशेष कर ऐसे साथियों से जिनके साथ-साथ काम किए, जेलें काटीं, अज्ञातवास की जोखिमों से गुजरे और साथ ही साथ स्वतंत्रता को राख होते देखा।

जे० पी० ने ऐसे क्षणों पर अपने चिंतन के विकास-क्रम की ओर संकेत करते हुए और ऐसे अंतिम कदम उठाने के कारणों पर प्रकाश डालते हुए एक लंबा पत्र (पुराने साथियों को) लिखा, जो पहले वक्तव्य के रूप में क्रमशः समाचार पत्रों के कई अंकों में छपे और बाद में 'समाजवाद से सर्वोदय की ओर' नामक पुस्तिका के रूप में प्रकाशित हुआ।

यह बात इक्कीस दिसंबर उन्नीस सौ सत्तावन की है। उस समय जे० पी० कलकत्ता में थे। पत्र रूपी यह वक्तव्य भारत के आधुनिक राजनीतिक इतिहास का अद्भुत घोषणा पत्र है। जे० पी० लिखते हैं :

'राजनीति ने लोगों के दिमागों को इस तरह जकड़ रखा है, और फिर इसका विकल्प भी अभी इतनी प्रारंभिक स्थिति में है कि अपने इस वक्तव्य द्वारा अधिक पाठकों को राजी करने में शायद ही मुझे सफलता मिले। फिर भी मुझे आशा है कि इससे एक दूसरे को अधिक समझने में मदद मिलेगी और जिन विचारों का इसमें प्रतिपादन किया गया है, उनमें लोगों की रुचि बढ़ेगी। इसका एक दूसरा पहलू भी है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी विशिष्ट पृष्ठभूमिका से ही चीजों का अवलोकन करता है। जो लोग न तो उन अनुभवों से होकर गुजरे हैं, जिनसे होकर मुझे गुजरना पड़ा है और न उन आदर्शों की खोज के पीछे पड़े हैं, जो मेरे आदर्श रहे हैं। संभव है, वे मेरी दलीलों की कद्र न करें। समाजवाद या वर्ग संघर्ष या राजनीतिक आंदोलन अथवा संसदीय गणतंत्र का जिन्हें नया-नया जोश है, संभव है, वे मेरे आशय को अभी न समझ पाएं। अपने विशेष जोश में जब

उन्हें कुछ रुकावटों का सामना करना पड़ेगा और उन रुकावटों का हल क्या होगा, इसकी छानबीन वे करेंगे, तो शायद जल्दी मेरी बात उनकी समझ में आए। मेरा यह संकेत हरगिज नहीं है कि मैंने सामाजिक समस्याओं का कोई सर्वथा निर्दोष हल ढूंढ़ लिया है या सर्वोदय ही समाज-दर्शन की इति है। मनुष्य स्वभाव से ही जिज्ञासु होता है, इसलिए वह बराबर सत्य की ओर बढ़ रहा है। वह पूर्ण सत्य तक कभी नहीं पहुंच सकता, किंतु क्रमशः असत्य को कम करते-करते सत्य के पथ पर लग सकता है। इसमें कोई संदेह नहीं, सर्वोदय विचार और आचार की अनेक कमियों का भविष्य में पता चलेगा और सुधार होगा। मानव-मस्तिष्क इस प्रकार बराबर सत्य की ओर बढ़ता ही जाएगा। लेकिन मैं यह जरूरी मानता हूं कि सर्वोदय आज के वर्तमान सामाजिक तत्त्वज्ञानों और प्रणालियों से स्पष्टतया आगे बढ़ा हुआ और उन्नत विचार है। मैं जिस प्रक्रिया से इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं, उसे समझाने का प्रयत्न करूंगा। मैं जो लिख रहा हूं वह किसी तरह भी सर्वोदय दर्शन का पूर्ण चित्र नहीं है, मेरे पास तो उस काम के लिए पर्याप्त साधन सामग्री भी नहीं है। मैं अपनी उस विचार सारणी के विकास का उल्लेख कर रहा हूं, जिससे प्रेरित होकर मैंने आखिरकार राजनीति को छोड़ा है।'

राजनीति और लोकनीति या दलीय और अदलीय राजनीति सबके मर्म में जाकर जे० पी० ने पाया : 'जो भी हो, राजनीति ने जो प्रश्न पैदा किए, वे मेरे दिमाग में गूंजते रहे। मैं संतुष्ट नहीं हुआ और एक विकल्प खोजने के लिए विवश हो गया। दलीय राजनीति का परंपरागत स्वभाव है, सत्ता के लिए उसमें सब तरह से निर्बल और दूषित कर देने वाले संघर्ष होते ही हैं, यही बात मुझे और अधिक चिंतित करने लगी। मैंने देखा : धन, संगठन और प्रचार के साधनों के बल पर विभिन्न दल कैसे अपने को जनता के ऊपर लाद देते हैं, कैसे जनतंत्र यथार्थ में दलीय तंत्र बन जाता है, कैसे दलीय तंत्र अपने क्रम से स्थानिक चुनाव-समितियों और निहित स्वार्थों से संबद्ध गुटों का राज्य बन जाता है। किस प्रकार जनतंत्र केवल मतदान में सिमट और सिकुड़कर रह जाता है, किस प्रकार मत देने का यह अधिकार तक, उन शक्तिशाली दलों द्वारा अपना उम्मीदवार खड़ा करने की पद्धति के कारण, बुरी तरह सीमित हो जाता है, क्योंकि काम चलाने के लिए मतदाताओं को केवल उन्हीं में से किसी को चुनना पड़ता है। किस प्रकार यह सीमित निर्वाचनाधिकार तक अवास्तविक हो जाता है, क्योंकि निर्वाचक गण के समक्ष जो मुद्दे रखे जाते हैं, वे बहुत अधिक तो उनकी समझ के बाहर होते हैं। दलीय पद्धति को जैसा मैंने देखा, वह लोगों को डरपोक और नपुंसक बना रही थी। इसने इस तरह से काम नहीं किया कि जनता की शक्ति और अभिक्रम (इनीशियेटिव) बढ़े या उन्हें स्वराज्य स्थापित करने और अपनी व्यवस्था अपने आप संभालने में सहायता मिले। दलों को तो केवल इससे मतलब था कि सत्ता उनके हाथ में आए और वे जनता के ऊपर, बिना शक जनता की सलाह से, राज्य कर सकें। मैंने ऐसा अनुभव किया कि दलीय पद्धति लोगों को भेड़ों की स्थिति में ला देना चाहती है, जिनका एकाधिकार केवल नियत समय पर गड़रियों को चुन लेना है, जो उनके कल्याण की चिंता करेंगे। मुझे इसमें स्वतंत्रता का दर्शन नहीं

हुआ, उस स्वतंत्रता या स्वराज्य का, जिसके लिए मैं लड़ा था और इस देश के लोग जिसके लिए लड़े थे।'

पर जो भी हो, अपने इस पत्रमय वक्तव्य में जयप्रकाश बहुत कुछ स्पष्ट करके भी अपनी भूमिका में रहस्यवादी बने रहे। राजनीति से गहरा (राजनीति से आगे लोकनीति) संबंध होने पर भी राजनीति से पृथक् माने गए। राजनीति की गहराई में जहां आम इंसान है, उसके अपने ऐतिहासिक यथार्थ हैं, जे० पी० वहां जाकर जुड़ गए। दलीय राजनीति के वर्तमान परिवेश में लोग उसे समझने में असमर्थ थे। यह एक ऐसा कदम था, जिसका अभी तक कोई उदाहरण नहीं था। गांधी ने सर्वोदय और लोकनीति का दर्शन दिया था, विनोबा ने उसका अभ्यास शुरू किया था और उतने से ही जो अनन्य प्रकाश चमका था उसे जे० पी० ने देखा था। इस नये जीवन-दर्शन को अपने कर्म और वाणी से समझना शुरू किया था, दादा धर्माधिकारी ने, धीरेंद्र मजूमदार ने।

पर समय को अब तक इसका अनुभव नहीं था। विज्ञान, इतिहास और राजनीति के इतने गहन अध्ययन और गहरे अनुभव से गुजरकर अब आत्मानुभूति के प्रकाश से जिन-जिन निष्कर्षों पर जे० पी० पहुंचे वह आगे उनके कर्मों और चरित्र से ही प्रकट है।

इस नई दृष्टि और अनुभव को समझने के लिए यूरोप के समाजवादी और शांतिवादी जे० पी० के प्रति आकृष्ट हुए। समाजवादी मित्रों ने यूरोप आने का आग्रह किया। और इंग्लैंड की दो तीन शांतिवादी तथा समाजवादी संस्थाओं की ओर से बाकायदा निमंत्रण मिला और उन्नीस सौ अट्ठावन, अप्रैल के महीने में प्रभावती और सिद्धराज ढड्ढा के साथ जयप्रकाश लगभग साढ़े चार महीने साइप्रस, इंग्लैंड, फ्रांस, जर्मनी, स्विट्जरलैंड, हालैंड, डेनमार्क, बेलजियम, नार्वे, स्वीडन, आस्ट्रिया, इटली, ग्रीस, पोलैंड, यूगोस्लाविया, इजराइल, मिस्र, लेबनान और पाकिस्तान की यात्रा पर निकले। एक समाजवादी विचारक के नाते जयप्रकाश का नाम यूरोप और अमेरिका के शिक्षित वर्ग में परिचित रहा है, हालांकि सन् 1929 में अमेरिका से लौटने के बाद वे लगभग तीस वर्ष याने इस विदेश यात्रा तक बर्मा छोड़कर भारत से बाहर नहीं गए थे। पर उन देशों के समाजवादी विचारकों और मजदूर संगठनों से उनका संपर्क बराबर रहा। सन् 1956 के नवंबर में जब बंबई में एशियाई मुल्कों के समाजवादियों का सम्मेलन हुआ, उस मौके पर इंग्लैंड, आस्ट्रिया, इजराइल आदि देशों से भी कुछ समाजवादी मित्र उसमें आए थे। उस सम्मेलन में जयप्रकाश ने पहली बार अंतर्राष्ट्रीय समाजवादी श्रोताओं के सामने बड़ी दृढ़ता और स्पष्टता के साथ अपना यह विचार रखा था कि सर्वोदय का मार्ग ही वास्तविक समाजवाद है। राजसत्ता के जरिए समाजवाद लाने की कोशिश ज्यादा से ज्यादा 'कल्याणकारी राज्य' तक ही मानव जाति को ले जा सकती है, मनुष्य मात्र की आजादी, समता और भाईचारे के जो आदर्श हैं, उन तक नहीं। इस सिलसिले में भूदान-आंदोलन द्वारा चल रहे लोकशक्ति को जाग्रत् करने के प्रयत्न और उसके बल पर सच्चे समाजवाद की स्थापना होने की संभावना की ओर विदेशों से आए हुए समाजवादियों का ध्यान जयप्रकाश ने आकर्षित किया। जयप्रकाश के विचारों से और

लोकनीति की नई पद्धति के प्रति उनकी अडिग निष्ठा और विश्वास के कारण विदेश के समाजवादियों में इन बातों की ओर भी गहराई से समझने की और इनके बारे में ज्यादा विचार विनिमय करने की उत्सुकता पैदा होना स्वाभाविक था।

इस विदेश यात्रा में करीब-करीब सभी मुल्कों में वहां के प्रमुख राजनैतिक नेताओं के अलावा वैज्ञानिकों, समाजशास्त्रियों और अन्य प्रमुख विचारकों से भी बातचीत तथा विचार विनिमय का मौका आया। करीब-करीब पचास आम सभाओं में जयप्रकाश के भाषण हुए। इस यात्रा में एक विशेष कार्यक्रम ऐसी संस्थाओं में जाने का भी था, जहां अहिंसा और शांति के आदर्शों में विश्वास रखने वाले लोग अपने जीवन में उन आदर्शों को उतारने का प्रयोग कर रहे हैं। पश्चिम जर्मनी में व्यूकेबर्ग का फ्रेंडशिप हाउस, ब्रामडन इंग्लैंड में सोसायटी ऑफ ब्रदर्स का केंद्र, पेरिस में श्री आबेपीयर की प्रेरणा से चल रहा 'चिथड़ा बटोरने वालों का परिवार' और दक्षिण फ्रांस में गांधी तथा विनोबा के पुराने समर्थक श्री लांझा देलवास्तो का आश्रम—इस प्रकार की संस्थाएं थीं, जिनमें जे० पी० गए।

जे० पी० बीस सितंबर को यूरोप और मध्य एशिया की यात्रा से दिल्ली लौटे। सफदरजंग हवाई अड्डे पर उनका भव्य स्वागत हुआ। जे० पी० उस समय बंद गले का कोट और पतलून पहने थे। स्वागत-कर्त्ताओं में गंगाशरणसिंह, विभिन्न दलों के संसद् सदस्य, उनके अनेक मित्र, शुभचिंतक, छात्र एवं जन-साधारण सभी वर्ग के लोग थे। जनसमुदाय ने जे० पी० को पुष्प-मालाओं से लाद दिया था और 'जयप्रकाश जिंदाबाद' के नारे लगाए थे।

दूसरे दिन सुबह दस बजे दिल्ली सर्वोदय मंडल द्वारा आयोजित सभा में जे० पी० ने भाषण दिया और शाम को छः बजे कांस्टीट्यूशन क्लब में उनका सार्वजनिक स्वागत हुआ। बाइस तारीख को 'इंडियन कांग्रेस फार कल्चरल फ्रीडम' की ओर से सप्रूहाउस में एक सार्वजनिक सभा में बोलते हुए जे० पी० ने कहा कि विश्व शांति चाहता है। वह बारूद के ढेर पर भी बैठा है। फिर भी वह एटम बम बना रहा है।...विदेशों में लोगों ने अपने राष्ट्र का निर्माण किया है—समाजवादी ढंग से। वास्तव में बिना जनता के सहयोग के सरकार किसी भी नये समाज की रचना नहीं कर सकती। कानून से कभी क्रांति नहीं होती सिर्फ व्यवस्था बदली जा सकती है।

दिल्ली से पच्चीस सितंबर को जे० पी०, प्रभावती के साथ बंबई के लिए रवाना हुए।

इसके कुछ ही दिनों बाद यूरोप तथा पश्चिमी एशिया की यात्रा के अनुभवों से प्रेरित होकर जे० पी० ने 'महात्मा गांधी की ओर प्रतिगमन' वक्तव्य के रूप में प्रकाशित किया। जिसमें उन्होंने कहा कि किसी भी राष्ट्र का निर्माण जनता की व्यापक साझेदारी के बिना नहीं हो सकता। वह कहते हैं : 'मैं नहीं जानता कि इतिहास में ऐसा कोई उदाहरण है, जहां केवल राज्य के प्रयासों से किसी देश का विकास हो गया हो। यह बात लोकतंत्री एवं अधिनायकतंत्री दोनों प्रकार के राज्यों के विषय में सही है। किसी राष्ट्र का निर्माण, निर्माण-कार्य में जनता की व्यापक भागीदारी के बिना असंभव है। मैं इस कथन पर यथासंभव अधिक से

अधिक बल देना चाहूंगा, क्योंकि यही मेरी दृष्टि में इस देश की वर्तमान परिस्थिति का गूढ़ तत्त्व है ।'

इसी वक्तव्य में जे० पी० उपाय भी बताते हैं कि यह महान् कार्य संपन्न कैसे हो सकेगा : उत्तर कम से कम शब्दों में यह है : 'महात्मा गांधी की ओर वापस जाकर ।' देश के नेता यह स्वप्न देखना छोड़ दें कि केवल राजनीतिक सत्ता से ही काम हो जाएगा । उन्हें जनता के बीच जाना होगा, उसके बीच रहकर काम करना होगा तथा उसकी सेवा सहायता करते हुए उसका मार्ग-दर्शन करना होगा। वे वह सब अपने दलों को मजबूत बनाने के लिए अपने लिए 'वोट' प्राप्त करने के लिए नहीं करेंगे, बल्कि इसलिए करेंगे कि जनता जागे और राष्ट्रीय विकास के कार्यों में बुद्धि, हृदय और हाथ लगाए। अगर इस कार्यक्रम को प्रभावकारी बनाना है और अगर उसके द्वारा राष्ट्र पर आवश्यक मनोवैज्ञानिक प्रभाव पैदा करना है, तो सर्वोच्च नेताओं को इस जनांदोलन का नेतृत्व करने के लिए आगे आना होगा। जनता के बीच जाने के लिए पुनर्निर्माण का एक ठोस, निर्दलीय कार्यक्रम तैयार करना कठिन नहीं होना चाहिए। विनोबा जी का कार्यक्रम तो उपस्थित है ही । इसमें और कुछ जोड़ा जा सकता है अथवा एक नया कार्यक्रम ही निर्धारित किया जा सकता है । इसके बाद इस आंदोलन को प्रभावकारी बनाने के लिए लाखों स्वयंसेवकों को गतिमान करना आवश्यक होगा। मुझे इसमें तनिक भी संदेह नहीं है कि यदि नेतागण यह क्रांतिकारी कदम उठाने के लिए तैयार हों और देश के युवकों का आह्वान करें तो जितने स्वयंसेवकों को वे काम में लगा सकते हैं, उससे अधिक स्वयंसेवक उन्हें तुरंत मिल जाएंगे । मेरा निश्चित विश्वास है कि पांच वर्षों की अवधि में ऐसा एक आंदोलन देश की परिस्थिति में क्रांति ला दे सकता है तथा जनता को निराशा के गर्त से ऊपर उठा सकता है और लाखों हाथों को सक्रिय बना सकता है। इसके अलावा, यह आंदोलन प्रशासन और शासन पर तथा सामान्य सार्वजनिक एवं व्यक्तिगत जीवन पर सुधारात्मक प्रभाव भी डालेगा । मेरे दिमाग में यह स्पष्ट है कि यदि भारत में लोकतंत्र की रक्षा और उसका पुनर्निर्माण होना है तो इसको छोड़ और कोई विकल्प आज नहीं है ।'

4

सन् उनसठ के जनवरी माह के मध्य जे० पी० दिल्ली, बंबई, कलकत्ता, पटना आदि जगहों से होते हुए फिर सोखोदेवरा पहुंचे । यहां आकर जे० पी० को जो शांति मिलती है, वह अन्यत्र कहीं नहीं । इस आश्रम के बारे में कुछ बताते हुए जे० पी० हमेशा अपनी सजीव स्मृतियों का सहारा लेते हैं ।

भूदान-आंदोलन का कार्य उन्नीस सौ बावन से शुरू हुआ और चौवन तक भू-प्राप्ति का काम विशेष रूप से हुआ । उसी समय जयप्रकाश ने जीवन-दान दिया । और यह सोचा कि ग्रामीण समाज की रूपरेखा क्या होगी और ग्राम-समुदाय में किस प्रकार विधायक ढंग से परिवर्तन और निर्माण का कार्य होगा। जे० पी० ने इसी प्रश्न के उत्तर की खोज में पांच मई सन् चौवन को ग्राम-निर्माण-मंडल सर्वोदय आश्रम की स्थापना सोखोदेवरा में की थी ।

सोखोदेवरा आश्रम की बात करते हुए जे० पी० ग्राम-स्वराज्य के इन केंद्रों और प्रखंडों के नाम लेना कभी नहीं भूलते : गोविंदपुर (मिर्जापुर, उत्तर प्रदेश) खादीग्राम, रुपौली प्रखंड, कौआकोल, झाझा चकाई प्रखंड, बाराचट्टी प्रखंड और मुसहरी प्रखंड। वस्तुत: ग्राम-स्वराज्य के ये सघन क्षेत्र सर्वोदयी जयप्रकाशनारायण के मानव तीर्थ भी हैं और उनके मानसपुत्र समान भी। जाड़ा, गर्मी, बरसात सभी मौसमों और सभी स्थितियों में इन्हीं क्षेत्रों में एक किसान, एक सिपाही अथवा संत के रूप में काम करते हुए जे० पी० ने सच्चे ग्राम-स्वराज्य की अनुभूति पाई है।

यहीं कीचड़ धूल में भूमिहीनों, हरिजनों और अभागे लोगों में काम करते हुए जे० पी० के मन में बार-बार वह कसक उनके दिल में उभरकर रह गई है :

'मानव कल्याण-पथ के अविरत अनुसंधान में मैं सर्वोदय की इस मंजिल पर आज पहुंचा हूं। स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व की जो ज्योति मुझे आज तक राह दिखलाती रही है, वही ज्योति आखिर मुझे इस सर्वोदय की मंजिल तक ले आई है। इस ध्रुव तारे को ही अपनी निगाहों के साथ रखकर मैं अपना मार्ग तय कर रहा हूं। सर्वोदय की मंजिल तक मेरा रास्ता कुछ टेढ़ा-मेढ़ा रहा, किंतु उसका मुझे कोई दुख नहीं। मुझे यही खेद है कि मैं अपनी जीवन-यात्रा में, जब गांधी जी हमारे बीच विद्यमान थे, तब इस मंजिल तक नहीं पहुंच सका। गांधी जी के जीवन-काल में तो उनके बहुत सारे कार्यों और विचारों का मैं आलोचक ही रहा हूं। राजनैतिक अस्त्र के रूप में अहिंसा कितनी सफल हो सकती है, इस वाद-विवाद में जेलों में हमने कई रातें बिताई हैं। उन दिनों मेरे मन में यह बात जम चुकी थी कि घोर निद्रा में डूबे हमारे बदनसीब राष्ट्र को जाग्रत् करने और उसे क्रियाशील बनाने के लिए सविनय अवज्ञा आंदोलन तथा जेलों को भर देने का कार्यक्रम एक अच्छी व्यूह-रचना हो सकती है, किंतु स्वतंत्रता-प्राप्ति की अंतिम लड़ाई में तो हिंसा का सहारा लिये बिना कोई चारा नहीं है। लेकिन बाद में जो घटनाएं घटित होती गई, उन्होंने मेरी इस मान्यता को गलत ठहराया, इतना ही नहीं, बल्कि राजनैतिक अस्त्र और समाज-परिवर्तन के साधन के रूप में अहिंसा की सफलता के संबंध में मुझे एक नई प्रतीति हुई।'

वर्षों बाद सरकार ने इसी सन् उनसठ में पंचायती राज का कार्यक्रम लागू किया। किंतु उसके पीछे प्रेरणा गांधी की विचारधारा के अनुसरण की नहीं, बल्कि सामुदायिक विकास-योजना के लिए ग्राम-स्तर पर एक सरकारी ढांचा खड़े करने की थी। इसीलिए जे० पी० के शब्दों में : 'आज पंचायत स्थानीय स्वशासन की इकाई बनने के बदले राज्य सरकार की इकाई बनकर रह गई।'

सोखोदेवरा से जे० पी० फरवरी में राजस्थान के दौरे पर गए। उन्नीस तारीख को अजमेर से मोटर में बैठकर देवली गए। उस समय विनोबा का पड़ाव वहीं था। जे० पी० प्रभावती के साथ विनोबा से मिले। देवली कैम्प जेल में जे० पी० जिस कमरे में तब वर्षों पूर्व बंदी थे, उसी कमरे में विनोबा ने अपना निवास बनाया था। प्रभावती ने अपनी डायरी में लिखा है : 'बीस वर्ष पहले जब यह कैम्प जेल था, तब कौन सोचता होगा एक दिन पूज्य बाबा इसमें ठहरेंगे।'

राजस्थान की यात्रा से मार्च के शुरू में जे० पी० पटना आए। वहां आकाशवाणी से उन्होंने 'गांव से निर्माण' विषयक एक वार्ता प्रसारित की। वार्ता में उन्होंने कहा : 'समाज की प्रत्येक संस्था अपनी विशेष मिट्टी से पैदा होती है और वह अपनी ही विशिष्ट जलवायु एवं वातावरण से पालित-पोषित होती है। बाहर से उधार लेना सामाजिक विकास का एक सामान्य साधन रहा है, परंतु उधार ली गई कोई संस्था जब तक समुचित रूप से स्थानीय जलवायु के अनुकूल और उसके साथ एकरस नहीं हो जाती, तब तक उसका विकास नहीं होता। भारत के लंबे इतिहास में उसकी संस्थाओं ने जो रूप ग्रहण किया है, वह विशिष्ट रूप से भारतीय है। यहां एक ऐसी जीवन-पद्धति विकसित हुई है, जो किसी सूक्ष्म प्रक्रिया से भारतीय ढांचे में ढल गई है। और फिर एक ऐसी मानसिक दृष्टि पैदा हुई है जो विशिष्ट रूप से भारतीय रूपरेखा के अंदर काम करती है।'''

उनसठ के मध्य में जयप्रकाश को विश्व की अति दुखांत घटना ने व्यथित कर दिया। चीन ने निर्ममता से तिब्बत को पदाक्रांत कर समाजवाद के इतिहास में, रूस द्वारा हंगरी के बाद दमन का एक कालिमापूर्ण अध्याय जोड़ा। जे० पी० ने मई उनसठ में कलकत्ता तथा मद्रास के तिब्बत सम्मेलन में मानवीय अधिकारों का प्रश्न उठाया। उन्होंने अनुभव किया कि यद्यपि बुद्धिमान् राजनीतिज्ञ तिब्बत के प्रश्न को हारी हुई लड़ाई लड़ना मान सकते हैं, किंतु मानवीय स्वतंत्रता के जहां-जहां संघर्ष हैं, जयप्रकाश वहां-वहां उसके साथ हैं। कलकत्ता में तीस मई को महाजती सदन के हाल में हुए अखिल भारतीय तिब्बत-सम्मेलन के अध्यक्षीय भाषण में जे० पी० ने कहा—तिब्बत मरेगा नहीं। क्योंकि मानव स्वतंत्र चेतना नहीं मरी है। कम्युनिस्ट चीन कभी सफल नहीं होगा क्योंकि मनुष्य कभी गुलाम नहीं रह सकता।

मई, जून और जुलाई में कलकत्ता और मद्रास में तिब्बत सम्मेलन के बाद जे० पी० अगस्त के प्रारंभ में फिर सोखोदेवरा लौटे।

उनसठ के अंत में जे० पी० ने अखिल भारत सर्वसेवा-संघ वाराणसी द्वारा अंतरंग प्रसार के लिए अपना अत्यंत महत्त्वपूर्ण निबंध 'भारतीय राज्य-व्यवस्था का पुनर्निर्माण' लिखा। वे लोकतंत्र के पाश्चात्य ढांचे को अस्वीकार करते हैं, क्योंकि वह जनता को अपने काम-काज के प्रबंध में भाग लेने का अवसर नहीं प्रदान करता। जयप्रकाश की दृष्टि में, आज स्थिति यह है कि राजनीतिक दल जनता के वास्तविक भाग्य-विधाता बन गए हैं, परंतु जनता का उन पर कोई नियंत्रण नहीं चलता। यहां तक कि दलों के नामांकित सदस्यों का भी नीति-निर्माण में या आंतरिक प्रशासन में कोई प्रभाव नहीं होता। यह दलीय व्यवस्था अनेक बुराइयों की जननी है : 'दलीय प्रतिद्वंद्विताएं झूठी नेतागिरी को जन्म देती हैं, राजनीतिक नैतिकता को दबाती हैं, विवेकहीनता तथा कपटाचरण एवं षड्यंत्र को बढ़ावा देती हैं। जहां एकता की आवश्यकता है, वहां दलों द्वारा विवाद खड़े किए जाते हैं, और जहां मतभेदों को न्यूनतम करना चाहिए, वहां उनको वे अतिरंजित करते हैं। ये दल अक्सर दलीय हितों को राष्ट्रीय दलों के ऊपर रखते हैं। चूंकि सत्ता का केंद्रीकरण नागरिक को शासन-कार्य में भाग लेने नहीं देता, इसलिए दल अथवा राजनेताओं के लघु गुट ही जनता के नाम पर शासन करते हैं

और लोकतंत्र एवं स्वशासन का भ्रम पैदा करते हैं।' लेकिन मुख्य अपराधी दलीय व्यवस्था नहीं, बल्कि संसदीय लोकतंत्र है जो उसको जन्म देता है और उसके बिना काम नहीं कर सकता। अतः जयप्रकाश संसदीय लोकतंत्र के स्थान पर, भारत की अपनी परंपराओं तथा मनुष्य एवं समुदाय के वास्तविक स्वभाव के अनुकूल, नये ढंग की राज्य-व्यवस्था की स्थापना का सुझाव प्रस्तुत करते हैं। इसको वे सामुदायिक या दलमुक्त लोकतंत्र की संज्ञा देते हैं।

एक नई राज्य-व्यवस्था के निर्माण की समस्या सामाजिक पुनर्निर्माण की बृहत्तर समस्या का अंग है। जैसा कि जयप्रकाश कहते हैं: 'आधुनिक उद्योगवाद तथा उसके द्वारा पैदा की गई आर्थिकवाद की भावना ने जो प्रत्येक मानवीय मूल्य को लाभ और हानि एवं तथाकथित आर्थिक प्रगति के पैमानों से तोलती है, मानवीय समाज को विघटित कर डाला है और मनुष्य को अपने ही मानव बंधुओं के बीच पराया बना दिया है।...आज की सभ्यता की समस्या सामाजिक एकीकरण की समस्या है ...समस्या मनुष्य को मनुष्य के संपर्क में रख देने की है, जिससे कि वे अर्थपूर्ण, बोधगम्य एवं नियंत्रणीय संबंधों के बीच साथ-साथ रह सकें। संक्षेप में, समस्या मानव समुदाय का फिर से निर्माण करने की है।' एक सच्चे समुदाय के आवश्यक लक्षण हैं—सहविभाजन, सहभाग एवं साहचर्य: 'विविधता के बीच एकता की भावना, स्वीकृत सामाजिक दायित्वों की रूपरेखा के अंदर स्वतंत्रता का अबोध तथा समुदाय एवं उसमें सदस्यों के कल्याण के एकमात्र लक्ष्य की ओर अभिमुख कार्यों की विभिन्नता। ऐसा एक समुदाय अतीत में कभी रहा हो या नहीं, परंतु भावी सामाजिक पुनर्निर्माण का आदर्श वह अवश्य बने। 'केवल तभी मनुष्य के सामाजिक स्वभाव और आधुनिक सभ्यता के महान् मानवीय आदर्शों की सिद्धि होगी। सच्चा लोकतंत्र भी तभी होगा।'

ये विचार जे० पी० के व्यक्तित्व के ऐसे प्रकाश-पुंज हैं, जिन्हें धरती पर उतारने के लिए वह आत्मदान से आत्मदाह की ओर बढ़ते हैं।

5

उन्नीस सौ साठ से आगे पूरे दशक तक और कुछ उसके बाद भी जे० पी० का जीवन एक साथ जीवन-मूल्यों के तीन बड़े मोर्चों पर लड़ने की गौरव-गाथा है। और यह पूरा काल उनके सर्वोदयी व्यक्तित्व का परम ज्योतिर्मय चरण है।

—राष्ट्रीय मोर्चे पर अक्साई चिन का प्रसंग।

—वैधिक (लीगल) की अपेक्षा नैतिक मोर्चे पर—कश्मीर का प्रश्न।

—और परम मानवीय मोर्चे पर—नागा, नक्सलवादी और डाकू-संघर्ष।

जे० पी० का संदर्भ हमेशा मनुष्य रहा है।' राज्य का भूगोल अथवा उसका शासन-तंत्र नहीं। जहां कहीं भी मानव मूल्यों पर किसी तरह भी आक्रमण हुआ है, जे० पी० ने उसके खिलाफ संघर्ष छेड़ा है और मनुष्य की स्वतंत्रता और उसके व्यक्तित्व की रक्षा हेतु कर्मरत हुए हैं।

जे० पी० के इस गौरव-गाथा की पृष्ठभूमि है उनका अब तक का जीवन। उनकी जीवन-यात्रा। इसी चरण में आकर जे० पी० ने अपने बारे में कहा: मेरे

पिछले जीवन का रास्ता बाहर के लोगों को भले ही टेढ़ा-मेढ़ा और पेचीदा लगे, वे उसे अनिश्चित और अंधकार में टटोलना समझें, किंतु जब मैं अपने अतीत पर दृष्टि डालता हूं, तो मुझे उसमें विकास की एक अटूट रेखा दिखाई देती है। उसमें राह खोजने का प्रयत्न था, इससे इन्कार नहीं किया जा सकता, किंतु वह अंधकार-मय हर्गिज नहीं था। उसमें एक ऐसी पूर्ण ज्योति थी, जो शुरू से ही न कभी धुंधली पड़ी, न बदली और जो बराबर इस पेचीदा दीखने वाले मेरे रास्ते पर मेरा मार्ग-दर्शन करती रही है। कम से कम मैं तो इस टेढ़े-मेढ़े रास्ते के लिए दुखी नहीं हूं, क्योंकि जिस रास्ते पर अब चलने का मैंने निश्चय किया है, उसके संबंध में मैं निश्चिन्त हूं।'

चेतना के स्तर से इस सर्वोदयी चरण में जयप्रकाश की व्यक्तिगत यात्रा का चरमबिंदु हमें मिलता है। हम यहां से उनके पूरे विकास-क्रम को अब स्पष्ट देख सकते हैं : मार्क्स की वैज्ञानिकता; गांधी और विनोबा की आध्यात्मिकता; और जे० पी० की अपनी सामाजिकता जिसे लेकर वह इस दौरे में एक नये समाज-शास्त्र के निर्माण करने में जुटते हैं। एक शब्द में यदि हम कहें तो इनका वह नया समाज है सामुदायिक समाज जिसके लिए जे० पी० आगे सामुदायिक लोकतंत्र और सामुदायिक राज्य-व्यवस्था के निर्माण के लिए कृतसंकल्प होते हैं। इसके लिए यह एक बुनियादी शर्त, चुनौती को स्वीकार करते हैं। गांव एक वास्तविक समाज बने। गांव एक समाज तभी बनेगा जब गांव के सभी लोगों के हितों में समानता, सहभाग और सहयोग भाव होगा। लोकतंत्र तब होगा, जब तंत्र का संचालन स्वयं लोक करेगा। लोक प्रतिनिधि नहीं।

जे० पी० के स्वप्नों का लोकतंत्र लोकाभिमुख और ग्रामाभिमुख होगा।

जे० पी० के इस स्वरूप को याद करते ही आजादी के सिपाहियों के नाम लिखी उनकी सन् बयालीस की चिट्ठियां, फिर आगरा जेल से छूटने के बाद लिखा उनका खत, सब याद आने लगता है। सन् बयालीस की महाक्रांति के दौरान भूमिगत जे० पी० ने उस तीसरी चिट्ठी में भावी भारत की एक तस्वीर पेश करते हुए कहा था : 'ग्रामराज स्वतंत्र भारतीय गणराज्य के भवन-निर्माण में ईंट का काम करेंगे।'... कस्बों और शहर के हर मुहल्ले में सामुदायिक इकाई का निर्माण करने और वहां से पूरे समुदाय के स्तर पर काम करने की आवश्यकता पर बल दिया था।

स्वतंत्रता-प्राप्ति के पूरे बारह वर्ष बाद पंडित जवाहरलाल नेहरू का ध्यान गांधी जी की पंचायती राज की कल्पना की ओर गया। इसका मुख्य कारण नेहरू की सामुदायिक विकास-योजना की देशव्यापी विफलता थी। जब नेहरू ने देखा कि उनके विकास कार्यक्रमों में जनता का सहयोग नहीं मिल रहा है तो इसके कारणों की छानबीन के लिए उन्होंने बलवंतराय मेहता की अध्यक्षता में एक समिति गठित की। इस समिति ने अपने प्रतिवेदन में पंचायती राज स्थापित करने की आवश्यकता पर बल दिया और नेहरू ने उसे स्वीकार किया। इस प्रकार पंचायती राज की योजना विकास-कार्यक्रमों में जन-सहयोग प्रेरित करने की युक्ति के रूप में लागू की गई। इसका यह अर्थ नहीं कि नेहरू ने इस नई योजना का

'राजनीतिक अर्थ' और क्रांतिकारी महत्त्व' नहीं समझा था। उन्होंने और प्रमुख सहयोगी एस० के० दे० ने, जो उस समय सामुदायिक विकास-विभाग के मंत्री थे, सोच समझकर नीचे के समुदायों को वास्तविक सत्ता समर्पित करने की योजना स्वीकार की थी। जयप्रकाश ने इस योजना में एक क्रांतिकारी विचार की स्वीकृति देखी। स्वयं उनका चिंतन भी इस दिशा में पहले से ही चल रहा था। अतः उन्होंने संपूर्ण हृदय से पंचायती राज की योजना को समर्थन दिया और उसके प्रयोगों को सफल बनाने के लिए अपनी ओर से तथा अपने सर्वोदय आंदोलन की ओर से सक्रिय सहयोग देने का प्रयास भी किया।'

इस प्रकार जयप्रकाश के चिंतन और नेहरू की योजना का मिलन शायद पहली बार एक महत्त्वपूर्ण राजनीतिक प्रयोग के दौरान हुआ। जयप्रकाश ने पंचायती राज के प्रयोग की सफलता के लिए अपनी ओर से कुछ नहीं उठा रखा। उन्होंने इसके पक्ष में लेख लिखे, इस विषय पर आयोजित गोष्ठियों, परिसंवादों एवं सभा-सम्मेलनों में भाग लिया और सारे देश में इसके अनुकूल वातावरण बनाने की कोशिश की। उस समय गैरसरकारी नेताओं में जयप्रकाश ही पंचायती राज के सबसे बड़े प्रवक्ता थे।

परंतु, पंचायती राज की सरकारी योजना और जयप्रकाश की कल्पना में एक महत्त्वपूर्ण अंतर था और है। सरकारी योजना का मुख्य उद्देश्य ग्राम-पंचायत, पंचायती समिति और जिला परिषद् के माध्यम से जनता को विकास का दायित्व और अधिकार सौंपकर विकास-कार्यक्रमों में उसका सक्रिय सहयोग प्राप्त करना था। इस दृष्टि से लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण की दिशा में जो कदम उठाए गए, उनकी एक सीमा थी। वास्तव में यह जिला परिषद् के ऊपर राज्य सरकार और केंद्र सरकार के अधिकार ज्यों के त्यों रखकर संसदीय व्यवस्था में ही पंचायती राज को 'फिट' करने की योजना थी, जब कि जयप्रकाश पंचायती राज द्वारा सामुदायिक राज्य-व्यवस्था की नींव डालना चाहते थे और सिर के बल खड़े राज्य सत्ता के 'पिरामिड' को उलटकर उसे उसके चौड़े आधार पर प्रतिष्ठित करना चाहते थे। जैसा कि आगे चलकर प्रकट हुआ, सरकारी प्रयोग ग्राम-पंचायत से जिला परिषद् तक पंचायती लोकतंत्र और उसके ऊपर संसदीय लोकतंत्र की खिचड़ी कल्पना के आधार पर शुरू किया गया था। जयप्रकाश के शब्दों में यह 'लोकतंत्र के दो भिन्न सिद्धांतों एवं प्रक्रियाओं का बिल्कुल अनमेल मिश्रण था जो पानी और तेल के समान कभी मिल नहीं सकते थे।' उन्होंने इस योजना की विसंगतियों की ओर बार-बार सरकारी नीति-निर्माताओं का ध्यान आकृष्ट किया। लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण के विचार को ग्राम-सभा से लोक-सभा तक के संपूर्ण ढांचे पर लागू करने की आवश्यकता पर वे हमेशा बल देते रहे।

आज जिसे हम गांव कहते हैं, वह जयप्रकाश के शब्दों में 'बालू कणों के समान' बिखरे हुए व्यक्तियों का 'आकृतिहीन समूह' मात्र है। ऐसे गांव के आधार पर सामुदायिक समाज की रचना नहीं की जा सकती और न पंचायती राज की कोई योजना सफल हो सकती है। सामुदायिक समाज, सामुदायिक लोकतंत्र और सामुदायिक राज्य व्यवस्था के निर्माण के लिए बुनियादी शर्त यह है कि गांव एक वास्तविक समुदाय बने। परंतु गांव तो एक समुदाय तभी बन सकेगा, जब गांव

के सभी लोगों के 'हितों में समानता' होगी और उनमें टकराव नहीं होगा। प्राचीन गांव में हितों का टकराव कभी होता भी था तो गांव की सामूहिक चेतना उसे समाधित कर लेती थी। अंग्रेजी साम्राज्यवाद ने ग्रामीण समाज में बिखराव के नये तत्त्व दाखिल किए। फिर स्वराज्य-प्राप्ति के बाद जो संविधान बना, उसने भी गांधी जी की पंचायती लोकतंत्र की कल्पना को ठुकराकर व्यक्तिवादी लोकतंत्र की स्थापना की, जिससे गांव में व्यक्तिनिष्ठ राजनीति का प्रवेश हुआ और गांव की रही सही एकता भी समाप्त हो गई। सत्ता के लिए प्रतियोगिता पर आधारित इस राजनीति ने गांव में बिखराव की प्रक्रिया और तेज कर दी है।

दस नवबंर को बंगलौर में आयोजित स्थानीय स्वशासन सम्मेलन में जे० पी० ने इसी सामुदायिक समाज के रूप और चिंतन के क्रम में कहा कि गांधी ने मनुष्य को अपने संपूर्ण चिंतन के केंद्र में रखा। अगर हम भी उसी मनुष्य तथा उसके कल्याण को अपनी यात्राओं का गंतव्य मान लें तो हम इस तरह बार-बार गांधी की खोज किया करेंगे। इसलिए नहीं कि हम उस या उस प्रकार के सामाजिक ढांचे में विश्वास करते हैं बल्कि इसलिए कि हम मनुष्य में विश्वास करते हैं और उसे अपने संपूर्ण कार्यक्रम के केंद्र में रखने की कोशिश कर रहे हैं।

उन्नीस सौ इकसठ के शुरू में ही जे० पी० ने सहभागी लोकतंत्र (पार्टिसिपेटिंग डिमोक्रेसी) के चिंतन की, यानी सही अर्थों में जनता के राज्य की तस्वीर खड़ी की। उन्होंने गहराई में जाकर पाया कि हमारे लोकतांत्रिक कार्यकलापों में केवल थोड़े से शिक्षित मध्य वर्ग के लोग संलग्न हैं, और उनमें भी वही हैं जो प्रत्यक्ष रूप से राजनीतिक कार्यों में लगे हुए हैं। परिणामस्वरूप हम पाते हैं कि हमारा लोकतंत्र एक बहुत ही संकीर्ण आधार पर टिका हुआ है। वह उल्टे पिरामिड की तरह सिर के बल खड़ा है। स्पष्टत: हमारा काम लोकतंत्र की इस तस्वीर को दुरुस्त करना है और पिरामिड को उलटकर उसके आधार पर खड़ा करना है। प्रत्येक बालिग भारतीय को वोट देने का अधिकार होने मात्र से पिरामिड अपने आधार पर खड़ा नहीं हो जाता। करोड़ों व्यक्ति और अस्त-व्यस्त मतदाता बालू कणों के ढेर के समान हैं जो किसी इमारत की बुनियाद नहीं हो सकते। इन कणों को ईंट बनाना होगा अथवा उन्हें ठोस ढांचे में ढालना होगा। तभी वे नींव के पत्थर बन सकेंगे। अत: यह स्पष्ट है कि यदि अपने लोकतंत्र को सुदृढ़ और टिकाऊ बनाना है तो उसके आधार को व्यापक रूप देना ही होगा और उसकी ऊपर की परतों का निर्माण बुनियादी रचना के अनुरूप करना होगा। यदि बुनियाद मजबूत होगी तो किसी दु:साहसी के स्पर्श से लोकतंत्र की संपूर्ण इमारत के गिरने का खतरा कम रहेगा। हमारा देश ऐतिहासिक खंडहरों का देश है। आप किसी खंडहर को जाकर देखिये तो पता चल जाए कि जब कोई इमारत गिरती है तो क्या होता है। हमेशा सबसे पहले छत गिरती है और तब दीवारें गिरती हैं, ऊपर की मंजिलें पहले और बाद में नीचे की मंजिलें गिरती हैं, परंतु हजारों वर्ष बीत जाने के बाद भी नींव के पत्थर ज्यों के त्यों रह जाते हैं। कोई इमारत चाहे कितनी ही ऊंची हो, उसका टिकाऊपन बुनियाद तथा नीचे के आधार भूत स्तम्भों की मजबूती पर निर्भर करता है।'

सर्वोदय आंदोलन ने शांति और रचना के निमित्त जो कार्य शुरू किया उसके फलस्वरूप भारतीय तरुण शांति-सेना की प्रतिष्ठा हुई। विश्वशांति की निष्ठा को गति और गरिमा देने के लिए इकसठ के सितंबर, लंदन में अंतर्राष्ट्रीय शांतिवादियों की निशस्त्रीकरण परिषद् में जयप्रकाश ने भाग लिया। इसी वर्ष के अंत, दिसंबर में चेब्रोल (आंध्र) में तेरहवें अखिल भारतीय सर्वोदय-सम्मेलन का आयोजन हुआ। उसमें विनोबा नहीं आ सके थे। जे० पी० ही सम्मेलन के केंद्रबिंदु थे। वहीं जे० पी० ने विश्वशांति-सेना के निर्माण का मार्ग प्रशस्त किया। सिर पर पीला वस्त्र, दाईं बांह पर शांति-सेना का बिल्ला बांधे इन्होंने शांति के निर्माण का अनोखा संकल्प लेने वाली सेना का नेतृत्व किया।

विनोबा, जयप्रकाश तथा यूरोप अफ्रीका और अमेरिका के प्रसिद्ध शांतिवादियों—माइकेल स्काट, लार्ड रसेल, कैनेथ कौंडा, जूलियस न्यारे, मार्टिन लूथर किंग आदि की सहमति और सम्मति से बेरुत में विश्वशांति-सभा का गठन किया गया। तीन अध्यक्षों में एक अध्यक्ष जयप्रकाश निर्वाचित हुए।

सन् बासठ, जे० पी० के जीवन में कई महत्त्वपूर्ण घटनाएं लेकर आया। अफ्रीकी स्वातंत्र्य-संघर्ष में इनका योग उल्लेखनीय है, 'पैन अफ्रीकन फ्रीडम मूवमेंट' के तत्त्वावधान में आयोजित 'शांति मार्च' में भाग लेने के लिए छः मई को जयप्रकाश भारत से नैरोबी पहुंचते हैं। विश्वशांति-सेना के तीनों अध्यक्ष रेवरेंड माइकेल स्काट, रेवरेंड ए० जे० मस्टे और जयप्रकाश दारेस्सलाम में चार दिनों तक विचार विनिमय के लिए मिले। 'अफ्रीका फ्रीडम एक्शन कमेटी' को जे० पी० द्वारा एक नैतिक स्फूर्ति और आत्मशक्ति प्राप्त हुई। 'पैन अफ्रीकन फ्रीडम मूवमेंट की ओर से आयोजित टांगानिका के पश्चिमी भाग में एक रैली को संबोधित करते हुए जे० पी० ने बताया कि रोडेशिया के स्वराज्य आंदोलन का अत्यधिक महत्त्व है। उन्होंने उसे पूर्वी, उत्तरी, दक्षिणी अफ्रीका की स्वतंत्रता की कुंजी कहा।

जून के अंत तक अफ्रीका से लौटकर दिल्ली में पारमाणविक अस्त्रों के विरोध में विश्व के शांतिवादी 'गांधी-शांति-प्रतिष्ठान' में एकत्र हुए, जे० पी० ने पूर्ण निशस्त्रीकरण का प्रतिपादन किया। और जुलाई के अंत में जांसटन द्वीप में होने वाले अमेरिकी पारमाणविक परीक्षण के विरोध में सत्याग्रहियों को ले जाने की कल्पना की। पर कम समय और अधिक दूरी, विदेशी मुद्रा के अभाव के कारण नौका द्वारा सत्याग्रहियों को भेजने की योजना पूरी न हो सकी।

बारह अक्टूबर को चीन ने नेफा पर आक्रमण किया और बहुत तेजी से चीन ने भारत की सीमा का अतिक्रमण करना शुरू किया। भारतीय सेना को बुरी तरह हराकर और अक्साई चीन का सारा हिस्सा दबोचकर चीन ने एकाएक युद्ध बंद कर दिया। इस पूरी घटना को जे० पी० ने चीन की चुनौती माना। उसे सैनिक और वैचारिक दो प्रकार के आक्रमणों की संज्ञा दी। 'चीन की चुनौती', 'यह वैचारिक आक्रमण है', 'चुनौती का उत्तर' ये तीन वक्तव्य दिए। पहले वक्तव्य में जे० पी० ने कहा : 'अभी हमारे सीमा प्रदेश के बारे में चीन का झगड़ा हुआ और कई हजार वर्गमील हमारी भूमि पर चीन ने कब्जा कर लिया, ऐसा कहा जाता है। अगर हमने सैनिक तैयारी की तो यह जो भूमि है, अगर बातचीत से हमें प्राप्त

नहीं होती है, तो लड़कर फिर हमें वापस लेनी चाहिए। इस प्रकार चीन और भारत के बीच लड़ाई हो, तो उसका क्या परिणाम होगा ? चीन भी फिर तैयारी करेगा और वह भी इस बात की कोशिश करेगा कि भारत ने जो लिया, वह छीन ले। इस प्रकार भारत चीन के झगड़े से दुनिया की लड़ाई भी शुरू हो सकती है। तो यह सारा करने के बाद भी भारत चीन का झगड़ा खत्म न हो, बल्कि उल्टे सारी दुनिया में आग लग जाए, तो क्या होगा ?'

दूसरे वक्तव्य में कहा : 'चीन ने अक्टूबर में जब हमला किया तो सारे देश में एकता की अपूर्व लहर आई। उस उत्साह और भावना का एक असर सारे देश पर हुआ और चीन पर भी हुआ। हम लोगों की छाती भी खुशी से फूल उठी कि आखिर इस देश में अपनी एक आन है, जिस पर मर मिटने को यह तैयार हो जाता है। लेकिन केवल भावना से काम नहीं होता। चीन साम्यवादी देश है। उसके पास एक बड़ी भारी सेना, पच्चीस लाख की है। हमारी फौजी तैयारी उसके मुकाबले में बहुत थोड़ी थी। लेकिन चीन का वह खतरा असली नहीं है। सब से बड़ा खतरा वैचारिक आक्रमण का है। इसकी ओर देश के नेताओं ने भी संकेत किया है। सैनिक आक्रमण उसका एक हिस्सा है। वह चीनी साम्यवाद का प्रसार सारे एशिया में करना चाहता है।'

तीसरे वक्तव्य में कहा : 'इस चुनौती का उत्तर देना है। मैंने कहा है कि इसका जवाब राज्य स्तर पर 'लोकतांत्रिक समाजवाद' है। पंडित नेहरू कहते रहे हैं कि संकटकालीन स्थिति में भी हम समाजवाद को छोड़ेंगे नहीं। लेकिन राज्य की गाड़ी बहुत धीमी गति से बढ़ती है। जनता के स्तर पर यदि हम आप उत्तर दें तो राज्य को भी मदद और सहूलियत होगी। और जनता का उत्तर सर्वोदय ही हो सकता है। सर्वोदय की परिभाषा स्वैच्छिक समाजवाद या स्वैच्छिक साम्यवाद है। वह 'पिपुल्स' सोशलिज्म अथवा 'पिपुल्स' कम्युनिज्म है, जनता का समाजवाद या जनता का साम्यवाद है। वह कानून या तलवार से लादी हुई चीज नहीं है। आज देश में रक्षा की भावना का उदय हुआ है। यह एक अच्छी निशानी है। मानव समाज का इतिहास बताता है कि कितनी ही सभ्यताएं जो नीचे गिरीं वह इसलिए कि उस समय जो भी चुनौतियां अंदर और बाहर से उठीं, जब तक जवाब दिया जाता रहा, तब तक उनका विकास होता रहा, लेकिन जब उत्तर नहीं दे पाईं, तो उनमें गिरावट हुई। आज भी यदि चीन की चुनौती का जवाब नहीं दिया गया, तो देश उठेगा नहीं। देश को मजबूत बनाना है, यह अच्छी बात है। लेकिन केवल सैनिक दृष्टि से मजबूत बनाना है, ऐसी बात नहीं। वह तो बहुत अधूरा और अपूर्ण उत्तर साम्यवाद का है। साम्यवाद का उत्तर सर्वोदय ही हो सकता है।'

जे० पी० के विचार सुनने के लिए तीन नवंबर को पटना के गांधी मैदान में टाइम्स आफ इंडिया के मुख्य संवाददाता और बुद्धिजीवी जितेंद्रसिंह ने चीनी आक्रमण के खिलाफ एक आम सभा की थी। फणीश्वरनाथ रेणु उसके अध्यक्ष थे। उसी में जे० पी० बोले थे : अहिंसा मेरे लिए दर्शन नहीं व्यवहार है।' फिर क्या करें ? गुलाम तो होना नहीं है। तो क्या यादवों की तरह मर कट कर समाप्त हो जाएं ?

उन्नीस सौ तिरसठ में कामराज योजना का कार्यान्वियन हुआ था। पच्चीस अगस्त को जे० पी० ने गद्दी त्यागने वाले कांग्रेसी नेताओं को धन्यवाद दिया था। आठ सितंबर को गोहाटी पहुंचकर अपने एक वक्तव्य में जे० पी० ने कहा : 'मैं नहीं समझता कि प्रधानमंत्री नेहरू ने कामराज योजना की भावना के अनुरूप आचरण किया है।'

दस से बारह अगस्त को विनोबा की यात्रा बिहार के सिंहभूमि जिले में हुई। बारह अगस्त को बहरागोड़ा पड़ाव पर उन्होंने बिहार सर्वोदय मंडल को विघटित करने का सुझाव दिया। इकतीस अगस्त को पटना बिहार सर्वोदय मंडल की एक महत्त्वपूर्ण बैठक हुई। अध्यक्ष थे जे० पी०। विघटन के प्रश्न पर जे० पी० ने कहा कि कोई भी विचारक संगठन को बहुत महत्त्व नहीं देता। संगठन होना चाहिए या नहीं, यह एक विचारणीय प्रश्न है। खासकर जब हम अहिंसक समाज के संदर्भ में सोचते हैं। हम समाज का ऐसा ही संगठन बनाना चाहते हैं जो प्रेम के आधार पर चले। उसमें व्यक्ति स्वतंत्र हो, बंधन मुक्त हो, नियंत्रण मुक्त हो।

बिहार प्रादेशिक सर्वोदय मंडल के विघटन के बाद, जे० पी० ने गया जिले में ग्राम-दान के काम को सघन रूप से करने का निश्चय किया। इसके साथ ही शांति-सेना का काम भी शुरू किया। इस सिलसिले में उनका एक व्यापक दौरा जिले के विभिन्न भागों में जून-जुलाई में हुआ।

सितंबर के अंत में पंचदिवसीय गोष्ठी का आयोजन 'योजना आयोग' की ओर से दिल्ली के भारत अंतराष्ट्रीय केंद्र में 'विकासशील अर्थव्यवस्था में सामाजिक कल्याण' विषय पर हुआ। छब्बीस सितंबर को जे० पी० ने व्याख्यान दिया : 'सामाजिक क्रांति के लिए जनशक्ति का पुनर्जीवन आवश्यक है। जनता की आंतरिक शक्ति जो गुलामी के कारण दुर्बल हो गई है, उसे सामाजिक कर्तव्य की प्रक्रिया से पुनर्जीवित करने का काम सामाजिक कार्यकर्ताओं का है।'

ग्यारह अक्टूबर, जे० पी० के जन्म-दिन पर गया जिले में बाराचट्टी अंचल के ग्राम-दानी गांव मनफर में बहुत बड़ा आयोजन किया गांव वालों ने। उसमें जे० पी० ने कहा : 'अध्यात्मवाद एवं भक्ति के कारण नहीं, क्रांतिकारी विचारों के कारण मुझे मृत्यु से बिल्कुल भय नहीं है...।'

सन् तिरसठ के नवंबर में आरामबाग का संघ अधिवेशन विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण था। ग्रामदान आंदोलन के बारह वर्ष बीत चुके थे। बीते हुए समय के अनुभवों का वहां गहरा परीक्षण हुआ और उसकी रोशनी में आगे का मार्ग निश्चित हो सके इसी पर जे० पी० ने बल दिया। आरामबाग में ही भूमि-समस्या विषय पर एक परिसंवाद आयोजित हुआ। जे० पी० के विचार : 'यदि जनता आपसे आप अपनी समस्याएं सुलझा ले तथा अपने जीवन को व्यवस्थित और विकसित कर सके, तो न सर्वसेवा संघ की आवश्यकता रहेगी, न किसी पार्टी या पक्ष की और न राज्य-प्रशासन आदि की, इस प्रकार की जनशक्ति का निर्माण हो, यही तो सर्वोदय आंदोलन का मुख्य उद्देश्य है।' अधिवेशन के समाप्त होने पर संघ विनोबा के पड़ावों पर चलता रहा।

आरामबाग सम्मेलन में ही जे० पी० ने निर्णय लिया कि देश भर में घूमने के बजाय किसी क्षेत्र को चुनकर वहां सघन रूप से ग्रामदान तथा शांति-सेना का

काम करूं। इसके लिए जे० पी० ने गया, पूर्णिया और संथाल परगना इन तीनों जिलों में काम करने का संकल्प लिया।

इन दिनों टांगों में बराबर तकलीफ रहने के कारण वे बहुत पैदल तो नहीं चल सकते थे। ज्यादा से ज्यादा तीन मील पैदल चलते थे। इसीलिए जे० पी० एक-एक अंचल में तीन-चार पड़ाव डालकर पैदल ग्राम-दान का कार्य करते थे।

6

उन्नीस सौ चौंसठ के शुरू में जवाहरलाल नेहरू के अस्वस्थ हो जाने के बाद नेहरू के बाद कौन, यह राष्ट्रीय प्रश्न बनकर छा गया। इसके उत्तर में जे० पी० ने कहा कि यह प्रश्न हमारे कमजोर मानस का परिचायक है। नेहरू के बाद कौन ? इस प्रश्न का उत्तर है, नेहरू के बाद जनता। हमारे देश में जनता का राज है। इतिहास की एक विशेष परिस्थिति में नेहरू इस देश के प्रधानमंत्री बने। सोलह साल की आजादी के बाद अब जनता इतनी जागरूक तो हो ही गई होगी कि वह देश को एक नया नेतृत्व दे सके। अगर जनता में ऐसी जागरूकता नहीं आई है, तो ऐसी जागरूकता लाने का प्रयास करना चाहिए। जो लोग जयप्रकाश नारायण को प्रधानमंत्री के पद पर देखना चाहते हैं, वे यह भूल जाते हैं कि वे जनता को जागरूक बनाने का महत्त्वपूर्ण काम कर रहे हैं। नेहरू के बाद कौन ? इस प्रश्न से भी ज्यादा महत्त्व का प्रश्न है : नेहरू के बाद क्या ? अगर इस देश में लोकतंत्र को जिंदा रहना है, तो इस दूसरे प्रश्न का उत्तर देना होगा। यदि इस दूसरे प्रश्न का उत्तर नहीं दिया गया, तो नेहरू के बाद चाहे जो व्यक्ति प्रधानमंत्री बने, लोकतंत्र की बुनियाद आज की तरह ही कमजोर बनी रहेगी।

पटना में तीस जनवरी को राष्ट्रपिता गांधी की पुण्यतिथि के अवसर पर एक महती जनसभा में भाषण देते हुए जे० पी० ने कहा कि भारत के विभाजन से किसी भी सवाल का हल नहीं हुआ। आपने कहा कि विभाजन का सिद्धांत और प्रेरणा गलत थी, इसलिए परिणाम उल्टा हुआ। जयप्रकाश ने आगे कहा अब भारत और पाकिस्तान के नेताओं में दोनों देशों को एक दूसरे के करीब लाने की हिम्मत और दूरदर्शिता होनी चाहिए और दोनों को यह समझना चाहिए कि उनके सारे सवालों का हल तभी होगा, जब दोनों देश मिलकर तय करेंगे कि उन्हें फिर एक दूसरे के नजदीक आना है और फिर एक दूसरे को एक दूसरे के बंधन में बांधना है। आगे जे० पी० ने कहा कि फिर संयुक्त भारत हो जाय, यह संभव नहीं है। लेकिन ऐसा कुछ होना चाहिए कि दोनों देश एक दूसरे के निकट आएं, दूसरा कोई रास्ता दीखता नहीं है।

मार्च के मध्य में जमशेदपुर में सांप्रदायिक दंगे और दुर्भाग्यपूर्ण घटनाएं हुईं। अप्रैल के प्रारंभ में जे० पी० वहां शांति की स्थापना करने और पागल हुए नौजवानों को समझाने बुझाने गए। पांच अप्रैल चौंसठ को जमशेदपुर में आयोजित एक सार्वजनिक सभा में जे० पी० ने कहा : आज अपने देश में एक अजीब तरह की परिस्थिति बनी है। इस परिस्थिति में जो कुछ (सांप्रदायिक) घटना घटी है,

वह इस परिस्थिति का हिस्सा है। मैं चाहता हूं कि आप इन घटनाओं से जरा पीछे हटकर नजर डालें और जो आज परिस्थिति पैदा हुई है, जिस खतरे से आज हमारा देश गुजर रहा है उसको समझने की कोशिश करें। यह खतरा हमारे अंदर से पैदा हुआ है। हमारे दिमागों में यह खतरा है। भारत का हजारों वर्ष का इतिहास बताता है कि भारत के दुश्मन भारत के बाहर से नहीं आए, अंदर से पैदा हुए। जब हमारे आपस में झगड़े हुए, हमारे अंदर फूट हुई, तो जो आया हमें लात मार कर गया, लूट-पाट कर गया। जब हम एक थे तो सिकंदर को, यानी उसके सेनापति सेल्यूकस को भी परास्त करके यहां से लौटाया गया। उसी तरह आज हमारे घरों में, अपने देश में, हम खुद ही अपने दुश्मन बन रहे हैं। जैसा कि मैंने ऊपर कहा, दुश्मन हमारे दिमागों में बैठा है। हमारे दिमागों में आज ऐसी एक हालत पैदा हुई है कि हम अपने पर काबू नहीं रख पा रहे हैं। एक मानसिक अराजकता सी फैली हुई है और तरह-तरह से वह अराजकता प्रकट हो रही है।

इस पूरे वर्ष में जे० पी० का जीवन प्रभावती की डायरी में शब्दबद्ध है :

25-1-64 : दिल्ली

जे० पी०, नंदा जी, लालबहादुर जी, कामराज जी और पं० जवाहरलाल जी से मिले। जे० पी० कहते थे : जब पंडित जी को देखने गए, उनको चुप बैठे देख कर एक मिनट तक कुछ बोल नहीं सका। दिल भर आया।'

5-2-64 : दिल्ली

मैं सुबह 10 बजे पंडित जी, इंदिरा जी से मिली। पंडित जी को देखकर मुझे बड़ा दुख हुआ। यद्यपि वे एकदम अच्छे थे। मुस्करा रहे थे। फिर भी पहले की-सी रौनक चेहरे पर नहीं थी।

6-2-64 : दिल्ली

मुझे जब जे० पी० से राजकुमारी अमृतकौर बहन के देहांत की खबर मिली तो मैं स्तब्ध रह गई। सोचा, परसों ही तो मीटिंग के लिए आई थीं। ईश्वर की लीला। कौन जानता है, कब किसका बुलावा आ जाएगा? मैं उनके घर गई। बड़ी भीड़ थी।

24-2-64 : पटना

शाम को जे० पी० तारासिंह को सदाकत आश्रम दिखाने ले गए। बाद में गंगा के किनारे बांध पर गंगा का दृश्य दिखाते थे। फिर नन्द जी बाबू जे० पी० से बात करने आ गए। इतने में जे० पी० भूल गए कि बांध पर हैं। सपाट जमीन समझकर चलने के लिए पैर बढ़ाया कि बांध पर से नीचे सड़क की तरफ गिरे, जो पांच, छः फुट ऊंचा है। चोट लगी। दोनों पैर दो तीन जगह कट गए। पकड़ कर उठाया। चक्कर आ गया। कुछ मिनट बेहोश जैसे हो गए। फिर अस्पताल में ले गए।

यहां समिति में टेलीफोन से खबर मिली। सब तुरंत पहुंचे। तब तक जे० पी० का सब कुछ जांच करा लिया गया था। उनको बहुत उल्टी आ रही थी। बेचैन थे। अस्पताल का नियम है कि रोगी के साथ उनके घर वाले या मित्र को नहीं रहने देते। इसी कारण सबको बाहर भेज दिया। मैं जे० पी० के पास रही। रात

भर कुर्सी पर बैठी रही, यद्यपि नर्सों ने मुझे खाने पीने सोने के लिए बहुत कहा। जे० पी० को एक इंजेक्शन लगा दिया। वे सो गए।

27-4-64 : दिल्ली

सुबह ट्रेन में पूज्य बापू जी के मेरे नाम और जयप्रकाश के नाम का पत्र पढ़ा। जे० पी० को भी पढ़ाया, और उसे भी छपने के लिए देने की बात सोची। अमृतलाल भाई नानावटी से मिलकर पूछेंगे।

जे० पी० से मैंने कहा कि कोई नहीं जानता, हम दोनों में से पहले कौन जाएगा। लेकिन मैं पहले चली जाऊंगी, तो मेरे पास कितने पत्र हैं, पूज्य बापू जी के भी, सब फाड़कर जला दिये जाएं। एक भी रखना या किसी को देना नहीं है।

27-5-64 : ट्रेन में

बहुत दुख है, आज दो बजे दिन में दिल्ली में पं० जवाहरलाल नेहरू की मृत्यु हो गई। हार्टअटैक हुआ। सुबह 6 बजे से बीमार पड़े। जे० पी० को यह खबर कलकत्ता में मिली। वे मद्रास का कार्यक्रम रद्द कर शाम के विमान से दिल्ली चले गए।

इसी वर्ष जे० पी० द्वारा लिखित 'कश्मीर की कहानी' कटु सत्यों पर आधारित एक दर्दनाक कहानी है। इसे पढ़कर दिल को एक ठेस तो लगती है, लेकिन उसकी सच्चाई से इन्कार नहीं किया जा सकता।

जे० पी० ने अपने प्रयत्नों से शेख अब्दुल्ला की रिहाई की और शेख के नेतृत्व में कश्मीरी जनता के आत्मनिर्भरता के अधिकार की मांग की।

तीन मई को नई दिल्ली में आयोजित अणुव्रत आंदोलन की एक सभा में भाग लेकर जे० पी० पांच मई को पटना में सर्वोदय कार्यकर्ताओं की कार्य गोष्ठी में असत्य और हिंसा की चुनौती के लिए मुकाबला करने की योजना देकर छः मई को प्रभावती के साथ नागालैंड की यात्रा पर जाते हैं। वहां जे० पी० नागालैंड में शांति-स्थापना का प्रयास करते हैं। शांति-मिशन के सदस्य के रूप में माइकेल स्काट के साथ जे० पी० ने कुछ विद्रोही नागाओं से संपर्क किया और उनसे अपील की कि वे नागालैंड को भारत से अलग करने का विचार छोड़ दें। जे० पी० अपने उस शांति-मिशन में दो सप्ताह तक नागालैंड में रहे।

इस बीच पाकिस्तान के राष्ट्रपति अयूब खां ने जे० पी० को भारत पाक संबंधों पर वार्ता के लिए आमंत्रण भेजा था जिसे जे० पी० ने स्वीकार किया।

सत्ताईस मई को अपराह्न दो बजे जवाहरलाल नेहरू के निधन का समाचार जे० पी० को मिला। उस वक्त जे० पी० नागालैंड से कलकत्ता लौटे थे। उन्होंने कहा : 'आज जहाज का कप्तान ही नहीं रहा। देशवासियों का नेता आज उन्हें अकेला छोड़कर चला गया। अगर हम आंधी से उद्वेलित सागर में राष्ट्र की नौका को सुरक्षित रूप से ले जाना चाहते हैं और अपने दिवंगत नेता के प्रति सच्चा और ईमानदार रहना चाहते हैं तो हमें चाहिए कि हम इस समय साहस और अनुशासन से काम लें तथा एक दूसरे के कंधे से कंधा मिलाकर खड़े हों।'

चार से आठ जून तक सर्वोदय आश्रम सोखोदेवरा में जे० पी० ने आश्रम परिवार के बीच नेहरू के बारे में कहा कि नेहरू की वसीयत बहुत दर्द भरी है।

करुण है। वह एक कविता है। पैंतालीस करोड़ लोग आज यह महसूस कर रहे हैं कि वे अनाथ हो गए···। पंचायती राज्य और लोकतांत्रिक समाजवाद की प्रतिष्ठा के लिए जुलाई में मद्रास और बंगलौर का दौरा करके जे० पी० दिल्ली में नागालैंड समस्या के संबंध में प्रधानमंत्री लालबहादुर शास्त्री से मिले और अगस्त में फिर कोहिमा पहुंचे। वहां जे० पी० ने भारत सरकार के प्रतिनिधि मंडल तथा भूमिगत नागा नेताओं के बीच समझौते के मसविदे के प्रमुख मुद्दों पर मतैक्य किया।

सितंबर के पहले सप्ताह में जे० पी० पांच सदस्यीय सद्भावना मिशन के नेता के रूप में रावलपिंडी पहुंचे। जयप्रकाश के मिशन में श्री जे० जे० सिंह, मंत्री भारत-पाकिस्तान मैत्री मंडल, श्री शिवाराज, पत्रकार, श्री एस० मुलगांवकर, संपादक, 'हिंदुस्तान टाइम्स' तथा सर्वसेवासंघ के मंत्री श्री राधाकृष्ण शामिल थे।

लाहौर के हवाई अड्डे पर जयप्रकाश नारायण का स्वागत विभिन्न राजनीतिक दलों के नेताओं और प्रमुख नागरिकों ने किया। स्वागत करने वालों में पश्चिम पाकिस्तान मुस्लिम लीग के प्रमुख मियां अमीरुद्दीन तथा नेशनल अवामी पार्टी के नेता मियां महमूद अली काजरी उपस्थित थे।

रावलपिंडी के हवाई अड्डे पर पत्रकारों से बातचीत करते हुए जे० पी० ने कहा : 'मैं और मेरे साथी व्यक्तिगत तौर पर पाकिस्तान आए हैं। लेकिन मेरे मिशन को भारत सरकार का सहयोग और सहानुभूति प्राप्त है, यद्यपि वह (भारत सरकार) इससे किसी प्रकार बंधी हुई नहीं है।'

जयप्रकाश ने कहा : 'अगर भारत और पाकिस्तान अपने सत्रह साल पुराने मतभेदों के हल की तरफ एक कदम भी बढ़ते हैं, तो मेरा यहां आना सार्थक होगा। हम लोग कश्मीर-समस्या को सुलझाने के लिए प्रयास कर रहे हैं, और हम चाहते हैं कि पाकिस्तान के लोग हमारे दृष्टिकोण को समझें।'

यह पूछे जाने पर कि क्या आपके मिशन के सफल होने की आशा है, जयप्रकाश नारायण ने कहा : 'मैत्री में विश्वास करने वाले और उसके लिए प्रयास करने वाले हमेशा आशान्वित होते हैं। आशारहित होकर कोई ऐसे काम को शुरू नहीं कर सकता।'

एक प्रश्न के उत्तर में जयप्रकाश ने बताया कि राष्ट्रपति अयूब तथा अन्य पाकिस्तानी नेताओं से हमारी बातचीत केवल भारत-पाक विवादों तक सीमित नहीं रहेगी, हम दोनों देशों के पूरे भावी संबंधों के बारे में बातचीत करेंगे।

उन्नीस सौ चौंसठ और पैंसठ का वर्ष जे० पी० के जीवन का काफी अप्रिय वर्ष रहा है। कश्मीर की करुण कथा से लेकर नागालैंड, अक्साईचिन और भारत पाक प्रश्न पर परंपरागत राजनीति और संकुचित राष्ट्रवादी दृष्टि से अलग हट कर जिस तरह से परम मानवीय और मुक्त ढंग से जे० पी० ने सोचा और कार्य किया, उसने उन्हें परंपरावादी राजनीति पर आस्था रखने वालों की नजरों में काफी अप्रिय बनाया। जनवरी पैंसठ के 'धर्मयुग' द्वारा आयोजित एक विशेष परिचर्चा में जे० पी० ने कहा : 'मैं अपने भरसक इस दायित्व से हटता नहीं।

पिछले कुछ समय से मैं जो देश में अप्रिय हुआ हूं, वह जान बूझकर ही हुआ हूं। जो कुछ मैं ठीक समझता हूं, देश के हित में समझता हूं, वह कह देता हूं, चाहे किसी को अच्छा लगे या न लगे। हंगरी और तिब्बत के प्रश्न पर भी मैंने ही आवाज उठाई थी। चीन और पाकिस्तान का सवाल भी मैंने ही उठाया है। यह बात नहीं है कि अब कोई और जयप्रकाश बोल रहा है, जयप्रकाश अब भी वही है जो पहले था।'

जे० पी० के इन्हीं विश्वासों और अहंकारहीन कार्यों से उन्हें एक प्रकाशमय व्यक्तित्व मिल रहा था। उसी में से फूट रहे थे उनके वे नये विचार, वे जीवन-दर्शन जो दुख, परतंत्र मानवता को एक दिशा देने वाले हैं।

तीस जनवरी पैंसठ को शांति-दिवस के अवसर पर गांधी मैदान पटना में आयोजित महती सभा में जे० पी० ने कहा : 'शांति का समाज सहयोगपर बन सकता है, प्रतियोगिता पर नहीं।···हर राष्ट्र के इतिहास में ऐसा देखा गया है कि राष्ट्रीय समस्याओं के संबंध में, राष्ट्र के सेवकों में, नेताओं में मतभेद रहे हैं। जहां लोकतंत्र की परिपाटी है, वहां लोकतांत्रिक ढंग से इन मतभेदों को, वाद-विवादों को हल किया गया या उनका मुकाबला किया गया, और जहां लोकतंत्र नहीं है, वहां हिंसा से उनका हल हुआ।···पश्चिम के देश इस सिद्धांत को मानते हैं कि प्रतियोगिता जीवन का एक ऐसा तत्त्व है जिससे समाज की प्रगति होती है लेकिन उसमें से ऐसी शक्ति भी पैदा होती है जो समाज को पीछे ढकेल देती है। आज समाज में विज्ञान और अनुभव का जो विकास हुआ है, उससे ऐसे समाज की रचना संभव है जो परस्पर सहयोग पर आधारित हो।···जिस समाज में शोषण है, वहां शांति संभव नहीं।'

पैंसठ के ग्रीष्म-ऋतु में जे० पी० पूर्णिया और मुजफ्फरपुर जिलों में ग्रामदान का कार्य संपूर्ण करने में लगे रहे। वर्षा ऋतु शुरू होते ही जे० पी० हजारीबाग और गया जिलों में ग्राम-दान के कार्य में लगे। वर्षा ऋतु खत्म होते ही इनका राज्यव्यापी भ्रमण शुरू हुआ। विनोबा इन्हीं दिनों फिर बिहार आने वाले थे। उस समय तक जे० पी० को कम से कम एक हजार एक ग्राम-दान का कार्य पूरा कर लेना था।

इकतीस अगस्त को मनीला (फिलीपीन) से रैमन मैगसेसे पुरस्कार संस्थान की ओर से जे० पी० को जनसेवा के लिए 'रैमन मैगसेसे' पुरस्कार घोषित हुआ। साथ ही उन्हें फिलीपीन में 'एक नये समाज की ओर' विषय पर व्याख्यान देने के लिए भी आमंत्रित किया गया।

फरवरी सन् छियासठ में नागालैंड शांति मिशन से जे० पी० ने त्यागपत्र दिया। कारण बताते हुए उन्होंने जयपुर के पत्रकार-सम्मेलन में कहा : 'जब शांति-मिशन नागा प्रतिनिधि मंडल से दिल्ली स्थित आसाम हाउस में मिला था, उस समय बड़े दुख के साथ मैंने यह अनुभव किया कि भूमिगत नागा नेताओं का विश्वास मैंने खो दिया है।' किंतु शांति-मिशन के प्रति उनकी अविचल निष्ठा और निर्मिति में जे० पी० का योगदान आगे अक्षुण्ण रहा।

7

करुणा का एक नया प्रसंग
आया जब वर्षा के न होने के
अन्न जल के अभाव से
चरित्र में जो पुरुषार्थ
मनुष्य जे० पी० का था.
धरती की प्यास बुझा सके
धरती पर प्रकट करे तथा
जे० पी० ने अक्तूबर
कर, उसकी पहली बैठक
रिलीफ कमेटी के चार
से जिनमें प्रतिष्ठित राष्ट्र
से अधिक सहायता की
(ख) लोगों में अपनी
शक्ति छिपी हुई है, उ
(ग) खान-पान की आव
लोक-शिक्षण करना, औ
करना, जिससे कि वे का
के साथ किये जा सकें।
अभिक्रम और उनकी
हजारों वर्ष पहले दैव
अपनी रक्षा की थी।
का—जो हम सब लोगों
खड़े हो जाएं तो ईश्वर
जे० पी० ने पूरे
आत्मबल को जगाने
या पराश्रितों का रा
के लिए कटिबद्ध हों।
जे० पी० ने प्रश
किया। जे० पी०
और सदस्यता में मु
झा से लेकर बिहार
समाज, सर्वोदय मंड
बिहार चैम्बर्स आफ
पीड़ितों की रक्षा के
खासकर अंतर्राष्ट्री
करने वाली संस्था
इसके साथ ही

…ा हूं, वह जान बूझकर ही हुआ हूं।
…समझता हूं, वह कह देता हूं, चाहे
…र तिब्बत के प्रश्न पर भी मैंने ही
…सवाल भी मैंने ही उठाया है। यह
…रहा है, जयप्रकाश अब भी वही है

…हीन कार्यों से उन्हें एक प्रकाशमय
… उनके वे नये विचार, वे जीवन-
… वाले हैं।

…वसर पर गांधी मैदान पटना में
…ाति का समाज सहयोगपर बन
… इतिहास में ऐसा देखा गया है
…में, नेताओं में मतभेद रहे हैं।
…से इन मतभेदों को, वाद-
…ा गया, और जहां लोकतंत्र
… देश इस सिद्धांत को मानते
… समाज की प्रगति होती
… को पीछे ढकेल देती है।
…ुआ है, उससे ऐसे समाज
… हो।''' जिस समाज में

…रपुर जिलों में ग्रामदान
… जे० पी० हजारीबाग
… खत्म होते ही इनका
…बिहार आने वाले थे।
…-दान का कार्य पूरा

… पुरस्कार संस्थान
…र घोषित हुआ।
…व्याख्यान देने के

… ने त्यागपत्र
… कहा : 'जब
… मिला था,
… नेताओं का
… निष्ठा

7

करुणा का एक नया प्रसंग बिहार की धरती पर छियासठ और सड़सठ के बीच आया जब वर्षा के न होने के कारण भूमि प्यासी हो गई और कोटि-कोटि मनुष्य अन्न जल के अभाव से त्रस्त हो गया। बिहार अकाल से युद्धरत जे० पी० के चरित्र में जो पुरुषार्थ प्रकट हुआ, वह अविस्मरणीय है। यह पुरुषार्थ सर्वोदयी मनुष्य जे० पी० का था, जो हिमालय की विशाल नदियों की अनंत जलराशि से धरती की प्यास बुझा सके। और प्यासी धरती के गर्भ से छिपी जलराशि को धरती पर प्रकट करे तथा मनुष्य के अंतस् में सुप्त करुणा को जाग्रत् करे।

जे० पी० ने अक्टूबर सन् छियासठ में 'बिहार रिलीफ कमेटी' की प्रतिष्ठा कर, उसकी पहली बैठक में घोषणा की : 'जहां तक मेरी दृष्टि जाती है, इस रिलीफ कमेटी के चार काम होंगे : (क) स्वदेशी तथा विदेशी गैरसरकारी क्षेत्रों से जिनमें प्रतिष्ठित राष्ट्रीय रिलीफ एजेंसियां भी शामिल हैं, यथासंभव अधिक से अधिक सहायता की रकम और साधन मिलें, इसके लिए अपील करना, (ख) लोगों में अपनी सहायता आप करने तथा पारस्परिक मदद करने की जो शक्ति छिपी हुई है, उसका आह्वान करना और उसको संचालित करना, (ग) खान-पान की आदतों में सुधार, महामारियों के निवारण आदि के संबंध में लोक-शिक्षण करना, और (घ) सरकारी रिलीफ कार्यों के साथ-साथ सहयोग करना, जिससे कि वे काम क्षमतापूर्वक एवं गतिपूर्वक और समुचित ईमानदारी के साथ किये जा सकें। इनमें से हर काम महत्त्वपूर्ण है। लेकिन मैं लोगों के अभिक्रम और उनकी नैतिक शक्तियों को जाग्रत् करने पर विशेष जोर दूंगा। हजारों वर्ष पहले दैव कृपा से गोकुल के लोगों ने एक भयानक प्रलय के संकट से अपनी रक्षा की थी। मुझे विश्वास है कि अगर बिहार के लोग इस भयानक सूखे का—जो हम सब लोगों को निगल जाना चाहता है—मुकाबला करने के लिए खड़े हो जाएं तो ईश्वर हमारी सहायता करने में पीछे नहीं रहेंगे।'

जे० पी० ने पूरे बिहार में अकाल के खिलाफ लड़ने के उद्देश्य से जनता के आत्मबल को जगाने के लिए दौरा करते हुए जगह-जगह कहा : 'बिहार भिखमंगों या पराश्रितों का राज्य नहीं बनना चाहता। हमारे किसान प्रकृति के साथ लड़ने के लिए कटिबद्ध हों।'

जे० पी० ने प्रखंड, पंचायत और ग्राम-स्तर पर रिलीफ कमेटियों का गठन किया। जे० पी० की अध्यक्षता में बनी बिहार रिलीफ कमेटी की कार्यसमिति और सदस्यता में मुख्यमंत्री कृष्णवल्लभ सहाय और भूतपूर्व मुख्यमंत्री विनोदानंद झा से लेकर बिहार के समस्त राजनीतिक दलों के अध्यक्ष, मंत्री, भारत सेवक समाज, सर्वोदय मंडल, बिहार खादी ग्रामोद्योग, भारतीय महिला परिषद् बिहार, बिहार चैम्बर्स आफ कामर्स आदि के अधिकारी सम्मिलित हुए। उन्होंने अकाल-पीड़ितों की रक्षा के लिए बिहारवासियों, भारत के लोगों तथा जागतिक समुदाय खासकर अंतर्राष्ट्रीय रिलीफ संस्थाओं से जिनमें संयुक्त राष्ट्र के अधीन काम करने वाली संस्थाएं शामिल हैं, मार्मिक अपील की।

इसके साथ ही जे० पी० एक दूसरे धरातल पर युद्धरत थे। सड़सठ का चौथा

आमचुनाव होने को था। जे० पी० ने गिरती राजनीति और उठती लोकनीति को आवाज दी। इस अवसर पर इन्होंने एक नवीन राजनीति की रचना की। देश दल से बड़ा है और समाज सत्ता की राजनीति से बड़ा है। इसलिए जे० पी० ने कहा कि निर्दल लोकतंत्र और तदनुसार एक राष्ट्रीय सरकार देश में स्थापित हो। ग्यारह दिसंबर सन् छियासठ को दिल्ली के एक सम्मेलन में 'निर्दल लोकतंत्र' का नया विचार दिया।

सड़सठ का आम चुनाव हुआ और कांग्रेस सत्ताधारी पक्ष की मूर्ति खंडित हुई। पक्षगत राजनीति से सत्ताभिलाषी के सत्ताधारण के उस अवसर का जे० पी० ने स्वागत किया। आखिर एक विकल्प तो मिला। किंतु थोड़े ही समय बाद प्रकट हुआ कि प्रदेशों की संयुक्त सरकारें जनता की अपेक्षा और आकांक्षा की पूर्ति न कर सकीं। नये प्रश्न उठे—संविधान की अस्पष्टता और राजनीतिक आचार मर्यादा का अभाव। जे० पी० ने नैतिकता और लोकतंत्र के मौलिक सिद्धांतों की दृष्टि से उलझी राजनीति का विश्लेषण कर समाधान देने का प्रयत्न किया।

सन् सड़सठ के अंत में जे० पी० ने संपूर्ण बिहार-दान के संदर्भ में कार्य प्रारंभ किया। बिहार सरकार द्वारा स्वीकृत भूमि-सुधार कानून और अहिंसा के आधार पर नई समाज-रचना की अनिवार्यता पर जे० पी० ने समाधान-मूलक विचार प्रस्तुत किए। और बिहार के सब से बड़े जिले दरभंगा के तीन चतुर्थ से भी अधिक ग्रामों के नागरिकों ने अधिक भूमि-स्वामित्व के विसर्जन का संकल्प लेकर सर्वोदय-आंदोलन को जिला स्तर से ऊपर उठाकर प्रांत स्तर पर रख दिया।

जे० पी० ने सन् अड़सठ में सत्तर दिनों की नौ बड़े देशों की यात्रा कर भारत के नये जीवन के मसीहा की भूमिका का निर्वाह किया।

मार्क्स से महात्मा गांधी तक आने में और फिर अपने नये चरित्र और व्यक्तित्व की प्रतिष्ठा में इन दिनों जे० पी० जितने वैचारिक और कर्मयोगी के संघर्षों से गुजरे हैं वह इस उत्तरशती का जीवंत महाकाव्य है।

इस बीच एक करुण घटना घटी। तीस सितंबर सड़सठ को नई दिल्ली के विलिंगडन अस्पताल में लोहिया की पौरुष-ग्रंथि का आपरेशन हुआ था। अक्टूबर की दस तारीख को उनकी दशा गंभीर हो गई। खबर पाते ही जे० पी०, प्रभावती कर्पूरी ठाकुर, रामानंद तिवारी पटना के सभी प्रमुख डाक्टरों को साथ लेकर हवाई जहाज से दिल्ली पहुंचे थे। जे० पी० को देखकर लोहिया रो पड़े। फिर बेहोश हो गए। बारह अक्टूबर को नवरात्रि की नवमी को लोहिया का स्वर्गवास हो गया।

अस्पताल के कमरे की दीवार को पकड़कर जे० पी० रोते हुए बोले थे : ग्यारह अक्टूबर को मेरा जन्म हुआ था…।

जे० पी० अपने जन्मजात मित्र और सहयोगी राममनोहर की उस विदाई को आज तक नहीं भूल पाए।

8

जून सन् सत्तर के शुरू की घटना है। जयप्रकाश का शरीर थका हुआ था और लोगों के आग्रह से थोड़ा विश्राम के लिए वह हिमालय की गोद में पहुंचे थे। पौड़ी नामक स्थान में जे० पी० को बिहार से एक पत्र मिला और उससे मालूम हुआ कि मुजफ्फरपुर के नक्सलवादियों ने जिला सर्वोदय मंडल के अध्यक्ष बद्रीनारायण सिंह और मंत्री गोपाल मिश्र को मृत्यु के परवाने दिए हैं। प्राप्त सूचना के अनुसार उनकी हत्या की तारीखें क्रमशः पांच और सात जून निश्चित की गई थीं।

इस समाचार से जे० पी० को धक्का लगा और साथ ही साथ खुशी भी हुई। धक्का इसलिए लगा कि दो सहयोगियों का जीवन संकट में पड़ा था और खुश होने के कारण थे कि इन मृत्यु परवानों से जे० पी० को लगा कि नक्सलवादियों की कार्य-पद्धति में एक बड़ा परिवर्तन हुआ है और यह भास हुआ कि देश के महान् नेताओं जैसे रामकृष्ण परमहंस देव, स्वामी विवेकानंद, रवींद्रनाथ, महात्मा गांधी, सुभाषचंद्र बोस आदि की मूर्तियों, चित्रों और उनकी पुस्तकों जैसी निर्जीव वस्तुओं पर प्रहार करना छोड़ उन्होंने अब उन नेताओं के जीवित अनुयायियों और प्रशंसकों को अपने प्रहार का लक्ष्य बनाया था।

सर्वोदय कार्यकर्ताओं के जीवन पर उपस्थित इस संकट को जे० पी० ने ईश्वरीय वरदान माना। इधर कुछ अर्से से जे० पी० महसूस कर रहे थे कि सर्वोदय आंदोलन की आग ठंडी हो रही है और इससे कार्यकर्तागण निस्तेज और निष्प्राण बन रहे हैं। इसका एक कारण यह था कि सर्वोदय काम का रूप कुछ इतना सौम्य था कि उसमें इनके व्यक्तिगत जीवन पर कोई खतरा नहीं उपस्थित होता और न उसमें किसी बड़े बलिदान की मांग की जाती थी।

उत्तराखंड में जे० पी० को जब वह समाचार मिला तो उससे मेरी यह आंतरिक अनुभूति तीव्र और घनीभूत हो गई तथा हृदय और मस्तिष्क दोनों ने असाधारण रूप से एक मत कर अविलंब कुछ करने के लिए प्रेरित किया। हृदय ने हर मानवीय हृदय की भांति, आदेश दिया कि जिन्हें हत्या की धमकी दी गई है, मैं उनके बीच फौरन पहुंच जाऊं और उनके संकट में भागीदार बनूं। मस्तिष्क ने बार-बार कहा कि नक्सलवादियों की धमकी यह सिद्ध कर दिखाने के लिए एक त्वरायुक्त आह्वान है कि किस प्रकार हिंसा की चुनौती का उपयोग ठोस कार्य द्वारा विनोबा जी के ग्राम-दान, ग्राम-स्वराज्य आंदोलन के रूप में शुरू की गई अहिंसक समाज-परिवर्तन एवं पुनर्निर्माण की प्रक्रिया को तेज करने के लिए किया जा सकता है। इस प्रकार : 'तलाश की भावना से एक छोटा सा कार्यक्रम लेकर मैं इस क्षेत्र में इस संकल्प के साथ आया कि या तो यह काम पूरा होगा या मेरी हड्डी गिरेगी। मुजफ्फरपुर पहुंचकर मैंने उस जिले के मुसहरी प्रखंड में जम जाने का निश्चय घोषित किया, जहां नक्सलवादी लोग सक्रिय थे और चार हत्याएं तथा कम से कम एक सशस्त्र डकैती की थी और हमारे दो प्रमुख कार्यकर्ताओं को मृत्यु के परवाने दिए थे।'

तीन जून को मुजफ्फरपुर पहुंचते ही जे० पी० ने उसी शाम उन दोनों व्यक्तियों से मिलने की इच्छा प्रकट की जिन्हें क्रमशः पांच और सात जून को कत्ल

कर देने की धमकी के पत्र मिले थे। गोपाल जी मिश्र से तो मुजफ्फरपुर में ही मुलाकात हो गई मगर बद्रीनारायण सिंह को ढूंढते हुए जे० पी० शहर से बाईस मील दूर देहात के रुन्नी-सैदपुर भंडार तक उस गर्मी के मौसम में—लंबी यात्रा की थकावट के बाद भी पहुंच गए। जिसने वहां उन्हें इस अप्रत्याशित ढंग से देखा—भौंचक रह गया।

बात फैलने लगी। खादी और सर्वोदय कार्यकर्त्ता उनके इर्द-गिर्द जमा होने लगे। सब के मन जे० पी० के प्रति यह सोचकर भाव विभोर होने लगे कि जे० पी० ने हम कार्यकर्त्ताओं के जीवन को महत्त्व और आदर दिया एवं उसकी रक्षा में इतने तत्पर हुए। चार जून से जे० पी० ने इस धमकी भरे पत्र के बारे में चर्चा प्रारंभ की। खादी और सर्वोदय कार्यकर्त्ताओं से, पुलिस एवं अन्य सरकारी अधिकारियों से, शहर के बुद्धिजीवी एवं ग्रामीण जनता से, राजनीतिक पार्टी एवं अन्य नेताओं से। जैसे-जैसे चर्चा बढ़ती गई स्थिति की गंभीरता और समस्या की जटिलता जे० पी० के मानस में घर करती गई।

देश और प्रांत की चतुर्दिशा में फूट पड़ने वाली निराशा की विकृत तस्वीर ने नक्सलवाद के नाम से जनचेतना को किस सीमा तक प्रभावित किया है, यह बात उभर कर आई। जे० पी० के आने के पूर्व मुसहरी प्रखंड, जो मुजफ्फरपुर शहर के चारों ओर फैला हुआ है—'नक्सलवाद' का प्रभावकारी गढ़ मान लिया गया था। अनेक हत्याएं बड़ी निर्ममता और नक्सलवादी नारे के साथ पूर्व सूचना देकर की जा चुकी थीं। दर्जनों व्यक्तियों को मौत के परवाने धमकी भरे पत्र दिए जा चुके थे। कई डकैतियां हो चुकी थीं। लूट पाट और आगजनी हो चुकी थी। पुलिस इन घटनाओं को रोकने में विफल प्रमाणित हो रही थी और जनसाधारण का सरकार पर से भरोसा क्षीण हो गया था। बड़ी संख्या में शासन और व्यवस्था के नाम पर गरीब लोग जेल में थे या फरार थे। हर अजनबी भय का कारण था। गांव का हर समुदाय दूसरे से डरा हुआ था। भय, आतंक और दमन के कारण जन-जीवन अस्त-व्यस्त हो गया था। सब असहाय थे।

जे० पी० ने हर तरह के लोगों से चर्चा की और उन्होंने स्थिति की गंभीरता को समझा। जो कारण मुसहरी में इन परिस्थितियों के लिए जिम्मेदार था, वह कमोवेश सारे देश में मौजूद था और जो विकृत स्थिति मुसहरी में पैदा हो गई थी, वह कल सारे देश में पैदा हो सकती थी—तत् किम्? और तब जे० पी० ने घोषणा की: 'कल से मैं और प्रभावती गांव-गांव घूमेंगे।'

मुजफ्फरपुर में आठ जून सत्तर को आयोजित एक विशाल जनसभा में जयप्रकाश नारायण ने उस सभा को शहर की अपनी आखिरी सभा बताते हुए इस महान् क्रांतिकारी और ऐतिहासिक निर्णय की घोषणा की। अत्यंत गंभीर और भावपूर्ण मुद्रा में जयप्रकाश ने सभा में उपस्थित जनता को संबोधित करते हुए कहा: 'कोई यह न समझे कि सत्याग्रह के तरकस के सारे तीर निकल चुके हैं, खत्म हो चुके हैं। सर्वोदय आंदोलन ने सत्याग्रह का, 'लोक-शिक्षण' का, प्रथम चरण बड़े पैमाने पर पूरा किया है। अब विचार की शक्ति प्रकट करने के और कार्यक्रम को और अधिक गहन और प्रभावकारी बनाने के लिए सत्याग्रह का दूसरा चरण शुरू होने जा रहा है···कल से मैं और प्रभावती मुसहरी प्रखंड के

गांव-गांव में घूमेंगे। आपके दरवाजे पर जाएंगे और आपको समझाएंगे। जरूरत हुई तो आपके यहां हम दोनों भूखे रहकर धरना देंगे और आपसे यह कहेंगे कि अगर आप हमें खिलाना चाहते हैं तो अपने गांव के भूखों को खिलाने की व्यवस्था करें। उन्हें अपनी भूमि का बीसवां भाग तो कम से कम दें।...'

जे० पी० ने मुजफ्फरपुर के दो प्रमुख कार्यकर्त्ताओं की हत्या करने की नक्सलवादियों की धमकी और मुसहरी प्रखंड में व्याप्त आतंक के कारण अपनी सुरक्षा के संबंध में कहा : 'यह न समझा जाय कि हम धमकियों से या हत्या से डरनेवाले हैं। हम तो बराबर घूमते रहते हैं। चाहे कोई कभी भी हमें मार सकता है। सारी संरक्षण-व्यवस्था के बावजूद जब गांधी और कैनेडी तक को नहीं बचाया जा सका, तो हत्या करने पर उतारू आदमी से दूसरे का बचाव कहां तक हो सकेगा?...हमें अपनी हत्या की जरा भी चिंता नहीं है। हमें जब तक बचाना चाहेगा, भगवान बचाएगा, जब मारना चाहेगा, मारेगा।'

जे० पी० ने यह भी स्पष्ट किया : 'यह नहीं समझना चाहिए कि नक्सलवादियों की धमकी के कारण ही हम यहां आए हैं। हम तो ग्राम-स्वराज्य का काम कर ही रहे थे, उसको और अधिक गतिशील और प्रभावकारी बनाने की आवश्यकता महसूस हुई, इसलिए आकर इस प्रकार काम में लग रहे हैं।'

अपने इस निर्णय के अनुसार जे० पी० और प्रभावती ने मुजफ्फरपुर के सबसे अधिक समस्याग्रस्त प्रखंड मुसहरी में अपनी क्रांति यात्रा का कार्यारंभ किया। और यह महान् ऐतिहासिक एवं क्रांतिकारी कदम उठाकर सर्वोदय आंदोलन में लगे साथियों को नये कदम उठाने और अपने प्राणों की बाजी लगाकर मोर्चे पर जुट जाने का बिगुल बजा दिया।

छः जून को मुसहरी प्रखंड में प्रवेश करने के पूर्व जे० पी० ने निम्नलिखित मुख्य मुद्दे लिखित रूप में मुजफ्फरपुर जिले के नेताओं एवं विधायकों की बैठक में प्रस्तुत किये तथा इन मुद्दों की व्याख्या मौलिक रूप से की ताकि मुजफ्फरपुर में वे जो काम करने जा रहे थे, उसका संदर्भ स्पष्ट हो :

'नक्सलपंथी समस्या गौण रूप में ही शांति-व्यवस्था की समस्या है। मुख्य रूप में यह सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा प्रशासनिक समस्या है। मैं आपका सहयोग इस समस्या के मुख्य समाधान में चाहता हूं। हर राजनीतिक पार्टी इन समस्याओं के हल के लिए अपने-अपने ढंग से प्रयत्नशील है। अब तक की निष्पत्ति प्रत्यक्ष है। परंतु, आप अपना प्रयास जारी रखें। मेरा समर्थन आपके उन सभी कार्यों को प्राप्त रहेगा जो लोकतांत्रिक ढंग और आधार पर होंगे।

सर्वोदय का विचार तथा उसका कार्यक्रम निर्दलीय है। हम किसी दल विशेष के न पक्ष में हैं न विपक्ष में। दलगत प्रथा मात्र के हम आलोचक हैं, और उस प्रथा का विकल्प प्रस्तुत करना चाहते हैं। सर्वोदय के आदर्श समाजवाद तथा साम्यवाद के निकट हैं, यद्यपि हम प्रत्यक्ष लोक सत्ता पर जोर देते हैं—समुदाय कारखाना, संस्थान, दफ्तर आदि के स्तर पर दृष्टि से विकेंद्रीकरण पर हमारा विशेष जोर है।

उपर्युक्त मत के अनुसार हमारी न कोई राजनीतिक पार्टी है, न बनने वाली है, न हममें से कोई चुनावों में उम्मीदवार कभी होगा। न हम किसी पार्टी के

प्रचार, संगठन आदि कार्यों में कोई विघ्न डालते हैं। हां, वैचारिक स्तर पर आलोचना करते हैं, यद्यपि वह भी बहुत कम। अधिकतर हम अपना ही विचार लोगों के सामने रखते हैं तथा अपने कार्यों में लगे रहते हैं, जिनमें सभी दलों का सहयोग मांगते हैं।

सर्वोदय अपने उद्देश्यों की प्राप्ति लोक-शक्ति के द्वारा करना चाहता है। इस विषय में वह हिंसक क्रांति जैसा है। हिंसक क्रांति कानून से नहीं होती है। वह भी प्रत्यक्ष लोक-शक्ति से होती है। अंतर इतना है कि हिंसक क्रांति जब एक लंबे प्रयास के बाद विजयी होती है, तभी पुराना समाज मिटता है, यद्यपि उसके बाद नये समाज के निर्माण में बहुत समय लगता है और निर्माण धीरे-धीरे हो पाता है। दूसरी ओर, अहिंसक क्रांति में पुराने समाज का बदलना और नये का बनना, दोनों साथ-साथ और कदम ब-कदम होते है।

यह सब आपका विचारांतर करने के लिए नहीं कह रहा हूं, बल्कि सिर्फ इस हेतु से कि हम लोगों के कार्यों की वैचारिक पृष्ठभूमि आप लोगों के ध्यान में आ जाय।

आप जानते हैं कि सर्वोदय का पहला कार्यक्रम भूदान था। लगभग चार लाख एकड़ खेती योग्य भूमि बिहार में अब तक वितरित हो चुकी है।

सर्वोदय का दूसरा कार्यक्रम ग्राम-दान था, जिसकी प्राप्ति का कार्य पूरा हुआ है। अब उस कार्य की पुष्टि करनी है और ग्राम-स्वराज्य की स्थापना करनी है। इसके लिए चार आवश्यक कार्य करने हैं: (क) ग्राम-सभा की स्थापना; (ख) गांव की जमीन के बीसवें हिस्से का बंटवारा भूमिहीनों में करना; (ग) ग्राम कोष का निर्माण; (घ) ग्राम-शांति-सेना की स्थापना।

नक्सलपंथी कार्यों के संदर्भ में मैंने निश्चय किया है कि मुसहरी प्रखंड में ग्राम-दान पुष्टि तथा ग्राम-स्वराज्य-स्थापना का कार्य स्वयं गांव-गांव जाकर करूंगा। नौ जून से सहला जलालपुर पंचायत से यह कार्य प्रारंभ होगा। ग्रामदान पुष्टि के कार्य के साथ-साथ निम्नलिखित कार्य भी करूंगा: (क) भूदान-भूमि का वितरण पूरा या दुरुस्त करना; (ख) बासगीत जमीन के पर्चे दिलवाना या उसकी दुरुस्ती करना; (ग) मजदूरों की समस्याएं समझना, और उन्हें सुलझाने का यत्न करना; (घ) गांव के शक्तिशाली तत्वों द्वारा गरीबों को सताने के विषय में उचित कार्रवाई करना।

अहिंसक क्रांति से समस्याएं हल हो जाएंगी और उसके परिणामस्वरूप नक्सलवाद निरर्थक हो जाएगा, यह अलग बात है, और उन समस्याओं की ओर ध्यान न देकर नक्सलवादियों को अशांति और अव्यवस्था का कारण मानकर उनसे प्रत्यक्ष संघर्ष में जूझना अलग बात है।

स्पष्ट था कि जे० पी० का दृष्टिकोण समस्याओं के समाधान के लिए अहिंसक शक्ति विकसित करना है, शोषण और निर्दलन की मौजूदा समाज में अंतर्निहित हिंसा की ओर से निगाहें फेरकर केवल नक्सलवादी हिंसा को समाप्त करने के प्रयत्न में लगना नहीं।

नौ जून संध्या पांच बजे का समय। मुजफ्फरपुर से नौ मील की दूरी पर एक पंचायत, सलहा गांव का मिडिल स्कूल। आज वहां बड़ी चहल-पहल है। गरीब

अमीर, बूढ़े बच्चे सभी
हो रही है। मुसहरी प्रख
जयप्रकाश देश की
पैदा हो रहा है। और
रहे हैं जिसमें एक-सा
और हिंसा के वातावर
चलकर समाज का नया
वे मुसहरी प्रखंड
और उसके निदान का
या तो काम पूरा होगा
जयप्रकाश कह रहे
उन्हें अनेक शंका हैं।
जयप्रकाश अमीरों
अमीरों की सुख सुवि
भी उभरेगा। लोग सु
जे० पी० के
का मकान। बिजली
वादियों का आतंक
ऊबकर कैंप के
देखा सुना, वह इस
उस समय मुसह
लोग घबराते और
जाने के निश्चय से
हो जाय। यह आ
शांति तथा सुरक्षा
प्रांत के लिए भी
इस दुःसाहस के
चिंता प्रकट की।
उनके पीछे कुछ
के प्रति एक वक्तव्य
इस तरह नौ
समाज में व्याप्त
समाधान के लिए
अहिंसक पद्धति से
की तलाश और
परिवर्तन और
उससे बिल्कुल
आमना-सामना
ऐसे लोगों से

अमीर, बूढ़े बच्चे सभी मिडिल स्कूल के प्रांगण में जमा हैं। जयप्रकाश की सभा हो रही है। मुसहरी प्रखंड के प्रथम शिविर सलहा में प्रथम जनसभा।

जयप्रकाश देश की उन परिस्थितियों का वर्णन कर रहे हैं जिसमें विस्फोट पैदा हो रहा है। और फिर वे उन शांति पूर्ण अहिंसक कार्यक्रमों का वर्णन कर रहे हैं जिसमें एक-सा निदान निहित दीखता है। वे कह रहे हैं, 'इस देश को अशांति और हिंसा के वातावरण से बचाना है तो गांधी और विनोबा के बताए रास्ते पर चलकर समाज का नया निर्माण करना होगा।'

वे मुसहरी प्रखंड एवं देश में घटित उन दुखद घटनाओं का वर्णन कर रहे हैं और उसके निदान का मार्ग बताते हुए कहते हैं : 'मैंने यह फैसला कर लिया है — या तो काम पूरा होगा या मेरी हड्डी गिरेगी।'

जयप्रकाश कह रहे हैं। भय ग्रस्त आतंकित लोग सुन रहे हैं। मगर अभी तक उन्हें अनेक शंका हैं। वे आश्वस्त नहीं हैं। गरीबों को और बरगलाया गया है कि जयप्रकाश अमीरों की रक्षा में आए हैं। अमीरों को कहा गया है जयप्रकाश अमीरों की सुख सुविधा और संपत्ति छीनने आए हैं, गरीब इनकी शह पाकर और भी उभरेगा। लोग सुन रहे हैं और गुन रहे हैं। एक स्तब्धता है, असमंजस है।

जे० पी० के शिविर की प्रथम रात्रि। उमस भरी गर्मी की संध्या। खपरैल का मकान। बिजली पानी शौचालय सब की असुविधा। गांवों में व्याप्त नक्सलवादियों का आतंक ऐसा कि सूर्यास्त के बाद आदमी का दर्शन दुर्लभ। गर्मी से ऊबकर कैंप के साथियों ने बिस्तर खुले आसमान के नीचे लगाया तो जिसने भी देखा सुना, वह इस दुःसाहस पर हैरान रह गया—आशंकाओं से ग्रस्त हो उठा।

उस समय मुसहरी प्रखंड आतंक और भय का ऐसा क्षेत्र था जहां जाने से लोग घबराते और कतराते थे। जे० पी० के गांव-गांव के दरवाजे-दरवाजे पर जाने के निश्चय से सभी प्रकार के लोगों के मन में बेचैनी थी—कहीं कुछ अनर्थ न हो जाय। यह आशंका सर्वोदय कार्यकर्त्ता, प्रखंड के जिम्मेवार नागरिक और शांति तथा सुरक्षा के अधिकारियों और पुलिस के सामने ही नहीं थी, देश और प्रांत के लिए भी यह चिंता का कारण थी। अनेक समाचार पत्रों ने जयप्रकाश के इस दुःसाहस के प्रति टिप्पणी या संपादकीय लिखते हुए उनकी सुरक्षा के लिए चिंता प्रकट की। फल यह हो गया कि सरकारी अधिकारियों ने सुरक्षा के लिए उनके पीछे कुछ हथियार बंद पुलिस लगा दिए। जे० पी० ने इस सुरक्षा-व्यवस्था के प्रति एक वक्तव्य प्रसारित करके इसे अनावश्यक बताया।

इस तरह नौ जून से जयप्रकाश ने अपने कुछ मित्रों एवं प्रभावती के साथ समाज में व्याप्त वर्तमान असंतोष, हिंसा, उपद्रव, दमन और उत्पीड़न के समाधान के लिए मुसहरी प्रखंड में कार्य शुरू किया। गांधी और विनोबा की अहिंसक पद्धति से समाज-परिवर्तन और ग्राम-स्वराज्य की स्थापना के लिए मार्ग की तलाश और पुरुषार्थ प्रारंभ हुआ। काम कठिन था, नया था और अब तक परिवर्तन और शांति के लिए ग्रामीणों ने जो कुछ सोच, समझ और सुन रखा था उससे बिल्कुल अलग था। ग्रामीणों के लिए जयप्रकाश और उनके साथियों का आमना-सामना और उनकी बातें अनोखी थीं। दूसरी ओर स्वयं जयप्रकाश को ऐसे लोगों से पाला पड़ रहा था जिसके वे अनभ्यस्त थे। प्रारंभ का लंबा समय

अपनी बात कहने और उनकी बात सुनने के अभ्यास में बीता। धीरे-धीरे लोगों का विश्वास बढ़ता गया और जे० पी० सहित अन्य कार्यकर्त्ता मित्रों की भी स्थानीय ग्राम-समस्या और उनकी आंतरिक मनोभावना को समझने की शक्ति बढ़ती गई। सहमते-सहमते लोग निकट आने लगे। सलहा, जलालपुर, द्वारिका नगर, बैकुंठपुर तथा माधोपुर गांव में पहला दौर प्रारंभ हुआ।

पहला पड़ाव था। सब कुछ अस्त-व्यस्त। अनेक शारीरिक और मानसिक कष्ट थे। मात्र दस, बारह कार्यकर्ता थे। देश भर से सर्वोदयी और अन्य नेता लोग जे० पी० से मिलने आ रहे थे और उन्हें मदद करने के अपने निश्चय दुहरा रहे थे। मगर जे० पी० थे जो बड़ी दृढ़ता से उन्हें इस आश्वासन के लिए धन्यवाद दिए जा रहे थे : 'धन्यवाद, हमें करने दीजिए। आप सब जहां जो कर रहे हैं, करते रहें।'

स्वयं विनोबा ने लिखा : 'जयप्रकाश पहाड़ का विश्राम छोड़कर मुजफ्फरपुर (मुसहरी) आए हैं, तो मैं सोच रहा हूं कि आवश्यकता हुई तो मुझे भी चुप नहीं बैठना होगा। बंगाल के उपद्रव का उत्तर हमने बिहार का मोर्चा माना था। लेकिन बिहार में ही गड़बड़ शुरू हो और वह बढ़े तो मुझे चुप नहीं बैठना है।'

जे० पी० ने उत्तर दिया : 'बाबा के हृदय में बिहार लौटने का विचार उगा यह उत्साहप्रद है। परंतु मैं समझता हूं कि इस समय उन्हें नहीं आना चाहिए। बिहार में हम सभी इस समय सान पर चढ़ाए गए हैं। यदि बाबा अभी पहुंच जाएंगे तो उनके तेज से हम सबका भोथरापन छुप जाएगा। यदि हम लोगों का लोहा पक्का है तो सान पर हम सब भी तेज बनेंगे। यदि हम सब कच्चे हैं तो बाबा के उधार तेज से कब तक काम चलेगा?'

जयप्रकाश सलहा पंचायत के गांव-गांव में घर-घर जा रहे हैं। उनके जाने से और हर छोटे बड़े से मिलकर बातें करने से मालिक और मजदूर दोनों के मन की गांठें खुल रही हैं। उनके प्रयास से उस प्रारंभिक समय में जो निष्पत्ति आई, वह संतोषप्रद नहीं थी, लेकिन लोग जागरण के चिह्न स्पष्ट देख रहे थे। मालिक, मजदूर एक दूसरे के करीब आ रहे थे। भय और आतंक का वातावरण दूर हो रहा था। ग्राम-सभा बनाने की अच्छाई महसूस की जाने लगी थी। बीघा-कट्ठा निकलने लगा था। ग्राम-कोष शुरू हो रहा था। युवक सेवा की ओर मुड़ने लगे थे। लोग समझने लगे थे कि रोटी और मान आज की व्यवस्था से कहीं अधिक गांव की एकता और नये संगठन में सुरक्षित होंगे। ग्राम-स्वराज्य का चित्र पहले से अधिक स्पष्ट होने लगा। लेकिन, एक दूसरी बात और भी थी। ग्राम-स्वराज्य तक पहुंचने का कठिन काम, बड़ा काम, जरूरी काम, जिसे जल्द से जल्द पूरा करना था जिसके लिए जयप्रकाश का 'करो या मरो' का संकल्प पक्का था। उन्होंने अपनी जान की बाजी लगा दी थी। काम पूरा होगा या हड्डी गिरेगी की बात यों ही मुंह से नहीं निकली थी। लेकिन अकेले जयप्रकाश या उनके मुट्ठी भर साथियों से यह नहीं होने वाला था। उसके लिए व्यापक सद्भावना और सक्रिय सहयोग की आवश्यकता थी। काम दो-चार महीनों में या दस-बीस लोगों द्वारा पूरा होने वाला नहीं। मुसहरी के सत्रह पंचायतों के एक-एक गांव में पहुंचना। सैकड़ों लोगों और हजारों रुपयों की जरूरत। सचमुच जे० पी० ने स्वराज्य की दूसरी

लड़ाई छेड़ी थी। जिसे हर जगह लड़ना है—गांव से लेकर पटना और दिल्ली तक। पूरा देश नये प्रकाश के लिए मुसहरी की ओर देखने लगा था।

जिस समय अभियान को सघन रूप से चलाने की घोषणा जे० पी० ने की थी उस समय उन्हें पता था कि मुजफ्फरपुर जिले का जिला-दान तथा मुसहरी प्रखंड का प्रखंडदान संपन्न हो चुका है। जब से वे कार्यक्षेत्र में आए प्रत्यक्ष रूप से अनुभव हुआ कि ग्राम-दान-प्राप्ति का पिछला कार्य अधूरा एवं कच्चा है।

जे० पी० कैंप अब प्रह्लादपुर पंचायत में आ गया है। इस पंचायत में आने के बाद पंचायत के हर गांव में जे० पी० की सभा का आयोजन किया जा चुका है। इसके अतिरिक्त जे० पी० प्रभावती एवं अन्य सर्वोदय कार्यकर्त्ता मुख्य रूप से उन परिवारों में गए जिन परिवारों के सदस्य कथित नक्सलवादी हिंसा के शिकार हो चुके हैं। वे उन परिवार के लोगों से भी मिले जिनके परिवार के सदस्य नक्सलवादी नेता या कार्यकर्त्ता बताए जाते हैं और इन्होंने उन परिवारों से भी मुलाकात की जिन परिवारों के लोग आज जेल में हैं।

हर जगह फैली गहरी काली छाया ने उन परिवारों के आंसुओं की राह फूट कर, जे० पी०, प्रभावती एवं अन्यान्य कार्यकर्त्ताओं के दिल भर दिए। इस दुश्चक्र के शिकार होने के बाद पहली बार किसी ने उनके दुख-दर्द की कहानी सहानुभूति और करुणा भरे हृदय से सुनी थी। अतः वे अपने को रोक न सके। विवशता और विषाद की भावना प्रायः उन सभी परिवारों के अंदर से प्रकट हो रही थी जिसे वे शब्द देने में असमर्थ थे। युग-युग से उत्पीड़ित ये गरीब और सुख-साधन की सुविधा के बीच के ये संपन्न परिवार आज समान रूप से दुखी और असहाय लग रहे थे।

प्रह्लादपुर पंचायत में जैसे-जैसे काम आगे बढ़ा, पाया गया कि गांव का विरोध भीतर-भीतर क्रियाशील हो गया है और दबे-छिपे कुछ तत्त्व ग्राम-दान के विरोध में निराधार और भ्रामक बातें फैलाने का काम कर रहे हैं।

आशंका थी कि इस पंचायत में ग्राम-दान के प्रतिकूल तथाकथित उग्रपंथी लोग होंगे, मगर यह धारणा गलत प्रमाणित हुई। पंचायत के गरीब लोग ग्रामदान के पक्ष में थे, समय का संकेत पहचानने वाले अमीर भी, मगर कुछ लोगों को यह विचार अपने स्वार्थ के प्रतिकूल दीख पड़ता था और वे छिपकर गरीब तथा मजदूरों पर दबाव डालते या उन्हें गलत बातें कहकर बरगला रहे थे।

एक दिन प्रह्लादपुर पंचायत-सभा में गांव वालों से जे० पी० ने कहा : 'मैंने देखा कि मुसहरी के नक्सलवाद की जड़ में माओवाद नहीं है। यहां के नक्सलवाद की जड़ में झूठ, शोषण, बेईमानी, मुकदमेबाजी है। ऊपर की परिस्थिति भले ही देखने में कुछ और लगती हो। तह में क्या है यह हमें देखना पड़ेगा। बीमारी की जड़ गहरी है इसको समझना ही पड़ेगा और उसमें से रास्ता निकालना होगा।'

इस प्रखंड में नक्सलवादी घटनाओं का मुख्य केंद्र रहा है, प्रह्लादपुर और छपरा पंचायत। दोनों पंचायतों के एक दर्जन जवान भूमिगत थे। दर्जनों वर्षों से जेल में तथा सैकड़ों मुकदमों में फंसे हैं। इस क्षेत्र में अब तक आठ व्यक्तियों की हत्या हुई। दो भयानक डकैतियां हुई हैं तथा अनेक फसल लूटने की वारदातें हुईं। जे० पी० के क्षेत्र में आने के बाद भी तीन हत्याएं हुईं, किंतु अब पहले जैसा आतंक नहीं है।

जे० पी० ने उन तमाम कारणों को तलाशना शुरू किया जो नक्सलवाद के विकास के लिए प्रस्तुत थे। फिर उसके समाधान के लिए उन्होंने अपना करुणा पूरित व्यक्तित्व सामने कर दिया। नक्सलवादी घटनाओं से पीड़ित परिवारों से मिलना-जुलना प्रारंभ हुआ। जेल में या फरार नक्सलवादी करार दे दिए व्यक्तियों के परिवार से संपर्क स्थापित किया गया। उनकी बातें समझने की कोशिश की गई। जीने के लिए अतिआवश्यक माननीय राहत पहुंचाई। विरोधियों के कुटिल प्रचार की ओर कोई ध्यान दिया ही नहीं। आज स्थिति यह है कि जे० पी० के नजदीक एक ही समय जिन्हें हत्यारा कहा जाता है उनका परिवार और जिनकी हत्या की गई है उनका परिवार अपनी समस्याओं को लेकर पहुंचते हैं। जे० पी० धैर्य पूर्वक सुनते हैं, समझते हैं और यथाशक्ति उनकी सहायता करते हैं। इस कार्य से भ्रम दूर होने लगा है और जे० पी० को ठीक से लोग पहचानने लगे हैं अब आशा की एक क्षीण झलक आ रही है।

अठारह अप्रैल इकहत्तर को मुसहरी अभियान के प्रथम चरण पूरा होने के बाद भूदान-दिवस के उपलक्ष्य में प्रखंड की एक विशाल जन-सभा आयोजित की गई। प्रखंड के पचासों ग्राम-सभाओं से अलग-अलग जत्थों में नारे लगाते, गाते-बजाते, पोस्टर, बैनर लिये हुए जब चारों ओर से झुंड के झुंड ग्रामीण समारोह-स्थल पर जुटने लगे तो जिसने देखा, देखता रह गया। इस समारोह में जे० पी० ने प्रखंड में हुए हिंसक घटनाओं के संदर्भ कहा : 'वे अगर डाकू और लुटेरे न हों, और यह सारा क्रांति के नाम से किया हो तो मैं कहना चाहता हूं कि उनकी इस क्रांति से जो मानव बनेगा, वह मानव नहीं, राक्षस होगा। इस प्रकार के काम से समाज में जो विकार पैदा होगा उसका परिणाम अमानवीय संस्कृति में ही हो सकता है।'

जे० पी० का मुसहरी कथा-चरित्र इनके सर्वोदयी व्यक्तित्व की अग्नि-परीक्षा थी। जिसमें तपकर यह निकले थे। यह इनके सर्वोदयी जीवन का एक ऐसा चरम अध्याय था, जहां पहली बार अहिंसा को हिंसा के आमने-सामने खड़ा होना पड़ा था। जहां ग्राम-समुदाय के नैतिक और सामाजिक पुनर्निर्माण के प्रश्न के सामने ध्वंस और अंधविश्वास आया था। लोक-चेतना को राज्यशक्ति के सामने परीक्षा देनी पड़ी।

जे० पी० ने मुसहरी की अग्नि-परीक्षा देते समय 'आमने-सामने' नामक एक प्रतिवेदन प्रकाशित कर कहा था : 'यद्यपि सभी क्रांतियों में केंद्रीय प्रश्न सत्ता का ही होता है और सभी क्रांतियों का आयोजन जनता के लिए सत्ता प्राप्त करने के नाम पर किया जाता है, तथापि हमेशा क्रांति करने वालों में से ऐसे मुट्ठी भर लोगों द्वारा सत्ता हड़प ली जाती है, जो सबसे ज्यादा निर्मम होते हैं। ऐसा होना अनिवार्य है, क्योंकि (उनकी मान्यता के अनुसार) सत्ता बन्दूक की नली से निकलती है और बंदूक सामान्य जनता के हाथ में नहीं, बल्कि हिंसा के उन संगठित तंत्रों के हाथ में रहती है जो हर सफल क्रांति में से 'क्रांतिकारी' सेना तथा उसकी सहायक जमातों के रूप में पैदा होते हैं। इन तंत्रों पर जिनका नियंत्रण होता है, उनके ही नियंत्रण में सत्ता रहती है। यही कारण है कि हिंसक क्रांति हमेशा किसी न किसी प्रकार की तानाशाही को जन्म देती है। और फिर यही कारण है कि क्रांति के बाद शासकों एवं शोषकों का एक नया विशेषाधिकार प्राप्त

वर्ग कालांतर में पैदा हो जाता है, जिसके अधीन बहुसंख्यक जनता फिर एक बार गुलाम हो जाती है।'

9

अक्टूबर सन् इकहत्तर की बात है। अपराह्न का वक्त था। पटना कदम कुंआ। जे० पी० के घर पर एक लंबे हट्टे-कट्टे से व्यक्ति मिलने आए। अपना नाम बताया, रामसिंह। और कहा कि वह चंबल घाटी में जंगल के ठीकेदार हैं और वहां के बागियों की ओर से संदेश लेकर आए हैं।

जे० पी० ने आंख उठाकर उनकी ओर देखा : आप कौन हैं ?

—जी, मैं जंगल का ठीकेदार हूं।

—तो ?

—डाकू लोग आपके सामने आत्मसमर्पण करना चाहते हैं।

जे० पी० बोले : 'तो आप विनोबा के पास क्यों नहीं जाते ? मैं इस काम में नहीं पड़ना चाहता। जाइए···।'

यह कहकर जे० पी० उठ पड़े। वह व्यक्ति सामने खड़ा हो गया। रास्ता रोककर बोला : 'मेरी बात सुनिए बाबू जी, इस सवाल को अगर आप हाथ में ले लें तो इस बार दस, बीस नहीं, सबके सब बागी आत्मसमर्पण कर देंगे और उस क्षेत्र में डाकू-समस्या का अंत हो जाएगा।'

जे० पी० बोले : 'देखिए मुझे आपकी बातों पर विश्वास नहीं हो रहा है। मैंने पहले से ही जितनी जिम्मेदारियां ले रखीं थीं, उन्हीं को छोड़ रहा हूं। कोई और जिम्मेदारी लेने को मैं तैयार नहीं हूं।'

—पर बाबू जी···।

—आप विनोबा के पास जाइए, कह तो दिया।

—रामसिंह ने कहा : 'जी वह तो है। विनोबा ने भी कहा है, मैं आपसे मिलूं।'

—क्या ?

—जी, यह सर्वोदय का ही काम है।

—जी नहीं। जाइए।

—बाबू जी, मैं ही माधोसिंह हूं।

जिस नाटकीय अंदाज से माधोसिंह ने अपना असली रूप प्रकट किया, जे० पी० वास्तव में स्तंभित रह गए।

जे० पी० के मुंह से निकला : 'आप पर डेढ़ लाख रुपये का इनाम है, मेरे पास आने का जोखिम आपने उठाया कैसे ?'

माधोसिंह ने उत्तर दिया : 'आप पर हम लोगों को पूरा विश्वास है, इसलिए आया।'

जे० पी० ने एकदम एक बहुत बड़ी जिम्मेदारी का बोझ अपने ऊपर महसूस किया। आनाकानी करना असंभव हो गया। जे०पी० ने स्वीकृति दे दी और उसी क्षण माधोसिंह ने अपने को जे० पी० के सामने समर्पित कर दिया। उसे अपने

ही पास टिका लिया। प्रभावती के सिवा किसी को भी मालूम नहीं होने दिया कि रामसिंह कौन है।

'विनोबा तो संत हैं। सन् साठ में बिना शर्त आत्मसमर्पण कराने का भारी बोझ उन्होंने लिया था।' माधोसिंह ने कहा।

जे० पी० बोले : 'पर भाई, मैं तो विनोबा नहीं हूं। एक साधारण आदमी हूं। इसलिए आप मुझे यह बताइए आपकी शर्त क्या है?'

'समर्पण करने वाले को चाहे जितनी सजा दी जाय, पर फांसी न हो, हम यही चाहते हैं।

—यह तो बहुत उचित शर्त है।

इसके बाद माधोसिंह को गया जिले के अपने आश्रम में छिपाने की जे० पी० ने व्यवस्था की और केंद्रीय गृहमंत्री तथा मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश और राजस्थान के मुख्यमंत्रियों से पत्राचार और प्रत्यक्ष मिलकर चर्चाएं शुरू कीं। साथ ही विनोबा के साथ सन् साठ में काम करने वाले चंबलघाटी शांति-समिति के मंत्री महावीर भाई और ग्वालियर के हेमदेव शर्मा को भी तार देकर बुलाया। इस तरह जे० पी० ने चंबलघाटी शांति-मिशन गठित किया और महावीर तथा हेमदेव को काम सौंपकर कहा कि वे अपने सहयोगी चुन सकते हैं। मिशन ने चरणसिंह और पंडित लोकमन (भूतपूर्व कुख्यात डाकू लुक्का) का सहयोग प्राप्त किया।

लेकिन नवंबर में जे० पी० अचानक बीमार हो गए। मुसहरी से लेकर अब तक लगातार कठिन परिश्रम और मानसिक संताप इस बीमारी के असली कारण थे। वैसे शुरू में डाक्टरों ने इसे हल्के किस्म का दिल का दौरा माना था, पर बाद में यह भ्रम जाता रहा। फिर भी पूरे विश्राम और इलाज की अनिवार्यता स्पष्ट थी। नवंबर, दिसंबर, जनवरी ये तीन महीने जे० पी० का विश्राम और इलाज चला। पर इस बीच शांति-मिशन का काम चलता रहा। तेरह दिसंबर को जे० पी० ने चंबलघाटी के बागी भाइयों के नाम एक अपील जारी की। उस समय बंगलादेश का मुक्ति-संग्राम पूरे जोर पर था और भारत अपने अस्तित्व की एक नाजुक लड़ाई लड़ रहा था। अपील में जे० पी० ने कहा था : 'आजकल हमारा देश नाजुक दौर से गुजर रहा है। संकट की इस घड़ी में चंबलघाटी के बागी भाइयों से मेरी अपील है कि वे भी अपना गलत रास्ता छोड़कर देश के साथ सहयोग करें।···बागी भाइयों से मेरी अपील है कि वे अपनी गतिविधियां बंद कर दें और हिम्मत के साथ समाज के सामने आत्मसमर्पण करें···।'

हजारों प्रतियां इस अपील की चंबलघाटी में बंटवा दीं। माधोसिंह ने बागियों की तरफ से उत्तर देते हुए एक प्रश्न पूछा : 'हम हथियार डालने को तैयार हैं। क्या समाज हमें वापस स्वीकार करेगा?' जनवरी भर इस प्रश्न के उत्तर में सरकारी, अर्धसरकारी स्तर पर काम हुआ। फरवरी में इस काम को आगे बढ़ाने के लिए जे० पी० के अथक प्रयत्नों से मानसिंह के पुत्र तहसीलदार-सिंह जेल से रिहा हुए और वे बारह साल पहले जेल में होने के कारण जो नहीं कर पाए थे, अब उन्होंने पूरी लगन से वही शुरू किया।

एक दिन आगरा से खबर मिली कि पचास बागी समर्पण के लिए तैयार हैं।

जे० पी० का
उनके जीवन का एक
की अत्यंत मानवीय
फरवरी में जे०
में जांच और इलाज
रहे थे। लेकिन कुछ
बीच जे० पी० को
पहली तारीख को
हेलीकाप्टर से
साथ ग्वालियर पहुंचे
पर पगार कोठी के
अधिकारी कार्यकर्ता
पर बसे गांव कस्बों
चारिक स्वागत में
मुरैना से जौरा
घिरे खड़े थे। जौरा
भरे खड्डों से पटा
मुजफ्फरपुर के
अभी पांच माह पहले
फिर उठाने देने के
के रास्ते से ले जा
संध्या साढ़े
जिसमें समर्पण का
रात हो आई
बागियों के साथ
रात को बागि
सरदार मोहरसिंह,
तरफ स्टेनगन के
झुंड चपचाप बैठा
जे० पी० ने
—हम का
—जो भी
—हम तो
—क्यों?
मोहरसिंह
और मूखी झाड़ि
माथे पर महसूस
नहीं कहना है।
रख दिया है आप

जे० पी० का स्वास्थ्य सुधर रहा था। तब तक बंगलादेश की मुक्ति ने उनके जीवन का एक सपना पूरा कर दिया था और अब वह प्रसन्न मन बागियों की अत्यंत मानवीय समस्या से निपटने की तैयारी कर रहे थे।

फरवरी में जे० पी० दिल्ली आए, इंडियन इंस्टीट्यूट आफ मेडिकल साइंसेज में जांच और इलाज करवाने। जब वे पालम पर उतरे तो अत्यधिक थके हुए लग रहे थे। लेकिन कुछ ही दिनों में उनका स्वास्थ्य सुधरने लगा। माधोसिंह इस बीच जे० पी० को 'पूज्य पिता जी' संबोधित कर खत लिखता रहा। मार्च की पहली तारीख को वह महावीर और हेमदेव के साथ दिल्ली में जे० पी० से मिला।

हेलीकाप्टर से ग्यारह अप्रैल को सुबह सवा नौ बजे जे० पी० प्रभावती के साथ ग्वालियर पहुंचे। साढ़े तीन बजे जे० पी० सत्तर किलो मीटर की यात्रा पर पगार कोठी के लिए रवाना हुए। जे० पी० के साथ पत्रकार, पुलिस, अधिकारी कार्यकर्ता और नागरिकों का एक पूरा काफिला था। सड़क के किनारों पर बसे गांव कस्बों के लोग स्वागत के लिए सर्वत्र खड़े थे। सिर्फ मुरैना के औपचारिक स्वागत में जे० पी० थोड़ी देर रुके थे और चाय पी थी।

मुरैना से जौरा आश्रम चौदह मील के रास्ते पर भी स्वागत-द्वार लोगों से घिरे खड़े थे। जौरा आश्रम होकर पगार कोठी जाने वाला रास्ता कई इंचों धूल भरे खड्डों से पटा था।

मुजफ्फरपुर के मुसहरी प्रखंड के ऐसे ही रास्ते पर जीप से यात्रा करते हुए अभी पांच माह पहले जे० पी० अचानक बीमार हुए थे। और ऐसी जोखिम उन्हें फिर उठाने देने के लिए कोई भी तैयार नहीं था। अतः पगारा कोठी उन्हें नहर के रास्ते से ले जाया गया जो आश्रम वाले रास्ते से थोड़ा बेहतर था।

संध्या साढ़े पांच बजे जे० पी० पगारा कोठी पहुंचे। वहां एक मीटिंग हुई जिसमें समर्पण का कार्यक्रम तय करना था।

रात हो आई। अंधेरे में साथ के लोग भोजन के लिए नीचे धोरेरा जाने लगे, बागियों के साथ सब का सामूहिक भोजन था।

रात को बागियों के साथ जे० पी० की मीटिंग शुरू हुई। वहां बागियों का सरदार मोहरसिंह, जे० पी० और प्रभावती के बिल्कुल पास बैठा था। चारों तरफ स्टेनगन के साथ, कमर और सीने पर कारतूस की पट्टियां बांधे बागियों का झुंड चुपचाप बैठा था।

जे० पी० ने लंबी सांस भरते हुए मोहरसिंह से कहा : 'आप कहिए।'

—हम का कहें ?

—जो भी आप कहना चाहते हों।

—हम तो अब कुछ नहीं कहते।

—क्यों ?

मोहरसिंह का कंठ भर आया। जे० पी० उस खामोशी में विंध्य की नंगी और सूखी झाड़ियों से पटी पहाड़ियों के बीच से आती हुई हवा के झोंके अपने माथे पर महसूस कर रहे थे। मोहरसिंह भीगे स्वर में कह रहा था, 'हमें कुछ नहीं कहना है। न कुछ पूछना है। हम तो आपके सामने हाजिर हो गए। सिर रख दिया है आपके चरणों पर। चाहे इसे फांसी पर लटका दें। हम कहेंगे नहीं।'

तेरह अप्रैल, सुबह का वक्त। घाटी के जंगलों में भेजी गई जीपों की प्रतीक्षा थी। नीचे धोरेरा में जितने बागी थे सब जे० पी० से मिल चुके थे। अब इंतजार था माखनसिंह और सरूपसिंह का।

पहले आई माखनसिंह की जीप। फिर आए सरूपसिंह। और इस तरह उस दिन बागी सरदारों की भीड़ जे० पी० के चारों ओर घिर आई। बागियों के परिवारों की महिलाएं बच्चे भी साथ थे। अजीब करुण दृश्य था।

जे० पी० से नहीं रहा गया। कहने लगे : 'बहनो! आप देख रही हैं कि कैसी अद्भुत घटना घट रही है। वर्षों से बीहड़ों में घूमने आपके घर के लोग, जिनके नाम से जनता में भय रहा और जिन्होंने तरह-तरह के काम किए वे आज सब अपने हथियारों के साथ अपनी मर्जी से यहां इकट्ठे हुए हैं कोई दवाव नहीं, कोई जोर नहीं। कल ये जौरा में जनता के सामने, महात्मा गांधी के चित्र के सामने अस्त्र-समर्पण करेंगे और अपना नया जीवन प्रारंभ करेंगे। परिवार है, मां, बहन, पत्नी, बच्चे, बच्चियां हैं जो इस जीवन के साथी हैं। आपको इस बात की चिंता होगी, यह हमारे घर के लोग जो खुशी-खुशी अपने को पुलिस के हाथों में सौंप रहे हैं हाजिर हो रहे हैं, उनका क्या होगा? आपका क्या होगा? आपके बच्चों का क्या होगा? यह सब आपके दिल में भय होगा। मैं आपसे बहुत विनय-पूर्वक कहना चाहता हूं कि भय तो अपने हृदय से निकाल दीजिए। परमात्मा का, ईश्वर का भरोसा कीजिए।

चौदह अप्रैल उन्नीस सौ बहत्तर को गांधी सेवाश्रम, जौरा में संध्या समय, एक सार्वजनिक सभा में मोहरसिंह, सरूपसिंह, पंचमसिंह, तिलकसिंह और नरेश सिंह के दलों के बयासी बागियों ने और सोलह अप्रैल को माधोसिंह, माखनसिंह, जगजीतसिंह, कल्याणसिंह, रूपसिंह, जियालाल, हरिविलास आदि के दलों के इक्यासी बागियों ने और फिर सत्रह अप्रैल को ग्वालियर में नाथूसिंह के गिरोह ने जे० पी० के सामने आत्मसमर्पण किया।

नाथूसिंह ने जे० पी० से कहा था : 'आज तक पकड़ने वाले ही मिले या मारने वाले। बनाने वाले तो आप ही मिले हैं।' माधोसिंह ने एक मुलाकात में बी० बी० सी० को कहा था : 'जयप्रकाश बाबू क्या हैं? जय के प्रकाश हैं। अहिंसा, प्रेम, सहानुभूति की जय के प्रकाश!' यह चरमसीमा थी सर्वोदयी जयप्रकाश की।

अगाध करुणा, अहिंसक वीरता, अक्षम को सक्षम बनाने का पुरुषार्थ··· बिहार का अकाल···विसर्जन···। मुसहरी···मूल्य जीवन है।···चंबल की घाटी ···सह जीवन, सह मरण।

पंजाब मेल ग्वालियर स्टेशन से बंबई के लिए छूट रहा था। जे० पी० प्रभा के साथ बंबई जा रहे थे। उनके कानों में सुनायी पड़ा : जोगी मत जा···मत जा, मत जा···

चंबल के बागी सरदारों ने कहा था : जोगी और डाकू दोनों को जाना होता है···अकेले···।

गंगाजल में दीप अकेला

भारत के सघन भयंकर
वन के गौरव
गिरि गुहा निवासी
हे तपसी, हे रौरव,
हे अशिव (?) सत्य सौंदर्य
हिंस्र (?) हे भोले,
इस तमोनिशा में आज
नमो हे, कहां अचानक बोले !

गंगा का अथाह जल है···अनंत धाराएं पूरब दिशा में बह रही हैं। बहुत सारे लोग, ग्रामदानी, भूमिदानी, सर्वोदयी, नक्सलाइट और चंबल के बागी गंगा तीर पर रास्ता रोके खड़े हैं। गंगाजल पर तुमुल कोलाहल के बीच से एक बोल उभरता है : 'नहिं रखनी नहिं रखनी···सरकार जालिम नहिं रखनी '··· यह गीत तो उन्नीस सौ बयालीस का है। पंजाब के विद्रोही भाई गाते थे। जे० पी० उस मंजिल से आगे बढ़ने लगते हैं। ···लोग रोकने लगते हैं : बाबूजी, आपका स्वास्थ्य अच्छा नहीं है···प्रभावती दीदी बहुत बीमार है···अभी तो आप दिल के दौरे से उठे हैं...आपने खुद कहा है सब कुछ छोड़कर एक वर्ष कहीं चुपचाप···जे० पी० के मुंह से निकलता है :

'तीर पर कैसे रुकूं मैं···
आज लहरों में निमंत्रण।'

सर्वोदय चरित मानस ने जे० पी० को एक जलता हुआ दीप बनाया है। विनोवा का संगीत इनके कानों में गूंजता है : कोरा कागज काली स्याही लिखत पढ़त वाको पढ़वा दें···तू तो राम सुमर जग लड़वा दे···

कबीर ने कहा, क्यों लोग यह धंधा करते हैं ? कोरा कागज लेते हैं और उस पर काली स्याही फेरते हैं। उसे लोग कहते हैं अक्षर। पर वह तो क्षर है, क्षरने वाला। अक्षर क्या है ?

हरएक दूसरे की फिक्र रखें, साथ ही अपनी फिक्र ऐसी न रखें जिससे दूसरे को तकलीफ हो। इसी को सर्वोदय कहते हैं।

अनंत कंठों से फिर वही बोल सुनाई पड़ने लगता है : नहिं रखनी नहिं रखनी···सरकार जालिम नहिं रखनी···लोग इतने क्षुब्ध हैं। इतने अशांत हैं। और अब असंयमित रूप से जहां तहां तोड़-फोड़ कर रहे हैं। ये दुख, ये गति-विधियां संयमित ढंग से संचालित न हुई तो देश पूरी तरह से खतम हो जाएगा। जिन मूल्यों के लिए इतनी-इतनी कुर्बानियां की गई हैं, देश की आजादी में विद्रोही जीवन यातनाएं भोगी गई हैं, सब अर्थहीन हो जाएगा।

जे० पी० के कदम बढ़ते हैं। जमीन और कदम के बीच जो फासला है, वही तो शून्य आकाश है जिसमें सर्वोदय के जीवन ने अद्भुत प्रकाश बिखेरा है। जे० पी० इन्हीं दिनों पटना से सोखोदेवरा आश्रम जा रहे थे। साथ में जापान से आए एक मित्र थे। कुछ ही मीलों दूर गए होंगे कि जापानी मित्र ने कहा : आप तो कहते थे भारत गरीब देश है।

—हां, वह तो है ही। आपने स्वयं नहीं देखा ?

—नहीं, मैं नहीं मान सकता।

—कैसे ? क्यों ?

—अभी जिस बगीचे के पास से हम गुजरे, वहां मैंने देखा कि दिन के समय भी लोग आराम से बैठे हैं। फिर तो ये लोग बहुत अमीर होंगे, संपन्न होंगे, मौज करते होंगे।

जे० पी० को शर्म लगी, फिर भी बोले : ये लोग इसलिए बैठे हैं कि इनके पास काम नहीं है, ये बेकार हैं।

मित्र ने आश्चर्य से कहा : कोई काम नहीं है ? हम पानी पीने गए, तब वहां आसपास कितनी गंदगी थी। क्या उसकी सफाई करने का काम नहीं है ?

जे० पी० अवाक् रह गए। उनके दिमाग में घूमने लगा : सच बात है। हम लोग विचार करें तो हमें अपने इर्द-गिर्द काफी काम दीखेगा। लेकिन आज तो निरी अकर्मण्यता दीखती है।

जे० पी० सोचने लगे, किंतु इसमें राजकीय पक्षों का, हमारी सरकार और उसकी नीतियों का भी बहुत दोष है। इस कारण भी जनता निष्क्रिय अभिक्रमशून्य बनती है। इस लोकतंत्र में प्रजा का सहयोग, जनता का सक्रिय भाग कहां है ? भारतीय प्रजा की प्रचंड शक्ति यदि एक बार संगठित होकर कमर कस ले तो दुनिया की कोई भी सरकार उसके आगे बौनी लगेगी।

ग्राम-दान के दिनों में जे० पी० ने एक गांव में वहां के कुछ पढ़े-लिखे हुए लोगों से कहा था : ट्राटस्की का नाम सुना है ? वह सतत क्रांति की बात कहता था। किंतु उसे तो उड़ा दिया गया, क्योंकि क्रांतिकारी जब स्वयं गद्दी पर आ बैठता है, तब वह सतत क्रांति नहीं चाहता। किंतु यदि बारीकी से देखें तो यह स्पष्ट होगा कि ग्राम-दानी गांव में ग्राम-सभा बनती है और वह सक्रिय रूप से काम करना शुरू कर देती है, तो इस सतत क्रांति की प्रक्रिया शुरू हो जाती है।

पर सहरसा, मुसहरी, गया, कौआकोल आदि भूदानी प्रखंड में क्रांति की वह प्रक्रिया क्यों नहीं शुरू हुई ?

पटना शहर में जहां उन्नीस सौ बीस से लेकर अब तक विचार और कर्म

दोनों स्तरों से इतने संघर्ष हुए, वहां उस प्रक्रिया की शुरुआत तक क्यों नहीं हुई ?

सर्वोदय मानस ने इसका मर्म ढूंढ़ा था। जिस करुण भूमि पर दादा धर्माधिकारी राममूर्ति विनोबा की, जे० पी० की, धीरेन्द्र मजूमदार और प्रभावती की पद-यात्रा हुई उसी धरती मां ने जे० पी० को एक नई दृष्टि दी।

सनातन काल से 'लोक' ने यही माना है कि उनकी भलाई और विकास की फिक्र उनको नहीं, किसी दूसरे का काम है। वह दूसरा, राजा हो, पुरोहित हो, गुरु हो, सेवा-संस्था हो या सेवक हो। जनता को केवल इतना ही करना होता है कि वे उनके प्रति वफादार रहें और उन्हें कर दें, श्रद्धा-भक्ति दें या दक्षिणा दें। संस्थावाद में इतना ही हुआ कि जनता के लिए सोचनेवाली एजेंसी का आकार बढ़ा, व्यक्ति के स्थान पर संस्था अवश्य आई, लेकिन प्रजा जहां की तहां रही। उसे अपनी सुख-शांति के लिए, अपने विकास और प्रगति के लिए व्यक्तिगत ठीकेदार के स्थान पर संस्थागत ठीकेदार मिला। संस्थावाद में अधिक लोगों के साथ मिलकर जिम्मेदारी उठाने की जो परिपाटी बनी, उससे जिम्मेदारी का दायरा व्यापक हुआ, लेकिन हानि यह हुई कि सोचने वाला प्रजा से अलग हो गया। व्यक्ति चेतन होता है और संस्था जड़। राजा-प्रजा, पुरोहित, यजमान और गुरु-शिष्य में हार्दिक और मानवीय संबंध होता था, जिससे समाज में एक आध्यात्मिक संस्कृति का निर्माण होता था। संस्थावाद में वह संबंध समाप्त हुआ। लोक-संचालन, लोक-कल्याण तथा लोक-शिक्षण एक जड़ प्रवृत्तिमात्र रह गई, जिससे समाज में आध्यात्मिक मूल्यों का ह्रास हो गया।

फिर भी संस्थाओं ने अपनी ताकत से लोक-कल्याण कार्य का काफी विकास किया। दुनिया अगर एक ही ढंग से चलती रहती तो आगे भी यह विकास होता। लेकिन दुनिया की परिस्थिति और मानव की मनःस्थिति में इतना अधिक परिवर्तन हो चुका है कि अब संस्थाओं के सहारे न तो विकास का काम हो सकता है और न आवश्यकता पड़ने पर क्रांति ही।

मानवीय संबंध प्रथम और द्वितीय पुरुष के बीच होता है। अन्य पुरुष का संबंध किसी से नहीं होता। इसी कारण वह किसी के सुख-दुख का भागी नहीं होता। फिर जब यह अन्य पुरुष चेतन व्यक्ति न होकर जड़ संस्था होता है, तो वह पुरुष न रहकर एक तत्त्व बन जाता है। अन्य पुरुष भूले-भटके कभी-कभी जनता से कुछ संबंध बना लेता है, लेकिन जड़ संस्था के स्वभाव में वह चीज नहीं होती। इसलिए मानवीय संबंध के अभाव में परिस्थिति में नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों का ह्रास होता है। फलस्वरूप समाज में स्वार्थ की वृद्धि के कारण भ्रष्टाचार, शोषण तथा दमन का विकास होता है। शुरू-शुरू में जब सेवा, शिक्षण आदि संस्थाओं को सीधे जनता के सहारे जीना पड़ता था, तो संस्था के लोगों के लिए अनिवार्य होता था कि वह संस्था में रहते हुए भी जनता से कुछ व्यक्तिगत संपर्क करें। लेकिन जब से दुनिया में कल्याणकारी राज्यवाद का विचार आया है और संस्थाएं उसी के सहारे चलने लगीं, तब से संस्था-सेवकों के अपने गुजारे के लिए जनता से सीधा संपर्क करने की आवश्यकता नहीं रही। अगर संस्था-संचालन के लिए जनता से कुछ धन-संग्रह किया भी जाता है, तो उसका संचालन मुख्य संचालकों द्वारा ही होता है और संग्रह

का क्षेत्र व्यापक होता है, जिससे स्थानीय सेवकों को स्थानीय जनता से सम्पर्क का कोई अवसर नहीं मिल पाता। ऐसे छोटे-छोटे अनेक कारणों से संस्था-सेवकों को आम लोगों से कोई सरोकार नहीं रह गया। भूदान, खादी या अकाल-निवारण जैसे काम में भी इतना व्यापक भ्रष्टाचार का जो वातावरण बना उसका यही कारण है।

सर्वोदय की उसी पद-यात्रा में उड़ती हुई धूल के भीतर से जे० पी० को अनुभूति हुई :

राजनीति नहीं लोकनीति। राजनीति में प्रशासन मुख्य है, लोकनीति में अनुशासन मुख्य है। राजनीति में सत्ता मुख्य है, लोकनीति में स्वतंत्रता मुख्य है। राजनीति में नियंत्रण मुख्य है, लोकनीति में संयम मुख्य है। और तब धूल कीचड़ भरे रास्तों और झाड़ जंगल के उस पार गंगा नदी का जल दिखाई पड़ने लगा—लोकतंत्र की पद्धति लोकमूलक ही हो सकती है, जिसकी प्रक्रिया संचालित समाज की न हो कर सहकारी समाज की होनी आवश्यक है। वरना 'लोक' का शोषण पूंजीपति द्वारा होगा और 'तंत्र' का दमन नौकरशाही और सिपाही शक्ति से।

और जे० पी० की वर्तमान जीवन-यात्रा शुरू होती है। राजनीति से लोकनीति, सर्वोदय के संसार में प्रवेश करने से पूर्व जे० पी० ने पूना में तब इक्कीस दिनों का उपवास किया था। अब लोकनीति के संपूर्ण प्रयोग की नई यात्रा शुरू करने से पूर्व आत्मदर्शन अनिवार्य है और इसकी शुरुआत कहां से की जाय?···अपने जन्म दिन से। ग्यारह अक्तूबर उन्नीस सौ इकहत्तर को अपने जीवन के उनहत्तर वर्ष पूरे करते हुए जे० पी० ने एक व्यक्तिगत पत्र का मसविदा तैयार किया। यह पत्र उन सभी संस्थाओं के नाम था जिनके वह पदाधिकारी या सदस्य रहे हैं। इस पत्र में उन्होंने कहा : 'अगर ग्यारह अक्टूबर उन्नीस सौ बहत्तर तक मैं जीवित रहा तो अपने इस व्यक्तिगत निर्णय के अनुसार (जिस हेतु श्री प्रभावती की भी पूर्ण सहमति है) मैं इन बारह महीनों में अपने आपको हर तरह की गतिविधि से अलग कर रहा हूं। दस अक्टूबर उन्नीस सौ बहत्तर को न सिर्फ उन संस्थाओं के और संगठनों के पदों से ही मैं अलग हो जाऊंगा जिनका कि मैं पदाधिकारी हूं वरन् अपने से संबंधित संस्थाओं की साधारण सदस्यता भी त्याग दूंगा।···

'अगर मैं जीवित रहा तो इस प्रकार मुक्त होने के बाद क्या करूंगा, मैं नहीं जानता। मैं नहीं चाहता कि मेरे इस एक वर्ष के समय को किसी आध्यात्मिक या बौद्धिक चिंतन का नाम दिया जाए। यह समय मेरे लिए पूर्ण विश्राम का समय होगा और इस काल में मैं किसी भी प्रकार के सम्मेलन गोष्ठियों या बैठकों में भाग नहीं लूंगा। मैं सिर्फ वही करूंगा जिसे मेरी आत्मा चाहेगी।···

'समय निर्धारित करके मेरे दोस्त मुझसे इस काल में मिल सकेंगे। पर मैं उनसे किसी भी संगठनात्मक या संस्थागत विषय पर बातचीत नहीं करूंगा, न ही उन्हें लोकजीवन राजनीति या किसी सीधी कार्रवाई के किन्हीं प्रश्नों पर सलाह देना चाहूंगा। प्रत्यक्ष सेवा में स्वयं अपने सक्रिय न रह पाने के

कारण मैं यह गलत मानता हूं कि ऐसे किसी मामले पर अपनी सलाह दूं।

'फिर भी इस विषय में इस दौरान यदि कुछ सोचने का मौका मिला तो उसके संबंध में लिखूंगा और प्रकाशित भी करवाऊंगा। सिर्फ एक स्थिति है जिसमें यदि मैं चाहूंगा तो अपनी तटस्थता से टूटकर आगे आ सकूंगा। और वह स्थिति शायद किसी गंभीर राष्ट्रीय संकट की स्थिति होगी। लेकिन ऐसी संकटकालीन स्थिति नहीं, जिसकी घोषणा सरकार करेगी बल्कि जिसको मैं समझूंगा कि यह वाकई संकट की स्थिति है।···

'इस समय की समाप्ति के बाद मैं क्या करूंगा नहीं जानता। मैं सिर्फ यह जानता हूं कि जब तक यह शरीर व दिमाग काम करता रहेगा, मैं अपने देश व संसार की सेवा करूंगा। मैं यह भी जानता हूं कि भविष्य के लिए मेरे कार्य की पद्धति में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन होंगे, क्योंकि वर्तमान कार्यपद्धति ने शारीरिक व मानसिक दोनों रूप से समय व शक्ति की व्यर्थता सिद्ध की है। अब मैं इससे ज्यादा अपने भविष्य के बारे में नहीं कह सकता, वह ईश्वर के हाथों में है।'

ठीक इसी आत्मदर्शन अवधि की वह घटना है, जब चंबल घाटी के सवा चार सौ बागियों ने आत्मसमर्पण किया। यह घटना नहीं, यही आत्मदर्शन था। इसने भारत और विश्व को ही नहीं, स्वयं जयप्रकाश को भी प्रभावित किया। प्रभाव की सीमा यह है कि जब कभी इसकी चर्चा किसी भी प्रसंग में जे० पी० को करनी पड़ी है, उन्होंने हमेशा यही कहा है कि उन्हें खुद समझ में नहीं आता कि इतनी बड़ी घटना घटी कैसे। जे० पी० ने इसे 'ईश्वरीय लीला' माना और स्वयं को 'निमित्त मात्र'। चंबल के उस कार्य ने जे० पी० को आत्मदर्शन दिया। जे० पी० जैसे व्यक्ति के आत्मदर्शन की प्रक्रिया क्या होगी और क्या हो सकती है, इसका यह एक जीवंत उदाहरण है।

संगठन से असंगठन, बंधन से मुक्त, परावलंबन से स्वावलंबन इसी के बीच से सर्वोदय ने जे० पी० को वह शक्ति दी थी जिससे वह अपनी जोखिम बीमारी के दौरान भी बिस्तर से सहसा उठकर बंगला देश की आजादी के लिए विश्व जनमत तैयार करने की यात्रा पर निकल गए। चंबल के बागियों का यह निर्णय सुनकर कि 'अगर जयप्रकाश हमारे पास नहीं आए तो हम आत्मसमर्पण नहीं करेंगे', या जहां जयप्रकाश हैं वहां जाकर करेंगे, जे० पी० बीमारी के दौरान भी खतरा उठाकर चबंल घाटी की ओर चले गए।

कर्म के भीतर से आत्मदर्शन। यही है नई प्रक्रिया जे० पी० के दर्शन और कर्म की। जे० पी० का वह आत्मदर्शन था कि वर्तमान राजनीति से जो लोग आशा रखते हैं, वे सूखी हड्डी चूस रहे हैं और अपने ही रक्त का आस्वादन कर तृप्त हो रहे हैं। यह राजनीति तो गिर रही है, और भी गिरेगी। छिन्न-भिन्न हो जाएगी। तब इसके मलबे के ऊपर एक नई राजनीति जन्मेगी, जो इससे सर्वथा भिन्न होगी। नाम भी उसका भिन्न होगा। वह लोकनीति होगी, राजनीति नहीं : उस राजनीति के बीज आज भारत की मिट्टी के घोर तप में अंतर्लीन हैं। उन बीजों को पैदा किया था गांधी ने और भारत की

धरती को अपनी पदयात्रा द्वारा बार-बार जोतकर उन्हें बोया है विनोबा ने । हजारों अज्ञात सेवकों की सेवा उनका सिंचन कर रही है ।

सर्वोदय कार्यकर्त्ता उस यात्रा में जे० पी० को रोककर सवाल करते, 'हमारे ग्राम-दान के काम का समाज पर प्रभाव क्यों नहीं पड़ता ? नक्सलबाड़ी में एक छोटी-सी घटना घटती है तो पूरे देश में हलचल मच जाती है। किंतु दूसरी तरफ इतने सारे ग्राम-दान हुए, फिर भी सर्वोदय कार्यकर्त्ताओं को या जनता को ऐसी प्रतीति क्यों नहीं होती कि कोई बड़ी सिद्धि प्राप्त हुई है ?'

जे० पी० को उस यात्रा में पता लगता रहता था कि भूदान की जमीन बांटने में व्यापक भ्रष्टाचार हुआ है । उस समय लालबहादुर शास्त्री ने कहा था : 'मेरी जितनी जानकारी है, उससे साफ है कि जमीन बांटने में बहुत ज्यादा भ्रष्टाचार हुआ है । अगर आप लोग इसे नहीं सुधारते तो उससे पूरा सर्वोदय समाज बदनाम होता है ।'

भ्रष्टाचार की बात केवल भूमि-वितरण प्रसंग तक ही सीमित नहीं थी । खादी में मिश्रण और बिहार अकाल के लिए जे० पी० ने अपना खून-पसीना एक करके देश-विदेश से जो धन संग्रह किया था, अकाल-ग्रस्त भूखी जनता के उस ग्रास को भी कार्यकर्त्ताओं ने बेरहमी के साथ अपने घर पहुंचाया ।

यह थी उस आत्मदर्शन की भूमिका जहां जे० पी० ने कहा: 'हमें जड़ तक जाना है, डाल पत्ते तोड़ते रहेंगे तो नहीं चलेगा । जड़ में प्रहार करना पड़ेगा। सारे शरीर में फोड़े हुए हों, तब एक-एक फोड़े का अलग-अलग इलाज करने से नहीं चलेगा । उसका इलाज रक्तशुद्धि ही हो सकता है। हिंसा, बेईमानी, भ्रष्टाचार आदि समाज के फोड़े हैं, रक्तदोष के लक्षण हैं। यह बात सबके ध्यान में आनी चाहिए कि आज हमारे सामने जो अनेकानेक समस्याएं हैं, उनकी जड़ में कुछ खास बातें हैं । कई कारणों से ये समस्याएं खड़ी हुई हैं। समाज की आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक व्यवस्था में कितने ही गलत मूल्य हैं । मूल्य बदले बिना इन समस्याओं का समाधान नहीं होगा। इसलिए इन सब समस्याओं के निराकरण के लिए हमें जड़ तक जाना होगा। एक-एक समस्या को हाथ में लेकर लड़ते रहने का कोई अर्थ नहीं है। संपूर्ण व्यवस्था को जड़ से बदलने का प्रयास करना चाहिए । यह काम केवल दिखावा करने या जेल जाने से नहीं होगा।···बहुत कठिन पुरुषार्थ करना पड़ेगा। इसलिए ऐसे नये और कठिन काम में प्रभाव वगैरह का विचार किए बिना अपने आपको संपूर्ण रूप से उसमें खपा देना होगा । खाद बन जाने की तैयारी इसमें तो होनी चाहिए । जैसे कि जमीन में खाद डाली गई होती है तो भी पता नहीं चलता कि खाद डाली गई है । लेकिन उसमें से अंकुर फूटते हैं पौधे निकलते हैं, फल-फूल लगते हैं। मिट्टी में मिल जाने की ऐसी तैयारी हमारी होनी चाहिए ।'

अपनी यात्रा के पिछले पड़ाव को छोड़ते हुए जे० पी० ने बंगलौर में सर्वोदय कार्यकर्त्ताओं से कहा कि देश में जो भ्रष्ट दलगत राजनीति चल रही है उसका स्थान एक स्वस्थ लोकनीति को लेना चाहिए अन्यथा सत्ता का जिस तेजी से केन्द्रीकरण हो रहा है, उससे देश की क्या दशा होगी, नहीं कहा जा

सकता इसके लिए। उन्होंने सुझाया कि देश के उन भागों से जहां ग्राम-दानी गांव किए गए संकल्पों को यथार्थ में उतार रहे हैं, वहां अगले चुनाव में जनता के प्रतिनिधि खड़े हों जो किसी दल से संबंधित न हों। वहां की जनता ही सर्वसम्मति से उन्हें चुनकर भेजे।

पन्द्रह अगस्त को देश में आजादी की रजत जयंती धूमधाम से मनाई गई। लाल किले में एक भव्य समारोह हुआ, उसमें स्वाधीनता-संग्राम के सेनानियों को ताम्र-पत्र बांटे गए। जयप्रकाश इस दिन चुरू (राजस्थान) के मार्ग पर थे। आचार्य तुलसी की 'अग्नि-परीक्षा' नामक पुस्तक को लेकर हुए विवाद को शांत करने वहां गए थे। दिल्ली से गए अंग्रेजी पत्र के एक संवाददाता ने पूछा कि क्या आपको सरकार ने स्वाधीनता-सेनानी के रूप में याद नहीं किया? कुछेक क्षण जे० पी० शायद विचलित हुए। फिर कहा, 'हां किया तो नहीं, पर मेरी अपेक्षा भी नहीं रही।' संवाददाता जब जाने लगा तो जे० पी० ने कहा, 'इस चीज को छापिएगा नहीं कि जे० पी० को स्वाधीनता-सेनानियों में याद नहीं किया गया।'

इकहत्तर और बहत्तर के चुनावों की जो बुराइयां भयावह रूप में उभरकर आईं, जे० पी० तेरह अगस्त बहत्तर के 'दिनमान' की बातचीत में कहते हैं: 'वे बुराइयां पहले भी रही हैं लेकिन सीमित रूप में उनको देखते हुए लोकतंत्र की रक्षा के लिए आवश्यक हो गया है कि चुनाव की वर्तमान पद्धति में आमूल परिवर्तन किए जाएं।···हम तो संसदीय अथवा अन्य प्रकार के प्रचलित लोकतंत्रों से आगे आकर और दल आधारित राजनीति के बदले लोकनीति का निर्माण करके एक निर्दलीय लोकतंत्र की स्थापना करना चाहते हैं, जिसको मैंने सामुदायिक लोकतंत्र (कम्यूनिटेरियन डिमोक्रेसी) की संज्ञा दी है।

उसी बातचीत में जे० पी० आगे कहते हैं, 'केन्द्र में सत्ता का जिस प्रकार केंद्रीकरण होता जा रहा है, वह घोर चिंता का विषय है। सारी सत्ता सिर्फ केंद्रीय शासन में इकट्ठी हो रही है, ऐसा भी नहीं है। यह तो एक व्यक्ति के हाथों में केन्द्रित होती जा रही है। कांग्रेस दल, चुनावों की सफलता के बावजूद एक खोखला संगठन बन गया है। कांग्रेस मुख्यमंत्रियों का आधार लोकतांत्रिक समर्थन न होकर प्रधानमंत्री की इच्छा मात्र बन गया है। समाजवाद के नाम पर राज्यवाद बढ़ता जा रहा है जिसके चलते आर्थिक सत्ता भी केंद्रीय शासन में, और अंततोगत्वा प्रधानमंत्री के हाथों में केंद्रित होती जा रही है। समाचार-पत्रों का स्वातंत्र्य स्वामित्व के विकेंद्रीकरण के बहाने, कृष्णपक्ष के चंद्रमा की तरह दिन पर दिन क्षीण होता जा रहा है। विद्या के संस्थानों के राज्य पर अवलंबित होने के कारण राष्ट्र का बौद्धिक जीवन भी अपनी स्वायत्तता खोते जा रहा है।'

यात्रा की इस मंजिल पर आते-आते जे० पी० के मानस से राजनीति का वह रूप पूर्णतः विलुप्त हो जाता है जिसमें सत्ता का संघर्ष ही सरकार बनाने या चलाने का आधार बन जाए। इसलिए प्रचलित लोकतंत्री संस्थाओं में राजनीतिक दलों की आपाधापी में, जिसके बिना पश्चिम में विकसित लोकतंत्री प्रणाली की कल्पना ही असंभव है, जे० पी० को अब कोई आस्था नहीं रह जाती। उनका

2

यह विश्वास दृढ़ होने लगता है कि भारत में निर्दलीय पंचायत, दलविहीन राजनीति और निर्दलीय राष्ट्रीय सरकार ही लोक का कल्याण कर सकती है। अपने इसी आदर्श को सरकार रूप देने के लिए जे० पी० ने इन्हीं दिनों निर्दली ग्राम-पंचायतों द्वारा ग्राम-दानी क्षेत्रों में उम्मीदवार खड़ा करने की योजना दी। इस बीच जे० पी० के व्यक्तिगत जीवन का एक परम करुण अध्याय खुलता है।···जिन दिनों प्रभावती जे० पी० के साथ मुसहरी और चंबल की घाटी में कार्यरत थीं, उन दिनों वह चुपचाप अपनी एक भयंकर बीमारी का अपार कष्ट भोग रही थीं।

यह बीमारी और उसकी भयावह स्थिति उस समय प्रकट हुई जब जे० पी० बहत्तर के अक्तूबर मास में मेडिकल कालेज वाराणसी में अपने हाथ के घाव (कारबंकल) का इलाज कराने आए। जे० पी० के घाव का आपरेशन हुआ, वह ठीक हो गए। प्रभावती की जांच हुई तो पता चला उनके गर्भाशय में कैंसर है।

जे० पी० घबरा गए। प्रभा ने अब तक जे० पी० को अपने कष्ट के बारे में इसलिए नहीं बताया था कि उन्हें अपार कष्ट होगा और उनके कार्यों में बाधा पड़ेगी।

सत्ताईस नवंबर को जे० पी० प्रभा को लेकर विमान से बंबई आते हैं—टाटा अस्पताल में। अठाईस तारीख को डा० पेमास्टर ने जांच की। चार दिसंबर को गर्भाशय का सफलतापूर्वक आपरेशन हुआ। स्वस्थ होकर प्रभा, जे० पी० के साथ जनवरी तिहत्तर के अंतिम सप्ताह में कलकत्ता आईं। कलकत्ते में अपने छोटे भाई शिवनाथप्रसाद के यहां आराम कर रही थीं कि उन्हें फिर से तकलीफ शुरू हुई। उलटियां हो रही थीं। बंबई से वहां डा० पेमास्टर बुलाए गए।

जे० पी० फूट-फूट कर रोने लगे।

तिहत्तर के फरवरी मास में जे० पी० उन्हें लेकर पटना आए। पर उनकी हालत गिरती ही जा रही थी। पटना से फिर बंबई टाटा अस्पताल। वहां अब डाक्टरों ने जवाब दे दिया।

जे० पी० प्रभा को लेकर पटना की ओर रवाना हो गए। पर सोचा, दिल्ली में तमाम मित्रों से प्रभा को आखिरी बार मिला दिया जाए।···तेईस मार्च तिहत्तर की एक उदास शाम। इण्डियन एक्सप्रेस के लान में दिल्ली के सारे पुराने इष्ट मित्रों की भीड़ लग गई थी।

मार्च के अंत में जे० पी० प्रभा को लेकर पटना आते हैं।···अब केवल दिन गिनना था : अपने भतीजे, परिवार के इकलौते बेटे अनिल की शादी की तैयारी करवाने में दीदी लगी रहतीं। शरीर की पीड़ा जब असह्य हो जाती तो गोली खा कर थोड़ी देर लेटी रहतीं। शादी की तैयारी जिस व्यवस्थित ढंग से वे करती जा रही थीं उसे देखकर लोग चकित होते रहे। मिठाइयां, बड़ी, पापड़, तिलौरी सब बनकर तैयार हैं; कपड़े, गहने व्यवस्थित रखे गए

हैं। एक नोटबुक में शादी कैसे हो, कौन क्या करे यह सब लिखा हुआ है, हर साड़ी पर लेबल चिपकाया जा रहा है, जिससे पता चले कि कौन साड़ी किसके लिए है। शादी के लिए परिवार के सभी स्नेहीजन इकट्ठे हो रहे हैं। दीदी उनसे कहती हैं : 'ढोलक बजाओ, गाना गाओ।' नित्यक्रम वही चल रहा है : सुबह जल्दी उठना, स्नान करना, विष्णुसहस्रनाम, हनुमान चालीसा, रामायण का पाठ करना। किसी चीज की जरूरत हो तो दीदी खुद खड़ी होती हैं। पास बैठी हुई कोई बहन कह दे कि 'मैं ला देती हूं' तो दीदी बोल उठतीं : 'आप तो मुझे बीमार बना रही हैं।' सुनने वाले स्तंभित रह जाते। हर क्षण मृत्यु के समीप पहुंचती हुई दीदी हर आगंतुक से कहतीं : 'मैं अच्छी हूं, चिंता न कीजिए।' जैसे वे शरीर में रहती हुई भी शरीर से अलग थीं, भयंकर पीड़ा शरीर को हो रही थी, उनको नहीं। यमराज के पाश उनके शरीर को जकड़ रहे थे, उनको नहीं। देह आत्मा से अलग है, हम देह नहीं, आत्मा हैं, अपने गुरु से पाए हुए इस गीता-बोध को वे अपने जीवन में उतार रही थीं।

उन्हीं दिनों विनोबा जी का पत्र उनके पास पहुंचा : 'चि० प्रभावती', "राम कृष्ण हरि।' विनोबा का जय जगत्।'

वेदना असह्य हो जाने पर वे कराहने लगतीं। जे० पी० को इसका पता न चले, इसके लिए उन्होंने अपनी चौकी दूसरे कमरे में लगवा ली थी। वेदना बढ़ जाने पर जे० पी० के कमरे का दरवाजा बंद हो जाता ताकि जे० पी० शांति से सो सकें। कभी कराहते समय वे आते दिखाई देते, तो तुरंत मुस्कराती हुई वे कुछ बोल देतीं। जिस दिन कदमकुआं के चरखा-समिति वाले मकान को छोड़कर शादीवाले गार्डन रोड के मकान में जाना था, उसी दिन की बात है। सुबह नाश्ते का समय था दीदी अपनी चौकी पर पड़ी हुई कराह रही थीं। जे० पी० के आने की आहट सुनी तो तुरंत जाकर टेबल के पास बैठ गईं। उस दिन उन्होंने फ्रूट सलाद बनवाया था जे० पी० को खिलाने के लिए। अपने हाथ से परोसती हैं। 'तुम भी खाओ' जे० पी० के कहने पर वे चम्मच उठाती हैं, खाने का नाटक करती हैं। खाया नहीं जा रहा है। वेदना से शरीर मानो फट रहा है। 'काफी लाओ, दवा कहां है?'

जे० पी० को दवा खिलानी पड़ती है।

अभी दो-चार दिन पहले की बात थी। रात में दीदी को कुछ अधिक कष्ट हुआ। जे० पी० ने उनसे कहा था; 'मेरी चिंता छोड़ दो। सीताराम, सीताराम कहो।' दीदी ने कहा : 'आप भी कहिए।' दोनों साथ-साथ रामनाम जपते हैं।

जे० पी० उनसे कहते हैं : 'मैं तुम्हारा पाठ वगैरह सब चलाऊंगा। तुम जो करती थीं, सब करूंगा।'

बारात पार्टी के साथ दीदी शादी वाले मकान में चली जाती हैं। तबीयत हर क्षण बिगड़ रही है। दीदी के बहुत मना करने पर भी आखिरी दो दिनों के लिए कस्तूरबा ट्रस्ट की एक सेविका सरस्वती बहन उनके पास सेवा के लिए पहुंची है, जैसे वे स्वयं बा के अंतिम दिनों उनके पास पहुंची थीं।

पंद्रह अप्रैल उन्नीस सौ तिहत्तर। सुबह से तबीयत कुछ अधिक खराब है।

उनकी उपस्थिति में शादी संपन्न कराने के लिए जल्दी-जल्दी तिलक की रस्म पूरी की जा रही है। जे० पी० उन्हीं के पास बैठे हैं, बिगड़ी हुई हालत को देख रहे हैं। डाक्टर को फोन करने के लिए उठकर बगल वाले कमरे में चले जाते हैं और इधर कस्तूरबा ट्रस्ट की सेविका सरस्वती बहन की गोद में सिर रखकर दीदी आंखें खोलती हैं उनके मुख से कुछ शब्द निकलते हैं, सरस्वती बहन सुनने की कोशिश करती हैं : 'बापू···बा···'और दीदी सदा के लिए आंखें मूंद लेती हैं।

जे० पी० के जीवन की वह सबसे करुण घटना थी। प्रभा विहीन जे० पी० का वह एकाकीपन उस क्षण और करुण हो गया जब उन्होंने उस कमरे में से सब को बाहर चले जाने को कहा जहां प्रभा का शव रखा हुआ था।

चारों तरफ से कमरे को भीतर से बंद करके जे० पी० मां विहीन अनाथ शिशु की तरह फूटफूटकर रोते रहे। फिर प्रभा की मुंदी हुई आंखों के भीतर न जाने क्या अपलक निहारने लगे। ···रामायण में बाली के शव के सामने जब अपने पति वियोग में तारा विलाप कर रही थी, तब राम ने उसे धीरज देते हुए कहा था : 'जिसके लिए तुम रो रही हो, वह तो तुम्हारे सामने सोया पड़ा है, फिर तुम क्यों रो रही हो? जीव तो नित्य है।'

जे० पी० ने अश्रुपूरित नयनों से प्रभा को प्रणाम किया। उनके ठंडे माथे पर अपना माथा झुकाकर जे० पी० ने अपने अंतरतम में दुहराया : 'प्रभा, अब तक जो कुछ तुम करती रहीं, पूजा-पाठ, उपवास, उसे अब मैं करता रहूंगा तुम्हारे लिए, अपने लिए···।'

तब शक्तिरूपा प्रभा जे० पी० के अंतस् में अंतर्धान हो गई।

उस क्षण से जे० पी० एकदम अकेले हो गए और उस शक्ति के साथ वह सब से जुड़ गए।

इसकी अनुभूति उसी को हो सकती है जिसने आठ अप्रैल सन् चौहत्तर को जे० पी० को पटना में उस मौन जुलूस का नेतृत्व करते देखा हो। या फिर पांच जून को गांधी मैदान में उस सात लाख जनसमूह के सामने बोलते सुना हो।

3

प्रभामय जे०पी० का वह अपूर्व रूप क्या है, जो तब से आज तक, इस क्षण तक लोगों को विस्मय में डाले हुए है? और प्रतिदिन, हर आनेवाले दिन वह विस्मय बढ़ता हुआ चला जा रहा है। कोई कह रहा है : कहां थे जे० पी० अब तक?···जे० पी० लोकतंत्र के शत्रु हैं।···दक्षिण पंथी, प्रतिक्रियावादी हैं।···जे० पी० यह हैं। जे० पी० वह हैं : जे० पी०···जे० पी० ···जे०···।

पिछले छब्बीस वर्षों में भारत ने गांधी को छोड़कर जीने की कोशिश की है। सर्वोदयी राममूर्ति ने कहा था : 'राजनीति ने गांधी की अहिंसा खत्म की और रचनात्मक कार्यक्रम ने गांधी का सत्य।

विनोबा ने गांधी को समय के इसी मलबे के नीचे से बाहर निकाला और जे० पी० ने उसे अंक में भर लिया। भीतर बैठी हुई शक्ति (प्रभा) ने जैसे कहा : सुनो जे० पी० ! बापू व्यक्ति से प्रभाव, कामना से प्रेरणा और स्वप्न से यथार्थ बन चुके हैं। अभाव खटकने का कोई कारण नहीं है।

बस, जयप्रकाश, प्रभामय बन गए। एक चिराग, एक दीप जलने लगा मानवता के गंगाजल में। उन्होंने अब तक देखा था, अब अनुभूत कर लिया, गांधी अंतिम व्यक्ति के हाथों में है। आज का वही अंतिम व्यक्ति कल का प्रथम व्यक्ति बनने वाला है। भारत के विशिष्ट जन ने इतिहास का दिया हुआ अवसर खो दिया है। वे बीते हुए कल के वस्तु बन गए हैं। अब आने वाला कल सामान्य और अंतिम व्यक्तियों का है।

जे० पी० बुद्धि से वैज्ञानिक हैं, हृदय से इतिहासवेत्ता। उन्होंने समय के इस नूतन विज्ञान का रसायन पा लिया है और इन ऐतिहासिक क्षणों का संकेत और आश्वासन भी।

सर्वोदय ने इसका नक्शा तैयार किया। समय ने एक सूली खड़ी कर दी और जे० पी० उसके लिए जीने और मरने के लिए चल पड़े।

यही हैं जे० पी०। जे० पी०···सन् चौहत्तर के···

सर्वोदय ने दिखाया, आज का समाज अंदर से सड़ रहा है। लेकिन उसके न सड़ने का भ्रम बना हुआ है। भ्रम को बनाए रखने का पूरा प्रयत्न व्यवस्था ने कर रखा है। चुनाव, विधान और लोकसभाएं, नौकरियां, व्यवसाय और शिक्षा उस प्रयत्न के मुख्य स्तम्भ हैं। जे० पी० उस बुनियाद को ही हिला रहे हैं, जिस पर ये स्तंभ खड़े है। मन जनता के पास है। राज्य तो क्रांति नहीं करता : मन से राज्य के हटते ही शक्ति के नये स्रोत फूट पड़ेंगे···यही हैं जे० पी०। सन् चौहत्तर के जे०पी०।···इस समय के···आज के···कल के···

तिहत्तर के शुरू में ही बीजू पटनायक ने जे० पी० से मिलकर सत्ता विरोधी सभी शक्तियों को संगठित करने की पूरी योजना और तत्संबंधी सारी जानकारी दी। जे० पी० के अनेक दोस्तों ने आग्रह करना शुरू किया कि ऐसे मोर्चों की सफलता के लिए जे० पी० का नेतृत्व मिलना चाहिए। इस पर जे० पी० ने अपने स्पष्ट विचार दिए कि केवल विरोध देश का भला नहीं करेगा। सत्ता के सिर्फ विरोध का आधार कमजोर है और यह जे०पी० की उन आस्थाओं और मान्यताओं के प्रतिकूल है जिनके कारण सन् चौवन में दलों और सत्ता की राजनीति से उन्हें अलग होना पड़ा। उन्होंने फरवरी के मध्य में अपने एक बयान में कहा :

'दलगत राजनीति से अलग रहने के बावजूद मैंने बार-बार यह स्पष्ट कहा है कि मैंने राजनीतिक संन्यास नहीं लिया है। ऐसा संन्यास कोई नागरिक ले भी नहीं सकता। इसलिए समय-समय पर राजनीतिक मामलों पर मैं न सिर्फ बोलता-लिखता रहा हूं बल्कि राजनीतिक और सामाजिक क्षेत्र के कार्यों में सक्रिय योगदान भी मैंने दिया है। इसमें कुछ काम तो स्वयं सर्वसेवा-संघ ने उठाए थे जो देश का प्रमुख सर्वोदय-संगठन है।

' देश की वर्तमान राजनीतिक हालत पर मानवीय स्वतंत्रता और लोकतंत्र में आस्था रखने वाला कोई भी समझदार व्यक्ति खुश नहीं हो सकता। मेरा ख्याल है कि स्वयं सत्ताधारी दल और प्रधानमंत्री भी इस बात से सहमत होंगे कि सफल लोकतंत्र के लिए शक्तिशाली विरोधी दल होना चाहिए जो सत्ता-धारी दल का विकल्प बनने में समर्थ हो। बिखरे हुए निस्तेज विरोध की आज जो हालत है इससे लोकतंत्र का आधार खोखला होगा और निरंकुश सत्ता की प्रवृत्ति को बढ़ावा मिलेगा। लेकिन विरोधी दलों के आपसी कट्टर मतभेदों को, उनकी परस्पर विरोधी मान्यताओं को और नेताओं में सत्ता के लिए व्यक्तिगत स्पर्द्धा को देखकर उनके सार्थक रूप से संगठित होने की बात असंभव लगती है। फिर भी बीजू पटनायक से मैंने कहा है कि यदि यह संभव हो तो देश के भले के लिए मैं इसमें रुचि ले सकता हूं। मैं ऐसे किसी संगठन में शामिल नहीं होऊंगा लेकिन उसे समर्थन और परामर्श देता रहूंगा।···'

फरवरी में जे० पी० दिल्ली आए। विरोधी दलों के अनेक नेता जब उनसे मिलने गए तो विरोध की राजनीति पर चर्चा करने को जे० पी० उत्साहित नहीं दिखे। गांधी शांति प्रतिष्ठान में बावजूद अपने बुरे स्वास्थ्य के वह फिर भी लोगों से मिलते-जुलते रहे। दूसरे सभी विषयों पर बातचीत भी कर रहे थे लेकिन विरोधियों की सच्ची और कारगर एकता की संभावना उन्हें इतनी कम दिखती थी कि उसके बारे में बात करना भी उन्हें निरर्थक लग रहा था।

जे० पी० का यह अनुभव अब पक्का हो गया था कि विरोधी अब पहले से ज्यादा विभाजित, निष्प्रभ और दिशा हीन हैं। लोगों का विश्वास वे खो चुके हैं और उनके पास ऐसा कोई मंच नहीं है जिसपर वे प्रतिष्ठित रूप से जनता के सामने आ सकें। विरोध की इस हालत को समझ कर ही शायद बीजू पटनायक ने जयप्रकाश नारायण को आगे रखकर उनके पीछे विरोधियों को संगठित करने का प्रयास किया था। इसमें संदेह नहीं कि जे० पी० राज्यवाद और सत्तावाद की बढ़ती हुई ताकत और कारगर विरोध के निपट अभाव को प्रजातंत्र के स्वास्थ्य के लिए खतरा मानते हैं। यह भी सही है कि प्रजातंत्र के स्वास्थ्य के लिए वे अपनी पुण्यायु को दांव पर लगाने के लिए तैयार हैं। इसमें भी कोई शंका नहीं कि आज सत्ता और राजनीति से अलग जे० पी० ही ऐसे नेता हैं जिन पर लोगों का विश्वास है। लेकिन क्या विरोधी दल इस स्थिति में हैं कि वे कारगर और देशहितकारी विरोधी बन सकें?

जे० पी० की निराशा दुहरी है। एक तरफ वे कांग्रेस के तौर-तरीकों से निराश हैं और दूसरी तरफ विरोधियों की निपट असरहीनता से। उन्हें विश्वास नहीं है कि विरोधी अपने सैद्धांतिक, वैयक्तिक और निरर्थक मतभेदों को त्याग कर एक हो सकेंगे। प्रजातंत्र का मतलब विरोधी पार्टियों के लिए सिर्फ सत्ता में आने की सुविधा है। जयप्रकाश और उनकी पीढ़ी के लोगों की तरह प्रजा-तांत्रिक जीवन मूल्य अब विरोधी पार्टियों की आस्था के आधार नहीं हैं। अगर होते तो पार्टियों में इतनी फूट नहीं होती। इसकी संभावना नहीं दिखती कि ये पार्टियां एक संगठित मोर्चा बना सकेंगी।

विरोधियों की इस विफलता ने सरकार को तो निरंकुश कर ही दिया है। जनता के असंतोष के स्वस्थ प्रकटीकरण के रास्ते भी बंद कर दिए हैं। विरोधी उनके असंतोष का लाभ उठाने को तो तैयार हैं लेकिन उसे कारगर तरीके से दूर करवाने की मशीनरी उनके पास नहीं है। तो फिर आम आदमी क्या करे ? 'गरीबी हटाओ' के नारे के बाद बढ़ती हुई कीमतों के खिलाफ उसका विरोध कैसे प्रभावशाली हो और किस तरह वह सरकार को अपनी मांगें मनवाने पर मजबूर करे ? क्या जयप्रकाश नारायण ऐसा कोई गैर-राजनीतिक जन-मोर्चा नहीं बना सकते जो सरकार पर अंकुश रखने में सही और असली विरोध की भूमिका निभा सके ?

अप्रैल के मध्य प्रभावती के स्वर्गवास के बाद जे० पी० अपने भावी कार्य-क्रम के बारे में बताते हुए कहने लगे : ' मैं आगे के काम के बारे में सोचता हूं तो प्रभावती के बिना सोचा नहीं जाता, ये आंसू कुछ दिल को हल्का करते हैं, अगर ये न सहारा दें तो इतना बोझ कैसे वहन किया जा सकता है ?

' मैं अपने गांव से संबंध बनाए रखना चाहता हूं। साल में दस-पांच दिन को जाने का क्रम। पहली बार उनके बिना कैसे जाऊंगा ? यह सोचकर मुझे घबराहट होती है। पटना भी रहूंगा। बिहार के साथ जुड़ा ही हूं, मुसहरी साल में एक सप्ताह जाऊंगा। बनारस में गांधीयन इंस्टीट्यूट के कारण जाना होगा और दिल्ली नये अखबार का काम है। मैं कहीं सभा-समारोहों में नहीं जाना चाहता। काम होगा तो बंबई, कलकत्ता जाना होगा। दक्षिण से जरूर संबंध रखना चाहता हूं। उत्तर-दक्षिण का परस्पर ऐक्य सधना चाहिए। इसमें जो थोड़े लोग दक्षिण को कबूल हैं उनमें मैं हूं। साल में माह भर कहीं भी दक्षिण जाकर रहूं, यह चाहता हूं।'

जे० पी० बताते रहे कि प्रभावती कहती थीं कि आप डेढ़ घंटे का भाषण देते हैं उससे अच्छा आप कुछ लिखें, भाषण तो सुनने वाले एक कान से सुनते हैं दूसरे से निकाल देते हैं। दूसरा कोई उल्टी बात कहेगा तो भी सुनेंगे। पर आप घूमना-फिरना कम करके बैठकर लिखें। अभी दिल्ली गया तो और मित्रों का भी यही आग्रह था।

मृत्यु के तेरह दिन बाद अठाईस अप्रैल को प्रभावती का श्राद्ध था। जे० पी० ने परंपरागत श्राद्ध का कोई कर्मकांड नहीं किया। इसलिए श्राद्ध समारोह श्रद्धा का समारोह हुआ। धर्मग्रंथों के पाठ हुए। शाम को सर्वधर्म प्रार्थना हुई और उसके बाद प्रसाद वितरण हुआ।

उस दिन जे० पी० आश्वस्त थे, किंतु चेहरे पर एकाकी मन का संकट स्पष्ट था। समारोह के बाद उन्होंने खुशी-खुशी सबको विदा किया। और दूसरे दिन जैसे खुद अपने को भी विदा करने चले। जीवन में पहली बार अकेले सिताब दियारा के लिए चले। रास्ते भर आ आकर स्मृतियां उन्हें घेर लेतीं। पैर कांपने लगते। आंखों में आंसू उमड़ पड़ते।

जुलाई के आखिरी सप्ताह में जे० पी० बंबई पहुंचे। ट्रस्टीशिप यानी मालिक और मजदूर-संबंधों में परिवर्तन के विषय पर जे० पी० मजदूरों की

सभाओं में भाग लेते रहे। कुल तीन बैठकें कर पाए थे कि वहीं बंबई में जे० पी० फिर बीमार पड़ गए और उन्हें हाथ का काम वहीं छोड़ देना पड़ा।

जुलाई-अगस्त महीने में जे० पी० बंबई में रहे। दो सप्ताह अस्पताल में और तीन सप्ताह आराम लेने के लिए छोटे भाई राजा बाबू के साथ रहे।

अठाईस अगस्त को जे० पी० पटना लौटे। डाक्टरों ने सलाह दी कि अगले तीन माह तक शरीर पर बिल्कुल जोर न दें।

इसलिए नवंबर अंत तक उन्होंने अपना एक क्रम बनाया जिसमें बातचीत करने पर भी समय की रोक रखी गई थी। पर कदमकुआं के उस 'प्रभा'-विहीन घर के सूने गलियारे में देखते हुए जे० पी० को पता है, वह उतने दिन भी आराम नहीं ले पाएंगे। दीपावली पर वह अपने गांव सिताब दियारा जायेंगे जहां उनका गोद लिया पुत्र (भतीजा) विवाहोपरांत पहली बार दीपावली पर आएगा।

प्रभावती के जाने के बाद दीपावली तो सूनी हो जाएगी, पर उनके दायित्व को पूरा करने का कर्त्तव्य जे० पी० ने अपना माना है।

ग्यारह अक्टूबर को सोखोदेवरा सर्वोदय आश्रम में जे० पी० की इकहत्तरवीं वर्षगांठ मनाई गई। जे० पी० को याद था, उसी दिन उनका वह वर्ष पूरा हुआ जिसमें वह सब जिम्मेदारियों से मुक्त होकर कहीं एकान्त में प्रभावती के साथ रहना चाहते थे। पर वह यह बीता हुआ वर्ष उनका एक करुणतम वर्ष था, जिसका असर उनके स्वास्थ्य पर अमिट था।

डेढ़ साल पहले जिस चंबल घाटी में जे० पी० ने बागियों का समर्पण कार्य किया था अब उन्हीं के लिए मुंगावली में खुली जेल का उद्घाटन करने चौदह नवंबर की सुबह जे० पी० दिल्ली से बीना पहुंचे। आसपास के लोगों में दंड-शास्त्र के क्षेत्रों में किए जा रहे इस अभिनव प्रयोग को लेकर कितना उत्साह था इसका पहला प्रदर्शन बीना स्टेशन पर हुआ। बहुत से लोग हार-फूल लेकर जे० पी० की जय-जयकार करते हुए आए और देखते-देखते वे फूलों से लाद दिए गए। मुंगावली बीना कटनी लाइन पर बीना से 18 किलोमीटर दूर है। मुंगावली जाने वाली रेल खड़ी थी और उसका प्रथम श्रेणी का एक डिब्बा फूलों और पताकाओं से सजा था। भीड़ जे० पी० को उस डिब्बे तक ले गई और सांस की कमी से आजकल त्रस्त हो जाने वाले जे० पी० ने अंदर जाकर गहरी सांस ली। पुलिस के जवानों ने भीड़ को डिब्बे से सम्मानजनक दूरी तक खिसका दिया। सभी तरह के लोग उनसे मिलने आते गए। जे० पी० के लिए किए गए इंतजाम में आक्सीजन का एक सिलेण्डर भी था और डाक्टर भी। ठीक दस बजकर बीस मिनट पर रेलगाड़ी खिसकने लगी। लेकिन बीना स्टेशन से निकलने में उसे कोई दस मिनट लगे होंगे। महीनों बाद यही गाड़ी समय पर चली थी और इस कारण रोज के अभ्यस्त यात्री लेट ही आए थे और बार-बार जंजीर खींची जा रही थी।

आधा घंटे तक गाड़ी मुंगावली पहुंच गई। आम तौर पर ऊंघने वाला स्टेशन सहसा जीवंत हो गया था। मुख्यमंत्री सेठी, जेल और विधिमंत्री कृष्णपाल-

सिंह, बहुत से प्रशासक और कोई दो हजार लोग जे० पी० का स्वागत करने को इतने उत्साहित थे कि गाड़ी के रुकते ही अराजक भगदड़ मच गई और बाहर एक बैंड उन्मादी की तरह बजने लगा। मालाओं और फूलों की इतनी कमी पड़ गई कि लोगों ने डब्बे की सजावट तहस-नहस करके फूल नोचे और जे० पी० पर न्यौछावर किए। लोग डब्बे पर चढ़ गए। नारेबाजी जय-जयकार और भीड़ की रेल पेल इतनी अधिक बढ़ गई कि जे० पी० को शीघ्र ही वहां से निकाल ले जाने का आग्रह करना पड़ा। पुलिस, प्रशासकों और स्वयंसेवकों ने भीड़ को हटाया और जे० पी० को महावीरसिंह स्टेशन के बाहर निकाल लाए। एक एंबेसेडर में बैठकर वे नजदीक ही बने सर्किट हाउसके लिए रवाना हो गए। सेठी और कृष्णपालसिंह एक खुली जीप में बैठकर लोगों क अभिवादन स्वीकारते हुए जुलूस में निकले। नगरपालिका की ओर से पहला स्वागत द्वार बना था और उसके बाद शहर और खुली जेल यानी नवजीवन शिविर तक कई स्वागत द्वार खड़े किए गए थे। लेकिन जुलूस सर्किट हाउस पर ही समाप्त हो गया। सर्किट हाउस के अहाते में दाहिने हाथ पर शांति मिशन का शिविर था और बायें हाथ पर एक बड़ा सा शामियाना खड़ा था यह सोच कर कि जे० पी० शायद वहां बैठकर छोटी बैठकें लेना पसंद करें। लेकिन जे० पी० का स्वास्थ्य आजकल ज्यादा बोलचाल बर्दाश्त नहीं करता इसलिए जिन तीस घंटों तक वे मुंगावली में रहे शामियाने में सिर्फ दर्शनार्थी और पुलिस वाले बैठते रहे।

आखिर यहां खुली जेल में डाकू आ रहे हैं लेकिन आज इन्हीं लोगों ने बड़े-बड़े स्वागत द्वार सजाए थे, कस्बे में बड़ी चहल-पहल थी आसपास के गांवों-शहरों ने मुंगावली की आबादी एक चौथाई बढ़ा दी थी। वातावरण उत्सव से भरा था। मुंगावली जैसे कस्बे में जे० पी०, मुख्यमंत्री सेठी उनके साथी और दूसरे 'बड़े-बड़े' लोगों का आगमन निश्चित ही एक सार्वजनिक उत्सव था। जीपें, मोटरें और बसें दौड़ रही थीं।

सर्किट हाउस से लगभग दो किलोमीटर दूर मिरकाबाद में बनी खुली जेल के अहाते में तीन बजे उद्घाटन कार्यक्रम शुरू हुआ। लगभग सात हजार लोग समारोह में आए थे। जबलपुर जेल का सजा-धजा चमकीला बैण्ड और खादी के धवल कपड़ों में बैठे सत्तर बागी आकर्षण केंद्र थे। इन भूतपूर्व बागियों के भजन से समारोह शुरू हुआ। मंच पर गांधी, विनोबा के दो बड़े चित्र थे। उनकी लाइन में जे० पी०, मुख्यमंत्री सेठी उनकी पत्नी और मंत्रीगण बैठे और मंच पर शांति मिशन के देवेन्द्र भाई, महावीर भाई, हेमदेव शर्मा, सुब्बाराव, और पं० लोकमन, तहसीलदारसिंह, चरणसिंह आदि को आग्रह पूर्वक बैठाया गया। जेलमंत्री कृष्णपालसिंह ने खुली जेल खोलने के बारे में मध्य प्रदेश सरकार का दृष्टिकोण बताया और अन्य जानकारी दी। भूतपूर्व बागियों से उन्होंने कहा कि वे अपने व्यवहार से सिद्ध करें कि जे० पी० और सरकार ने उनमें जो विश्वास प्रकट किया है वे उसके योग्य हैं। जे० पी० ने अपने भाषण में खुली जेल के प्रयोग का दर्शन बताया और समाज के जागरूक वर्गों में हुई प्रतिक्रियाओं का उत्तर दिया।

पंद्रह नवंबर को जे० पी० ग्यारह बजे खुली जेल देखने और बागियों से मिलने आए। जगह-जगह अलग चूल्हे देख कर जे० पी० ने बागियों को मजाक में समझाया कि अब चूल्हा एक ही होना चाहिए। माधोसिंह, मोहरसिंह आदि गांधी फिल्म समिति द्वारा बनाई जा रही फिल्म की शूटिंग के लिए अपने पुराने सूटों में थे। जे०पी० ने खेल के मैदान, अस्पताल आदि की व्यवस्था देखी। फिर अधिकारियों से चर्चा की और बाहर के शामियाने में बागियों की बैठक में आए। सुब्बाराव और बागियों की बैठक ने 'जय जगत पुकारे जा' गीत गाया और सारा दृश्य, समूचा वातावरण बिल्कुल चौदह अप्रैल सन् बहत्तर के पगारा जैसा हो गया। जे०पी० की स्मृतियां ताजी हो गईं। जब उनसे बोलने को कहा गया तो जे० पी० का कंठ भर आया और आंखों से आंसू बहने लगे। दीदी आज नहीं थीं···दीदी आज संसार में कहीं नहीं थीं और जे० पी० बागियों के सामने अकेले थे। सिसकियों में डूबते हुए जे० पी० ने एक वाक्य कहा : 'आज आप लोगों के बीच अकेला आया हूं।' सब लोग सन्नाटे में थे···यादों के दुखदायी संसार में खोए हुए गीले और गुमसुम। सिर्फ चिड़ियों की चहक सुनाई पड़ रही थी, जो स्मृति के मंदिर में घंटियों की तरह बज रही थी। जे० पी० ने अपने को संभाला और धीरे-धीरे बोलना शुरू किया।

एक बजे जे० पी० उठे। मध्यप्रदेश के मंत्री चंद्रप्रतापसिंह, शांति मिशन के लोगों और बागियों ने उन्हें विदा किया। मोहरसिंह ने जे० पी० के पांव छुए और कहा : 'बाबू जी, आप अच्छे हों···तभी आइए।···हम लोगों की तरफ से कोई फिक्र न करें।'···

4

सन् तिहत्तर बीत रहा था। फरवरी चौहत्तर में उत्तर प्रदेश, उड़ीसा, नागालैंड, त्रिपुरा और पांडिचेरी आदि राज्यों में नई विधानसभाओं के चुनाव होने जा रहे थे।

जे० पी० का विश्वास है कि संसदीय जनतंत्र में आम चुनाव जनतंत्र की बुनियाद या उसकी रीढ़ है। उसी के सहारे जनतंत्र खड़ा रह सकता है। पर अगर चुनाव की ही प्रक्रिया में दोष आ जाय तो सारा जनतंत्र अर्थहीन हो जाता है। इस अर्थहीनता को जे० पी० उन्नीस सौ बावन से अब तक देखते आ रहे हैं, अब उन्होंने संकल्प किया कि यह सही है कि संसदीय जनतंत्र और चुनाव की मौजूदा प्रणाली अपने आप में ही अपर्याप्त और गलत हैं तथा इनके बारे में मूलभूत तरीके से सोचने की जरूरत है। इन बातों की ओर देश के विचारकों और हितचिंतकों का ध्यान जल्दी से जल्दी जाना चाहिए। लेकिन जब तक इनमें परिवर्तन नहीं होता तब तक वर्तमान आम चुनाव सही ढंग से हों, लोग बिना किसी डर या प्रलोभन के अपने मताधिकार का सही उपयोग कर सकें, इस कार्य को जे० पी० ने वर्ष बीतते-बीतते अपने हाथ में ले लिया।

कलकत्ता में उन्तीस और तीस दिसंबर तिहत्तर को हुई 'आल इंडिया रेडिकल ह्यूमनिस्ट एसोसियेशन' के सम्मेलन के उद्घाटन भाषण में जे० पी०

ने घोषणा की : 'दलीय प्रजातंत्र का अब हमें छब्बीस वर्षों का अनुभव हो चुका है । इस दौरान लगभग हरएक राजनीतिक दल को सत्ता में भागीदारी मिल चुकी है और सत्ता में आने के बाद इनके रंग ढंग हम देख चुके हैं और हमें मालूम है कि लोगों के लिए इन दलों ने क्या किया है । यह कहना गलत नहीं होगा कि अपने घोषणा-पत्रों से भिन्न इन पार्टियों का व्यवहार और कामकाज सांपनाथ के भाई नागनाथ जैसा रहा है, फिर चाहे वे सरकार में रही हों या उसके बाहर । लेकिन इस बार छोड़ भी दें तो बुनियादी मुद्दा यह है कि पार्टी-प्रणाली पर आधारित और पार्टियों द्वारा संचालित दलीय प्रजातंत्र एक बहुत ही असंतोषजनक और त्रुटिपूर्ण प्रजातांत्रिक प्रणाली है । आम तौर पर लोग राजनीतिक पार्टियों और प्रजातंत्र के वर्तमान स्वरूप और तौर-तरीकों से ऊब गए हैं । वे वोट देकर इस प्रजातंत्र में जैसे-तैसे नाम-मात्र का अपना रोल अदा करते हैं, क्योंकि उनके सामने कोई विकल्प नहीं है ।

' मेरा विश्वास है कि लोगों के पास विकल्प है और लोगों के सच्चे प्रजातंत्र का बेहतर प्रजातांत्रिक स्वरूप संभव है···गांधी और राय दोनों के ही उस राजनीतिक ढांचे के अपने-अपने चित्र थे जिन्हें वे बनाने की कोशिश करते। जहां तक मैं समझता हूं, इन चित्रों में बहुत अधिक समानता है हालांकि जिस शब्दावली में इन दोनों ने अपने चित्रों का वर्णन किया है और उनके समर्थन में जो दलीलें दी हैं वे अनिवार्य रूप से भिन्न हैं, क्योंकि इन दोनों की पृष्ठ-भूमियों और दृष्टिकोणों में अंतर था । दो बुनियादी तत्त्व जो दोनों में समान हैं, इस प्रकार हैं—दोनों ने ही पार्टी-विहीन प्रजातंत्र की बात कही है और दोनों ही इस मुद्दे पर स्पष्ट थे कि यह प्रजातंत्र नीचे से बनाया जाएगा । गांधी इसका आधार ग्राम-राज (ग्राम-स्वशासन) को मानते थे और राय जन-समितियों को मानते थे । सामाजिक कार्यकर्त्ता होने के नाते वैचारिक ढांचे खड़े करने में ही मेरी रुचि नहीं है । मैं तो आपके सामने और आपके जरिए पूरे देश और खास कर जवानों के सामने सामाजिक राजनीतिक कार्यवाही का एक तात्कालिक कार्यक्रम रखना चाहता हूं । मेरा आह्वान है—' जन-प्रजातंत्र की ओर ।'

जनवरी चौहत्तर के प्रथम सप्ताह से ही जे० पी० ने अपना नया अभियान शुरू किया । वाराणसी में उन्होंने निर्दलीय छात्रों को संबोधित करते हुए कहा कि वे एकजुट हो कर वर्तमान प्रजातांत्रिक संस्थाओं और प्रक्रियाओं की रक्षा करें । छात्र और युवावर्ग गांधी जी के ग्राम-राज के सपने या सामुदायिक स्वशासन के आधार पर लोक-प्रजातंत्र का विकल्प खड़ा करने में लगें, जिसमें सरकार चलाने की प्रक्रियाओं में अधिक से अधिक लोगों की भागीदारी हो सके । ये सब क्रांतिकारी लेकिन रचनात्मक कार्य हैं और इनके लिए स्वाधीनता पूर्वक की गई अनुशासित तैयारी की जरूरत है । इनमें सीधी कार्यवाही भी जरूरी हो सकती है लेकिन एक बेहतर और संपूर्ण प्रजातंत्र के लिए की गई कार्यवाही का हिंसा से कोई संबंध नहीं हो सकता ।

जे० पी० के इस आह्वान को गुजरात के छात्रों ने सुन लिया और गुजरात विधानसभा के विसर्जन के लिए वहां राज्यव्यापी आंदोलन छिड़ गया ।

जे० पी० वाराणसी से नौ जनवरी चौहत्तर को लखनऊ पहुंचे। स्थानीय गांधीभवन में नगर के विभिन्न वर्गों : जैसे डाक्टरों, वकीलों, महिलाओं, प्राध्यापकों, संपादकों तथा तरुणों से अलग-अलग भेंट की और मतदाता शिक्षण संबंधी कार्यक्रम के बारे में कहा कि सभी लोग प्रदेश में स्वतंत्र तथा शुद्ध चुनाव कराने में अपना योगदान प्रदान करें।

शाम को नगर के युवकों, छात्रों तथा तरुण शांति-सैनिकों के बीच में आह्वान करते हुए जे० पी० ने कहा कि लोकतंत्र की जड़ें निरंतर खोखली होती जा रही हैं। जो सन् बावन के चुनाव में नैतिकता थी वह आज नहीं रही और जो कुछ शेष बची है वह भविष्य में रहने वाली नहीं है। जब नैतिकता ही नहीं रहेगी तो लोकतंत्र की स्थिति क्या होगी ? यह सबके लिए चुनौती है। उसे कल नहीं, आज ही स्वीकार करना चाहिए और लोकतंत्र को बचाने के लिए सभी निष्पक्ष तरुणों को मिलकर शुद्ध और स्वतंत्र चुनाव कराने के लिए कार्य में लगना चाहिए। जे० पी० ने कहा कि यदि कहीं गलत वोटिंग हो रही हो तो युवकों को उस समय शांतिपूर्ण घेराव भी करना चाहिए कि जब तक यह काम शुद्ध नहीं होगा हम हटेंगे नहीं। जरूरत पड़े तो पोल भी रद्द कराने की तैयारी रहनी चाहिए।

सोलह जनवरी को जे० पी० मुजफ्फरपुर पहुंचे, मुसहरी के अधूरे काम को पूरा करने के लिए। मुसहरी अभियान के पुराने सभी कार्यकर्त्ता महादेव पांडेय, ध्वजाप्रसाद साहु, कैलाशप्रसाद शर्मा रामेश्वर ठाकुर, हरिहर पांडे, मंडलेश्वर तिवारी आदि मुसहरी प्रखंड ग्राम-स्वराज्य-सभा-अमर निकेतन, रामबाग पर मौजूद थे। 'अवार्ड' के ए० सी० सेन वहां पहले से ही कार्यरत थे। प्रथम चरण का ग्राम-दान कार्य पूरा होकर अब दूसरे चरण की पूर्णता को प्राप्त कर रहा था।

इस बार जे० पी० मुजफ्फरपुर में 'गंडक प्रोजेक्ट रेस्ट हाउस' में टिके थे। सोलह जनवरी को जे० पी० ने ग्रामीण उद्योग-परियोजना, मुजफ्फरपुर का उद्घाटन किया। सत्रह को मुसहरी प्रखंड ग्राम-स्वराज्य सभा के आम लोगों से सामूहिक मिलन के आनंदमय क्षण बिताए। अठारह जनवरी से बीस जनवरी तक ग्राम-विकास से संबंधित एक विशेष कार्य गोष्ठी में जे० पी० ने भाग लिया।

इस बार मुसहरी में जब से जे० पी० आए, अपने ग्राम-स्वराज्य-आंदोलन के दौरान इसके विकास के लिए यहां की समग्र समस्याओं पर भी दृष्टिपात करते रहे और उसके निदान का विकल्प ढूंढ़ते रहे। सभी जानते हैं कि सरकार की बड़ी योजनाएं सर्वसाधारण मजदूर किसानों के स्थायी हित में सहायक नहीं हो पाईं। यही कारण था कि आंदोलन का काम जब कुछ आगे बढ़ा तो पीछे से कुछ विकास कार्यों को भी जोड़ने की कल्पना जे० पी० के मन में जगी। हालांकि आंदोलन और विकास कार्य एक साथ आरंभ करने में कई अंतर्द्वंद्व उठ रहे थे। अंततः कई विकल्पों में से इस कृषि-प्रधान क्षेत्र के लिए सीमांत किसान मजदूरों को हस्तचालित चापाकल उपलब्ध कराने के निष्कर्ष पर

जे० पी० पहुंचे। निश्चय ही सिचाई की सुविधा के अभाव में खासकर सीमांत किसान मजदूरों की हालत चिंतनीय हो रही थी। अतएव बिहार रिलीफ कमेटी को इस काम के लिए आमंत्रित किया और बैंक आफ बड़ौदा को राजी करके विकास की दिशा में इस एक छोटे से काम से शुभारंभ हुआ। फलतः आज अनेक वैसे किसान मजदूरों के खेतों में चापाकल लग चुके हैं। उनके पास जो भी जमीन है, सालों भर हरी भरी रहती है। किसान या मजदूर, दिन भर अन्य काम या मजदूरी करने के बाद जो भी शेष समय बचता है, उसे अपने बच्चों के साथ चापाकल से खेती करने में लगाते हैं। एड़ी चोटी का पसीना एक करके साल में किसी-किसी ने तीन-तीन फसलें काटी हैं। जहां साल में एक कट्ठा में एक मन भी अन्न नहीं होता था, वहां ढाई-तीन मन अन्न होने लगा।

इस क्रम में क्षेत्र के कुछ किसान मजदूरों से जे० पी० ने संपर्क भी किया और उनसे जो आकड़े मिले वे काफी उत्साहवर्धक थे।

बीस जनवरी को सुबह कार से जे० पी० मुसहरी गांवों में लोगों से मिलने के लिए निकल गए। गांवों की कच्ची सड़क से गुजरते हुए जे० पी० बता रहे थे—ऊपर से ठीक होने में उतनी देर नहीं लगती, पर इन गांवों में भीतर की खराबियां बहुत ही मुश्किल से जाएंगी। गावों में विकास काम के एक विरोधी नहीं, जमींदार, नेता, जातपांत, पुरानी शत्रुता, चुनाव आदि न जाने कितने विरोधी तत्त्व हैं।

मणिकामन गांव के किनारे बूढ़ी गंडक का छोड़ा हुआ अपार जल फैला रहता है। पर गांव की धरती प्यासी रहती है। बूढ़ी गंडक का वह पानी अब मुसहरी के गांवों को मिलेगा।

जे० पी० गांव-गांव विकास कार्य का निरीक्षण करते चले जा रहे थे कि सलहा गांव में जलाधर ठाकुर ने जे० पी० का रास्ता रोक लिया। चांदनी और गेंदे के फूलों के हार जे० पी० पर बरसने लगे।

बिहार के संपन्न किसान जलाधर ठाकुर के दरवाजे पर धूप में बैठे हुए जे० पी० प्रसन्नमुख कहने लगते हैं : 'जैसे गोद लिया पुत्र होता है न, उसी तरह यह मुसहरी क्षेत्र मेरा गोद लिया हुआ है।' बड़े प्रेम से दही खाते हुए जे० पी० गांव वालों से कहने लगे : 'भाई मेरा मिजाज ग्रामीण है। मैं देहाती हूं।' ···गांव वालों से जे० पी० घिरते चले जा रहे थे। चारों ओर खबर फैलती चली जा रही थी कि जयप्रकाश आए हैं, लोग अपनी शत-शत समस्याएं लिये उनके पास आने लगे थे। वे समस्याएं राजनीतिक, सामाजिक, पारिवारिक और अत्यंत व्यक्तिगत भी होती थीं।

जे० पी० सब की सुनते थे। न जाने कितने प्रार्थना-पत्र, स्मृति-पत्र उनके पास इकट्ठे होते चले जा रहे थे।···माधोपुर गांव में जे० पी० ने मुस्कराते हुए कहा : 'मुंह जूठा ही रखता हूं,······विलायती आदत है, पर हाथ जरूर धोता हूं।'

टोला बकुल, बंकटपुर, छपरा, शेरपुर, प्रह्लादपुर, नरसिंहपुर छपरा, मेघ-

गांव, तरौरा, गंगापुर से गुजरते हुए जे० पी० की सारी स्मृतियां ताजी हो जाती हैं।

जब पहली बार मुसहरी में आए थे, तो किस-किस गांव में कैसे-कैसे पड़ाव किए थे, तब प्रभावती भी थीं···जे० पी० चुप हो जाते हैं।

ग्राम्य जीवन के इसी करुण यथार्थ ने जे० पी० से कभी एक कविता लिखवाई थी : 'नारी' :

पीली-पीली खोई-खोई टूटी-टूटी
एक नारी घायल तितली-सी
घर से निकल पड़ती है
तन और मन को थका देने वाला दिन
और पुरुष की निर्मम शरीर लिप्सा से
भारी-भारी रातें उसकी जिंदगी में छा गई हैं
उसको पड़ोसी कहते हैं सुमधुर सुकुमार नारी
वह दुखभरी मुस्कान से मुंह छिपाती है वह नारी
जिसकी आहभरी जिंदगी में मुस्कराहट भी उदास हो गई है
घर के अंधेरे कोने में वह एकाकी है
छठे शिशु के लिए जिसके अंचल का उफान सूख गया
वह नारी सोचती है अशांत रातें
और बोझिल शिथिल स्नेहहीन घड़ियां
वे घड़ियां जो पत्नीत्व निर्वाह के लिए किसी ने गढ़ दी हैं
छः प्रसव से टूटे शरीर और मन में आता है
केवल कबाड़ भरा कमरा अस्त-व्यस्त छोटा आवास
और उसके छोटे आंगन के अपने
सीमाबद्ध नीले आकाश के बादल और बिजली
वह नारी सोचती है दूर के यातायात की गूंज और उठ बैठती है
और कुछ न सोचने का प्रयत्न करती है
फिर शिशु जग जाता है उसके क्रंदन में उसकी मांग है
वह नारी वत्सवत उसे स्तनपान कराती है
और उसके शेष पांचों बच्चे आ जाते हैं
और फिर शत-शत सिर उठाती ध्वनियों से
दिनचर्या का चक्र चल पड़ता है
घर से निकल पड़ती है वह नारी
पीली-पीली खोई-खोई टूटी-टूटी···।

इसी नारी के शत-शत निरीह पुत्रों से जे० पी० एक सत्याग्रही सेना बना कर हिंसक सत्ता और भ्रष्ट व्यवस्था के खिलाफ युद्धरत होते हैं।

इस बार की यात्रा में पहले की कुछ चीजें अब भी मौजूद हैं—जले हुए घर, उजड़े हुए मकान, वीरान गांव, वे बाग, वे पेड़, वे लोग···जे० पी० लोगों के बीच संकेत की भाषा में बोलते हैं : बहत्तर में राजकिशोरसिंह और तसलीम

की लाश को किसने देखा था ? ··· पहचाना था ? ··· तरौरा या गंगापुर ?

राजकिशोर की माई कैसी हैं ? ···नंदीपत भतीजे को हक नहीं दिया··· पैंसठ में पटना के छात्रों पर गोली चली थी।···छपरा, रूपनाथ गांव···मुखदेव सिंह अब भी जेल में हैं।···बिजलीसिंह केस के बहाने सरकार ने यहां जो भी प्रगतिशील था, हमदर्द था गांववालों का, इधर के साधु संत तक को, बिजलीसिंह डकैती का केस बनाकर सब को जेल में डाल दिया।

—अब चलें छो ?

—हां, फिर आऊंगा···।

नौ और दस फरवरी को गांधी शांति-प्रतिष्ठान, अवार्ड और इंग्लैंड के इंडिया डेवलेपमेंट ग्रुप द्वारा दिल्ली में बुलाई गई दो दिवसीय गोष्ठी की अध्यक्षता करने जे० पी० यहां आए। राष्ट्रपति गिरि ने गोष्ठी का उद्घाटन किया था।

जे० पी० से मिलने के लिए गुजरात के सर्वोदय साथियों का एक शिष्टमंडल आठ फरवरी को दिल्ली आया था। नारायण देसाई, कांति भाई आदि इस शिष्टमंडल में आए थे। और उन्होंने जे० पी० से कहा कि सर्वोदय कार्यकर्त्ताओं का ही नहीं बल्कि गुजरात के विद्यार्थियों, प्राध्यापकों, बुद्धिजीवियों और नागरिकों का भी आग्रह है कि वे गुजरात आएं। जे० पी० मतदाता प्रशिक्षण के लिए इलाहाबाद और वाराणसी का कार्यक्रम बना चुके थे। यह कार्यक्रम उन्हें रद्द करना पड़ा।

गुजरात सर्वोदय मंडल के आग्रह पर जयप्रकाश नारायण अहमदाबाद पहुंचे। ग्यारह फरवरी को आंदोलनग्रस्त राजधानी में पहुंचते ही जे० पी० ने अनशन पर बैठे विद्यार्थियों से चर्चा की और दूसरे दिन उनकी उपस्थिति में विद्यार्थियों ने अनशन तोड़ा। जे० पी० गुजरात में प्राध्यापकों, विद्यार्थियों, नागरिकों और सर्वोदय कार्यकर्त्ताओं से मिले। स्थिति का अध्ययन करने के बाद उनकी सलाह पर गुजरात सर्वोदय मंडल अपना आगे का कार्यक्रम बनाएगा।

पंद्रह फरवरी की सुबह जे० पी० अहमदाबाद से दिल्ली लौटे और उसी दिन प्रधान मंत्री इंदिरा गांधी से मिले। सोलह की सुबह जे० पी० ऐंटीबाइटिक्स के कुप्रभाव से बीमार पड़ गए। खांसी और तेज बुखार। पूरे सप्ताह तक पंत अस्पताल में डा० पद्मावती की देख-रेख में रहे। छब्बीस फरवरी को इंडियन एक्सप्रेस गेस्ट हाउस में आए। संध्या समय बाहर बैठक में तमाम मित्रों से घिरे बैठे रहे। गुजरात के बारे में चिंतित थे।

मित्रों से बात करते-करते जे०पी० ने कहा : 'सहरसा में मैं रो पड़ा।··· युवकों में इतनी जान, इतना उत्साह और उसे इस तरह बरबाद होते देखकर।'

उन दिनों जे० पी० के सिरहाने रामचरितमानस और गीता के अलावा 'एबव द बैटिल', 'द फर्स्ट सर्किल' और 'एंब्रेस्डर्स जरनल' पुस्तकें रखी थीं। वह अपनी अस्वस्थता में भी ये पुस्तकें पढ़ रहे थे।

रात को भोजन करते-करते जे० पी० ने कहा : 'जो सामने है, जो तत्काल है, वही कर्म है। अब सर्वोदय को यही अर्थ देना है।'

सत्ताईस फरवरी को उत्तर प्रदेश, उड़ीसा के चुनावों के परिणाम आ रहे थे। जे० पी० रह रहकर राजनीतिक पार्टियों की प्रकृति और चुनाव की अर्थहीनता पर गहरी चिंता व्यक्त कर रहे थे। साथ में थे, आर० आर० दिवाकर, प्रोफेसर विमलप्रसाद, गंगा बाबू, राधाकृष्ण और पटना के लालसिंह त्यागी।

पहली मार्च को सुबह अटलबिहारी वाजपेयी मिलने आए। शाम को रामधारीसिंह दिनकर, अमृतलाल नागर। गुजरात के बहाने इंदिरा गांधी ने जो बयान दिया था। 'जो कुछ फासिस्ट काम गुजरात में हुआ है, वह रिहर्सल है, जो पूरे भारत में होना था।' इस पर जे० पी० बहुत दुखी थे और कहते थे कि यह कितनी गलत बात है, मैं इंदिरा गांधी को व्यक्तिगत पत्र लिखूंगा और प्रेस में वक्तव्य दूंगा।

दो मार्च को जे० पी० पूर्णतः स्वस्थ दिखे। पाजामा, जे० पी० कुर्ता और और जवाहर बंडी। बहुत आकर्षक दिख रहे थे। शाम को बाहर घूमने गए।

लौटे तो लान में चुपचाप घूमने लगे। घूमते हुए एक जगह खड़े हो गए। लंबी सांस ली। फिर बेहद उदास स्वर में कहा : 'यह लान मेरे लिए दुखद स्मृतियों की जगह है'''। इसी लान में प्रभावती ने पिछले वर्ष मित्रों से मिलने के लिए चाय पर बुलाया था। वही आखिरी पार्टी थी।' श्रीमती आशा प्रसाद ने बताया कि जे० पी० इस बार पलंग के उसी तरफ सोते हैं जिस जगह प्रभावती सोती थीं।

तीन मार्च। इतवार की सुबह'''एकाएक 'शुगर डाउन' हो जाने से जे० पी० बहुत कमजोरी अनुभव कर रहे थे। रात को 'जेली' खा लिया था। बी० पी० कोइराला आए मिलने।

मार्च के प्रथम सप्ताह के अंत में जे० पी० दिल्ली से पटना चले गए।

पटना में अठारह मार्च को आगजनी, लूटमार और बड़े व्यापक स्तर पर जो विध्वंसात्मक घटनाएं हुईं, उन्हें देखकर ऐसे किसी भी व्यक्ति के लिए आंसू रोक पाना मुश्किल हुआ था जिसमें थोड़ी भी संवेदनशीलता और देशभक्ति हो और जो जानता हो कि वहां क्या-क्या हो रहा है।

उन्नीस मार्च को जे० पी० ने वक्तव्य दिया : 'कल मेरी शक्ति चुक गई, इसलिए आज मैं मौन रख रहा हूं। स्वतंत्रता-संग्राम का प्रवक्ता 'सर्चलाइट' ही नहीं, और भी बहुत कुछ नष्ट हो चुका है। बिहार की आत्मा घायल पड़ी है और उसके शरीर से खून बह रहा है। मैं नहीं जानता कि क्या बिहार को नष्ट होने दिया जाएगा। अठारह मार्च को पटना में प्रशासन जिस बुरी तरह विफल हुआ उसके बाद किसी भी प्रजातांत्रिक देश में सरकार स्तीफा दे देती लेकिन इस देश में हम अपनी गलतियों को छुपाने, बहाने बनाने और बलि के बकरे ढूंढ़ने में बहुत माहिर हो गए हैं। अब समय है कि हम अपनी दिशा सुधार लें। '''इस परिस्थिति में न सिर्फ सरकार को त्यागपत्र देना चाहिए बल्कि प्रशासन और पुलिस के सर्वोच्च अधिकारियों को भी हटाया जाना चाहिए।'''पटना और दिल्ली के कुछ क्षेत्रों में कहा जाता है कि युवकों को मैंने भड़काया है। पटना, मुजफ्फरपुर, वाराणसी, लखनऊ, कानपुर, आगरा और अहमदाबाद में

सारे भाषण सार्वजनिक सभाओं में दिए गए हैं और उनमें से कई के टेप भी मौजूद हैं। सरकार उनका पुलिस रिकार्ड देख सकती है। मैंने जो भी कहा है उसके प्रत्येक शब्द की जिम्मेदारी मैं लेता हूं और जैसे ही मेरा स्वास्थ्य ठीक होगा, युवकों के बीच अपना काम मैं फिर शुरू करना चाहता हूं।'

तीस मार्च को पटना में जे० पी० ने कहा : 'बिहार सरकार को मेरी ईमानदार सलाह है कि वह विद्यार्थियों और लोगों से शांतिपूर्ण विरोध और कार्यवाही का उनका अधिकार न छीने। इक्कीस मार्च को छात्र संघर्ष-समिति को मौन जलूस निकालने की अनुमति नहीं दी गई और कई लोगों को गिरफ्तार किया गया। बिहार शांति-सेना-समिति कई दिनों से शहर में मौन जुलूस निकालने की अनुमति मांग रही है, लेकिन अधिकारी आनाकानी कर रहे हैं। छात्र संघर्ष-समिति को आम सभा करने की इजाजत नहीं दी गई है, और कहा जाता है कि गिरफ्तारशुदा दो विद्यार्थियों को पीटा गया। अगर सरकार लोगों के शांतिपूर्ण आंदोलनों को इस तरह कुचलती रही तो हिंसक विस्फोट होकर रहेगा। लगता है कि सरकार लोगों के मूड को बिलकुल नहीं समझ पा रही है।...'

इस वक्त के बाद जे० पी० ने घोषणा की कि वे आठ अप्रैल को पटना में सत्याग्रहियों का मौन जुलूस निकालेंगे।

एक अप्रैल को भुवनेश्वर, उड़ीसा में प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने गुजरात और बिहार में तथाकथित पुलिस अत्याचार के खिलाफ जे० पी० के प्रस्तावित 'शांतिपूर्ण आंदोलन' की आलोचना की।

श्रीमती गांधी ने कहा : 'दुर्भाग्य की बात है कि कुछ लोग, जिनमें सामाजिक कार्यकर्त्ता भी हैं ग्राम-विकास में अपनी रुचि खो बैठे हैं और सक्रिय राजनीति में उतरने की कोशिश कर रहे हैं। हम सब जानते हैं कि ऐसे कोई भी शांतिपूर्ण आंदोलन सफल नहीं होते। ऐसी कार्यवाही शुरू करने के पहले उनका जो इरादा होता है, वह ऐसे आंदोलनों के नतीजों से बिल्कुल अलग होता है।

श्रीमती गांधी ने कहा कि आचार्य विनोबा भावे भी अपने कुछ अनुयायियों के ऐसे आंदोलनकारी रवैये से दुखी हैं।

प्रधानमंत्री ने जयप्रकाश नारायण के वैयक्तिक जीवन और खर्च के बारे में भी कुछ बातें कहीं।

तीन अप्रैल को जे० पी० ने पटना में एक वक्तव्य में कहा : 'इंदिरा जी ने भुवनेश्वर में मेरे बारे में जिस तरह की बातें कही हैं उन पर टिप्पणी करना मुझे शोभा नहीं देता। फिर भी मैं कह रहा हूं क्योंकि कतिपय क्षेत्र में मेरे मौन का गलत अर्थ लिया जा सकता है। इंदिरा से मेरा विनम्र निवेदन है कि वे यह न मान बैठें कि मुझे और दूसरे सर्वोदय कार्यकर्ताओं को हमारे कर्त्तव्यों की शिक्षा वे दे सकती हैं। मुझ में और विनोबा जी में फूट डालकर सर्वोदय आंदोलन को तोड़ने में, वे अपनी सिद्ध कुशलता का उपयोग कृपया न करें।

'विनोबा जी और मैं एक-दूसरे को पूरी तरह समझते हैं। अपनी सहमति और असहमति की सीमाएं हम दोनों अच्छी तरह जानते हैं। हमारे

बीच सहमति का विशाल क्षेत्र है। एक छोटा सा क्षेत्र है कतिपय समस्याओं पर भिन्न दृष्टिकोणों का, जिसे असहमति नहीं कहा जा सकता। सिद्धांत के मामलों में हमारे बीच कोई भी अंतर नहीं है। सर्वोदय आंदोलन का मार्ग-दर्शन स्वयं विनोबा जी और सर्व-सेवा संघ को करना है, इंदिरा को नहीं।'

श्रीमती गांधी के इस कथन का कि 'जो लोग अमीरों से पैसा लेते हैं उन्हें भ्रष्टाचार के बारे में बात करने का कोई अधिकार नहीं है।' उल्लेख करते हुए जयप्रकाश नारायण ने कहा : 'प्रधानमंत्री ऐसे स्तर पर उतर रही हैं जहां मैं अपने को उतार नहीं सकता। 'एवरीमैन' के तेरह अक्टूबर तिहत्तर के अंक में अपने निंदकों के नाम एक लेख लिखकर मैं साफ-साफ बता चुका हूं कि इन सारे वर्षों में किस तरह मैंने अपना खर्च चलाया है। इस बारे में कुछ और मुझे नहीं कहना है सिवाए इसके कि अपना पूरा समय समाज-सेवा में लगाने वाला ऐसा कार्यकर्ता जिसकी आय का अपना कोई स्वतंत्र स्रोत न हो, साधन संपन्न अपने निजी मित्रों की मदद के बिना काम नहीं चला सकता।

'अगर इंदिरा के मापदंड सब जगह लगाए जाएं तो गांधी जी सबसे भ्रष्ट व्यक्ति निकलेंगे क्योंकि उनके तो पूरे दल की सहायता उनके अमीर प्रशंसक करते थे। मैं नहीं जानता कि इस देश के लोग कब तक हमारे ऊंचे और शक्ति-शाली लोगों की ऐसी अद्भुत मूर्खतापूर्ण बातें सुनते रहेंगे।'

5

आठ और नौ अप्रैल को पटना में जो कुछ हुआ, वह भारत के इतिहास में हमेशा-हमेशा के लिए अंकित हो गया। आजादी के पहले गांधी ऐसे व्यक्ति थे जिनके दर्शन के लिए लाखों व्यक्ति पलकें बिछाए घंटों खड़े रहते थे। गांधी जब निकलते थे तो लोगों का बांध टूट जाता था। गांधी जब बोलते थे तो लाखों की सभा मौन हो जाती थी। गांधी एक गैर राजनीतिक लोकनेता थे। आठ और नौ अप्रैल को पटना में बिहार की जनता ने गांधी को फिर से जीवित कर दिया। किसी और गैर राजनीतिक जननेता का आजादी के बाद इतना बड़ा सम्मान नहीं हुआ होगा जो जयप्रकाश का हुआ।

दिन आठ अप्रैल। समय पौने चार बजे। जे० पी० अस्वस्थ हैं पर उन्होंने जनता को जो वचन दिया है उसे पूरा करना है। डाक्टरों का कहना था कि किसी भी कीमत पर साठ मिनट से ज्यादा जुलूस में मत रहिएगा, नहीं तो स्वास्थ्य पर खराब असर पड़ेगा। कदम कुआं स्थित महिला चर्खा-समिति की पहली मंजिल से दो व्यक्तियों ने कुर्सी पर बैठा कर जे० पी० को नीचे उतारा। दाएं हाथ में छड़ी और बाएं हाथ से एक साथी का सहारा लेकर जे० पी० बिहार रिलीफ कमेटी लैंडरोवर गाड़ी तक आए। सहारा देकर उन्हें बिठाया गया। चार बजते-बजते जे० पी० कदम कुआं स्थित कांग्रेस मैदान पर पहुंच गए। जे० पी० स्वयं आश्चर्यचकित थे। जुलूस में प्रतिज्ञा-पत्र भर कर भाग लेने वाले एक हजार लोगों के अतिरिक्त हजारों लोगों की अनुशासित भीड़ जमा थी। जैसे ही जे० पी० आए लोग उनके दर्शनों के लिए टूट पड़े। सैकड़ों मूवी और स्टील कैमरे

किलक होने लगे। जैसे तैसे जे० पी० को एक प्रतिमा के सामने खड़े एक हजार सत्याग्रहियों के सामने तक ले जाया जा सका। अनुग्रहनारायण बाबू के संरक्षण में जे० पी० ने अपने जीवन की शुरुआत की थी। अनुग्रह बाबू जब तक रहे जे० पी० के सब कुछ रहे। एक जीवन की शुरुआत जे० पी० ने अनुग्रह बाबू के जीवनकाल में की थी, आज एक दूसरी शुरुआत भी उनकी प्रतिमा के सामने ही से जे० पी० करना चाहते थे। कुमार प्रशांत ने जे० पी० के गले में शांति-सैनिक का केसरिया स्कार्फ बांधा। जे० पी० ने जुलूस में भाग लेने के लिए बनाए गए प्रतिज्ञा-पत्र पर अपने हस्ताक्षर कर दिए। धीरे-धीरे जुलूस रवाना हुआ।

जुलूस में सबसे आगे लैंडरोवर में अगली सीट पर जे० पी० बैठे और उनके बगल में उनका सेवक गुलाब। पीछे की सीटों पर वैद्यनाथ बाबू, ध्वजा बाबू और अन्य बुजुर्ग जो पैदल नहीं चल सकते थे, पर जुलूस में भाग लेने पर उतारू थे। जे० पी० की मोटर के पीछे महिलाएं। बारह साल से पैंसठ साल उम्र तक। फिर तरुण व पुरुष। सबसे पीछे पुलिस का हुजूम (सुरक्षा के नाम पर)। जुलूस में भाग लेने वाले सभी लोगों के मुंह पर केसरिया पट्टियां। सभी के दोनों हाथ कमर के पीछे। बाजुओं पर शांति सैनिकों का बिल्ला। जिन लोगों ने हाथों में मांगपट्टियां उठा रखी, उनका भी एक हाथ पीछे। जुलूस पूरा मौन। एक भी नारा मुंह से नहीं। जो कुछ कहना है वह हाथों से उठाए गए प्ले कार्डस में लिखा हुआ है: हमारे हृदय क्षुब्ध हैं और जबान बंद है, हमला चाहे जैसा हो, हाथ हमारा नहीं उठेगा। महंगी, बेकारी, भ्रष्टाचार, सत्ता ही है जिम्मेदार। लाठी, गोली, हिंसा, लूट—किसी को इनकी मिले न छूट।

पूरे दस किलोमीटर रास्ते पर लोग हजारों की तादाद में अपने प्यारे जन-नेता को पलक-भर देखने की लालसा से सड़क के दोनों ओर मौन खड़े रहे। जहां से जे० पी० की गाड़ी गुजरती, लोग मोटर की खिड़की के पास दर्शनों के लिए टूट पड़ते। दस-बारह साल के बच्चों से लेकर सत्तर-अस्सी साल के बूढ़ों तक। सब कुछ अभूतपूर्व और अलौकिक था। लाखों का जुलूस था पर मौन था। जहां-जहां जे० पी० गुजरे लोगों ने केवल तालियां बजाईं, एक भी नारा नहीं लगाया। उनके नेता जयप्रकाश ने उन्हें नारा लगाने को मना किया था। मूक दर्शक रोने लगे। एक-दो क्षण ऐसे भी आए जब जे० पी० ने भी अपनी आंखों से आंसुओं को पोंछा।

डाक्टरों ने जे० पी० को जुलूस में केवल साठ मिनट रहने को कहा था और जे० पी० ने इसे माना भी था, पर अपने बिहार के लोगों के प्रेम के आगे जे० पी० का भी बस नहीं था। कांग्रेस मैदान से जुलूस चार बजे चला था और पटना जंक्शन रोड, फ्रेजर रोड, गांधी मैदान, अशोक राजपथ, गोविंद मित्रा रोड और नाला रोड होते हुए जब पुनः कांग्रेस मैदान आया, तब घड़ी में साढ़े सात बजे थे और जे० पी० मौजूद थे।

पटना जंक्शन रोड से फ्रेजर रोड पर मुड़ते ही बाएं हाथ पर जेल है। इस जेल में विद्यार्थी भी बंद हैं जो हाल ही के आंदोलन के दौरान पकड़े गए। पर

उन्हें खबर है कि उनके नेता फ्रेजर रोड से गुजरने वाले हैं। चार-छह कैदी छात्र ऊंची मुण्डेर पर खड़े थे और बाकी जेल के अंदर की दो मंजिली इमारत में कांच लगी खिड़कियों के पीछे खड़े थे। जैसे ही जे० पी० की मोटर गुजरी उन्होंने हाथ जोड़कर ऊपर उठाए, आवाज नहीं लगाई, सब कुछ मौन। जब तक मोटर ने जेल की दीवार नहीं पार कर ली, जे० पी० हाथ जोड़े उन कैदी छात्रों की तरफ ही देखते रहे। दोनों सिरों पर एक मौन। दोनों तरफ की आंखें नम। जब छात्रों का दिखना बंद हो गया तो जे० पी० ने चुपचाप अपनी आंखें पोंछ लीं।

सड़क के दोनों किनारों पर हजारों लोग और दोनों तरफ की इमारतों पर हजारों लोग। जे० पी० फूलों के वजन से दबते जाते थे और लोग थे कि उन्हें मालाओं से लाद देना चाहते थे। ऊंची-ऊंची इमारतों से लोगों ने जे० पी० की मोटर पर और जुलूस के लोगों पर फूल बरसाए। जो लोग दूर से नहीं देख सकते थे, वे दूरबीन से देखने की कोशिश कर रहे थे। रास्ते में जगह-जगह लोगों ने पानी पिलाने का इंतजाम कर रखा था। लोग दौड़-दौड़ कर जुलूस में भाग लेने वालों को पानी पिलाते थे।

फ्रेजर रोड पर सड़क के दोनों ओर दो बड़ी इमारतें। दोनों पर चौथी मंजिल तक दर्शनार्थियों के झुण्ड और हाथों में फूलों की टोकरियां। जे० पी० को देख पाने की असफल कोशिशें। जे० पी० से कहा गया लोग आपको देखना चाहते हैं, मोटर बंद है, इसलिए वे देख नहीं पा रहे हैं। जे० पी० ने मोटर रुकवाई, दरवाजा खोला और छड़ी के सहारे बाहर आ गए। इमारतों पर जमा लोगों की ओर हाथ जोड़ते हुए कृतज्ञता ज्ञापन किया, लोगों ने अपने सारे श्रद्धा-सुमन जे० पी० पर उड़ेल दिए।

गांधी मैदान के पास जब जुलूस पहुंचा तो जे० पी० ने गाड़ी रुकवाई। एक बार फिर उतरे। उतर के कुछेक क्षण जुलूस को देखा कि कितना बड़ा है। फिर महिलाओं तक आए और छोटी बच्चियों से इशारे से पूछा कि पानी पिया कि नहीं। उन्होंने इशारे से ही उत्तर दिया कि पिया। फिर कुछ दूर चलकर जुलूस का निरीक्षण किया, कुछ साथियों का अभिवादन स्वीकार किया और फिर चुपचाप गाड़ी में आकर बैठ गए।

जे० पी० की गाड़ी के साथ चल रहे सी० आई० डी० के आदमी ने कहा कि पूरा पटना उमड़ पड़ा है जुलूस में। पूरा पटना मौजूद था पर मौन था, कैमरे के क्लिक होने की ही आवाज केवल गूंजती थी। साढ़े तीन घंटे जुलूस चला, पूरे नगर से गुजरा, जुलूस के इर्दगिर्द सुरक्षा के नाम पर कोई पुलिस या सेना नहीं पर गिनाने के लिए भी एक अप्रिय घटना पूरे पटना में आठ अप्रैल को नहीं हुई।

नौ अप्रैल। समय संध्या पांच बजे। स्थान : गांधी मैदान। उपस्थित जन समुदाय : करीब डेढ़ लाख।

पर आज लोगों को चुप नहीं रहना है। 'जयप्रकाश नारायण की जय' से वातावरण गूंज उठता है। बड़ी मुश्किल से लोगों को हटा-हटा कर जे० पी० को मंच पर लाया जाता है। करतल ध्वनि का शोर गूंजता है और जे० पी० खड़े होकर जनता का अभिवादन स्वीकार करते हैं। सभा शुरू होती है। पटना

विश्वविद्यालय छात्रसंघ के अध्यक्ष लल्लूप्रसाद यादव को सभा का अध्यक्ष बनाया गया है। पहले दो मिनट खड़े होकर लोगों को श्रद्धांजलि अर्पित की जाती है जो गोलाबारी में मारे गए थे। फिर लल्लूप्रसाद बोलते हैं। उनके बाद एक और छात्र नेता नरेंद्र बोलते हैं। ओजस्वी आवाज में वह कहते हैं कि हमारी लड़ाई पूरी व्यवस्था के प्रति है। सत्ताईस वर्षों में देश को गर्त में पहुंचाने के जिम्मेदार जितने कांग्रेसी हैं, उतने ही विरोधी दल वाले हैं। हमारी लड़ाई दोनों से है। हमारे नेता जयप्रकाश हैं और हमने अपना नेतृत्व उनके हाथों में सौंप दिया है। पूरी सभा तालियों की गड़गड़ाहट से गूंज उठती है।

हमेशा की तरह आज भी जे० पी० ने डाक्टरों की सलाह नहीं मानी। दो घंटे सभा चली और जे० पी० पूरे पौन घंटा बोले, लिख कर कुछ नहीं लाए। पूरी सभा शांत, एक-एक शब्द लोगों के दिलों में उतर रहा है।' देखने में मैं बूढ़ा हूं पर दिल से जवान हूं। युवकों का आह्वान करने का मुझे सौभाग्य मिला है।···इस सारी व्यवस्था को बदलना होगा।···जनता लोकतंत्र की प्रहरी बनकर साधारण कर्मचारी से लेकर प्रधानमंत्री तक की निगरानी कर सके।···यह स्वर्ण अवसर है। जब हम बिहार का नैतिक स्तर उठा सकते हैं।····इस व्यवस्था ने हमें मजबूर कर दिया बेईमानी करने के लिए।···रूस और चीन के बीच चुनाव किया जाए तो मैं आंख बंद करके चीन का चुनाव करूंगा।···पटना जलता रहा, कोई पूछने वाला नहीं रहा।···स्वराज्य के बाद सत्ताईस वर्षों मे सब कुछ चुपचाप देखता रहा, अब सहन के बाहर है। प्रण कर लिया है कि यह चलने नहीं दूंगा।'

उनतीस अप्रैल को वेलूर में होने जा रहे आपरेशन के लिए तेईस अप्रैल को पटना छोड़ने से पहले जे०पी० ने बिहार आंदोलन के लिए पांच सप्ताह का कार्यक्रम दिया। कार्यक्रम का पहला सप्ताह : जन-जागरण, चौबीस अप्रैल से लेकर तीस अप्रैल तक। दूसरा सप्ताह : संगठन, एक मई से सात तक। तीसरा सप्ताह : विधानसभा भंग करो, आठ से चौदह मई तक। चौथा सप्ताह : सदाचार सप्ताह, पंद्रह से इक्कीस मई तक। पांचवां सप्ताह : शिक्षा में क्रांति और बेरोजगारी, बाईस से अठारह मई। मई के शेष दिन मूल्यांकन के लिए निश्चित किए गए थे।

कार्यक्रम विद्यार्थियों ने स्वीकार कर लिये। आचार्य राममूर्ति, नारायण देसाई, मनमोहन चौधरी व त्रिपुरारीशरण जे० पी० की अनुपस्थिति में नेतृत्व देने के लिए चुने गए।

जे० पी० ने पांच सप्ताह के कार्यक्रम को विस्तार से बताते हुए निवेदन किया था : ' आज एक भारी हृदय एवं चिंतित मन लेकर मुझे वेलूर जाना पड़ रहा है। मैं तो चाहता था कि मेरा जाना जहां तक टल सके, टले। परंतु न केवल पटना के बल्कि लखनऊ और वेलूर के मेरे चिकित्सकों ने, जिन्होंने अभी हाल में दिल्ली में मेरे स्वास्थ्य की परीक्षा की थी, मुझे सलाह दी है कि यथासंभव जल्दी मैं 'प्रोस्टेट' का आपरेशन करा लूं। इसलिए फौरन वेलूर चले जाने के सिवा दूसरा कोई चारा नहीं है।

' बिहार में छात्र और लोक आंदोलन का वर्तमान दौर कितना नाजुक है, यह मैं खूब समझता हूं । इस आंदोलन के प्रति अपना महान उत्तरदायित्व भी समझता हूं, विशेषकर यह देखते हुए कि राज्य के छात्रों, युवकों और जनता ने मुझ पर कितना भरोसा किया है । प्रदेश छात्र संघर्ष समिति के कई प्रमुख नेता जेल में हैं । अन्य कई नेताओं को पुलिस खोज रही है, इसलिए वे इस संघर्ष में समुचित योगदान करने में असमर्थ हैं । यह संघर्ष अपना पहला दौर समाप्त कर चुका है और अब तक एक नये वेग और दिशा की प्रतीक्षा कर रहा है । '

पर अपनी इस अनुपस्थिति में वेलूर के अस्पताल में पड़े जे० पी० ने इंडियन इक्सप्रेस के संवाददाता कूपकरन के माध्यम से टिलेक्स द्वारा पटने में राममूर्ति से संपर्क रखा था । पटना और बिहार में आंदोलन की सारी गतिविधियों पर हर क्षण जे० पी० का ध्यान था । आपरेशन के बाद स्वस्थ होते ही पटना लौटकर युवक मोर्चा और बिहार राज्य छात्र संगठन के स्तर से क्या करना है, क्या कहना है, सारी बातें वेलूर अस्पताल के वार्ड एम० के कमरा नम्बर तीन सौ चार में जे० पी० के मानस में तैर रही थीं ।

जे० पी० वेलूर से पूर्णतः स्वस्थ होकर इतवार दो जून को पटना पहुंचे । पटना हवाई अड्डे पर बिहार की जनता ने, विशेषकर युवकों और छात्र संघर्ष समिति और बिहार नव-निर्माण युवक समिति के छात्रों ने, जे० पी० का भव्य स्वागत किया ।

पटना में पांच जून को जे० पी० के नेतृत्व में जो विराट जन प्रदर्शन होने को था, उसके विरोध में तीन जून को सरकार के संरक्षण में कम्युनिस्टों का एक विशाल सशस्त्र जुलूस निकला । और अगले दिन जे० पी० के अहिंसक जन आंदोलन के प्रति दमन और आतंक का भाव दिखाने के लिए पुलिस और सेना का शक्ति-प्रदर्शन पटना की सड़कों पर हुआ ।

पांच जून । हजारों की संख्या, लाखों के हस्ताक्षर लिए पटना की सड़कों पर चली जा रही है । ये क्या चाहते हैं ? किसने इन्हें भेजा है ? भारत के उन साधारण लोगों ने, जो आज तक परिस्थितियों की मार से इतने बेबस हो गए थे कि कुछ कहते-सुनते नहीं थे । उन्होंने भेजे हैं अपने हस्ताक्षर कि जो विधान सभा भ्रष्टाचार, महंगाई, गुलामी की शिक्षा और बेकारों के कारखाने खोलने के लिए सरकार को स्वीकृति देती है, उसे भंग होना चाहिए । हफ्तों से आज के दिन की प्रतीक्षा में हजारों तरुण गांव-गांव जाकर हस्ताक्षर अभियान में लगे थे । आज साधारण, सामान्य जनता का कारवां राज्यपाल से मिलने जा रहा है । जुलूस का नेतृत्व करने के लिए दो जून को ही जयप्रकाश वेलूर से पटना आ चुके हैं ।

राज्य के कोने-कोने से लोग शहर में प्रवेश कर रहे हैं—लगता है जिसे जो वाहन प्राप्त हो पाता है, उसी से बाढ़ के पानी की तरह शहर में घुसा आ रहा है—किंतु, पुलिस ने लगभग चौबीस घण्टे पूर्व से ही शहर की नाकेबंदी कर दी है । राज्य पथपरिवहन निगम की ओर से आदेश दिया गया है कि बाहर से

ांदोलन का वर्तमान दौर कितना नाजुक है,
न के प्रति अपना महान उत्तरदायित्व भी
कि राज्य के छात्रों, युवकों और जनता
देश छात्र संघर्ष समिति के कई प्रमुख
पुलिस खोज रही है, इसलिए वे इस
र्ष हैं। यह संघर्ष अपना पहला दौर
नये वेग और दिशा की प्रतीक्षा कर

के अस्पताल में पड़े जे० पी० ने
माध्यम से टेलिक्स द्वारा पटने में
हार में आंदोलन की सारी गति-
आपरेशन के बाद स्वस्थ होते ही
छात्र संगठन के स्तर से क्या
ताल के वार्ड एम० के कमरा
रही थीं।

दो जून को पटना पहुंचे।
युवकों और छात्र संघर्ष
थे, जे० पी० का भव्य

राट जन प्रदर्शन होने
में कम्युनिस्टों का
पी० के अहिंसक
लिए पुलिस और

टना की सड़कों
भारत के उन
बेबस हो गए
जो विधान
ाने खोलने
से आज के
में लगे
जा रहा
पटना

बसें पटना नहीं जाएंगी। जगह-जगह लोगों को रोका जा रहा है, हस्ताक्षर छीने जा रहे हैं, उन्हें पीटा जा रहा है। किसी प्रकार लोग पटना न जा सकें। बी० बी० सी० के संवाददाता ने कहा है कि पटना एक किले की तरह बन गया है। जुलूस प्रातः सात बजे निकलने वाला था। उसे स्थगित कर दिया गया, लोगों को आने का ज्यादा से ज्यादा अवसर मिल सके इसलिए जुलूस का समय बढ़ा दिया गया है। अब जुलूस तीन बजे दिन से निकलेगा।

युवकों की कई टोली पहुंच चुकी हैं, कई पहुंच रही हैं। युवकों ने अपनी-अपनी कल्पनाशक्ति का उपयोग कर अजीब-अजीब नारे, पोस्टर बना रखे हैं। गांधी मैदान में भीड़ बढ़ती जा रही है। माइक पर चीख-चीखकर सूचनाएं दी जा रही हैं, पर मन की मौज, आज कोई सूचना सुनने को तैयार नहीं है। बांह पर केसरिया पट्टी बांधे स्वयं-सेवक दूसरों को इकट्ठा कर रहे हैं और स्वयं बिखर रहे हैं। मैदान में हर जिले का नाम पट्ट लगा है, चूने की लकीर मैदान में चमक रही है।

रास्ते के दोनों ओर स्वयं-सेवक खड़े हैं, ठीक तीन बजे जयप्रकाश की खुली जीप गांधी मैदान में प्रवेश करती है और 'लोकनायक जयप्रकाश, जिंदाबाद, जिंदाबाद' के नारों से सारा मैदान गूंज उठता है। भीड़ को चीरती हुई जीप आगे बढ़ती है। खुली जीप में धूप से बचाव के लिए खस लगाई गई है।

जुलूस चल पड़ा है। सबसे आगे छात्र संघर्ष समिति का पटल (बैनर) है। फिर वह ट्रक है जिस पर हस्ताक्षरों के बंडल लदे हैं। जुलूस देखने सड़क के दोनों ओर काफी भीड़ है। सड़क के किनारे के मकानों की छतें, खिड़कियां भरी हैं: घोषणा होती है। इस जन आंदोलन में शामिल होना प्रत्येक का कर्तव्य है। अतः सड़क के किनारे खड़े मित्र इसमें शरीक हो जाएं। काफी लोग पीछे से जुलूस में शरीक होते जा रहे हैं। कारवां बड़ा होता जा रहा है।

रास्ते में एक ऊंची इमारत है—रेवेन्यू बिल्डिंग। उसकी छत पर वे सब युवक जेल से लाकर रखे गए हैं, जिन्हें इस आंदोलन के क्रम में 'मीसा' तथा अन्य धाराओं में गिरफ्तार किया गया था। अपने बंदी साथियों को देखकर जुलूस थोड़ा बिखरता है। नारों की आवाज तेज हो जाती है। बहरों को सुनाने के लिए धमाके की जरूरत होती है। यहां भी अपने नारों का धमाका बनाने की कोशिश हो रही है।

विधान सभा का इलाका शुरू हो जाता है। अठारह मार्च के समय इस पूरे क्षेत्र को बांस-बल्ले से घेर दिया गया था। घेरा अब भी लगा है। जगह-जगह राइफलें लिए सीमा सुरक्षा दल के लोग हैं। सी० आर० पी० के लोग सावधान हैं। जयप्रकाश की गाड़ी राज्यपाल भवन में पहुंच जाती है। उनके साथ कुछ छात्र नेता और हस्ताक्षर लिए ट्रक जाता है। बाकी जुलूस अभी गांधी मैदान से कुछ ही आगे बढ़ा है। जो राज्यपाल भवन पहुंचते जा रहे हैं वहीं सड़कों पर बैठते जा रहे हैं।

जयप्रकाश ने हस्ताक्षर राज्यपाल को दिए और फिर दोनों की कुछ देर बातचीत हुई। युवकों ने भी राज्यपाल से बातें कीं। राज्यपाल ने प्रदर्शन की भावना को ऊपर तक पहुंचाने की बात कही।

जयप्रकाश की गाड़ी निकली और आगे चली गई। घोषणा हुई कि यहां से सब लोग गांधी मैदान पहुंचें जहां छः बजे संध्या से जयप्रकाश की आम सभा होने वाली है।

लोग थके हैं, पर गांधी मैदान चले जा रहे हैं। सब जानते हैं कि जयप्रकाश आज कुछ ऐतिहासिक कहने वाले हैं, कुछ नया कार्यक्रम बताने वाले हैं। गांधी मैदान पहुंचते-पहुंचते यह सनसनी फैल जाती है कि लौटते प्रदर्शनकारियों पर गोली चली। कोई सुनकर भी इस पर विश्वास करना नहीं चाहता है। आज के माहौल से यह खबर मेल कहां खाती है! पर सच्चाई बड़ी निष्ठुर होती है। घायल मैदान में आ जाते हैं, अब कौन नहीं मानेगा भला! 'इंदिरा ब्रिगेड' के दफ्तर से गोली चली, गोली लगी, लोग घायल हुए, पर किसी ने उत्तेजना में अपनी अक्ल नहीं खोई। जुलूस के हाथ में तख्ती थी, उस पर लिखा था: 'हमला चाहे जैसा होगा, हाथ हमारा नहीं उठेगा।' हाथ नहीं उठा। करीब पौने तीन लाख की भीड़ को जे० पी० ने यह कहकर बांध लिया, 'ऐसा न हो कि आप धारा में बह जाएं उस स्थान पर और वहां जाकर आग लगा दें। वचन देते हो न?' सारी सभा स्वीकृति में सर हिलाती है, जयप्रकाश बोलते रहे, जैसे बिजली कौंधती रही। इतनी शांत पर इतनी दृढ़ निश्चय से भरी आवाज वर्षों बाद देश ने सुनी। सब सुन रहे थे, चूंकि एक व्यक्ति के मुंह से सब बोल रहे थे।

जे० पी० मंच से उतरे ही थे कि हवा तेज हो गई। देखते-देखते तेज हवा आंधी में बदल गई। भीषण आंधी, धूल। तंबू गिर गए। गांधी मैदान में जो साथ आए थे, अलग-अलग लौटे, फिर तेज वर्षा हुई।···तूफान का संकेत दिया गया, तूफान आ गया।···स्वर्गीय दिनकर की, जयप्रकाश के भाषण से पूर्व 'रेणु जी' द्वारा पढ़ी पंक्ति जैसे अंत तक मैदान में थरथराती रही:

'ये नखत अमां के बुझते हैं, सारा आकाश तुम्हारा है!

पांच जून चौहत्तर को पटना के गांधी मैदान में पांच लाख से भी अधिक लोगों के सामने जे० पी० ने अपने ऐतिहासिक भाषण में कहा: 'अब मेरे मुंह से आप हुंकार नहीं सुनेंगे। लेकिन जो कुछ विचार मैं आपसे कहूंगा वे विचार हुंकारों से भरे होंगे। क्रांतिकारी के विचार होंगे। उन पर अमल करना आसान नहीं होगा। अमल करने के लिए बलिदान करना होगा, कष्ट सहना होगा, गोली और लाठियों का सामना करना होगा, जेलों को भरना होगा। जमीनों की कुर्कियां होंगी। यह सब होगा। यह क्रांति है मित्रो! और संपूर्ण क्रांति है। यह कोई विधानसभा के विघटन का ही आंदोलन नहीं है। वह तो एक मंजिल है जो रास्ते में है। दूर जाना है, दूर। जवाहरलाल नेहरू के शब्दों में अभी न जाने कितने मील इस देश की जनता को जाना है, उस स्वराज्य को प्राप्त करने के लिए, जिसके लिए देश के हजारों, लाखों जवानों ने कुर्बानियां की हैं, जिसके लिए सरदार भगतसिंह और उनके साथी, बंगाल के सारे क्रांतिकारी साथी, महाराष्ट्र के साथी, देश भर के क्रांतिकारी साथी गोली का निशाना बने या फांसियों पर लटकाए गए। जिस स्वराज्य के लिए देश की लाखों जनता बार-बार जेलों को भरती रही है। लेकिन आज सत्ताईस-अठाईस वर्ष के बाद

का जो स्वराज्य है उसमें
हैं, जनता का कोई काम न
में, बैंकों में, हर जगह, टि
काम नहीं होता जनता का
शिक्षा संस्थाएं भ्रष्ट हो र
है। जीवन उनका नष्ट हो
की शिक्षा, कलम घिसने
के लिए, नौकरियां मिलती
है। गरीब की बेरोजगारी
हैं, लेकिन गरीबी बढ़ी है
के कानून, दूसरे कानून
बने में। जमीनें छिन गई
अपने भाषण में
हुए जे० पी० कहते हैं:
इसके लिए जे०पी०
को ठप करना; लगान
को एक साल बंद रख
शक्ति से दैनंदिन जीव
समस्याओं पर पहले
करना।
पटना में पांच
सतुआ-भूजा खाकर, पा
के चपेटों में बिहार के
धैर्य का जो चरित्र बि
पूरे कदमकुआं
कर्ता और सोशलिस्ट
वर्षों से अपने-अपने
छः तारीख की
मुस्कराये: 'कहिए
'मैं तो आपके
को आपको नींद कैसे
सच्चिदानंद ने
चौधरी के साथ
लिए मुझे भेजा।
में गया तो जे०
एक बुजुर्ग
जे० पी० ने
ध्वजाप्रसाद
की आवाज सुनी

का जो स्वराज्य है उसमें जनता कराह रही है। भूख है, महगाई है, भ्रष्टाचार हैं, जनता का कोई काम नहीं निकलता है बगैर रिश्वत दिए। सरकारी दफ्तरों में, बैंकों में, हर जगह, टिकट लेना है उसमें, जहां भी हो, रिश्वत के बगैर काम नहीं होता जनता का। हर प्रकार के अन्याय के नीचे जनता दब रही है। शिक्षा संस्थाएं भ्रष्ट हो रही हैं। हजारों नौजवानों का भविष्य अंधेरे में पड़ा है। जीवन उनका नष्टहो रहा है। इस प्रकार की शिक्षा दी जाती है—गुलामी की शिक्षा, कलम घिसने की शिक्षा। शिक्षा पाकर दर-दर ठोकरें खाना नौकरी के लिए, नौकरियां मिलती ही नहीं। दिन पर दिन बेरोजगारी बढ़ती जाती है। गरीब की बेरोजगारी बढ़ती जाती है। 'गरीबी हटाओ' के नारे जरूर लगते हैं, लेकिन गरीबी बढ़ी है पिछले वर्षों में। भूमिहीनता मिटाने के लिए सीलिंग के कानून, दूसरे कानून बने हैं लेकिन ज्यादा आज भूमिहीन हैं पहले के मुकाबले में। जमीनें छिन गई हैं छोटे-छोटे गरीब किसानों की।'

अपने भाषण में आंदोलन के अगले चरण के कार्यक्रमों की तफसील बताते हुए जे० पी० कहते हैं: 'हमें संपूर्ण क्रांति चाहिए, इससे कम नहीं।'

इसके लिए जे०पी० ने कार्यक्रम दिए: विधानसभा को भंग करना; सरकार को ठप करना; लगान और कर न देना; महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों को एक साल बंद रखना; जनता की शक्ति संगठित करना तथा संगठन की शक्ति से दैनंदिन जीवन की समस्यायें हल करना, गरीबों और कमजोरों की समस्याओं पर पहले ध्यान देना; जीवन में नैतिक मूल्यों की स्थापना करना।

पटना में पांच और छः जून चौहत्तर कई तरह से याद किया जाएगा। सतुआ-भूजा खाकर, पांच तारीख के दिन की लू खाकर रात में वर्षा और तूफान के थपेड़ों में बिहार के कोने-कोने से पटना में आए हुए छात्रों ने विरोध और धैर्य का जो चरित्र दिखाया, वह शेष भारत के लिए अनुकरणीय था।

पूरे कदमकुआं मुहल्ले में सर्वोदय, खादी ग्रामोद्योग के बुजुर्ग से बुजुर्ग कार्यकर्ता और सोशलिस्ट पार्टी के बहुत पुराने-पुराने लोग जो अब तक बीस-पच्चीस वर्षों से अपने-अपने घरों में उदास निराश बैठे थे, सब लौट आए थे।

छः तारीख की सुबह सब जे० पी० से हंसी-मजाक कर रहे थे। जे० पी० मुस्कराये: 'कहिए कामरेड ब्रह्मदेव जी, रात कहां गायब हो गए?'

'मैं तो आपके लिए चिंतित था, ऐसा भाषण दिया कि सोचता था कि रात को आपको नींद कैसे आएगी?'

सच्चिदानंद ने बताया: 'उत्तरा बहन, नारायण देसाई और मनमोहन चौधरी के साथ जे० पी० ने रात को भोजन किया। और आपको बुलाने के लिए मुझे भेजा। आप नहीं मिले, यह कहने के लिए जब मैं जे० पी० के कमरे में गया तो जे० पी० शांत निद्रा में सो रहे थे।'

एक बुजुर्ग समाजवादी मित्र बोले: 'जे० पी० अब तक कहां थे?'

जे० पी० ने पूछा: 'आप कहां थे?'

ध्वजाप्रसाद ने उत्तर दिया: 'हम लोग तो बैरक के सिपाही हैं। बिगुल की आवाज सुनी, हाजिर हो गए।'

बसावनसिंह बोले : 'पर यह सब इतना करेगा कौन ? संपूर्ण क्रांति की तो बात आपने कह दी···।'

पंडित रामानंद तिवारी मुस्कराते हुए बोले : 'लगता है, फिर से सन् बयालीस आ गया। हम सब तैयार हैं।'

प्रोफेसर विमलप्रसाद ने कहा : 'बयालीस और चौहत्तर में बत्तीस साल का अंतर है।' जे०पी० कहने लगे : 'जब कार्यक्रम क्रांतिकारी होता है तो संगठन अपने आप बन जाता है। बिना आंदोलन के संगठन होता ही नहीं। युवा वर्ग में बड़ी जान है।'

—'आग भी है ?' बसावनसिंह ने पूछा।

—'बहुत आग है। ज्वाला भी है।' रामानंद तिवारी ने उत्तर दिया।

जे० पी० बोले : 'सच्चिदा बाबू, जरा गुलाब को बुलाइए। कुछ काफी-वाफी पिलवाइए।'

—'नहीं नहीं, वह काफी पीने का जमाना गया, हम तो सात जून से विधान सभा पर शुरू होने वाले सत्याग्रह में नाम लिखाने के लिए आए हैं।'

बिहार का आंदोलन एक निर्णायक काल से गुजर रहा है। एक ओर उसका सौम्य नेतृत्व है, दूसरी ओर उसके उद्दंड विरोधी तत्व हैं। तीसरी ओर बिहार की अपनी राजनीतिक अवस्था है। तीनों को मिलाकर आंदोलन की अवस्था निर्णयात्मक हो जाती है। मौन जलूस का नेतृत्व लेते ही जे० पी० पर नैतिक क्रांति का नैतिक नेतृत्व लेने की जिम्मेदारी आ गई। यद्यपि वह हर निर्णय छात्रों द्वारा ही करवाने के लिए आग्रह करते हैं फिर भी लोग उनकी ओर नेतृत्व के लिए देखते हैं। बिहार से बाहर अब पूरे भारत में तमाम लोगों ने इस बात से आश्वासन पाया है कि क्रांतिकारी जयप्रकाश एक क्रांति की अगुआई करने फिर आ गया है।

फिर भी जिनके हाथों में सत्ता है और जो जनता की नहीं केवल हुकूमत की भाषा समझने के आदी हो चुके हैं, उनका मन इस आंदोलन से इतना विचलित हो चुका है कि लोग संदेह करने लगे हैं कि वे इसे समझ भी पाएंगे या नहीं। पर यह आंदोलन एक काम चौतरफा ढंग से कर रहा है। यह हर बने-बनाए निर्जीव संस्थान को तोड़ रहा है। इसको लेकर सर्वोदय स्वयं विभक्त हो रहा है। फिर कांग्रेस में दो वर्ग हो गए हैं और विरोधी दलों में से हरएक में सत्ता और जनता को लेकर विच्छेद की नौबत आ गई है।

वस्तुस्थितियों की इसी पृष्ठभूमि में इलाहाबाद में तरुण शांति सेना के संयोजन में इक्कीस से तेईस जून के युवा सम्मेलन ने बिहार के आंदोलन को ही क्रांति की कसौटी माना। और विश्वास किया कि यह आखिरी लड़ाई है जिसके सफल हो जाने पर सारे देश में संपूर्ण क्रांति का द्वार उन्मुख हो जाएगा और यदि यह आंदोलन विफल हुआ तो अंधकार के एक दीर्घव्यापी युग की शुरुआत होगी जिसमें जनतंत्र का अवशेष भी समाप्त हो जाएगा। ठीक यही जे० पी० ने तेईस जून की शाम को पुरुषोत्तमदास टंडन पार्क में डा० रघुवंश की अध्यक्षता में वर्षा से भीगती सभा में स्वयं भीगते हुए कहा : 'मुझे तो काफी पहले से यह

दिख रहा था कि देश के क्षितिज पर सन्
परिस्थिति बन रही है और अगर लोगों
अभिव्यक्ति नहीं मिली तो इस परिस्
निकलेगा नहीं। मैं सब पार्टियों को जान
एक शक्ति नहीं है देश में जो खूनी क्रांति
तरफ और उससे अराजकता होगी और
असंतोष और घुटन में से युवकों ने एक
मार्ग निकलेगा। इसमें से संपूर्ण क्रांति
करने से नहीं। इसीलिए मैं इन युवकों
जी ने कहा था असहयोग करो। मैं तो
वर्ष के लिए जीवन नहीं दोगे तो कुछ

पटना वापस पहुंचकर अठाईस जून
छात्रों को देखने गए जो बिहार विधान
बंदी थे। उसी दिन जे० पी० ने ते
जो इलाहाबाद में अखिल भारतीय यु
रूप देगी।

पहली जुलाई को जे० पी० ने
विशाल सभा में कहा कि बिहार
लक्ष्य को जल्द प्राप्त होने वाला है
पंचायत स्तर तक जनसंघर्ष-समि

पश्चिम बंगाल नागरिक-स
पटना से ट्रेन द्वारा तीन दिनों के

इससे पहले कलकत्ता की
मन के विरोध में विशेष कार्य
कुल दस-ग्यारह व्यक्तियों के
स्वागत के लिए आई हुई जनता

सी० पी० एम० के संयो
से विचार-विनिमय करते हुए
खिलाफ लड़ने के लिए बिहार

छः जुलाई को कलक
भाषण में जे० पी० ने कह
और भूखी, दुखी और शो
जाती हैं तो आगे एक भ
आमूल परिवर्तन का काम
यादी चरण।'

कलकत्ता से हवाई
वर्धा में होने वाले अखि
विशेष रूप से भाग लेन

दिख रहा था कि देश के क्षितिज पर सन् बयालीस आ रहा है। एक क्रांतिकारी परिस्थिति बन रही है और अगर लोगों की निराशा और घुटन को रचनात्मक अभिव्यक्ति नहीं मिली तो इस परिस्थिति में से सिवाय तानाशाही के कुछ निकलेगा नहीं। मैं सब पार्टियों को जानता हूं, सबमें मेरे मित्र हैं। लेकिन ऐसी एक शक्ति नहीं है देश में जो खूनी क्रांति कर सके। छुटपुट हिंसा होगी सब तरफ और उससे अराजकता होगी और तानाशाही आएगी। इस निराशा, असंतोष और घुटन में से युवकों ने एक रास्ता निकाला। इसमें से रचनात्मक मार्ग निकलेगा। इसमें से संपूर्ण क्रांति निकलेगी। लेकिन मंच से लंबी बातें करने से नहीं। इसीलिए मैं इन युवकों से कहता हूं आओ निकल के। गांधी जी ने कहा था असहयोग करो। मैं तो कहता हूं कि सिर्फ एक वर्ष दो। एक वर्ष के लिए जीवन नहीं दोगे तो कुछ नहीं होगा।'

पटना वापस पहुंचकर अठाईस जून को जे० पी० पटना सेंट्रल जेल में उन छात्रों को देखने गए जो बिहार विधानसभा विलयन आंदोलन के सिलसिले में बंदी थे। उसी दिन जे० पी० ने तेरह सदस्यों की एक ऐसी कमेटी गठित की जो इलाहाबाद में अखिल भारतीय युवा सम्मेलन द्वारा पारित प्रस्तावों को कार्य रूप देगी।

पहली जुलाई को जे० पी० ने रांची में छात्रों और मजदूरों की एक विशाल सभा में कहा कि बिहार आंदोलन का पहला, संगठनात्मक चरण अपने लक्ष्य को जल्द प्राप्त होने वाला है। तब यह आंदोलन पूरे बिहार में ग्राम पंचायत स्तर तक जनसंघर्ष-समितियों के रूप में पहुंच जाएगा।

पश्चिम बंगाल नागरिक-समिति के आमंत्रण पर पांच जुलाई को जे० पी० पटना से ट्रेन द्वारा तीन दिनों के लिए कलकत्ता पहुंचे।

इससे पहले कलकत्ता की कम्युनिस्ट पार्टी ने जे० पी० के कलकत्ता आगमन के विरोध में विशेष कार्यवाही की धमकी दी थी। पर हावड़ा स्टेशन पर कुल दस-ग्यारह व्यक्तियों के जे० पी० विरोधी नारे, हजारों की संख्या में स्वागत के लिए आई हुई जनता की जय-जयकार में सहज ही खो गई।

सी० पी० एम० के संयोजन में बंगाल के कुल नौ विरोधी दलों के नेताओं से विचार-विनिमय करते हुए जे० पी० ने भूख, महंगाई और भ्रष्टाचार के खिलाफ लड़ने के लिए बिहार की ही तरह जन-आंदोलन छेड़ने की सलाह दी।

छ: जुलाई को कलकत्ता की आम सभा में पूरे सौ मिनट के अपने गंभीर भाषण में जे० पी० ने कहा कि 'अगर वर्तमान व्यवस्था शीघ्र नहीं बदलती और भूखी, दुखी और शोषित जनता की सारी आशाएं इस तरह टूटती चली जाती हैं तो आगे एक भयानक अंधकार है। इसके लिए जनतंत्र के ढांचे में ही आमूल परिवर्तन का काम अविलंब पूरा हो, यही है आंदोलन का पहला बुनियादी चरण।'

कलकत्ता से हवाई जहाज द्वारा जे० पी० आठ जुलाई को नागपुर पहुंचे। वर्धा में होने वाले अखिल भारतीय सर्वसेवा संघ के त्रिदिवसीय सम्मेलन में उन्हें विशेष रूप से भाग लेना था।

नागपुर पहुंचते ही राष्ट्रीय विद्यार्थी यूनियन और महाराष्ट्र युवा कांग्रेस के करीब पांच सौ छात्रों ने जे० पी० के विरोध में काले झंडों के साथ प्रदर्शन किए और नारे लगाए : 'जे० पी० वापस जाओ।'

पर उसी दिन नागपुर में छात्र-जागृति की ओर से आयोजित विशाल आम सभा में जे० पी० ने कहा कि यह आंदोलन जल्दी ही पूरे भारतवर्ष में फैलने को है और उसके नेतृत्व का भार युवकों को ही संभालना है।

6

जैसे-जैसे जे० पी० का वर्तमान जननायक रूप गुजरात, बिहार जन आंदोलन के भीतर से उभरता गया, वैसे-वैसे वर्तमान सत्ता और व्यवस्था ने उसे तोड़ने और खंडित करने के लिए अन्य सारे प्रयत्नों के साथ सबसे बड़ा प्रयत्न यह किया कि जे० पी० और विनोबा के बीच अंतर पैदा हो।···मतलब 'संत' का सदुपयोग किया जाए और 'मनुष्य' का दुरुपयोग। सन् तिहत्तर-चौहत्तर के बीच असाधारण रूप से श्रीमती इंदिरा गांधी अनेक बार खुद जाकर पवनार में विनोबा से मिली हैं और उत्तरोत्तर यह बात फैली है कि विनोबा जे० पी० के आंदोलन के खिलाफ हैं। मतलब जे० पी० से विनोबा असहमत हैं। अर्थात् जे० पी० को सर्वोदय का योग नहीं है।

पर सच्चाई अपनी जगह है। सर्वोदय का जो श्रेष्ठ तत्व है, जो उसमें शुद्ध गांधीवादी हैं, वे जे० पी० के साथ आंदोलन में हैं। पर विनोबा का यह वक्तव्य भी अपनी जगह है : 'जे० पी० जो भी काम करेंगे वह बाबा को (विनोबा) सम्मत है क्योंकि जे० पी० सज्जन हैं। निःस्वार्थ और अच्छा ही काम करेंगे। गलती दिखाई देने पर दुरुस्त करेंगे। इससे होने जाने वाला कुछ नहीं है। मसले उठते रहते हैं। चलते रहेंगे। मैन मे कम एंड मैन मे गो।'

जे० पी० विनोबा को समझते हैं पर अभी साक्षात्कार होना बाकी था।

महात्मा गांधी के व्यक्तित्व में अनेक पक्ष थे। उनके मनुष्य में तरह-तरह के तत्त्व थे। सबका अद्भुत समन्वय उस गांधी ने अपने महात्मा व्यक्तित्व में कर रखा था। गांधी के एक संत पक्ष के सच्चे उत्तराधिकारी विनोबा थे। गांधी की मृत्यु के बाद गांधी के स्वतंत्र देश में गुलामी का जो अंधकार छाने लगा, उसमें अगर कहीं कोई टिमटिमाता हुआ प्रकाश दिखा, तो वह इसी संत विनोबा का ही था। इसी प्रकाश के सहारे से सारे निराश हताश गांधीवादी विनोबा की शरण में आए।

मूल्यहीन राजनीति के उस निविड अंधकार में, भीतर से कहीं घायल जे० पी० इसी टिमटिमाते प्रकाश की ओर दौड़े थे। अब गांधी के प्रति पूर्ण समर्पण भाव से उसी के प्रतीक विनोबा और गांधी के ग्राम-स्वराज्य-आंदोलन के प्रतीक ग्राम-दान के लिए जे० पी० ने बोध गया में अपना जीवन-दान दिया था।

जे० पी० ने तब गांधी विहीन भारत में विनोबा को ही एक ऐसा नेता माना था जो दूरदर्शी है और जिसमें तीव्रता है कि तूफान की गति से काम होना चाहिए। ग्राम-दान के प्रसंग में करोड़ों एकड़ जमीन का दान और एक

वर्ष ग्राम-स्वराज्य की बात सुनकर जे० पी० ने विनोबा को स्वप्नद्रष्टा और ऋषि कहा था। तब विनोबा के अनुपम व्यक्तित्व के बारे में जे० पी० ने लिखा था : 'कुछ वर्षों में विनोबा ने जो काम किया है वह अद्भुत है। मैं तो सोचता हूं कि अगर विनोबा ने इस तरह का एक क्रांतिकारी आंदोलन शुरू न किया होता तो हम लोग अभी तक वहीं के वहीं होते, चरखा चलाते और तेलघानी से तेल पेरते। अहिंसक क्रांति की बात बिल्कुल भूल गए होते। बहुत होता तो गांधी का फोटो घर में रखते, उनकी मूर्तियां स्थापित करते, जन्माष्टमी, रामनवमी की तरह गांधी जयंती के दिन उपवास करते। और यह लड़ाई हम हार चुके होते। फिर तो इसमें से जिलाने की ताकत पता नहीं कब आ पाती। शायद सैकड़ों वर्ष बाद कोई महापुरुष आकर बचाता या आणविक युद्ध से दुनिया बर्बाद हो जाती और तब वह सोचती कि 'अरे हम रास्ता भूल गए।' तब वे एटम बम के मलबे के ढेर में से खोजकर गांधी का रास्ता ढूंढ़ निकालते। जैसे कि पुरानी सभ्यताओं को आज हम पृथ्वी के पेट से बाहर निकालते हैं। लेकिन विनोबा ने जादू किया और बहुत हद तक हमारी दृष्टि ठीक दिशा में मोड़ दी।' जे० पी० ने विनोबा में तब क्रांति और शांति का अपूर्व संयोग देखा था। यहां तक कहा था : 'गांधी के जाने के बाद इस भयाक्रांत विश्व में आशा का ज्वार नहीं तो कम से कम एक लहर भी यदि किसी एक नाम ने पैदा की है, तो वह विनोबा के ही नाम ने।'

पर जे० पी को पता था विनोबा संत परंपरा के पुरुष हैं। संत सामाजिक क्रांति के दर्शन में नहीं विश्वास करता, वह आत्मज्ञान के दर्शन में अपना लक्ष्य मानता है। वह सामाजिक क्रांति चाहता है, पर उसके लिए वह कभी सत्ता या व्यवस्था से संघर्ष नहीं करता। बुनियादी तौर पर संत व्यवस्था को मान कर चलता है। तभी वह ऐसे सारे कर्मों और निर्णयों से अपने को दूर रखता है जिनके कारण व्यवस्था से उसका प्रत्यक्ष, सीधा संघर्ष हो।

इस सच्चाई को जे० पी० ने संत विनोबा के चरित्र में ग्राम-दान के उन दिनों में तभी देख लिया था जब ग्राम-दान एक जन-आंदोलन का व्यापक रूप लेने लगा था और तब ऐसा लगने लगा था कि जन-शक्ति और व्यवस्था के बीच व्यापक संघर्ष निकट भविष्य में अब अनिवार्य है, तभी विनोबा ने बिहार में आंदोलन के विसर्जन की बात शुरू कर दी।

भूमि-वितरण के यथार्थ जन-आंदोलन को जमीन से उठाकर आकाश में ले जाने लगे—प्रांत-दान, देश-दान, जय जगत् और अंत में उपवास-दान…।

वास्तव में यह सब संत चरित्र की परंपरा में था। पर चूंकि सन् चौहत्तर का बिहार जन-आंदोलन ग्राम-दान चरण से जन्म लेकर आज राष्ट्रव्यापी आंदोलन की प्रेरक शक्ति बनने को था, इसलिए विनोबा के चरित्र से जे० पी० के चरित्र का अब साक्षात्कार अनिवार्य था।

सच्चाइयों की इसी पृष्ठभूमि पर जे० पी० और विनोबा की यह ऐतिहासिक भेंट पवनार आश्रम में होती है। जे० पी० आठ जुलाई की रात को ही नागपुर से पवनार पहुंचे। आश्रम की अतिथिशाला में टिके।

नौ जुलाई को ठीक साढ़े नौ बजे सुबह विनोबा से मिलने चले। जैसे ही

फाटक के पास पहुंचे विनोबा ने बढ़कर जे० पी० का स्वागत किया। जे० पी० ने चरण-स्पर्श किए। तभी सर्वसेवा संघ अधिवेशनाधिकारियों ने जे० पी० से कहा कि विनोबा से मिलने से पूर्व आंदोलन के बारे में सारी बातें हमें बताइए। जे० पी० मान गए।

विनोबा ने जे० पी० से कहा कि साढ़े ग्यारह के बाद जितना समय चाहो मुझ से लो। तत्काल जे० पी० कार से वर्धा पहुंचे। दस बजे से बारह बजे तक सर्वसेवासंघ के सदस्यों की सभा में बोलते हुए जे० पी० ने पूर्ण विस्तार से गुजरात से लेकर बिहार आंदोलन के पूरे इतिहास, उसकी प्रकृति, सीमा, शक्ति और संभावना—सब के बारे में बताया।

साढ़े बारह बजे पवनार आश्रम वापस लौटे। जे० पी० ने देखा विनोबा छत पर बैठे उन्हीं की राह देख रहे थे। स्वयं नीचे उतर कर जे० पी० से मिले। हाल-चाल पूछे। स्वास्थ्य के बारे में बातें हुईं।

सहसा प्रभा की स्मृतियां दोनों के बीच उदित हो गईं। विनोबा ने पूछा : 'प्रभा धर्मग्रन्थों के पारायण करती थीं, अब तुम करते हो न ?'

—हां।

—शांति मिलती है ?

इसके उत्तर में जे० पी० की आंखों से आंसू बहने लगे। विनोबा ने कहा : 'नेहरू विज्ञान और टेक्नोलाजी की बड़ी-बड़ी बातें करते थे, पर मरने से पहले वसीयत में यह क्यों लिख गए कि उनकी राख गंगा में डाली जाए ?' और विनोबा गंगा की पवित्रता के बारे में बातें करने लगे।

बीच में जे० पी० ने टोका : 'पर गंगा में भी तो 'पोल्यूशन' होता है।'

सवा बजे तक इसी तरह इधर-उधर की बातें होती रहीं। दोपहर के भोजन से पहले जे० पी० ने श्रीमती इन्दिरा गांधी को पत्र लिखा। दो बजे विश्राम के लिए गए। ठीक साढ़े तीन बजे जे० पी० और विनोबा की पहली बैठक हुई जो सवा पांच बजे तक चली। जे० पी० बाहर निकले। 'सर्वोदय' संपादक प्रभाप जोशी ने पूछा : 'क्या हुआ ?'

जे० पी० ने कहा : 'लिखकर देना पड़ता है इसलिए ठीक बातचीत नहीं हो पाती। जो बात हुई वह यही कि विनोबा का कहना है विधानसभा भंग करने को सिद्धांत मत बनाइए।'

—तो ?

—मैंने कहा सही विधानसभा है कहां ?

दूसरे दिन दस जुलाई को सुबह साढ़े नौ बजे विनोबा के पास जे० पी० अपनी बात खुद लिखकर ले गए। यह दूसरी बैठक ग्यारह बजे तक हुई। जे० पी० ने इस बैठक में विनोबा से कहा कि 'विधानसभा-भंग' को हमने कभी सिद्धांत नहीं बनाया था। परिस्थितियों में से यह सिद्धांत खुद निकल आया है। इस पर विनोबा ने कहा कि फिर भी इसे सिद्धान्त मत बनाइये और इस आंदोलन को अखिल भारतीय रूप मत दीजिए। जे० पी० ने उत्तर दिया कि यह जनता का आक्रोश है। जब विधानसभा से कुछ नहीं होता तो विकल्प क्या है ?

विनोबा बोले : आंदोलन के लिए सर्वानुमति चाहिए।

उस बैठक में इसी सर्वानुमति के प्रश्न पर बात गंभीर हो गई। एक क्षण ऐसा आया जब विनोबा ने यहां तक कह दिया कि सर्वसेवासंघ को ही भंग कर दो। बहुत निराश थे जे० पी०। बाहर आकर उदास आंखों से वह चुपचाप धाम नदी की ओर देख रहे थे। भारतीय संतों और विचारकों का यह कैसा चरित्र है! वे अपनी मुक्ति समाज से बाहर ढूंढ़ते हैं। वे सामाजिक क्रांति नहीं, आत्मदर्शन चाहते हैं। जे० पी० ने आंदोलन चलाकर भूल की है। आंदोलन से राजनीति पैदा होती है। राजनीति से हिंसा। सर्वोदय को राजनीति से दूर रहना चाहिए। जे० पी० अपलक उसी धाम नदी की ओर देख रहे थे।

गांधी के विचार और कर्म दोनों एक होते थे। गांधी कर्मयोगी थे। विनोबा विचार करते हैं। सिर्फ विचार। बिना कर्म के विचार?···भारत की खोखली सामंतवादी संस्कृति और उसकी मृत्युमयी परंपरा का नरक यही है—सोचने का काम राजा का है, पुरोहित का है, और कार्य करने का काम प्रजा का है।

कर्म और वचन का यही अंतराल, यही फासला, यही अंतर्विरोध वह विशाल अंधी घाटी है, जहां से अबाध अंधकार बीसवीं शती के इन सात दशकों तक छाया रहा है। जे० पी० ने जैसे अपने जीवन का एक मर्म पा लिया। उनके मन में स्पष्ट हो गया, उन्होंने कोई भूल नहीं की है। भूल सुधारने का अब समय बीत गया।···जे० पी० ने भूलें की हैं: त्रिपुरी कांग्रेस में सुभाष बोस के उस प्रश्न पर मौन रहकर। उन्नीस सौ सैंतालीस की कांग्रेस वर्किंग कमेटी की उस बैठक में चुप रहकर। और उन्नीस सौ बावन में सोशलिस्ट पार्टी से टूटकर···अब जे० पी० से भूल नहीं होगी।

जे० पी० सीधे वहां से अपने कमरे की ओर मुड़े। देखा कुसुम देशपांडे अपने कमरे में बैठी रो रही हैं।

—'तुम क्यों रो रही हो?' आंसू के सिवा और कोई उत्तर नहीं था।

आश्रम का सारा वातावरण गंभीर और उदास होने लगा था। सर्वसेवासंघ की प्रबंध समिति के सदस्य बुलाए गए। दादा धर्माधिकारी ने प्रस्ताव में संशोधन करते हुए कहा : 'अच्छा, आंदोलन का अखिल भारतीय रूप नहीं बनाएंगे।'

विनोबा ने कहा : 'इस प्रस्ताव पर मेरी कोई राय नहीं।' विनोबा का कहना था—आंदोलन के प्रस्ताव पर सर्वानुमति चाहिए। कुछ भी करो सर्वानुमति चाहिए। मैं तैयार हूं।

बैठक एक बजे समाप्त हुई। दोपहर बाद फिर बैठक हुई। प्रस्ताव पर सर्वानुमति फिर भी नहीं हुई। ग्यारह जुलाई की सुबह दादा ने कहा : नकली महात्मा गांधी, नकली विनोबा और नकली जे० पी० से एक असली दादा धर्माधिकारी श्रेष्ठ है।

पवनार आश्रम में साढ़े नौ बजे सुबह जे० पी० और विनोबा की तीसरी बैठक हुई। तीन घंटे तक चली। दोनों में कोई सहमति नहीं हो सकी। अब जे० पी० भूल नहीं करते। जे० पी० ने कहा : 'बाबा, आपने ही कहा था, मतभेद

हो पर दिल नहीं टूटना चाहिए।' विनोबा जे० पी० का मुंह देखते रह गए।

उधर वर्धा में सर्वसेवासंघ की प्रबंध समिति की बैठक चलती रही। दोपहर से पांच बजे शाम तक जे० पी० और आंदोलन के सवाल को लेकर विचार विनिमय चलता रहा। मूल प्रस्ताव पर अब तक कोई सर्वसम्मति से निर्णय नहीं हो पाया। चौबीस सदस्यों की प्रबंध समिति में इक्कीस जे० पी० के पक्ष में थे। विरोध में केवल तीन थे। नियम था सर्वसम्मति का।

तीनों असहमत सदस्य बार-बार विनोबा के विचार दुहराते थे—केवल आज की सरकार हटा दी जाए और राष्ट्रपति शासन आए तो महंगाई घटेगी, ऐसा नहीं। गुजरात में इतना बड़ा आंदोलन हुआ लेकिन वहां महंगाई डेढ़ गुना बढ़ी। इसलिए चिंतन करना चाहिए कि किस प्रकार महंगाई का यह प्रश्न हल किया जाए। यह आंदोलन का विषय नहीं है। चिंतन का विषय है। दूसरी बात यह सरकार हटाओ ऐसा करते जाएंगे तो जिसे हम लोकतन्त्र कहते हैं उसका विरोध होगा। यह ठीक है। अभी यह जो हलचल चली है उसमें मुख्य चार मांगें दिखती हैं। भ्रष्टाचार, महंगाई, बेरोजगारी और शिक्षा में सुधार, इन चारों को इकट्ठा करके आंदोलन करना लाभदायी होगा क्या?

वर्धा के वातावरण में खामोशी बढ़ती जा रही थी।

उससे कहीं ज्यादा गहरी खामोशी सर्वोदय में तब खिंची रहती थी जब समाजवादी जे० पी० सर्वोदय के भीतर प्रवेश कर रहे थे। सर्वोदय में उन्होंने गांधी-पद्धति से नये समाज की रचना की आशा देखी थी। ग्रामदान के कार्यों से वह देख रहे थे कि आजादी के बाद पहली बार इस देश में समाज-परिवर्तन का अभूतपूर्व अवसर उपस्थित हो गया है। पर वह तब यह भी अनुभव कर रहे थे कि परिवर्तन की शक्तियों ने जिस गंतव्य और गति को अपना आधार माना है वह पर्याप्त नहीं है। जे० पी० सर्वोदय को जनआंदोलनकारी रूप देना चाहते थे जो आमूल सामाजिक परिवर्तन का वाहक बने। तब वही बड़ी आशंका की नजर से जे० पी० को देखते थे जिसके प्रतिनिधि आज वर्धा में जे० पी० से असहमत हैं।

विनोबा ने कई बार ग्राम-दान आंदोलन से सहज ही पैदा होती संघर्ष-शक्ति से घबराकर उसे रोकना चाहा है। संगठन को असंगठन की ओर ले जाना चाहा है। भौतिक सच्चाइयों और मानवीय यथार्थ से सर्वोदय को आधिभौतिक जगत् में खींच ले जाना चाहा है।

पर जे० पी० के शुद्ध गांधीवादी चरित्र, क्रांतिकारी कार्य और समाजवादी निष्ठा ने उत्तरोत्तर सर्वोदय को सत्याग्रही बनाया। यथार्थ संघर्ष बोध से उसे नव संस्कार दिया। राजनीति की पुनर्रचना का जो नया संकल्प दिया उससे सर्वोदयी राजनीतिक संन्यास और तटस्थता का प्रश्न निर्मूल होता गया।

जे० पी का बिहार आंदोलन इसी नव चेतना का प्रतिफलन है। पटना का वह मौन जुलूस, इतने लंबे नैतिक पतन-काल के बाद युवा शक्ति का इस तरह

सत्याग्रही हो जाना, छात्रों का झूठी शिक्षा से बाहर निकलकर सामाजिक सच्चाइयों के प्रति प्रतिबद्ध हो जाना, जे० पी० की मूल्यवान देन है।

यही जे० पी० का आंदोलन है। सहमति और असहमति के बीच। सत्याग्रही सर्वोदय और संन्यासी सर्वोदय के बीच। यही बुनियादी सवाल है।

दादाधर्माधिकारी की वह बात—नकली गांधी, विनोबा और जे० पी० से असली धर्माधिकारी श्रेष्ठ है, ग्यारह जुलाई की शाम को वर्धा में अपना अर्थ ग्रहण करने लगी।

उसी शाम को वर्धा के खुले अधिवेशन में पांच सौ लोकसेवकों ने जे० पी० के समर्थन में अपना माथा उठाया। पर सिर्फ वही तीन विरोध में खड़े रहे।

जे० पी० पवनार में बैठे हुए बिहार आंदोलन के कार्य से संबंधित अपने कागज-पत्र पूरा कर रहे थे। वहीं से उन्होंने यह कहला भेजा : 'मित्रो! कोई तो प्रस्ताव पास करो। चाहे जे० पी० को 'कंडम' करने का ही प्रस्ताव…।'

इस बार जे० पी० का आत्मविश्वास अपूर्व था। उनके भीतर जैसे प्रभा और गांधी की शक्ति कार्य कर रही थी। जे० पी० अब गांधी की ही तरह दृढ़प्रतिज्ञ थे। अपने सत्य पर उतने ही आश्वस्त।

आठ बजे रात से फिर वही खुला अधिवेशन। मनमोहन चौधरी ने कहा : 'मैं त्याग-पत्र देता हूं क्योंकि मैं सहमति नहीं कर सका।'

सिद्धराज ढड्ढा ने कहा : 'सर्वसेवासंघ के अध्यक्षपद से मैं त्याग-पत्र देता हूं। और मेरे इस त्याग-पत्र से समूची प्रबंध-समिति भंग होती है क्योंकि वह मेरे द्वारा नामांकित थी। कल सुबह हम विनोबा के पास जाकर विधिवत् त्याग-पत्र दे देंगे।'

सारे लोग सन्न रह गए। हवा में कुछ गूंजने लगा। सर्वोदय माने जे० पी०। सर्वोदय माने सत्याग्रह।…सर्वोदय माने जन-आंदोलन।…अंधकार के खिलाफ सतत संघर्ष।

बारह जुलाई की सुबह। दादा धर्माधिकारी की अगुआई में लोग पवनार पहुंचे। विनोबा को लिखकर दिया : यह हमारी अयोग्यता नहीं ईमानदारी है। हम असहमति के लिए सहमत हैं।'

विनोबा सब का मुंह देखते रह गए। संत के सामने उतने सत्याग्रही एकसाथ खड़े थे। साढ़े नौ बजे विनोबा ने सबको अपने सामने बिठाया। जे० पी० को भी बुलाया। जे० पी० का माथा चमक रहा था। आंखों में वही ज्योति थी, पटना के मौन जुलूस वाली।

विनोबा ने कहना शुरू किया : 'ग्रामदान के बाद सुलभ ग्राम-दान की बात मैंने निकाली थी। उसी प्रकार आज मैं आप लोगों के सामने सुलभ सर्वसेवा-संघ पेश कर रहा हूं। मैंने उसकी युक्ति ढूंढ़ निकाली है। कल जे० पी० मुझ से मिले। काफी बातें हुईं। आध्यात्मिक चर्चा भी हुई। काम के बारे में भी बातें हुईं। उन्होंने मुझसे यह प्रश्न किया कि बाबा आपने ही कहा था कि मत-भेद भले ही रहे, हृदय एक होना चाहिए। तो यह हृदय की एकता मजबूत कैसे हो? उनके इस प्रश्न का उत्तर आज मैं दे रहा हूं।

' यह महावीर स्वामी की पच्चीस सौवीं संवत्सरी का वर्ष है। महावीर स्वामी ने कभी कुछ तोड़ने का कुछ काम नहीं किया था। अगर उनके पास कोई उपनिषद् का अभिमानी आता तो वे उसका उपनिषद् के आधार पर ही समाधान करवाते थे। गीता वाला आता तो गीता के आधार पर, वेद वाले आते तो वेद के आधार पर, बौद्ध विचारों का बौद्ध विचारों के आधार पर। किसी पर उन्होंने अपना विचार नहीं लादा। निर्वाण-शताब्दी के इस वर्ष में मैं सारे जैन-विचार एकत्रित करने के काम में लगा हूं तो हमको यह निश्चय करना चाहिए कि तोड़ना हो तो भी निर्वाण-शताब्दी के वर्ष में न तोड़ें।

' कहां तक किस युक्ति से काम करना चाहिए, यह बात मैं आपको बताता हूं। संघ का कोई सदस्य, प्रतिनिधि, लोकसेवक इत्यादि जिसे जो कोई काम करने की रुचि हो कोई ग्राम-दान, ग्राम-स्वराज्य का काम करना है, कुछ क्रांतिकारी समझकर बिहार के काम में जाना है—सब अपनी-अपनी रुचि के अनुसार काम करें। केवल तीन बातों पर ध्यान रखें--सत्य, अहिंसा और संयम। जहां तक मैं समझा हूं दो ही पक्ष हैं, तीन पक्ष नहीं हैं। संस्कृत में तीन को ही बहुवचन कहते हैं, दो को अलग स्थान हैं माता-पितरों जैसे। तो वहां भी तीन पक्ष नहीं हैं, दो ही हैं। उनके लिए यह युक्ति मैंने सुझा दी। अभी धर्मक्षेत्र पटना क्षेत्रे—समवेता युयुत्सवः···!'

जे० पी० ने पूछा : 'इस महाभारत में संजय कौन बनेगा ?'

विनोबा ने कहा : 'कृष्णराज मेहता।'

'पर वह तो युयुत्सु हैं···' किसी ने उत्तर दिया।

विनोबा ने कहा : 'त्याग-पत्र की जरूरत नहीं। अगर कोई पूछेगा कि तुम ग्राम-दान का काम करने के बदले इस आंदोलन में क्यों हो तो उत्तर देना कि हमारा हृदय एक है, काम अलग-अलग हैं। क्यों जयप्रकाश, समाधान हो गया ?'

जे० पी० बोले : 'सोलहों आना।'

शीतल वायु का झोंका बह गया। दादा धर्माधिकारी बोले : 'विनायक विनायक ही रहा।'

विनोबा ने कहा : 'हां, विनायक बंदर तो नहीं बना।'

सभा समाप्त हो गई। विनोबा के मुंह से निकला : 'महावीर स्वामी की जय !' और वह जयजयकार जयप्रकाश में बदल गया।

वह प्रकाश विजयी हुआ जो उन्नीस सौ इक्कीस में महात्मा गांधी के असहयोग आंदोलन में प्रज्वलित हुआ, जो उन्नीस सौ तैंतीस में नासिक सेंट्रल जेल से बाहर आया था। जो प्रकाश गुलामी की काली निशा को तोड़ने के लिए सन् बयालीस में हजारीबाग जेल से बाहर निकला था। जो प्रकाश बोधगया में जीवन-दान का अकेला दीप बनकर भारतीय जीवन के अंधकार से लड़ता हुआ मुसहरी के उजड़े हुए गांवों और चंबल की अंधेरी घाटियों में चमका।

जयप्रकाश !

जब गंगा के अथाह जल में अकेला दीप बनकर जल रहा है। उसके अंतस् में गांधी की 'प्रभा' प्रज्वलित है···

□□□

'…वीर काव्य की तरह रोमांचकारी,
चरित आख्यान की भांति
परम मानवीय हृदयस्पर्शी
जयप्रकाश नारायण की जीवन गाथा
और कथाकार-नाटककार
लक्ष्मीनारायण लाल की लेखनी,
कितना सहज संयोग है
एक जीवंत रचना के लिए।'